BHOJAPRABANDHA

OF

BALLALADEVA OF BANARAS

EDITED
WITH
SANSKRIT COMMENTARY AND PURPORT, HINDI AND ENGLISH
TRANSLATIONS, PROSE ORDER WITH VOCABULARY.

BY

JAGDISHLAL SHASTRI, M. A., M.O.L.

MOTILAL BANARSIDASS
DELHI :: VARANASI :: PATNA

BHOJAPRABANDHA

OF

Ballaladeva of Banaras

EDITED
With
Sanskrit Commentary and Purport, Hindi And
Prose Order with Vocabulary.

By

Jagdishlal Shastri, M A., M. O. L.

Published by

MOTILAL BANARSIDASS
PUBLISHERS & BOOKSELLERS
Bankipur : : PATNA

[Price Rs. 3/-•

प्रकाशक :
श्री सुन्दरलाल जैन,
मोतीलाल बनारसीदास
बाँकीपुर, पटना।

मुद्रक :
इण्डियन नेशन प्रेस,
पटना

भूमिका

भोजप्रबन्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

मालवा के परमारवंशीय राजा भोज के सम्बन्ध में भोजप्रबन्ध के अतिरिक्त सुकृतसङ्कीर्तन, कीर्तिकौमुदी, प्रबन्धचिन्तामणि आदि ग्रंथों से प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है।

भोजप्रबन्ध में लिखा है कि धारा-नगरी में सिन्धुल राज्य करता था। बुढ़ापे में उसके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम भोज रखा। जब भोज पाँच वर्ष का हुआ तब सिन्धुल को बुढ़ापे की सूझ होने लगी। पाँच वर्ष के इस बालक को राज्य कैसे सौंपा जाय—राजा सोचने लगा। यदि राज्य-भार उठाने योग्य भाई को त्याग कर पुत्र को राज्य दिया तब लोक-निन्दा होगी और बालक भोज को मुञ्ज राज्य के लोभवश मार डालेगा, तब पुत्र को दिया राज्य भी वृथा होगा।

भोजप्रबन्ध के इस प्रकरण से ज्ञात होता है कि मुञ्ज सिन्धुल का छोटा भाई था, किन्तु पद्मगुप्त नवसाहसाङ्कचरित में लिखते हैं—

दिवं यियासुर्मम वाचि मुद्रा-
मदत्त यां वाक्पतिराजदेवः।
तस्यानुजन्मा कविबान्धवस्य
भिनत्ति तां सम्प्रति सिन्धुराजः॥

इस पद्य से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वाक्पति मुञ्ज सिन्धुराज का बड़ा भाई था। पद्मगुप्त का कथन मेरुतुङ्गकृत प्रबन्धचिन्तामणि से भी समर्थित हुआ है, किन्तु मेरुतुङ्ग ने कहीं भी यह नहीं लिखा कि मुञ्ज के बाद सिन्धुल ने राज्य किया। मेरुतुङ्ग के अनुसार मुञ्ज के बाद भोज सिंहासन पर बैठे, किन्तु पद्मगुप्त लिखते हैं कि वाक्पति मुञ्ज की मृत्यु के अनन्तर उसके छोटे

भाई सिन्धुराज को राज्य मिला। सिन्धुल छोटे भाई और मुञ्ज बड़े भाई थे—इस कथन से पद्मगुप्त और मेरुतुङ्ग दोनों सहमत हैं।

पद्मगुप्त वाक्पति मुञ्ज और सिन्धुराज की सभाओं के राजकवि थे। अतः इनके कथन पर विश्वास करना उचित है।

मेरुतुङ्ग ने प्रबन्धचिन्तामणि में लिखा है कि सिन्धुल अत्यन्त दुराचारी था। उसीसे वाक्पति मुञ्ज को उसपर कठोर शासन करना पड़ता था। एक बार सिन्धुल से तंग आकर मुञ्ज ने उसे देश से निकाल दिया था। उस समय सिन्धुल गुजरात के कासह्रद के समीप रहने लगा था। यह स्थान अहमदाबाद के समीप कासिन्द्र पालड़ी नाम से विख्यात हुआ। कुछ दिनों के बाद वह मालवा लौट आया था। मालवा लौटने पर मुञ्ज ने अपने भाई का आदर किया, किन्तु उसका स्वभाव अबतक भी नहीं बदला था। सिन्धुल की आँखें निकाल ली गईं और उसे कारागार में डाल दिया गया। इसी कारागार में ही भोजराज का जन्म हुआ था। एक बार एक ज्योतिषी ने कहा था कि यह बालक एक दिन तुम्हारे राज्य का अपहरण करेगा। यह सुन मुञ्ज बहुत चिन्तित हुए और शीघ्र ही भोज को मार डालने का आदेश दिया। इस समय भोज कुछ पढ़ा-लिखा भी था। राजा का आदेश सुनकर उसने एक पद्य रचा और उसे राजा के पास भेज दिया। राजा ने पद्य पढ़कर अपना विचार बदल दिया और उसके उपरान्त भोज युवराज-पद पर प्रतिष्ठित किये गये।

(१) बल्लाल के अनुसार मुञ्ज सिन्धुल का छोटा भाई था और भोजराज सिन्धुल का पुत्र और मुञ्ज का भतीजा था। मुञ्ज को राज्य देकर और भोज को उसकी गोद में बिठाकर सिन्धुराज तपोवन को चले गये थे।

(२) मेरुतुङ्ग के अनुसार मुञ्ज सिन्धुराज का बड़ा भाई था। मेरुतुङ्ग ने लिखा है कि मुञ्ज के बाद सिन्धुराज का पुत्र भोज सिंहासन पर बैठा था।

(३) पद्मगुप्त के अनुसार वाक्पति मुञ्ज का छोटा भाई सिन्धुराज था। पद्मगुप्त ने भोजराज का कहीं उल्लेख नहीं किया। सम्भवतः इनके समय में भोजराज का जन्म न हुआ होगा अथवा वे बालक ही रहे होंगे।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भोजप्रबन्ध के रचयिता बल्लालदेव का भोज-वृत्तान्त पद्मगुप्त और मेरुतुङ्ग के भोजवृत्तान्त से कई अंशों में विपरीत तथा भिन्न है। पद्मगुप्त मुञ्ज और सिन्धुल की सभा के कवि थे। बल्लालदेव ईसा की सत्रहवीं शती में हुए हैं। अतः बल्लालदेव की अपेक्षा पद्मगुप्त का कथन अधिक प्रामाणिक है।

मुञ्जराज :

मुञ्जराज वाक्पति द्वितीय नाम से भी इतिहास में प्रसिद्ध हैं। नवसाहसाङ्कचरित में वाक्पति को सिन्धुराज का बड़ा भाई कहा गया है (सर्ग १, पद्य ६–७)। वाक्पति के पिता का नाम सिंहदन्तभट था, जो सीयक के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हुए। उनके पुत्र नहीं था। उन्हें मुञ्ज नाम की घास पर बैठा हुआ एक बालक मिला, जिसे उन्होंने गोद में लिया। अनन्तर उनकी अपनी सन्तान भी हुई, तो भी उन्होंने मुञ्ज को ही राज्य-भार सौंपा।

वाक्पति मुञ्ज महापराक्रमी राजा थे। सर्वप्रथम उनकी मुठभेड़ मध्य-प्रदेश में त्रिपुरी के कलचूरि राजा युवराज द्वितीय से हुई। त्रिपुरी के युद्ध में युवराज हार गये। उनकी असंख्य सेना हताहत हुई।

युवराजं विजित्याजौ हत्वा तद्वाहिनीपतीन्।
खड्गमूर्ध्वीकृतं येन त्रिपुर्य्यां विजिगीषुणा ॥

युवराज को परास्त करके वाक्पति मुञ्ज उत्तर की ओर चले। मेदपाट (मेवाड़) की राजधानी आघात पर आक्रमण कर गुहिलराज नरवाहन को पराजित किया। गुहिलराज ने भागकर हस्तिकुण्डी के राष्ट्रकूट नरेश राजा धवल की शरण ली। यह बात राजा धवल के बीजापुर-शिलालेख से प्रकट होती है।

भङ्क्त्वाऽऽघातं घटाभिः प्रकटमिव मदं मेदपाटे भटानां
जन्ये राजन्यजन्ये जनयति जनताजं रणं मुञ्जरागे।
––माणे––नष्टे हरिण इव भिया गुर्जरेशे विनष्टे
तत्सैन्यानां शरण्यो हरिरिव शरणं यः सुराणां बभव ॥

इसके उपरान्त मारवाड़ के चाहमान नरेश बलिराज को परास्त किया।

कौथुम-दानपत्र से हूणों के पराजय का भी परिचय मिलता है। गुजरात के चालुक्यवंशी राजा मूलराज प्रथम से भी इनका संग्राम हुआ, जिसमें मूलराज परास्त हुए। बीजापुर के शिलालेख से भी विदित होता है कि गुर्जरेश ने राजा धवल की शरण ली। गुर्जरेश की दयनीय दशा का पद्मगुप्त ने सजीव चित्र खींचा है—

आहारं न करोति नाम्बु पिबति स्त्रैणं न संसेवते
शेते यत् सिकतासु मुक्तविषयश्चण्डातपं सेवते।
तत्पादाब्जरजः प्रसादकणिकालाभोन्मुखस्तन्मरौ
मन्ये मालवसिंह गुर्जरपतिस्तीव्रं तपस्तप्यते॥

गुजरात-विजय के अनन्तर वाक्पति लाटदेश की ओर चले। लाटदेश इस समय कर्णाट-नरेश तैलप द्वितीय के सेनापति बारप्प के अधीन था। वाक्पति ने लाट देश पर भी विजय पाई। वाक्पति की उदयपुर-प्रशस्ति में लिखा है—

कर्णाटलाटकेरलचोलशिरोरत्नरागिपदकमलः।
यश्च प्रणयगणार्थितदाता कल्पद्रुमप्रख्यः॥

मेरुतुङ्ग के कथनानुसार वाक्पति मुञ्ज ने कर्णाट-नरेश तैलप द्वितीय को छः बार हराया। किन्तु सातवीं बार जब मंत्री रुद्रादित्य के रोकने पर भी वाक्पति मुञ्ज गोदावरी को पारकर तैलप से भिड़े तब वे शत्रु के पंजे में फँस गये। उन्हें अपमानित होना पड़ा। तैलप के हाथों वे मृत्यु-दण्ड को प्राप्त हुए। उनका मृत्यु-काल ई० सन् ९९४ माना गया है।

सिन्धुराज :

जब वाक्पति मुञ्ज तैलप द्वितीय पर आक्रमण के लिए चले थे तब उन्होंने अपने छोटे भाई सिन्धुराज को राज्य-भार सौंपा था। मुञ्ज की हत्या के बाद उनके भाई सिन्धुराज मालवा की गद्दी पर बैठे। मेरुतुङ्ग ने प्रबन्धचिन्तामणि में लिखा है कि वाक्पति मुञ्ज के अनन्तर भोजराज सिंहासन पर बैठे, किन्तु पद्मगुप्त के अनुसार सिन्धुराज गद्दी पर बैठे—

पुरं कालक्रमात् तेन प्रस्थितेनाम्बिकापतेः।
मौर्वी किणाङ्कवत्यस्य पृथ्वी दोष्णि निवेशिता॥

सिन्धुराज के कुमारनारायण और नवसाहसाङ्क नाम भी थे। नवसाहसाङ्क-चरित में सिन्धुराज के पराक्रम का विस्तृत वर्णन मिलता है

मध्यप्रदेश के अन्तर्गत बस्तर के राज्य के नागशासक की सहायता के हेतु सिन्धुराज अनार्यजाति के वजेश राजा मान से लड़े थे। सहायता के उपलक्ष्य में बस्तर के नागराज ने अपनी कन्या सिन्धुराज से ब्याही थी।

मान को परास्त करने के बाद सिन्धुराज ने महाकोसल के कलचूरि राज्य को दबाने के लिए प्रस्थान किया। कोसलपति कलिङ्गराज कलचूरि और बस्तर-नरेश नागराज के बीच पुराना द्वेष भभक उठा था। सिन्धुराज ने कलिङ्गराज को भी परास्त किया। पद्मगुप्त लिखते हैं—

उदितेन वैरितिमिरद्रुहाभित—
स्तव नाथ विक्रममयूखमालिना।
निहितास्त्वया महति शोकसागरे
जगतीन्द्र कोसलपतेः पुरन्ध्रयः॥

हूणों की पराजय का उल्लेख उदयपुर-प्रशस्ति तथा नवसाहसाङ्कचरित में मिलता है। उदयपुर-प्रशस्ति में लिखा है—

तस्यानुजो निर्जितहूणराजः
श्री सिन्धुराजो विजयार्जितश्रीः।

हूण-पराजय के सम्बन्ध में पदमगुप्त लिखते हैं—

अपकर्तुमत्र समये तवात्त रे—
मनसाऽपि हूणनृपतिर्न वाञ्छति।
इभकुम्भभित्तिदलनोद्यमे हरे—
र्न कपिः कदाचन् सटां विकर्षति॥

मेवाड़ के गुहिलों की पराजय का भी पद्मगुप्त ने उल्लेख किया है। लाट के चालुक्य भी सिन्धुराज के सामने न ठहर सके। किन्तु गुजरात के चालुक्य राजा चामुण्डराज ने सिन्धुराज का दर्प-दलन किया।

मुञ्ज के समान सिन्धुराज के भी आश्रित कवि थे। इनके चरित्र-लेखक पद्मगुप्त इन्हीं के समकालीन थे।

भोजराज :

सिन्धुराज की अन्ततिथि के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं। श्री गांगुली के अनुसार सिन्धुराज के उत्तराधिकारी भोजराज का सिंहासनारोहण-काल ई० सन् ६६६ है। भोज के उत्तराधिकारी जयसिंह की शासन-तिथि ई० सन् १०५५ है। इस गणना से सिद्ध होता है कि भोजराज ने ५५ वर्षों के लगभग शासन किया, जैसा कि भोजप्रबन्ध में लिखा है—

पञ्चाशत् पञ्चवर्षाणि सप्तमासा दिनत्रयम्।
भोजराजेन भोक्तव्यः सगौडो दक्षिणापथः ॥

श्रीस्मिथ ने भोजराज के राज्याभिषेक की तिथि ई० सन् १०१० निर्धारित की है। उनके अनुसार मुञ्ज का वध सन् ६६५ ईसवी में हुआ। इस बीच में सिन्धुराज मालवा के कर्णधार रहे होंगे। इस गणना से भोजराज का शासन-काल पैंतालीस वर्ष के लगभग सिद्ध होता है जबकि मेरुतुङ्ग और बल्लालदेव के अनुसार पचपन वर्ष सात महीना और तीन दिन होना चाहिए। श्री ग्रे का कथन कि पद्य में वृत्तपूर्त्ति के लिए चत्वारिंशत् के स्थान पर पञ्चाशत् का जो प्रयोग किया गया है, वह असंगत है। अनुष्टुप् के स्थान पर किसी अन्य वृत्त का आश्रय लिया जा सकता था। वृत्तपूर्त्ति के लिए ऐतिहासिक तथ्य की अवहेलना किसे रुचिकर होगी ?

यदि सिन्धुराज का शासन-काल ६६४–६६६ ई० मान लिया जाय, तो भोज-राज को ५५ के लगभग शासन-वर्ष मिल जाते हैं और ऐसा मानने पर किसी प्रकार की साहित्यिक अथवा शिलालेख-संबंधी आपत्ति भी प्रस्तुत नहीं होती।

मेरुतुङ्ग के अनुसार मुञ्जराज के अनन्तर भोजराज मालवा के राजा हुए। सम्भवतः सिन्धुराज का शासन-काल अल्पकालीन होने के कारण ही मेरुतुङ्ग की दृष्टि में न आ सका होगा। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से सिन्धुराज का शासन-काल कम महत्त्व का नहीं था।

भोजप्रबन्ध में भोजराज को सिन्धुराज का पुत्र कहा गया है। सिन्धुराज ने मुञ्ज को राज्य देकर अपने पुत्र भोज को उसकी गोद में बिठा दिया। समय आने पर जब सिन्धुराज स्वर्गलोक को सिधारे, तब मुञ्ज को राज्य-सम्पत्ति मिली।

एक बार राज्य-सभा में एक ज्योतिषी आया। उसने मुञ्ज से कहा कि भोज बंगाल और दक्षिण पर पचपन वर्ष, सात महीना और तीन दिन शासन करेगा। सिन्धुराज ने बंगाल के राजा वत्सराज को बुलाने के लिए अपने अंगरक्षक को भेजा। वत्सराज मुञ्ज के पास आया। परस्पर परामर्श होने के उपरान्त वत्सराज ने भोजराज को मार डालने का भार अपने ऊपर ले लिया। भोज को पाठशाला से बुला वत्सराज महामाया के मंदिर में ले गये। भोजराज ने बरगद के पत्तों पर अपनी जांघ के रक्त से कुछ लिखकर वत्सराज को दिया और कहा कि ये पत्ते आप राजा को दे दीजिएगा। वत्सराज के छोटे भाई ने वत्सराज को धर्म का उपदेश दिया, जिससे प्रभावित होकर उसने भोज की हत्या का विचार त्याग दिया। भोज को रथ पर बिठाकर नगर से बाहर ले जाकर जब घना अन्धकार छा गया, घर लाया और भूगृह में छिपा दिया। चतुर शिल्पियों द्वारा भोज की आकृति का एक मुंड रक्त-रंजित कर राजा को दिखला दिया। भतीजे का मृत मुंड देखकर राजा का हृदय कांप उठा। तब राजा ने वत्सराज से पूछा—वत्सराज! तलवार का प्रहार करते समय पुत्र ने क्या कहा था? वत्सराज ने वह पत्र दिया। राजा पत्नी के हाथ दीपक बुलवाकर उस पत्र के लेख को पढ़ने लगा—

मान्धाता च महीपतिः कृतयुगालङ्कारभूतो गतः
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः क्वासौ दशास्यान्तकः।
अन्ये चापि युधिष्ठिरप्रभृतयो याता दिवं भूपते
नैकेनापि समं गता वसुमती नूनं त्वया यास्यति॥

मुञ्ज अत्यन्त शोकातुर हुए। उन्होंने आत्महत्या की ठानी। उनके प्राण-परित्याग करने का दिन था। सभा में एक कापालिक आ पहुँचा। उसने कहा—मैं आपके भतीजे को जीवित कर ला सकता हूँ। आप श्मशान में सामग्री भेजिए। कापालिक के कथनानुसार श्मशान में होम-सामग्री भेज दी गई। कुछ समय के उपरान्त कापालिक भोज को साथ में लेकर राजसभा में आया। कापालिक की होमादि क्रिया आडम्बर-मात्र थी। भोज को आते हुए देखकर मुञ्ज को अपार आनन्द हुआ। मुञ्ज फिर सिंहासन पर न बैठ सके। यथासम्भव

शीघ्र भोज को राज्यभार अर्पण कर अपनी रानी के साथ तपोवन की ओर चले गये ।

भोजप्रबन्ध के अन्तर्गत उपर्युक्त कथन की ऐतिहासिक प्रामाणिकता का निराकरण पद्मगुप्त, मेरुतुङ्ग तथा शिलालेखों के द्वारा हो चुका है ।

भोज के छः शिलालेख मिले हैं। सीयक, मुञ्ज और सिन्धुल के समय उज्जयिनी मालवा की राजधानी थी । भोज ने धारा को राजधानी बनाया ।

सिंहासन पर बैठते ही भोज ने दिग्विजय की ठानी । सर्वप्रथम वे दक्षिण की ओर चले । इस समय चालुक्यवंशीय जयसिंह द्वितीय कर्णाट के शासक थे । उनसे भोज की मुठभेड़ हुई । गाङ्गेय कलचूरि और चोलराजेन्द्र प्रथम भोज के सहायक थे । भोजप्रबन्ध के २६६वें पद्य में 'दक्षिणक्ष्मापति' का जो उल्लेख किया गया है, वह सम्भवतः जयसिंह द्वितीय को ही सूचित करता है । इस युद्ध में भोज विजेता बने, किन्तु यह विजय स्थायी नहीं रही । जब जयसिंह के पुत्र सोमेश्वर प्रथम कर्णाट की गद्दी पर बैठे, तब उनका संघर्ष भोजराज के साथ हुआ । इस संघर्ष में भोजराज की जो दुर्दशा हुई, उसका वर्णन बिल्हण ने विक्रमाङ्कदेवचरित्र में किया है--

दीप्रप्रतापानलसन्निधानाद्
विभ्रत्पिपासामिव यत्कृपाणः ।
प्रमारपृथ्वीपतिकीर्त्तिधारां
धारामुदारां कवलीचकार ।। सर्ग १, पद्य ९१ ।।

भोजक्ष्मापालविमुक्तधारा--
निपातमात्रेण रणेषु यस्य ।
कल्पान्तकालानलचण्डमूर्त्ति--
श्चित्रं प्रकोपाग्निरवाप शान्तिम् ।।सर्ग १, पद्य ९४।।

सोमेश्वर की सफलता अस्थायी रही । भोज अपने पराक्रम को फिर से पा गये ।

मद्रास के राजा इन्द्ररथ को उन्होंने जीता। पश्चिम में लाटदेश के राजा कीर्तिराज को जीतकर दक्षिण में कोंकण पर आ धमके। कोंकण के शिलाहारों को उन्होंने परास्त किया।

किन्तु पश्चिमोत्तर में मुसलमानों के उपद्रवों ने भोज की दक्षिण-गति को रोका। भोज ने महमूद गजनवी के विरुद्ध अनंगपाल को सहायता दी।

इन विजयों से ही भोज को तृप्ति नहीं मिली। उन्होंने कलचूरि-नरेश गांगेय पर आक्रमण करके उसका मद-मर्दन किया।

मालवा के पूर्वोत्तर में चन्देलों का राज्य था। भोज ने चन्देल राजा विद्याधर पर आक्रमण किया। किन्तु इस आक्रमण में उन्हें सफलता नहीं मिली। ग्वालियर के कच्छपघातों का भी भोज सामना न कर सके, तो भी उन्होंने अपना साहस नहीं त्यागा। ग्वालियर-राज्य के बीच में से अपनी सेना ले जाकर उन्होंने कन्नौज के प्रतिहारों को परास्त किया।

भोज द्वारा पंजाब में चंबाविजय के भी लेख मिलते हैं। शाकम्भरी (अजमेर) के चाहमानों से भी उनकी मुठभेड़ हुई। इस युद्ध में उनके सेनापति शाठ वीरगति को प्राप्त हुए थे।

गुजरात के चालुक्य-राजा दुर्लभराज के साथ भोज के संग्राम का उल्लेख है, जिससे भोजराज की पराजय का परिचय प्राप्त होता है। (देखिए, हेमचन्द्र, द्वयाश्रयकाव्य) हेमचन्द्र ने दुर्लभराज के उत्तराधिकारी भीम से भोजराज के संघर्ष का वर्णन नहीं किया है। किन्तु मेरुतुङ्ग के प्रबन्धचिन्तामणि में भोज-भीम के संघर्ष का विस्तृत वर्णन दिया है। भोज द्वारा भीम की पराजय का उल्लेख उदयपुर-प्रशस्ति में मिलता है—

चेदीश्वरेन्द्ररथतोग्गलभीममुख्यान्
कर्णाटलाटपतिगुर्जरराट्तुरुष्कान्।
यद्भृत्यमात्रविजितानवलोक्य मौला
दोष्णां बलानि कलयन्ति न योद्धृलोकान्॥

जब भीम सिन्ध के अभियान पर थे, भोज ने सेनापति कुलचन्द्र को गुजरात पर आक्रमण करने के लिए भेजा था। कुलचन्द्र गुजरात से बहुत लूट लाये

थे । जब भीम लौटा तब उसने भोज से बदला लेने की ठानी । उसने गांगेय के पुत्र कर्ण कलचूरि के सहयोग से धारा पर आक्रमण किया ।

मेरुतुङ्ग के अनुसार युद्ध के समाप्त होने से पहले ही भोजराज स्वर्ग को सिधार गये । कीर्तिकौमुदी में सोमेश्वर ने लिखा है कि भीम ने भोज को परास्त किया, किन्तु मारा नहीं ।

प्रबन्धचिन्तामणि और भोजप्रबन्ध में भोज द्वारा गौड (बंगाल) देश के पराजित होने का उल्लेख है (भोजप्रबन्ध, पद्य ६), किन्तु इसके समर्थन में कोई भी प्रमाण उपलब्ध नहीं हुआ है ।

भोजप्रबन्ध के अनुसार भोजराज को कुन्तलेश्वर की कन्या और अंगराज की बहन ब्याही थीं (भोजप्रबन्ध, पद्य ३००) । इस कथन की पुष्टि में भी प्रमाणान्तर नहीं है ।

भोजराज की साहित्यिक अभिरुचि :

इतिहास-लेखक श्री स्मिथ के अनुसार दशरूपक के रचयिता धनञ्जय, दशरूपक के टीकाकार धनिक और अभिधानरत्नमाला के निर्माता भट्ट हलायध इन्हीं के सभा-पण्डित थे । कालिदास, बाणभट्ट, दण्डी आदि प्राचीन कवियों के नामधारी अनेक कवि उनकी सभा को सुशोभित करते थे । उनके शासन-काल में साहित्य को जो प्रोत्साहन मिला, वह चन्द्रगुप्त द्वितीय तथा हर्षवर्द्धन के काल में भी न मिला था। काव्यकला में भोज का नाम समुद्रगुप्त का स्मरण कराता है। भोज-सभा के कवियों के कालिदास, बाणभट्ट, भवभूति, दण्डी आदि उपनाम रहे होंगे । अन्यथा कालिदास, जिसका निर्देश सातवीं शती के बाणभट्ट ने हर्षचरित की भूमिका में किया है, सातवीं शती के बाण, दण्डी, मयूर; आठवीं शती के भवभूति, ग्यारहवीं शती में भोज के समकालीन कैसे हो सकते हैं ?

भोजप्रबन्ध की काव्यता :

उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है कि भोजप्रबन्ध ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं है । काव्यकला के दृष्टिकोण से अवलोकन करने पर कुछ साहित्यिक रत्न अवश्य मिलेंगे ।

भोजप्रबन्ध में ध्वनि और रस को विशेष स्थान नहीं मिला है। इस न्यूनता की पूर्त्ति अलंकारों ने पर्याप्त मात्रा में की है। श्लेष, यमक, विरोधाभास, अर्थान्तरन्यास, परिकर, अप्रस्तुत प्रशंसा आदि विविध अलंकार इसमें भरे-पड़े हैं। उदाहरणार्थ, श्लेषवैचित्र्य देखिए--

प्रायो धनवतामेव धने तृष्णा गरीयसी ।
पश्य कोटिद्वयासक्तं लक्षाय प्रवणं धनुः ॥

यहाँ पर कोटि, लक्ष और प्रवण शब्द श्लिष्ट हैं।

श्लेष का एक अनुपम उदाहरण इस प्रकार है—

कविमतिरिव बहुलोहा सुघटितचक्रा प्रभातवेलेव ।
हरमूर्त्तिरिव हसन्ती भाति विधूमानलोपेता ॥

भोजराज की शत्रु-स्त्रियों के भूषण-वैचित्र्य का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

कङ्कणं नयनद्वन्द्वे तिलकं करपल्लवे ।
अहो भूषणवैचित्र्यं भोजप्रत्यर्थियोषिताम् ॥

कविशेखर की पंक्तियों में श्लेषवैचित्र्य के अन्य उदाहरण देखिए—

(१) **राजन् दौवारिकादेव प्राप्तवानस्मि वारणम्**
(२) **अपूर्वेयं धनुर्विद्या शिक्षिता भवता कथम् ?**
मार्गणौघः समायाति गुणो याति दिगन्तरम् ॥

कैसी आकर्षक है यमक की विचित्रता।

(१) **कस्य तृषं न क्षपयसि पिबति न कस्तव पयः प्रविश्यान्तः ।**
यदि सन्मार्गसरोवर नक्रो न क्रोडमधिवसति ॥
(२) **श्रीभोजराज ! कवयामि वयामि यामि ।**

अलंकार-युग में बल्लाल का जन्म हुआ था। अतः वे युगधर्म के प्रभाव से अनाक्रान्त नहीं रह सके।

भोजप्रबन्ध में विविध कवियों की कविताएँ हैं, किन्तु कहीं-कहीं एक ही पद्य को दो भिन्न कवियों की कृति बताया गया है; जैसे--भोजप्रबन्ध २४०--सुबन्धुकृत वासवदत्ता ११; गोविन्दपिता, भोजप्रबन्ध ५१--कालिदास, भोज-

प्रबन्ध १४० ; बाण, भोज० १०३—माघ, भोज० २८२; अज्ञात, भोज० १८०—कविशेखर, भोज० ३१४; सीमन्त, भोज० २०७—भर्तृहरि, भोज० १३५। चोरित पद्यों पर राज-सम्मान कवि और राजा दोनों के लिए गौरव का विषय नहीं हो सकता।

भोजप्रबन्ध के रचयिता श्री बल्लालदेव :

बल्लाल कवि बल्लादेव दैवज्ञ अथवा बल्लालमिश्र के नाम से प्रसिद्ध थे। बनारस इनका निवास-स्थान था। इनके पिता का नाम त्रिमल्ल था। इनके तनूज गोविन्द ने सन् १६०३ ई० में सूर्यसिद्धान्त पर टीका लिखी थी। अतः बल्लाल का समय सोलहवीं शती के अन्तिम भाग तथा सत्रहवीं शती के आरम्भ के बीच हो सकता है। यह समय मुगलराज अकबर तथा उनके पुत्र जहाँगीर के शासन का है।

——:०:——

॥ श्रीः ॥

भोजप्रबन्धः

स्वस्ति श्रीमहाराजाधिराजस्य भोजराजस्य प्रबन्धः कथ्यते—

आदौ धाराराज्ये सिन्धुलसंज्ञो राजा चिरं प्रजाः पर्यपालयत् । तस्य वृद्धत्वे भोज इति पुत्रः समजनि । स यदा पञ्चवार्षिकस्तदा पिता ह्यात्मनो जरां ज्ञात्वा मुख्यामात्यानाहूयानुजं मुञ्जं महाबलमालोक्य पुत्रं च बालं वीक्ष्य विचारयामास—यद्यहं राज्यलक्ष्मीभारधारणसमर्थं सोदरमपहाय राज्यं पुत्राय प्रयच्छामि, तदा लोकापवादः । अथवा बालं मे पुत्रं मुञ्जो राज्यलोभाद्विषादिना मारयिष्यति, तदा दत्तमपि राज्यं वृथा । पुत्रहानिर्वंशोच्छेदश्च ।

Vocabulary : स्वस्ति—कल्याणवाचक शब्द, a particle of benediction. महाराजाधिराज—चातुरन्त, सार्वभौम अथवा चक्रवर्त्ती राजा, a king-emperor. प्रबन्ध—कथानक, a narrative. आदौ—प्राचीनकाल में, in ancient days. पर्यपालयत्—पालन किया करता था, used to protect. वृद्धत्व—बुढ़ापा, old age. समजनि—उत्पन्न हुआ, was born. पञ्चवार्षिक:—पाँचवें वर्ष को प्राप्त, one who reached the fifth year. जरा—बुढ़ापा, old age. मुख्यामात्य—प्रधान मंत्री, the prime minister. आहूय—बुलाकर, having sent for. अनुज—छोटा भाई, younger brother. महाबल—बहुत बलवान, all-powerful. वीक्ष्य—देखकर, having seen. सोदर—सगा भाई, a real brother. अपहाय—त्यागकर, having deprived. लोकापवाद—लोकनिन्दा, public scandal. उच्छेद—समूलघात, discontinuity.

व्याख्या—स्वस्तीति माङ्गलिकम् । महाराजाधिराजस्य—महान् राजा (कर्म०) महाराजः महत्+राजन्+टच्, राजाहःसखिभ्यष्टच्; आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः इत्यात्वम्; अधिराजः—अधिकृत्य राजते इति, महाराजानाम् अधिराजः (ष० तत्पु०) तस्य । प्रबंधः—कथानकम् ।

आदौ—पुरा । धाराराज्ये—धाराया राज्यम् (ष० तत्पु०) तस्मिन् । सिन्धुलसंज्ञः—सिन्धुल इति संज्ञा नाम यस्य (बहु०) सः । वृद्धत्वे—वृद्धावस्थायाम्, वार्धक्ये । पञ्चवार्षिक—पञ्चन्+वर्ष+ठक् (= इक) पञ्चवर्षावस्थामाप्तः आहूय—आ+ह्वे+क्त्वा (= ल्यप्), समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् । अनुजम्—अनु (= पश्चाद्) जायत इति, अनुपूर्वकाद् जनेर्डः; लघुभ्रातरम् । महाबलम्—महद् बलम् (कर्म०), महाबलम् अस्यास्तीति (बहु०) सः, अर्शआदिभ्योऽच्, तम् । वीक्ष्य—वि+ईक्ष्+क्त्वा (= ल्यप्) । सोदरम्—सह (समानम्) उदर यस्य (बहु०) सः, तम् सहस्य सः, सहोदरं सोदर्यं वा । अपहाय—अप+हा+क्त्वा (= ल्यप्), त्यक्त्वा । पुत्राय प्रयच्छामि—चतुर्थी सम्प्रदाने । लोकापवादः—लोकेषु अपवादः (स० तत्पु०), लोकनिन्दा । वंशोच्छेदः—वंशस्य उच्छेदः (ष० तत्पु०), वंशोन्मूलनम् ।

प्राचीनकाल में धारा राजधानी में सिन्धुल नाम के राजा चिरकाल तक प्रजा-पालन करते रहे। जब वे बूढ़े हुए तब उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उन्होंने भोज रखा । जब वह पाँच वर्ष का हुआ तब उन्हें अपने बुढ़ापे की सूझ होने लगी । उन्होंने मुख्य मंत्रियों को बुलाया । अपने लघु भ्राता मुञ्ज को शक्तिशाली और पुत्र को बालक देखकर वे सोचने लगे—यदि मैं राज्यलक्ष्मी का भार उठाने योग्य भाई को त्यागकर पुत्र को राज्य दूँगा तो लोकनिन्दा होगी । अथवा यदि मेरे बालक पुत्र को मुञ्ज राज्य के लोभवश विष आदि से मार डालेगा तो पुत्र को दिया राज्य भी वृथा होगा । इस प्रकार पुत्र की हानि और वंश का नाश हो जायगा ।

लोभः प्रतिष्ठा पापस्य प्रसूतिर्लोभ एव च ।

द्वेषक्रोधादिजनको लोभः पापस्य कारणम् ॥१॥

लोभ इति । **Vocabulary :** प्रतिष्ठा—आश्रय, stay. प्रसूति—

उत्तेजक, impelling force. जनक—उत्पादक, जन्मदाता, one who gives rise to.

Prose Order : लोभः पापस्य प्रतिष्ठा, च लोभः प्रसूतिः एव । लोभः द्वेषक्रोधादिजनकः, लोभः पापस्य कारणम् ।

व्याख्या—प्रतिष्ठा—मूलम् । प्रसूतिः—प्रसवहेतुः । जनकः—जन्+ण्वुल्, युवोरनाकौ इत्यकप्रत्ययः, जनयिता ।

लोभ पाप का मूल है। लोभ से ही पाप का जन्म होता है । द्वेष, क्रोध आदि भी उसीसे उत्पन्न होते हैं । लोभ पाप का कारण है ।

> **लोभात्क्रोधः प्रभवति क्रोधाद् द्रोहः प्रवर्त्तते ।**
> **द्रोहेण नरकं याति शास्त्रज्ञोऽपि विचक्षणः ॥२॥**

लोभाद् इति । **Vocabulary** : द्रोहः—द्वेषबुद्धिः, malice. विचक्षणः—विद्वान्, a far sighted learned person.

Prose Order : लोभात् क्रोधः प्रभवति । क्रोधात् द्रोहः प्रवर्त्तते । शास्त्रज्ञः विचक्षणः अपि द्रोहेण नरकं याति ।

व्याख्या—प्रभवति—उत्पद्यते । द्रोहः—द्वेषबुद्धिः । प्रवर्त्तते—वर्धते । शास्त्रज्ञः—शास्त्र+ज्ञा+क, आतोऽनुपसर्गे कः । विचक्षणः—विद्वान् ।

लोभ से क्रोध और क्रोध से वैर उत्पन्न होता है । शास्त्रज्ञ विद्वान् भी वैर से नरक को जाता है ।

> **मातरं पितरं पुत्रं भ्रातरं वा सुहृत्तमम् ।**
> **लोभाविष्टो नरो हन्ति स्वामिनं वा सहोदरम् ॥३॥**

३. मातरमिति । **Vocabulary** : सुहृत्तम—प्रिय मित्र, a dearest friend. लोभाविष्ट—लोभाभिभूत, overcome by greed. सहोदर—समानोदर भाई अथवा कोई निकट संबंधी, a real brother or a close blood relation.

Prose Order : लोभाविष्टः नरः मातरं पितरं पुत्रं भ्रातरं सुहृत्तमं वा स्वामिनं सहोदरं वा हन्ति ।

व्याख्या—लोभाविष्टः—लोभेन आविष्टः (तृ० तत्पु०); आविष्टः—

आ+विश्+क्त। सुहृत्तमम्--शोभनं हृदयं यस्य (बहु०) सः सुहृत्; सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः। सुहृत्+तमप्, (अतिशायने तमप्)।

लोभी पुरुष माता, पिता, पुत्र, भाई, प्रिय मित्र, स्वामी और अपने सगे भाई का वध कर डालता है।

इति विचार्य राज्यं मुञ्जाय दत्त्वा तदुत्सङ्गे भोजमात्मजं मुमोच।

ततः क्रमाद्राजनि दिवं गते संप्राप्तराज्यसंपत्तिर्मुञ्जो मुख्यामात्यं बुद्धिसागरनामानं व्यापारमुद्रया दूरीकृत्य तत्पदेऽन्यं नियोजयामास। ततोगुरुभ्यः क्षितिपालपुत्रं वाचयति। ततः क्रमेण सभायां ज्योतिःशास्त्रपारङ्गतः सकलविद्याचातुर्यवान्ब्राह्मणः समागम्य राज्ञे 'स्वस्ति' इत्युक्त्वोपविष्टः। स चाह-'देव',-लोकोऽयं मां सर्वज्ञं वक्ति। तत्किमपि पृच्छ।

इति विचार्येति। Vocabulary: उत्सङ्ग--गोद, lap. मुमोच—बिठा दिया, placed. दिवंगत—मृत, dead. राज्यसम्पत्ति—राज्यैश्वर्य, royalty. मुख्यामात्य—प्रधान मंत्री, prime minister. मुद्रा--व्याज, pretext. दूरीकृत्य—हटाकर, having sent away. पद—स्थान, office.

व्याख्या—तदुत्सङ्गे तस्य उत्सङ्गः (ष० तत्पु०), तस्मिन्, तत्क्रोडे। आत्मजं-पुत्रम्। मुमोच–स्थापयामास। दिवंगते–स्वर्गते। सम्प्राप्तराज्यसम्पत्तिः—राज्यस्य सम्पत्तिः (ष० तत्पु०), सम्प्राप्ता राज्यसम्पत्तिर्येन (बहु०) सः, सम्पत्तिः–सम्+पद्+क्तिन् (स्त्रियां क्तिन्), प्राप्तराज्याधिकारः। मुख्यामात्यम्--मुख्यः अमात्यः (कर्म०) तम्, व्यापारमुद्रया—व्यापारव्याजेन। दूरीकृत्य–अपनीय। तत्पदे--तस्य पदम् (ष० तत्पु०), तस्मिन्, तदधिकारस्थाने। स्थापयामास--विनियुयोज। वाचयति—पाठयति। ज्योतिःशास्त्रपारङ्गतः–ज्योतिर्विद्याप्रवीणः॥ सकलविद्याचातुर्यवान्–सकलासु विद्यासु चातुर्यमस्यास्तीति सः, चातुर्य+मतुप् समागम्य–सम्+आ+अगतम्, गम्+लुङ् प्र० एक०।

यह सोच मुञ्ज को राज्य देकर अपने पुत्र भोज को उसकी गोद में बिठा दिया।

समय आने पर जब राजा स्वर्गलोक को सिधारे, मुंज को राज्य-सम्पत्ति मिली। तब उसने अपने प्रधान मंत्री बुद्धिसागर को किसी काम के बहाने

दूर भेज दिया और उसके स्थान पर दूसरे को नियुक्त किया । तब उसने राजपुत्र भोज को शिक्षा पाने के लिए गुरुजनों के समीप भेजा । तब एक बार ज्योतिषशास्त्र में निपुण, समस्त विद्याओं में पारंगत एक ब्राह्मण सभा में आया । वह राजा को आशीर्वाद देकर बैठ गया और बोला—देव ! लोग मुझे सर्वज्ञ कहते हैं । आप कुछ पूछिए ।

कण्ठस्था या भवेद्विद्या सा प्रकाश्या सदा बुधैः ।
या गुरौ पुस्तके विद्या तया मूढः प्रतार्यते ॥४॥

कण्ठस्थेति । **Vocabulary :** कण्ठस्था—कण्ठ में स्थित, ready to be recited or delivered. प्रकाश्या—प्रकाशार्ह, that which can be brought to light. प्रतार्यते—ठगा जाता है, is deceived.

Prose Order : या विद्या कण्ठस्था भवेत् सा सदा बुधैः प्रकाश्या । या विद्या गुरौ पुस्तके तया मूढः प्रतार्यते ।

व्याख्या—कण्ठस्था—कण्ठे तिष्ठतीति उपपदसमासः । प्रकाश्या—प्रकाशयितुंशक्या । प्रतार्यते— वञ्च्यते ।

विद्वान् जिस विद्या में पारंगत हो उसे सदा प्रकाश में लावे । जो विद्या गुरुजनों अथवा पुस्तक तक ही सीमित है, उस विद्या के उपयोगी न होने के कारण वह मूर्ख उससे वंचित हो जाता है ।

इति राजानं प्राह । ततो राजापि विप्रस्याहंभावमुद्रया चमत्कृतां तद्वाचं श्रुत्वा 'अस्माकं जन्मारभ्य तत्क्षणपर्यन्तं यद्यन्मयाचरितं यद्यत्कृतं तत्तत्सर्वं वदसि यदि, भवान्सर्वज्ञ एव' इत्युवाच । ततो ब्राह्मणोऽपि राजा यद्यत्कृतं तत्तत्सर्वमुवाच गूढव्यापारमपि । ततो राजापि सर्वाण्यप्यभिज्ञानानि ज्ञात्वा तुतोष । पुनश्च पञ्चषट्पदानि गत्वा पादयोः पतित्वेन्द्रनीलपुष्परागमरकतवैडूर्यखचितसिंहासन उपवेश्य राजा प्राह—

इति राजानं प्राहेति । **Vocabulary :** अहम्भाव—अहङ्कार, presumptuousness. मुद्रा—चिह्न, stamp. चमत्कृत—चमत्कारी, surprising, alluring. क्षण—समय, moment. गूढ़व्यापार—गुप्त कार्यों से पूर्ण, full of confidential matter. अभिज्ञान—चिह्न, a sign

of remembrance. इन्द्रनील—sapphire. पुष्पराग—topaz. मरकत—emerald. वैदूर्य-lapis lazuli. खचित—जड़े हुए inlaid with.

व्याख्या—अहम्भावमुद्रया—अहम्भावस्य मुद्रा (ष० तत्पु०) तया, अहङ्कार-चिह्नेन। चमत्कृताम् चमत्कारिणीमित्यर्थः। सर्वज्ञः—सर्वं जानातीति सः, सकलार्थवेत्ता। इन्द्रनीलेति—इन्द्रनीलश्च पुष्परागश्च, मरकतश्च, वैदूर्यश्चेति इन्द्रनीलपुष्परागमरकतवैदूर्याः (द्वन्द्व), तैः खचितम् (तृ० तत्पु०) यत् सिंहासनम् (कर्म०) तस्मिन् ।

इस प्रकार उसने राजा से कहा—तब राजा भी ब्राह्मण की गर्वयुक्त तथा आश्चर्यजनक बातचीत को सुनकर बोला—जन्म से लेकर अबतक जो कुछ मैंने किया है, यदि आप वह कुछ बता दें तो आप निश्चित ही सर्वज्ञ हैं। तब राजा ने जो-जो कार्य किये थे, गुप्त या अगुप्त, सब राजा से कह डाले। तब राजा की भी सभी स्मृतियाँ जागृत हुईं। तब वह प्रसन्न हुआ। तब पाँच-छः पग चलकर उसके पैरों में गिरकर, इन्द्रनील, पुष्पराग, मरकत, वैदूर्य मणियों से जटित सिंहासन पर उसे बिठाकर राजा ने कहा—

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम् ।
कीर्त्तिं च दिक्षु विमलां वितनोति लक्ष्मीं
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥५॥

मातेवेति । **Vocabulary**: नियुङ्क्ते—लगाती है, directs. अभिरमयति—विनोद कराती है, offers diversion. अपनीय—हटाकर, having removed. खेद—श्रम, depression. साधयति—सिद्ध करती है, accomplishes.

Prose Order : विद्या मातेव रक्षति, पितेव हिते नियुङ्क्ते, च कान्तेव खेदम् अपनीय अभिरमयति। दिक्षु विमलां कीर्त्तिं लक्ष्मीं च वितनोति। कल्पलतेव किं किं न साधयति ?

व्याख्या—मातेव—इवेन सह समासो विभक्त्यलोपश्च। नियुङ्क्ते—

नियोजयति । अभिरमयति—विनोदयति । अपनीय—दूरीकृत्य । वितनोति—प्रसारयति । साधयति—सम्पादयति ।

विद्या माता के सदृश रक्षा करती है । पिता के समान हित में लगाती है । स्त्री के समान श्रम को दूर करके प्रसन्न करती है । दिशाओं में विमल यश तथा लक्ष्मी को बढ़ाती है । कल्पलता के समान वह क्या-क्या नहीं करती ?

ततो विप्रवराय शश्वानाजानेयान्ददौ ।

ततः सभायामासीनो बुद्धिसागरः प्राह राजानम्—'देव, भोजस्य जन्मपत्रिकां ब्राह्मणं पृच्छ' इति । ततो मुञ्जः प्राह—'भोजस्य जन्मपत्रिकां विधेहि' इति । ततोऽसौ ब्राह्मण उवाच—'अध्ययनशालाया भोज आनेतव्यः' इति । मुञ्जोऽपि ततः कौतुकादध्ययनशालामलंकुर्वाणं भोजं भटैरानाययामास । ततः साक्षात्पितरमिव राजानमानम्य सविनयं तस्थौ । ततस्तद्रूपलावण्यमोहिते राजकुमारमण्डले प्रभूतसौभाग्यं महीमण्डलसमागतं महेन्द्रमिव, साकारं मन्मथमिव, मूर्त्तिमत्सौभाग्यमिव, भोजं निरूप्य राजानं प्राह दैवज्ञः—'राजन्, भोजस्य भाग्योदयं वक्तुं विरिञ्चिरपि नालम्, कोऽहमुदरंभरिर्ब्राह्मणः । किञ्चित्तथापि वदामि स्वमत्यनुसारेण । भोजमितोऽध्ययनशालायां प्रेषय ।' ततो राजाज्ञया भोजे ह्यध्ययनशालां गते विप्रः प्राह—

ततो विप्रवरायेति । **Vocabulary** : विप्रवर—ब्राह्मणों में श्रेष्ठ, the best of the Brahmanas. आजानेय—उत्तम कुल के, of noble breed. आसीन—स्थित, sitting, present. जन्मपत्रिका—जन्मकुंडली, a horoscope. विधेहि—बनाइए, you prepare. आनाययामास—बुलाया, was made to be brought, सौभाग्य—सौन्दर्य, beauty. निरूप्य—देखकर, having seen. महीमण्डल—भूतल, the globe of the earth. मन्मथ—कामदेव, cupid. मूर्त्तिमत्—आकारयुक्त, embodied. दैवज्ञ—ज्योतिषी, an astrologer. विरिञ्चि ब्रह्मा । उदरम्भरिः—पेट भरनेवाला, a selfishly voracious.

व्याख्या—विप्रवराय—विप्रेषुवरः (स० तत्पु०) तस्मै, ब्राह्मणश्रेष्ठाय । आजानेयान्—जन्मतः गुणवतः सद्वंशजान्, कुलीनानित्यर्थः? आसीनः—उपविष्टः ।

जन्मपत्रिकां ब्राह्मणं पृच्छ—दुह्याच्इति कारिकायां प्रच्छधातोरपि परिगणनाद् द्विकर्मकत्वम् । विधेहि—वि+धा+लोट् म० एक०, कुरु । आनाययामास—आ + नी + णि + लिट् प्र० एक० । साकारम्—आकारेण सह वर्तत इति (बहु०) । मूर्त्तिमत्—साकारम् ।

तब उस ब्राह्मण को दस उत्तम घोड़े दिये ।

तब सभा में बैठे हुए बुद्धिसागर ने राजा से कहा—देव ! भोज की जन्मपत्रिका के बारे में ब्राह्मण से पूछिए । तब मुंज ने कहा—भोज की जन्म-पत्रिका के बारे में बताइए । तब उस ब्राह्मण ने कहा—भोज को पाठशाला से बुलाइए । मुंज ने पाठशाला से अलंकार-स्वरूप भोज को सैनिकों के द्वारा बुलवाया । तब भोज अपने पिता के समान मुंज को नमस्कार करके विनय-पूर्वक खड़ा रहा । तब सभी राजकुमार उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो गये । अत्यन्त सुन्दर और पृथ्वी पर अवतीर्ण इन्द्र के समान तथा शरीरधारी कामदेव के सदृश तथा साकार सौंदर्य की नाईं विराजमान भोज को देखकर दैवज्ञ ने कहा—राजन् ! भोज के भाग्योदय को ब्रह्मा भी कहने को समर्थ नहीं है । पेट भरनेवाले मुझ ब्राह्मण की तो बात ही क्या ? तो भी अपनी बुद्धि के अनुसार मैं कुछ कहता हूँ । यहाँ से भोज को पाठशाला में भेज दीजिए । जब राजा के आदेश से भोज को पाठशाला में भेज दिया गया तब ब्राह्मण ने कहा—

पञ्चाशत्पञ्चवर्षाणि सप्तमासा दिनत्रयम् ।
भोजराजेन भोक्तव्यः सगौडो दक्षिणापथः ॥६॥

पञ्चाशदिति । **Vocabulary :** पञ्चाशत्—पचास, fifty. पञ्चाशत्पञ्च—पचपन, fiftyfive. भोक्तव्य—पालन करना होगा, will be ruled over. सगौड—बंगाल सहित, including Bengal. दक्षिणापथ—दक्षिणदेश, the country lying to the south of the Vindhya range.

Prose Order : भोजराजेन सगौडः दक्षिणापथः पञ्चाशत्पञ्च वर्षाणि सप्तमासदिनत्रयम् भोक्तव्यः ।

व्याख्या--भोक्तव्यः—भुज् + तव्य, पालयितव्य इत्यर्थः । सगौडः—गौडेन सह (बहु०) । दक्षिणापथः--विन्ध्याटवीतो दक्षिणदिशि स्थितो भूभागः ।

भोजराज बंगाल और दक्षिण पर पचपन वर्ष सात महीने तथा तीन दिन तक शासन करेंगे ।

इति । तत्तदाकर्ण्य राजा चातुर्यादपहसन्निव सुमुखोऽपि विच्छायवदनोऽभूत् । ततो राजा ब्राह्मणं प्रेषयित्वा निशीथे शयनमासाद्यैकाकी सन्व्यचिन्तयत्—'यदि राजलक्ष्मीर्भोजकुमारं गमिष्यति, तदाहं जीवन्नपि मृतः ।'

इति तत्तदायकर्ण्येति । **Vocabulary :** आकर्ण्य--सुनकर, having heard. चातुर्य--चतुराई, cunning cleverness. अपहसन्—मिथ्या हँसता हुआ, artificially smiling away. विच्छायवदन—कान्तिहीनमुख, one who has lost the colour of his face. निशीथ-- अर्धरात्रि, the dead of night. आसाद्य—पाकर, having got to.

व्याख्या--आकर्ण्य—श्रुत्वा । चातुर्यात्--नैपुण्येन । अपहसन्—परिहासव्याजेन स्वाभिप्रायं निह्नुवानः । विच्छायवदनः—विगता छाया (कान्तिः) यस्मात् तद् विच्छायम्, विच्छायं वदनं यस्य (बहु०) सः, मलिनमुखः । निशीथे—अर्धरात्रौ । आसाद्य—प्राप्य ।

जब राजा ने ये सभी बातें सुनीं तब वे चतुरता से कृत्रिम हँसी हँसने लगे । उनका सुन्दर मुख फीका पड़ गया । ब्राह्मण को विदा देकर रात को अकेले शय्या पर पड़े हुए सोचने लगे—'यदि राज्यलक्ष्मी भोज के पास चली गई तो मैं जीवित भी मृतक के समान ही रहूँगा ।'

तानीन्द्रियाण्यविकलानि तदेव नाम
सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव ।
अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः क्षणेन
सोऽप्यन्य एव भवतीति विचित्रमेतत् ॥७॥

तानीति । **Vocabulary :** अविकल--अक्षत, unimpaired. अप्रतिहत--अबाधित, unobstructed. अर्थोष्मन्-- धन की गर्मी, the heat of wealth.

Prose Order : तानि अविकलानि इन्द्रियाणि, तद् एव नाम, सा अप्रतिहता बुद्धिः, तदेव वचनम्, अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः अपि सः एव, क्षणेन अन्यः भवति इति एतत् विचित्रम् ।

व्याख्या—तानि यानि पूर्वमासन् । अविकलानि—अक्षतानि, अकुण्ठितानि । तदेव यद् धनसद्भावसमये आसीत् । नाम–नामधेयम् । अप्रतिहता—अकुण्ठिता । वचनम्—वाक्यम् । अर्थोष्मणा—वित्तोष्मणा । क्षणेन—सद्य एव । अन्यः—धनापगमेन पूर्वस्माद् भिन्नः । एतत्—इदम् । विचित्रम्—विस्मयकारि ।

आश्चर्य है कि जब मनुष्य की सम्पूर्ण इन्द्रियाँ भी वही हैं, नाम भी वही है, अक्षुण्ण बुद्धि भी वही है, वाणी भी वही है, धन की गर्मी से रहित पुरुष भी वही है तो लक्ष्मी के चले जाने से क्षण में ही वह दूसरा-सा मनुष्य मालूम होने लगता है ।

शरीरनिरपेक्षस्य दक्षस्य व्यवसायिनः ।
बुद्धिप्रारब्धकार्यस्य नास्ति किञ्चन दुष्करम् ॥८॥

शरीरेति । **Vocabulary** : निरपेक्ष—अपेक्षारहित, unmindful. दक्ष—निपुण, dexterous. व्यवसायिन्—उद्योगशील, industrious. दुष्कर—कठिन, difficult.

Prose Order : शरीरनिरपेक्षस्य दक्षस्य व्यवसायिनः बुद्धिप्रारब्धकार्यस्य किञ्चन दुष्करं नास्ति ।

व्याख्या—शरीरनिरपेक्षस्य—देहापेक्षामकुर्वतः । दक्षस्य—निपुणस्य । व्यवसायिनः—क्रियाशीलस्य । बुद्धिप्रारब्धकार्यस्य—बुद्ध्या प्रारब्धं कार्यं येन (बहु०), सः, तस्य । किञ्चन—किमपि । दुष्करम्—प्रसाध्यम् । नास्ति ।

शरीर तक की अपेक्षा न करनेवाले, निपुण, उद्यमी तथा बुद्धि से काम चलानेवाले मनुष्य के लिए कोई भी कार्य कठिन नहीं ।

असूययाहतेनैव पूर्वोपायोद्यमैरपि ।
कर्त्तृणा गृह्यते सम्पत्सुहृद्भिर्मन्त्रिभिस्तथा ॥९॥

असूययेति । **Vocabulary** : असूया—ईर्ष्या, jealousy. पूर्वोपाय—प्रथम उपाय अर्थात् सन्धि, conciliation.

Prose Order : असूयया आहतेन एव कर्त्रा सुहृद्भिः तथा मन्त्रिभिः, पूर्वोपायोद्यमैः अपि सम्पत् गृह्यते ।

व्याख्या—असूयया ईर्ष्यया आहतेन, ताडितेन, ईर्ष्याप्रेरितेन कर्त्रा विजिगीषुणा नृपेण मनीषिणा मनुष्येण वा सुहृद्भिः मित्रसाहाय्येन, तथा मन्त्रिभिः सचिवसाचिव्येन पूर्वोपायोद्यमैः सन्धिविग्रहादिभिश्चतुर्भिरुपायैरपि सम्पत् राज्यलक्ष्मीः, द्रविणैश्वर्यं वा गृह्यते आदीयते ।

ईर्ष्या से सन्तप्त उद्योगी पुरुष साम, दान आदि उपायों तथा उद्यम से मित्रों तथा मंत्रियों के साथ कार्य सम्पन्न कर सकता है ।

तत्रोद्यमे किं दुःसाध्यम् ?

तब उद्यम से क्या कुछ सम्पन्न नहीं हो सकता ?

अपि दाक्षिण्ययुक्तानां शङ्कितानां पदे पदे ।
परापवादभीरूणां दूरतो यान्ति संपदः ।।१०।।

अपि दाक्षिण्येति । **Vocabulary** : दाक्षिण्य—औपचारिकता, civility, customary formality. शंकित—शंका करनेवाले, suspicious. अपवाद—निन्दा, scandal. भीरु—भयशील, afraid.

Prose Order : दाक्षिण्ययुक्तानाम् अपि पदे पदे शङ्कितानां परापवादभीरूणां । दूरतः सम्पदः यान्ति ।

व्याख्या—दाक्षिण्ययुक्तानाम्—दाक्षिण्यम्—दक्षिणस्यभावः, दाक्षिण्येन युक्ताः (तृ० तत्पु०) ते, तेषाम् । पदे-पदे—प्रतिपदम् । शङ्कितानाम्—शङ्का सञ्जाता एषामिति, (तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्) शंका इतच् । परापवाद-भीरूणाम्—परेभ्योऽपवादः परापवादः (पञ्चमी तत्पु०) परकृतोऽपवाद इति वा (मध्यमपदलोपितत्पु०); परापवादाद् भीरुः (प० तत्पु०); तेषाम् । सम्पदः—सम्पत्तयः । दूरतो यान्ति—अपसरन्ति ।

प्रतिपद शंकित रहनेवाले अपनी निन्दा से भीत निपुण मनुष्यों से भी लक्ष्मी दूर भाग जाती है ।

किं च—

आदेयस्य प्रदेयस्य कर्त्तव्यस्य च कर्मणः ।
क्षिप्रमक्रियमाणस्य कालः पिबति सम्पदः ।।११।।

पिबतीति । **Vocabulary** : आदेय—देने के योग्य, pertaining to a receipt. प्रदेय—देने के योग्य, pertaining to a grant. क्षिप्र—शीघ्र, quickly. काल—time. सम्पत्—लाभ, profit.

Prose Order : आदेयस्य प्रदेयस्य कर्त्तव्यस्य कर्मण: च क्षिप्रम् अक्रियमाणस्य काल: तद्रसम् पिबति ।

व्याख्या—आदेयस्य—आदातुं योग्यस्य। प्रदेयस्य—दातव्यस्य। कर्त्तव्यस्य-करणीयस्य । कर्मण:—कार्यस्य। क्षिप्रम्—शीघ्रम् । अक्रियमाणस्य—विलम्बेन विधीयमानस्य । काल:—समय: । तद्रसम्—तस्य कर्मण: रसं सारम् । पिबति, नाशयतीत्यर्थ: ।

आदान-प्रदान(लेन-देन)तथा करणीय कार्य यदि शीघ्र न किया जाय तो काल सम्पत्ति को हड़प जाता है ।

अवमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा च पृष्ठत: ।
स्वार्थं समुद्धरेत्प्राज्ञ: स्वार्थभ्रंशोहि मूर्खता ॥१२॥

अवमानमिति । **Vocabulary** : अवमान—अपमान, insult. पुरस्कृत्य—सम्मुख रखकर। समुद्धरेत्—सिद्ध करे, should accomplish. स्वार्थभ्रंश—स्वार्थहानि, loss of self-interest.

Prose Order : प्राज्ञ: अवमानं पुरस्कृत्य मानं च पृष्ठत: कृत्वा स्वार्थं समुद्धरेत् । हि स्वार्थभ्रंश: मूर्खता ।

व्याख्या—प्राज्ञ: विद्वान् । अवमानं निरादरम्। पुरस्कृत्य—अग्रे कृत्वा । मानम्—आदरम्। पृष्ठत: कृत्वा—अनवगण्य। स्वार्थं समुद्धरेत्—स्वमर्थं साधयेत्। स्वार्थभ्रंश:-स्वार्थहानि: । मूर्खता—बुद्धिमान्द्यम् ।

विद्वान् मनुष्य अपमान को सामने तथा मान को पीछे रखकर (अर्थात् अपमान का सहन करके तथा मान की अपेक्षा न करके) अपना स्वार्थ सम्पन्न करे । स्वार्थहानि ही मूर्खता है ।

न स्वल्पस्य कृते भूरि नाशयेन्मतिमान्नर: ।
एतदेवात्र पाण्डित्यं यत्स्वल्पाद्भूरिरक्षणम् ॥१३॥

न स्वल्पस्येति । **Vocabulary :** स्वल्प—a little. कृते—लिए, for the sake of. पाण्डित्यम्—बुद्धिमत्ता, wisdom.

Prose Order : मतिमान् नरः स्वल्पस्य कृते भूरि न नाशयेत् । अत्र एतत् एव पाण्डित्य यत् स्वल्पात् भूरिरक्षणम् ।

व्याख्या—मतिमान्—बुद्धिमान् । स्वल्पस्य-नातिमहतः वस्तुनः । कृते—अर्थे । भूरि—महत् । न नाशयेत् । पाण्डित्यम्—वैदुष्यम् । स्वल्पनाशेन । भूरिरक्षणम्—महद्वस्तुसंरक्षणम् ।

सर्वनाशे समुत्पन्ने ह्यर्धं त्यजति पण्डितः ।
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुस्सहः ॥

बुद्धिमान् मनुष्य अल्प के लिए बहुत का नाश न करे । बुद्धिमत्ता इसी में है कि अल्प के नष्ट हो जाने से बहुत की रक्षा हो सके ।

जातमात्रं न यः शत्रुं व्याधिं वा प्रशमं नयेत् ।
अतिपुष्टाङ्गयुक्तोऽपि स पश्चात्तेन हन्यते ॥१४॥

जातमात्रमिति । **Vocabulary :** जातमात्रम्—उत्पन्न होते ही, as soon as arisen. शत्रु—enemy. व्याधि— disease. प्रशमं नयेत्—शान्त करता है, stops. अतिपुष्ट—पालन-पोषण से वर्धित, made strong by nourishment.

Prose Order : यः जातमात्रं शत्रुं व्याधिं वा प्रशमं न नयेत्, सः अतिपुष्टाङ्गयुक्तः अपि पश्चात् तेन हन्यते ।

व्याख्या—यः जातमात्रम्—उत्पत्तिसमय एव । प्रशमं न नयेत्—न नाशयेत् । अतिपुष्टाङ्गयुक्तः—अतिपुष्टैः अङ्गैः युक्तः (त० तत्पु०), पुष्टशरीरोऽपि सः । तेन शत्रुणा, व्याधिना वा । हन्यते विनाश्यते ।

उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यो भूतिमिच्छता ।
समौ हि शिष्टैराम्नातौ वर्त्स्यन्तावामयश्च सः ॥

जो व्यक्ति शत्रु तथा रोग को उत्पन्न होते ही नष्ट नहीं करता, सबल शरीर भी वह व्यक्ति कुछ समय के बाद उस शत्रु तथा व्याधि से मृत्यु को प्राप्त होता है ।

प्रज्ञागुप्तशरीरस्य किं करिष्यन्ति संहताः ।
हस्तन्यस्तातपत्रस्य वारिधारा इवारयः ॥१५॥

प्रज्ञेति । **Vocabulary** : प्रज्ञा-बुद्धि, wisdom. गुप्त-रक्षित, protected. संहत—इकट्ठे हुए, firmly united. न्यस्त—रखा हुआ, held. आतपत्र—छत्र, umbrella. वारिधारा—जल की धारा, torrents of water.

Prose Order : हस्तन्यस्तातपत्रस्य वारिधाराः इव प्रज्ञागुप्तशरीरस्य संहताः अरयः किं करिष्यन्ति ?

व्याख्या—हस्तन्यस्तातपत्रस्य—आतपत्रम्—आतपात् त्रायत इत्युपपद-समासः, हस्तन्यस्तम्—हस्ते न्यस्तम् (स० तत्पु०), हस्तन्यस्तम् आतपत्रं यस्य (बहु०) सः, तस्य—हस्तगृहीतच्छत्रस्य । वारिधाराः—जलधाराः । प्रज्ञागुप्त-शरीरस्य—प्रज्ञया गुप्तम् (तृ० तत्पु०), प्रज्ञागुप्तं शरीरं यस्य (बहु०) सः, तस्य बुद्धिसंवरणावृतदेहस्य । संहताः—समेताः । अरयः—शत्रवः । किं करि-ष्यन्ति, न किमपि करिष्यन्तीत्यर्थः ।

जिसका शरीर बुद्धि से रक्षित है, सम्मिलित शत्रु भी उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते । जिस प्रकार हाथ में छाता लिये हुए व्यक्ति का जल की धाराएँ कुछ बिगाड़ नहीं सकतीं ।

अफलानि दुरन्तानि समव्ययफलानि च ।
अशक्यानि च वस्तूनि नारभेत विचक्षणः ॥१६॥

अफलानीति । **Vocabulary** : अफल—फल-रहित, fruitless. दुरन्त—कठिनता से सिद्ध होनेवाले, the end whereof is difficult to achieve. समव्ययफल—जिनमें लाभ और हानि समान हो ।

Prose Order : विचक्षणः अफलानि दुरन्तानि समव्ययफलानि च अशक्यानि वस्तूनि च न आरभेत ।

व्याख्या—विचक्षणः—बुद्धिमान्नरः । अफलानि—फलहीनानि । दुरन्तानि दुस्साध्यानि । समव्ययफलानि—व्ययः (=हानिः) च फलः (=लाभः) च

इति व्ययफले (द्वन्द्व), समे (तुल्ये) व्ययफले यत्र (बहु०) तानि। अशक्यानि असाध्यानि। न आरभेत—न व्यवस्येत्।

बुद्धिमान् मनुष्य ऐसे काम कभी शुरू न करे, जिनका कुछ फल न हो या जिनका परिणाम बुरा हो अथवा जिनकी सिद्धि में आय और व्यय बराबर हो अथवा जिनकी सफलता सम्भव न हो।

ततश्चैवं विचिन्तयन्नभुक्त एव दिनस्य तृतीये याम एक एव मन्त्रयित्वा वङ्गदेशाधीश्वरस्य महाबलस्य वत्सराजस्याकारणाय स्वमङ्गरक्षकं प्राहिणोत्। स चाङ्गरक्षको वत्सराजमुपेत्य प्राह—'राजा त्वामाकारयति' इति। ततः स रथमारुह्य परिवारेण परिवृतः समागतो रथादवतीर्य राजानमवलोक्य प्रणिपत्योपविष्टः। राजा च सौधं निर्जनं विधाय वत्सराजं प्राह—

ततश्चैवमिति। **Vocabulary :** अभुक्त—आहार-रहित, one who has not taken meals. याम—पहर। आकारण—आह्वान, sending for. अङ्गरक्षक—शरीर-रक्षक, a body-guard. प्राहिणोत्—भेजा, sent. उपेत्य—निकट जाकर, approaching. आकारयति—बुलाता है, sends for. परिवार—कुटुम्ब, family. परिवृत—युक्त, accompanied. सौध—महल, palace. निर्जन—जनरहित, एकान्त, solitary.

व्याख्या:—विचिन्तयन्—मन्त्रयन्। अभुक्तः—निराहारः। यामे—प्रहरे। आकारणाय—आह्वानाय। अङ्गरक्षकम्—शरीररक्षकम्। प्राहिणोत्—प्रेषयामास। उपेत्य—उप + इ + क्त्वा (= ल्यप्), प्राप्य। आकारयति—आह्वयति। परिवारेण—कुटुम्बेन। परिवृतः—समायुक्तः। सौधम्—प्रासादम्। निर्जनम्—जन-रहितम्।

तब इस प्रकार विचार करते हुए उसने भोजन नहीं किया और दिन के तीसरे पहर में स्वयं ही बुद्धिपूर्वक सोच-विचारकर महाबली वंगदेश के राजा वत्सराज को बुलाने के लिए अपने अङ्गरक्षक को भेजा और वह अङ्गरक्षक वत्सराज के पास आकर बोला—राजा आपको बुला रहे हैं। तब वह रथ में बैठ परिवार के साथ आया। रथ से उतरकर और राजा को देखकर

प्रणाम करके बैठ गया । राजा ने महल से लोगों को हटाकर (अर्थात् एकान्त में) वत्सराज से कहा—

राजा तुष्टोऽपि भृत्यानां मानमात्रं प्रयच्छति ।
ते तु संमानितास्तस्य प्राणैरप्युपकुर्वते ॥१७॥

राजेति । **Vocabulary:** तुष्ट—प्रसन्न, pleased. सम्मानित—मान को प्राप्त, honoured.

Prose Order : तुष्टः अपि राजा भृत्यानां मानमात्रं प्रयच्छति । ते तु सम्मानिताः (सन्तः) प्राणैः अपि तस्य उपकुर्वते ।

व्याख्या—तुष्टः प्रसन्नोऽपि राजा भूपतिः भृत्यानां मध्ये, निर्धारणे षष्ठी, कस्मैचिदपि प्रीतिपात्राय मानमात्रं सम्मानमेव नत्वन्यत् प्रयच्छति वितरति । ते भृत्यास्तु सम्मानिताः, सम्मान+इतच्, सञ्जातसम्मानः, तस्य राज्ञः प्राणैः स्वजीवितेनापि उपकुर्वते प्रत्युपकुर्वन्ति । राजापेक्षया भृत्यानामेव गौरवमिति भावः ।

प्रसन्न होकर राजा सेवकों को केवल सम्मान देता है और वे सम्मानित होकर उसका प्राणों से भी उपकार करते हैं ।

ततस्त्वया भोजो भुवनेश्वरीविपिने हन्तव्यः प्रथमयामे निशायाः । निरश्चान्तः-पुरमानेतव्यम्' इति । स चोत्थाय नृपं नत्वाह—'देवादेशः प्रमाणम् । तथापि भवल्लालनात्किमपि वक्तुकामोऽस्मि । ततः सापराधमपि मे वचः क्षन्तव्यम् ।

ततस्त्वयेति । **Vocabulary :** विपिन—वन, forest. अन्तःपुर—रनवास, harem.

व्याख्या—भुवनेश्वरीविपिने—भुवनेश्वर्याः विपिनम् (ष० तत्पु०), तस्मिन् । भवल्लालनात्—भवत्कर्तृकं लालनम् (कर्म०) तस्मात् । वक्तुकामः —ब्रू (वच्)+तुमुन्, वक्तुं कामः—'तुं काममनसोरपि' अनुनासिकलोपः । सापराधम्—अपराधेन सह (बहु०), सहस्य सभावः । क्षन्तव्यम्—क्षम्+तव्य ।

तो तुम रात्रि के पहले प्रहर में भुवनेश्वरी-वन में भोज का वध करो । उसके सिर को अन्तःपुर में लाना। वत्सराज खड़ा हो गया और राजा को

नमस्कार करके बोला । आपकी आज्ञा शिरोधार्य है तो भी आपकी प्रभुता को ध्यान में रखते हुए कुछ कहना चाहता हूँ । इसलिए मेरे सापराध वचन को भी आप क्षमा करेंगे ।

भोजे द्रव्यं न सेना वा परिवारो बलान्वितः ।
परं पोत इवास्तेऽद्य स हन्तव्यः कथं प्रभो ॥१८॥

भोजे इति । Vocabulary : द्रव्य—धन, treasure. परिवार—परिचारक, attendants. अन्वित—युक्त, accompanied. पोत—जलयान, a sea-faring boat.

Prose Order : भोजे द्रव्यं न, सेना वा न, बलान्वितः परिवारः न, परम् अद्य पोत इव आस्ते । प्रभो ! सः कथं हन्तव्यः ?

व्याख्या—भोजे कोशादिद्रव्यं नास्ति, सेनापि नास्ति । बलान्वितः—बलेन अन्वितः, (अनु+इ+क्त), युक्तः । परिवारो भृत्यादिवर्गोऽपि नास्ति । अद्य पोतः जलयानम् इव आस्ते, यथा जलयानं प्रबलवातोर्मिभिरास्फालितं सद् अर्णवे निमज्जेत् तथैवायमपि भवद्बलौघेनाहतस्सन् । विनश्येदिति भावः । प्रभो राजन् ! स कथं हन्तव्यः, न हन्तव्य इत्याभिप्रायः ।

न भोज के पास धन है, न सेना है और ना ही बली परिवार है । वह तो अब एक नन्हा बालक है । स्वामिन् ! उसे मार डालना उचित नहीं ।

पारम्पर्य इवासक्तस्त्वत्पाद उदरंभरिः ।
तद्वधे कारणं नैव पश्यामि नृपपुंगव ॥१९॥

पारम्पर्य इति । Vocabulary : पारम्पर्य—वंशपरम्परागत सेवक, hereditary ministrant. आसक्त—वशीभूत, attached. उदरम्भरिः—उदर को भरनेवाला, one who fills one's belly. पुंगव—श्रेष्ठ, the best.

Prose Order : उदरम्भरिः पारम्पर्य इव त्वत्पादे आसक्तः । हे नृपपुङ्गव ! तद्वधे कारणं नैव पश्यामि ।

व्याख्या—उदरम्भरिः—उदरभरणमात्रजीवितफलः । पारम्पर्यः—वंशपरम्परागतः सेवक इव अयं भोजकुमारः । त्वत्पादे आसक्तः—त्वदाश्रितः । हे

नृपपुङ्गव—हे नृपश्रेष्ठ ! अहं तद्वधे तद्धनने कारणं कमपि हेतुं न पश्यामि नावलोकयामि ।

पेट भरने के हेतु वह परम्परागत सेवक के समान आपके चरणों में खड़ा है । नृपश्रेष्ठ ! उसके निधन में मैं कोई कारण नहीं देखता हूँ ।

ततो राजा सर्वं प्रातः सभायां प्रवृत्तं वृतमकथयत् । स च श्रुत्वा हसन्नाह—

तत इति । **Vocabulary :** प्रवृत्त—घटित ।

तब राजा ने जो घटना प्रातःकाल सभा में हुई थी, वह सब बताई । वत्सराज ने सुना और हँसकर कहा ।

त्रैलोक्यनाथो रामोऽस्ति वसिष्ठो ब्रह्मपुत्रकः ।
तेन राज्याभिषेके तु मुहूर्त्तः कथितोऽभवत् ॥२०॥

त्रैलोक्यनाथ इति । **Vocabulary :** त्रैलोक्यनाथ—त्रिलोकीनाथ, lord of three worlds.

Prose Order : रामः त्रैलोक्यनाथः अस्ति । वसिष्ठः ब्रह्मपुत्रकः अस्ति । तेन तु राज्याभिषेके मुहूर्त्तः कथितः अभवत् ।

व्याख्या—त्रैलोक्यनाथः—त्र्यवयवोलोकः त्रिलोकः (मध्यमपदलोपिकर्म०) त्रिलोक एव त्रैलोक्यम्, स्वार्थे ष्यञ् । त्रैलोक्यस्य नाथः—त्रैलोक्यनाथः त्रिलोकीश्वरः । राज्याभिषेके—राज्येऽभिषेकः (स० तत्पु०) तस्मिन् ।

राम त्रैलोक्य के स्वामी थे । वसिष्ठ ब्रह्मा के पुत्र थे । (राम के) राज्याभिषेक का उन्होंने मुहूर्त्त निकाला था ।

तन्मुहूर्त्तेन रामोऽपि वनं नीतोऽवनीं विना ।
सीतापहारोऽप्यभवद्विरिञ्चिवचनं वृथा ॥२१॥

तन्मुहूर्त्तेनेति । **Vocabulary :** मुहूर्त्त—an instant. अवनि—पृथ्वी, earth. अपहार—अपहरण, carrying away. विरिञ्चि—ब्रह्मा ।

Prose Order : तन्मुहूर्त्तेन रामः अपि अवनिं विना वनं नीतः । सीतापहारः अपि अभवत्, विरिञ्चिवचनं वृथा अभवत् ।

व्याख्या—तन्मुहूर्त्तेन—स चासौ मुहूर्त्तः (कर्म०), तेन, वसिष्ठोक्तक्षणेन । अवनिं विना—राज्यं विना । सीतापहारः—सीतायाः अपहारः (ष० तत्पु०),

रावणकर्त्तृकसीतापहरणम् । विरिञ्चिवचनम्—विरिञ्चेः वचनम् (ष० तत्पु०), ब्रह्मवाक्यम् । वृथा—निष्फलम् अभवत् ।

उस मुहूर्त्त में राम को राज्य तो नहीं मिला, किन्तु उन्हें वन को जाना पड़ा । सीता का अपहरण हुआ । ब्रह्मा का वचन भी वृथा हुआ ।

जातः कोऽयं नृपश्रेष्ठ किञ्चिज्ज्ञ उदरम्भरिः ।
यदुक्त्या मन्मथाकारं कुमारं हन्तुमिच्छसि ॥२२॥

जात इति । **Vocabulary** : किञ्चिज्ज्ञ—अल्पज्ञ, half-wise उदरम्भरि—उदर भरनेवाला, selfishly voracious. मन्मथ—कामदेव, cupid. आकार—form. कुमार—prince.

Prose Order : नृपश्रेष्ठ ! किञ्चिज्ज्ञः उदरम्भरिः कः अयं जातः, यदुक्त्या मन्मथाकारं कुमारं हन्तुम् इच्छसि ।

व्याख्या—नृपश्रेष्ठ—नृषु श्रेष्ठः (निर्धारणे सप्तमी) तत्सम्बुद्धौ । किञ्चिज्ज्ञः—किञ्चिद् जानातीति, उपपदसमासः । उदरम्भरिः उदरभरण—मात्रजीवितोद्देश्यः । यदुक्त्या—यद्वचसा । मन्मथाकारं कामदेवसदृशाकृतिम् ।

महाराज ! कौन है यह व्यक्ति—पेट को भरनेवाला और अल्पज्ञ, जिसके कथन पर आप कामदेव सदृश कुमार का निधन करना चाहते हैं ? ।

किं च—

किं नु मे स्यादिदं कृत्वा किं नु मे स्यादकुर्वतः ।
इति सञ्चिन्त्य मनसा प्राज्ञः कुर्वीत वा न वा ॥२३॥

किन्विति । **Vocabulary** : अकुर्वतः—न करते हुए, not undertaking.

Prose Order : इदं कृत्वा मे किन्नु स्यात्, अकुर्वतः मे किन्नु स्यात् इति मनसा सञ्चिन्त्य प्राज्ञः वा कुर्वीत वा न कुर्वीत ।

व्याख्या—इदं कार्यं कृत्वा विधाय मे मम किन्नु, नु इति वितर्के, किं फलं स्याद् भविष्यति, अकुर्वतः इदं कार्यम् असम्पादयतः मम किम् आपतिष्यति इत्येवंप्रकारेण मनसा चेतसा सञ्चिन्त्य विचार्य प्राज्ञः बुद्धिमान् नरः कार्यं कुर्वीत ।

और

इस काम के करने से मुझे क्या होगा और न करने से क्या होगा—यह मन में विचार करके बुद्धिमान् मनुष्य को काम करना अथवा नहीं करना चाहिए ।

उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यजातं
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।
अतिरभसकृतानां कर्मणामा विपत्ते-
र्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः ॥२४॥

उचितमिति । Vocabulary : उचित—करने योग्य, proper. अनुचित—बुरा, improper. कार्यजात--कार्यसमूह । परिणति—परिणाम, result. अवधार्या—सोच लेना चाहिए, should be considered. यत्नतः —यत्नपूर्वक, carefully. अतिरभस--अतिशीघ्रता, hot-haste. आविपत्तेः —मरणपर्यन्त, till death. हृदयदाही—हृदय को जलानेवाला, tormenting to the heart. शल्य—बाण, dart. विपाक—परिणाम, result.

Prose Order : उचितम् अनुचितं वा कार्यजातं कुर्वता पण्डितेन परिणतिः यत्नतः अवधार्या । अतिरभसकृतानां कर्मणां विपाकः आविपत्तेः शल्यतुल्यः हृदयदाही भवति ।

व्याख्या--उचितं कुर्त्तुं योग्यम् । अनुचितं कर्त्तुम् अयोग्यं वा कार्यजातं कार्यसमूहम् । कुर्वता विदधता । पण्डितेन विदुषा जनेन । परिणतिः परिणामः । यत्नतः यत्नेन । अवधार्या अनुसन्धेया । अतिरभसकृतानाम्—अतिरभसेन सहसा, कृतानाम् अनुष्ठितानाम् । कर्मणां कार्याणाम् । विपाकः फलम् । आविपत्तेः विपत्तिपर्यन्तं मरणावधि (आङ् मर्यादाभिविध्योः) । शल्यतुल्यः शल्येन बाणेन तुल्यः समः (तृ० तत्पु०), शल्यस्य तुल्य इति वा (ष० तत्पु०), (तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यामन्यतरस्याम्) । हृदयदाही—हृदयं दहतीति तच्छीलः, हृदय + दह + णिनि (सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये) । हृदयदहनशीलो भवति । मालिनी वृत्तम्—ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः ।

'सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ।
वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः ॥

उचित अथवा अनुचित कामों को करते हुए बुद्धिमान् मनुष्य को यत्नपूर्वक उनके परिणाम पर विचार करना चाहिए । विचार किये बिना आरब्ध कामों का परिणाम मर्मस्थान पर आघात के समान हृदय को जलाता रहता है ।

किञ्च—

येन सहासितमशितं हसितं कथितं च रहसि विस्रब्धम् ।
तं प्रति कथमसतामपि निवर्त्तते चित्तमामरणात् ॥२५॥

किञ्चेति । **Vocabulary :** आसितम्—बैठा गया है, is seated. अशितम्—खाया है, is fed. हसितम्—हँसा है, is laughed. कथितम्—वार्त्तालाप किया है, is conversed. असत्—दुष्ट मनुष्य, the wicked. आमरणात्—मृत्युपर्यन्त, till death.

Prose Order : येन सह आसितम्, अशितम्, हसितम्, रहसि विस्रब्धं कथितं च (तस्मात्) सम्प्रति असताम् अपि चित्तम् आमरणात् कथं निवर्त्तते ?

व्याख्या—येन मत्यन सह । आसितं स्थितम् । येन सह अशितं भुक्तम् । येन सह हसितम् उपहासादिविनोदैः कालो यापितः । रहसि जनशून्ये स्थाने । विस्रब्धं विश्वासपूर्वकम् । कथितं सम्भाषणादिव्यापारः कृतः । असतां दुर्जनानामपि । चित्तं मनः । तस्माद् नराद् । आमरणाद् मृत्युपर्यन्तम् । कथं निवर्त्तते ? नैव निवर्त्तनीयम् । चेन्निवर्त्तते महदाश्चर्यम् ।

और

जिस व्यक्ति के साथ हम बैठे हों, खाया हो, हँसे हों, एकान्त में विश्वस्त रूप से वार्त्तालाप किया हो, उस व्यक्ति से दुष्टजनों का भी चित्त जीवनपर्यन्त कैसे हट सकता है ?

किं च । अस्मिन्हते वृद्धस्य राज्ञः सिन्धुलस्य परमप्रीतिपात्राणि महावीरास्तवैवानुमते स्थिताः, ते त्वन्नगरमुल्लोलकल्लोलाः पयोधरा इव प्लावयिष्यन्ति । चिराद्बद्धमलेऽपि त्वयि प्रायः पौरा भोजं भुवो भर्त्तारं भावयन्ति ।

किञ्चेति । **Vocabulary :** प्रीतिपात्र—प्रेमभाजन, objects of love. अनुमत—आज्ञा, obedience. उल्लोल—चंचल, surging. कल्लोल—लहर, wave. पयोधर—मेघ, cloud. प्लावयिष्यन्ति—डुबो देंगे, will flood. बद्धमूल—जिसकी जड़ दृढ़ हो गई हो, whose root is firm. भावयन्ति—मानते हैं, regard.

व्याख्या—परमप्रीतिपात्राणि—अतिस्नेहभाजनानि । पात्रशब्दस्य नित्य-नपुंसकत्वम् । महावीराः—महान्तश्च ते वीराः (कर्म०), अनुमते आज्ञायाम् । उल्लोलकल्लोलाः—उल्लोला अतिचञ्चलाः कल्लोला वीचय ऊर्मयो वा येषाम् (बहु०), ते । पयोधरा मेघा अर्णवा वा । प्लावयिष्यन्ति—आर्द्रीकरिष्यन्ति, विनाशयिष्यन्तीत्यर्थः बद्धमूले—बद्धं मूलं यस्य (बहु०) सः, तस्मिन् । पौराः पुरवासिनः, प्रजा इत्यर्थः । भावयन्ति—मन्यन्ते ।

और इसके मार डालने पर वृद्ध राजा सिन्धुल के अत्यन्त प्रेमपात्र बली वीर, जो जब आपके अनुयायी हैं, चंचल लहरोंवाले मेघों के समान आपके नगर को आप्लावित कर देंगे । यद्यपि आपके चिरकाल तक शासन करते हुए राज्य की नींव दृढ़ हो गई है तो भी प्रायः पुरवासी लोग भोज को राजा मानते हैं ।

किञ्च—

सत्यपि च सुकृतकर्मणि दुर्नीतिश्चेच्छ्रियं हरत्येव ।
तैलैः सदोपयुक्तां दीपशिखां विदलयति हि वातालिः ॥२६॥

किञ्चेति । **Vocabulary :** सुकृत—पुण्य, merit. सुकृतकर्मन्—पुण्यकर्म, meritorious deed. दुर्नीति—दुर्व्यवहार, maladministration श्रियं हरति—यश को दूषित करती है, stains glory. सदा—नित्य, always. उपयुक्त— full of. दीपशिखा—दीपक की शिखा, the flame of lamp. वातालि—प्रबल वायु, a whirlwind. विदलयति—बुझा देती है, extinguishes.

Prose Order : सुकृतकर्मणि सति अपि चेद् दुर्नीतिः श्रियं हरति एव । हि वातालिः सदा तैलैः उपयुक्तां दीपशिखां विदलयति ।

व्याख्या—सुकृतकर्मणि—सुकृतं कर्म (कर्म०), तस्मिन्, पुण्यकर्मणि। सत्यपि विद्यमानेऽपि। चेद् यदि। दुर्नीतिः दुर्नयः। पदं लभते। सः। एव निश्चयेन। श्रियं शोभां लक्ष्मीं वा हरति विनाशयति। हि—यथा। वातालिः प्रबलो वायुः। सदा नित्यम्। तैलैः—स्नेहेन। उपयुक्ताम्—अन्विताम्। दीपशिखां—दीपकवर्त्तिम्। विदलयति—शमयति।

आरब्ध कार्य श्रेष्ठ होने पर भी बुरी नीति का आश्रय लक्ष्मी का नाश कर देता है। आँधी सदा तेल से पूर्ण दीप-शिखा को निश्चित बुझा देती है।

'देव पुत्रवधः क्वापि न हिताय।' इत्युक्तं वत्सराजवचनमाकर्ण्य राजा कुपितः प्राह—'त्वमेव राज्याधिपतिः, न तु सेवकः।

देवेति। **व्याख्या**—त्वमेव राज्याधिपतिः, नतु सेवकः—इति काकुः। 'भिन्नकण्ठध्वनिधीरैः काकुरित्यभिधीयते।' सेवकत्वेऽपि राजेवादिशसीति तस्याभिप्रायः।

देव ! पुत्र का वध कभी हितकर नहीं होता। वत्सराज के इस वचन को सुनकर क्रोध में आकर राजा ने कहा—तुम तो राज्य के स्वामी हो न कि सेवक।

स्वाम्युक्ते यो न यतते स भृत्यो भृत्यपाशकः।
तज्जीवनमपि व्यर्थमजागलस्तनाविव' ॥२७॥

स्वाम्युक्त इति। **Vocabulary:** भृत्यपाशक—नीच सेवक, bad servant. अजागलस्तन—बकरी के गले में लटकता हुआ मांस, a nipple in the neck of a goat.

Prose Order: यः स्वाम्युक्ते न यतते स भृत्यः भृत्यपाशकः। अजागलस्तनाविव तज्जीवनमपि व्यर्थम्।

व्याख्या—यो नरः स्वाम्युक्ते प्रभोरादेशे न यतते न चेष्टते स भृत्यः सेवकः भृत्यपाशकः सेवकाधमः। अजागलस्तनाविव—अजाया गलः—अजागलः (ष० तत्पु०), अजागले स्तनः (स० तत्पु०), अजागलस्तनः तौ अजाकण्ठ-

शिथिलमांसपिण्डौ इव (इवेन सह समासो विभक्त्यलोपश्च), तज्जीवनम् अपि तज्जीवितमपि व्यर्थं निष्फलम् ।

जो भृत्य स्वामी की आज्ञा का पालन नहीं करता, वह अधम भृत्य है। उसका जीवन भी बकरी के गले के माँस की नाईं व्यर्थ है।

इति । ततो वत्सराजः 'कालोचितमालोचनीयम्' इति मत्वा तूष्णींबभूव ।

अथ लम्बमाने दिवाकरे उत्तुङ्गसौधोत्सङ्गादवतरन्तं कुपितमिव कृतान्तं वत्सराजं वीक्ष्य समेता अपि विविधेन मिषेण स्वभवनानि प्रापुर्भीताः सभासदः। ततः स्वसेवकान्स्वागारपरित्राणार्थं प्रेषयित्वा रथं भुवनेश्वरीभवनाभिमुखं विधाय भोजकुमारोपाध्यायाकारणाय प्राहिणोदेव वत्सराजः । स चाह पण्डितम्—'तात, त्वामाकारयति वत्सराजः' इति । सोऽपि तदाकर्ण्य वज्राहत इव, भूताविष्ट इव, ग्रहग्रस्त इव, तेन सेवकेन करेण धृत्वानीतः पण्डितः। तं च बुद्धिमान्वत्सराजः सप्रणाममित्याह—'पण्डित, तात, उपविश। राजकुमारं जयन्तमध्ययनशालाया आनय' इति । आयान्तं जयन्तं कुमारं किमप्यधीतं पृष्ट्वानैषीत् । पुनः प्राह पण्डितम्—'विप्र, भोजकुमारमानय' इति । ततो विदितवृत्तान्तो भोजः कुपितो ज्वलन्निव शोणितेक्षणः समेत्याह—'आः, पाप, राज्ञो मुख्यकुमारमेकाकिनं मां राजभवनाद्बहिरानेतुं तव का नाम शक्तिः' इति वामचरणपादुकामादाय भोजेन तालुदेशे हतो वत्सराजः । ततो वत्सराजः प्राह—'भोज, वयं राजादेशकारिणः' इति बालं रथे निवेश्य खड्गमपकोशं कृत्वा जगामाशु महामायाभवनम्। ततो गृहीते भोजे लोकाः कोलाहलं चक्रुः। हुंभावश्च प्रवृत्तः। 'किं किम्' इति ब्रुवाणा भटा विक्रोशन्त आगत्य सहसा भोजं वधाय नीतं ज्ञात्वा हस्तिशालामुष्ट्रशालां वाजिशालां रथशालां प्रविश्य सर्वाङ्गं जघ्नुः । ततः प्रतोलीषु राजभवनप्राकारवेदिकासु बहिर्द्वारनिकटङ्केषु पुरसमीपेषु भेरीपटहमुरजमड्डुकडिण्डिमनिनदाडम्बरेणाम्बरं विडम्बितमभूत। केचिद्विमलासिना केचिद्विषेण केचित्कुन्तेन केचित्पाशेन केचिद्वह्निना केचित्परशुना केचिद्भल्लेन केचित्तोमरेण केचित्प्रासेन केचिदम्भसा केचिद्धारायां ब्राह्मणयोषितो राजपुत्रा राजसेवका राजानः पौराश्च प्राणपरित्यागं दधुः । ततः सावित्रीसंज्ञा भोजस्य जननी विश्वजननीव स्थिता दासीमुखात्स्वपुत्रस्थितिमाकर्ण्य कराभ्यां नेत्रे पिधाय रुदती प्राह—'पुत्र,

पितृव्येन कां दशां गमितोऽसि ? ये मया नियमा उपवासाश्च त्वत्कृते कृताः, तेऽद्य मे विफला जाताः । दशापि दिशामुखानि शून्यानि । पुत्र, देवेन सर्वज्ञेन सर्वशक्तिना मृष्टाः श्रियः । पुत्र, एनं दासीवर्गं सहसा विच्छिन्नशिरसं पश्य, इत्युक्त्वा भूमावपतत् ।

ततः प्रदीप्ते वैश्वानरे समुद्भूतधूमस्तोमेनैव मलीमसे नभसि पापत्रासादिव पश्चिमपयोनिधौ मग्ने मार्तण्डमण्डले महामायाभवनमासाद्य प्राह भोजं वत्सराजः —'कुमार, भृत्यानां दैव !, ज्योतिःशास्त्रविशारदेन केनचिद् ब्राह्मणेन तव राज्यप्राप्तावुदीरितायां राज्ञा भवद्वधो व्यादिष्टः' इति । भोजः प्राह—

ततो वत्सराज इति । **Vocabulary :** कालोचित—समयानुकूल, according to the demand of the occasion. आलोचनीयम्—कार्य करना चाहिए should act तूष्णीम्बभूव—चुप हो गया, was silent. लम्बमाने—अस्त होने पर, on going to set. दिवाकर—सूर्य । उत्तुङ्ग—ऊँचा, lofty. सौध—महल, a palace. उत्सङ्ग—गोद, lap. अवतरन्तम्—उतरते हुए descending. कृतान्त—यम, God of death. समेत—संहृत, एकत्रित, gathered together. विविध—नाना प्रकार, various. मिष—बहाना, pretext. आगार—घर, a house. प्रेषयित्वा—भेजकर, having sent. अभिमुख—ओर, towards. आकारण —बुलाना, sending for. प्राहिणोत्—भेजा, sent for. वज्र—thunderbolt. आहत—ताडित, struck. भूत—a devil. आविष्ट—possessed. ग्रह—evil spirit. ग्रस्त—seized. शोणितेक्षण—लाल आँखोंवाला, red-eyed, angry. पादुका—जूता, a shoe. अपकोश—म्यान से निकाला हुआ, taken out of the sheath. विक्रोशन्तः—चिल्लाते हुए crying. जघ्नुः—मारने लगे, began to kill. प्रतोली—ऊँची गली, high street. प्राकार—दीवाल, encircling wall. वेदिका—courtyard. बहिर्द्वार—बाहरी द्वार, outer gate. विटङ्क—शिखर, the loftiest place. भेरी—kettle-drum. पटह—war drum. मुरज—tambourne. मड्डुक—

drum. डिंडिम--tabor. निनदाडम्बर--शब्द की गूँज, resounding noise. असि--तलवार, sword. कुन्त--भाला, spear. पाश--फाँसी, noose. परशु- फरसा, कुल्हाड़ी axe. भल्ल--बरछी, arrow. तोमर--iron club. प्रास--खांडा, javelin. अम्भस्--जल, water. मृष्ट--पोंछा हुआ, wiped off. स्तोम--समूह, mass. मलीमस--अन्धकारित, darkened. उदीरित--कहा हुआ, expressed.

व्याख्या--कालोचितम्--समयानुकूलम् । आलोचनीय--विचारणीयम्, वर्त्तव्यमिति भावः--तूष्णीं बभूव--मौनमास । लम्बमाने--अस्तङ्गच्छति । दिवाकरे--सूर्ये । उत्तुङ्गसौधोत्सङ्गात्--उत्तुङ्ग--उन्नतः, सौधः--प्रासादः, तस्य उत्सङ्गात्--क्रोडात् । अवतरन्तम्--नीचैरागच्छन्तम् । कृतान्तं--यमम् । वीक्ष्य--दृष्ट्वा । समेताः--संहताः । मिषेण--व्याजेन । स्वागारपरित्राणार्थम्--स्वभवनरक्षार्थं । आकारणाय--आह्वानाय । प्राहिणोत्--प्रेषयामास । वज्राहतः--वज्रेण आहतः ताडितः । शोणितेक्षणः--शोणिते शोणवर्णे ईक्षणे नेत्रे यस्य सः--रक्ताक्षः । अपकोशम्--कोशाद् अपगतम् । प्रतोलीषु--उन्नतरथ्यासु । बहिर्द्वारविटङ्केषु--पुरद्वारशिखरेषु । प्रदीप्ते--प्रज्वलिते । वैश्वानरे--वह्नौ । समुद्भूतधूमस्तोमेन--समुद्भूतः समुत्थितो यो धूमस्तस्य स्तोमेन समूहेन । मलीमसे--मालिन्यं गते । नभसि--गगने । पापत्रासात्--पापभयात् । पश्चिमपयोनिधौ--पश्चिमसागरे । मार्तण्डमण्डले--सूर्यमण्डले । आसाद्य--प्राप्य । उदीरितायाम्--उक्तायाम् ।

तब वत्सराज ने सोचा कि समय के अनुकूल ही चलना चाहिए । वह चुप रहा । जब सूर्यदेव अस्त होने लगे तब ऊँचे महल से उतरते हुए कुपित यम के सदृश वत्सराज को देखकर सभी सभिक भयभीत होकर अलग-अलग बहानों से अपने-अपने घरों को चल दिये । तब अपने सेवकों को अपने घर की रक्षा के लिए भेजकर रथ को भुवनेश्वरी-मंदिर की ओर मोड़कर भोजकुमार के उपाध्याय को बुलाने के लिए वत्सराज ने एक सेवक को भेजा । उसने जाकर पण्डितजी से कहा--भगवन् ! आपको वत्सराज बुला रहे हैं । वह पण्डित भी यह सुनकर वज्र से आहत-सा, भूतों से आविष्ट-सा, मगर के मुँह में पड़ा-सा

हो गया। सेवक उसे अपने हाथ का आश्रय देकर ले आया। बुद्धिमान् वत्सराज ने उसे प्रणाम किया और कहा--पूज्य उपाध्याय जी, बैठिए। राजकुमार जयन्त को पाठशाला से बुलाइए। जब जयन्तकुमार आये तब उनसे पठित पाठ के संबंध में कुछ प्रश्न किये, फिर उसे वापिस भेज दिया। फिर पण्डित से कहा--ब्राह्मण! भोजकुमार को बुलाइए। जब भोज को समाचार ज्ञात हुआ तब वह क्रोध से जलता हुआ-सा आकर लाल-लाल आँखें निकालकर बोला--ऐ पापी! राजा के मुख्य कुमार को अकेले राजभवन से बाहर ले जाने की तुझ में क्या शक्ति है? ऐसा कह कर बायें पैर का जूता उठाकर उससे भोज ने वत्सराज के सिर पर प्रहार किया। तब वत्सराज बोला--भोज! हम राजादेश का पालन करते हैं। बालक को रथ पर बिठाकर तलवार को म्यान से निकालकर शीघ्र ही महामाया के मंदिर को गया।

तब भोज के पकड़े जाने पर लोग कोलाहल मचाने लगे। राजादेश की अवहेलना का भाव जाग्रत् हो उठा। 'क्या हुआ, क्या हुआ'—इस प्रकार चिल्लाते हुए सैनिक आये। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि भोज का वध करने के लिए उसे ले गये हैं तब वे गजशाला, उष्ट्रशाला, अश्वशाला और रथशाला में घुसे और सबको मारने लगे।

तब गलियों में, राजभवन में, दुर्ग की दीवालों पर, उन्नत विशाल वेदियों में, नगर के बाहरी द्वारों के चबूतरों पर, नगर के आसपास भेरी, नगाड़े, मृदंग, मड्डुक और डिंडिम के गंभीर निनादों से आकाश गूँज उठा। तब धारा नगरी में कई ब्राह्मण-स्त्रियों ने, राजपुत्रों ने, राजसेवकों ने, सामन्त राजाओं ने और पुरवासियों ने प्राण-परित्याग किया--किन्हीं ने तीक्ष्ण तलवार से, किन्हीं ने विष से, भाले से, फन्दे से, आग से, कुल्हाड़े से, बरछी से, तोमर से, खांडे से, तथा जल में कूदकर।

तब भोज की माता सावित्री, जो मानों विश्व की माता थीं, दासी के मुख से अपने पुत्र की दशा को सुनकर हाथों से आँखों को बन्दकर रोती हुई बोली—पुत्र! चाचा ने तुम्हें किस परिस्थिति में डाल दिया! मैंने तुम्हारे लिए जो नियम और उपवास किये थे, वे आज मेरे लिए निष्फल

हो गये। दसो दिशाएँ शून्य हो गईं। सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ देव ने सम्पत्ति का नाश कर दिया। पुत्र ! इस दासी-वर्ग को एकदम शिरोरहित देखोगे। यह कहकर वह पृथ्वी पर गिर पड़ी।

अग्नि के संधुक्षित होने पर उमड़ते हुए धुँए से समूह के जब गगन-मंडल मलिन हो गया और सूर्य मानों पाप के भय से पश्चिमी समुद्र में डूब गये, वत्सराज महामाया के मंदिर को पहुँचे और भोज से कहने लगे—भृत्यों के देवता कुमार ! किसी दैवज्ञ ब्रह्मण ने बताया है कि आपको राज्य मिलेगा। इसलिए राजा ने आपका वध करने का आदेश निकाला है। भोज ने कहा—

'रामस्य व्रजनं बलेर्नियमनं पाण्डोः सुतानां वनं
वृष्णीनां निधनं नलस्य नृपते राज्यात्परिभ्रंशनम्।
कारागारनिषेवणं च मरणं संचिन्त्य लङ्केश्वरे
सर्वः कालवशेन नश्यति नरः को वा परित्रायते ॥२८॥

रामस्य व्रजनम् इति। **Vocabulary:** व्रजन—वनवास, exile. नियमन—बंधन, confinement. वृष्णि—यादव। निधन—मृत्यु, death. परिभ्रंशन—भ्रष्ट होना, loss. कारागार— jail.

Prose Order: रामस्य व्रजनं, बलेः नियमनं, पाण्डोः सुतानां वनं, वृष्णीनां निधनं, नलस्य नृपतेः राज्यात् परिभ्रंशनम्, लंकेश्वरे कारागार-निषेवणं मरणं च संचिन्त्य सर्वः नरः कालवशेन नश्यति। कः वा परित्रायते।

व्याख्या—रामस्य दाशरथेः व्रजनं गृहत्यागमरण्यवासञ्च, बलेः तदाख्यस्य नृपतेः नियमनं बन्धनम्, पाण्डोः सुतानां पाण्डवानां वनं वनवासम्। वृष्णीनां यादवानां निधनं मृत्युम्, नलस्य नैषधस्य नृपतेः राज्ञः राज्यात् परिभ्रंशनं परिच्युतिम्, लङ्केश्वरे लङ्काधिपतौ दशमुखे कारागारनिषेवणं बंधनं मरणं च संचिन्त्य निर्णीयते यत् सर्वो नरः कालवशेन नश्यति। कोऽपि कमपि परित्रातुं न समर्थः।

राम का वनगमन, बलि का बंधन, पांडवों का वनवास, यादवों की मृत्यु, नल राजा का राज्य से विच्युत होना, रावण का कारावास तथा निधन सोचकर ज्ञात होता है कि सभी मनुष्य कालगति से नष्ट होते हैं। कौन किसे बचा सकता है ?

लक्ष्मीकौस्तुभपारिजातसहजः सूनुः सुधाम्भोनिधे-
र्देवेन प्रणयप्रसादविधिना मूर्ध्ना धृतः शम्भुना ।
अद्याप्युज्झति नैव दैवविहितं क्षैण्यं क्षपावल्लभः
केनान्येन विलङ्घ्यते विधिगतिः पाषाणरेखासखी ॥२९॥

लक्ष्मीति । **Vocabulary:** सहज—twin brother. सुधाम्भोनिधि—ambrosial ocean. प्रणय—प्रेम, accord. प्रसाद—प्रसन्नता, pleasure. मूर्धन्-मस्तक, forehead. उज्झति—त्यागता है, gives up. क्षैण्यम्—क्षीणता, decay. क्षपावल्लभ—चन्द्रमा, the moon. विलङ्घ्यते—उलाँघी जाती है, is transferred. पाषाणरेखा—पत्थर की लकीर, a streak on the slab of a stone. सखी—a companion.

Prose Order : लक्ष्मीकौस्तुभपारिजातसहजः सुधाम्भोनिधेः सूनुः देवेन शम्भुना प्रणयप्रसादविधिना मूर्ध्ना धृतः क्षपावल्लभः अद्यापि दैवविहितं क्षैण्यं नैव उज्झति । पाषाणरेखासखी विधिगतिः केन अन्येन विलङ्घ्यते ?

व्याख्या—लक्ष्मीः—विष्णुप्रिया । कौस्तुभो—मणिः, पारिजातः—कल्पवृक्षः, तेषां सहजः सहोदरः, सुधाम्भोनिधेः—अमृतार्णवस्य, सूनुः पुत्रः, देवेन शम्भुना—महादेवेन, प्रणयः—स्नेहः, प्रसादः—प्रसन्नता, तयोः यो विधिस्तेन मूर्ध्ना धृतः शिरसि स्थापितः, क्षपावल्लभःक्षपाया रात्रेर्वल्लभः प्रियश्चन्द्रः दैवविहितं—भाग्यनियतं, क्षैण्यं—ह्रासम्, अद्यापि—न उज्झति न मुञ्चति । पाषाणरेखासखी पाषाणः प्रस्तरस्तत्र या रेखा तस्याः सखी तत्सदृशीत्यर्थः, विधिगतिः—दैवी मर्यादा । केन अन्येन विलङ्घ्यते, न केनापि विलङ्घ्यत इत्यर्थः ।

लक्ष्मी, कौस्तुभमणि तथा कल्पवृक्ष का भाई, अमृतरूपी समुद्र का पुत्र चन्द्रमा को महादेव जी ने प्रेम तथा प्रसन्नता से अपने मस्तक पर धारण किया है । तो भी दैवी विधान-स्वरूप प्राप्त क्षीणता को वह आज भी नहीं त्यागता । पत्थर की रेखा-सी इस साथिनी दैवगति को कौन लाँघ सकता है ?

विकटोर्व्यामप्यटनं शैलारोहणमपांनिधेस्तरणम् ।
निगडं गुहाप्रवेशो विधिपरिपाकः कथं नु संतार्यः ॥३०॥

विकटोर्व्यामिति । **Vocabulary :** विकट—hideous and the rugged. उर्वी—पृथ्वी, earth. अटन—घूमना, wandering. शैलारोहण—पर्वत पर चढ़ना, ascent on the mount. अपांनिधि—समुद्र, the ocean. निगड—कारागार में बंधन imprisonment. गुहाप्रवेश—गुहा में प्रवेश करना, entrance into the cave. विधि-परिपाक—विधिविधान, dispensations of fortune.

Prose Order : विकटोर्व्याम् अपि अटनम्, शैलारोहणम्, अपांनिधेस्तरणम्, निगडम्, गुहाप्रवेशः, विधिपरिपाकः कथं नु सन्तार्यः ?

व्याख्या—विकटोर्व्याम्—विकटा उर्वी (कर्म०) तस्याम्, विषमस्थले । अटनं—भ्रमणम् । शैलारोहणम्—शैलस्य आरोहणम् (ष० त०पु०) । अपांनिधे—समुद्रस्य । तरणं तदान्तर्गमनम् । निगडं कारावासः । गुहाप्रवेशः—गुहायां प्रवेशः, इत्येवमादीनि विधिविलसितानि अवश्यं सह्यानि भवन्ति ।

अवश्यम्भाविनो भावा भवन्ति महतामपि ।
नग्नत्वं नीलकण्ठस्य महाहिशयनं हरेः ।।

विषम भूमि पर घूमना, पर्वत पर चढ़ना, समुद्र को पार करना, कैद में पड़ना तथा गुफा में प्रवेश—इस प्रकार दैव से प्राप्त फल किसे नहीं भोगना पड़ता ?

अम्भोधिः स्थलतां स्थलं जलधितां धूलीलवः शैलतां
मेरुर्मत्कुणतां तृणं कुलिशतां वज्रं तृणप्रायताम् ।
वह्निः शीतलतां हिमं दहनतामायाति यस्येच्छया
लीलादुर्ललिताद्भुतव्यसनिने देवाय तस्मै नमः ।।३१।।

अम्भोधिरिति । **Vocabulary :** अम्भोधि—समुद्र, the sea. स्थलता—स्थलभूमि, the nature of a dry land. जलधिता—समुद्र की दशा, the state of an ocean. धूलीलव—धूल के कण, fragments of dust. कुलिशता—वज्र की दशा, the nature of a thunderbolt. दहनता—अग्नि का दाहगुण, the combustible nature of fire. लीलादुर्ललित—अति लालन-पालन से बिगड़े हुए स्वभाव का, spoilt by

ill-breeding. अद्भुतव्यसनिन्—आश्चयजनक घटनाओं में रुचि रखनेवाला, fond of miracles.

Prose Order : यस्य इच्छया अम्भोधिः स्थलताम्, स्थलं जलधिताम्, धूलीलवः शैलताम्, मेरुः मृत्कणताम्, तृणं कुलिशताम्, वज्रं तृणप्रायताम्, वह्निः शीतलताम्, हिमं दहनताम् आयाति लीलादुर्ललिताद्भुतव्यसनिने तस्मै देवाय नमः ।

व्याख्या—अम्भोधिः—सागरः । स्थलताम्—स्थलरूपम्, स्थलञ्च । जलधितां—जलनिधिरूपम् । धूलीलवः रेणुकणः । शैलतां पर्वतरूपम् । मेरुः—पर्वतः । मत्कुणतां मत्कुणाकारम् । तृणम् । कुलिशतां—वज्ररूपम्, वज्रम् । तृणप्रायताम्—तृणस्वरूपम् । वह्निः—अग्निः । शीतलताम्—शीतभावम् । हिमम् । दहनताम् औष्ण्यम् आयाति, तस्मै । लीलादुर्ललिताद्भुतव्यसनिने—लीलादुर्ललितः लीलया लालनाद् दुर्ललितो दुस्स्वभावमापन्नः; अद्भुतव्यसनी—अद्भुतम् : आचरणमेव व्यसनं तच्छीलं यस्य सः, लीलादुर्ललितश्च अद्भुतव्यसनी च (कर्म०) तस्मै ।

जिसकी इच्छा से समुद्र स्थल और स्थल समुद्र बन जाता है, धूलि का कण पर्वत और मेरु गिरि मिट्टी के कण के समान, तृण वज्र और वज्र तृण के समान, आग शीतल तथा बर्फ अग्नि के समान बन जाती है, उस देव को नमस्कार हो, अपनी लीला से विषम तथा आश्चर्यप्रद घटनाओं का प्रदर्शन कराना जिसका स्वभाव बन गया है ।

ततो वटवृक्षस्य पत्र आदायैकं पुटीकृत्य जङ्घां छुरिकया छित्त्वा तत्र पुटके रक्तमारोप्य तृणेन तस्मिन्पत्रे कञ्चन श्लोकं लिखित्वा वत्सं प्राह—'महाभाग, एतत्पत्रं नृपाय दातव्यम् । त्वमपि राजाज्ञां विधेहि' इति । ततो वत्सराजस्यानुजो भ्राता भोजस्य प्राणपरित्यागसमये दीप्यमानमुखश्रियमवलोक्य प्राह—

ततो वटवृक्षस्येति । **Vocabulary** : वटवृक्ष—Bunyan tree. पुटीकृत्य—दोना बनाकर, having folded the leaf so as to form a cup of it. छुरिका—छुरी, a knife.

तब वट-वृक्ष के दो पत्ते लेकर और एक पत्ते का दोना बनाकर जाँघ को छुरी से काटकर उस दोना में रक्त को रखकर तिनके से दूसरे पत्ते पर एक पद्य लिखकर वत्सराज से बोला—महाभाग ! यह पत्र राजा को देना । तुम भी राजा के आदेश का पालन करो । तब वत्सराज छोटा भाई मरने के समय भी भोज की उज्ज्वल मुखमुद्रा को देखकर बोला—

एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति ॥३२॥

एक एवेति । **Vocabulary** : एक एव—केवल एक, none else but. निधन—मृत्यु, death.

Prose Order :—एकः धर्मः एव सुहृत् यः निधने अपि अनुयाति । अन्यत् च सर्वं शरीरेण समं नाशं गच्छति ।

व्याख्या— एकः धर्मः एव सुहृन्मित्रम्, यः निधने मरणेऽपि अनुयाति अनुगच्छति । अन्यच्च सर्वं शरीरेण देहेन समं नाशं गच्छति नश्यति ।

एकमात्र धर्म ही मित्र है, जो मरने पर भी साथ देता है और सब कुछ शरीर के साथ ही नष्ट हो जाता है ।

न ततो हि सहायार्थे माता भार्या च तिष्ठति ।
न पुत्रमित्रौ न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलः ॥३३॥

न तत इति । **Prose Order** :—ततः हि सहायार्थे माता भार्या च न तिष्ठति, न पुत्रमित्रे, न ज्ञातिः, केवलः धर्मः तिष्ठति ;

व्याख्या— स्पष्टम् ।

तब न माता सहायक होती है, न स्त्री, न मित्र, न पुत्र और न बन्धुवर्ग । केवल धर्म ही सहायक होता है ।

बलवानप्यशक्तोऽसौ धनवानपि निर्धनः ।
श्रुतवानपि मूर्खश्च यो धर्मविमुखो जनः ॥३४॥

बलवानिति । **Prose Order** : यः जनः धर्मविमुखः असौ बलवान् अपि अशक्तः, धनवान् अपि निर्धनः च श्रुतवान् अपि मूर्खः

व्याख्या—स्पष्टम् ।

जो मनुष्य धर्म से विमुख है, वह बलवान् भी असमर्थ है, धनवान् भी निर्धन है, शास्त्रज्ञ भी मूर्ख है ।

इहैव नरकव्याधश्चिकित्सां न करोति यः ।
गत्वा निरौषधस्थानं स रोगी किं करिष्यति ॥३५॥

इहैवेति । **Vocabulary** : नरकव्याधि—नरकरूपी व्याधि, the disease in the form of hell. चिकित्सा—treatment. निरौषध—औषध-रहित, without medicine.

Prose Order : यः इहैव नरकव्याधेः चिकित्सां न करोति सः रोगी निरौषधस्थानं गत्वा किं करिष्यति ?

व्याख्या—यः रोगी धर्मपराङ्मुखत्वेन नरकव्याधिना ग्रस्तः नरकव्याधेः नरकरूपस्य रोगस्य चिकित्सा प्रतीकारं न करोति स नरकव्याधिग्रस्तो जनः निरौषधस्थानम् औषधरहितं स्थानं गत्वा नरकमेत्य किं करिष्यति, न किमपि करिष्यति प्रतीकारासमर्थ इत्यर्थः ।

जो यहीं (अर्थात् इसी संसार में) नरक-रूपी व्याधि का प्रतीकार नहीं करता, वह रोगी औषध-रहित स्थान को जाकर क्या करेगा ?

जरां मृत्युं भयं व्याधिं जो जानाति स पण्डितः ।
स्वस्थस्तिष्ठेन्निषीदेद्वा स्वपेद्वा केनचिद्धसेत् ॥३६॥

जरामिति । **Prose Order** : यः जरां मृत्युं भयं व्याधिं जानाति सः पण्डितः । निषीदेत् स्वपेत् वा केनचिद् हसेद् वा स्वस्थः तिष्ठेत् ।

व्याख्या—यो नरः जरामृत्युभयव्याधिसारंजानाति स विद्वान् । निषण्णः, सुप्तः, हसन् वा सः स्वस्थ एव ।

जो बुढ़ापा, मृत्यु, भय और व्याधि को जानता है, चाहे वह सुस्ताये, बैठे, सोये वा किसी से हँसी-मजाक करे, समझदार ही कहलायगा ।

तुल्यजातिवयोरूपान्हृतान्पश्यति मृत्युना ।
नहि तत्रास्ति ते त्रासो वज्रवद्धृदयं तव ॥३७॥

तुल्येति। **Prose Order** : तुल्यजातिवयोरूपान् मृत्युना हृतान् पश्यति । तत्र ते त्रासः नहि अस्ति । तव हृदयं वज्रवत् ।

व्याख्या—तुल्यजातिवयोरूपान्—जातिश्च वयश्च रूपञ्चेति जातिवयोरूपाणि (द्वन्द्व), तुल्यानि जातिवयोरूपाणि येषाम् (बहु०) इति ते, तान् ।

मनुष्य अपने सदृश जाति, आयु तथा रूपवाले मनुष्यों को मृत्यु द्वारा विनाशित देखता है । हे मनुष्य ! तो भी तुम्हें भय नहीं छूता । तुम्हारा हृदय वज्र के समान निष्ठुर है ।

इति । ततो वैराग्यमापन्नो वत्सराजो भोजं 'क्षमस्व' इत्युक्त्वा प्रणम्य तं च रथे निवेश्य नगराद्बहिर्घने तमसि गृहमागमय्य भूमिगहान्तरे निक्षिप्य ररक्ष । स्वयमेव कृत्रिमविद्याविद्भिः सुकुण्डलं स्फुरद्वक्त्रं निमीलितनेत्रं भोजकुमारमस्तकं कारयित्वा तच्चादाय कनिष्ठो राजभवनं गत्वा राजानं नत्वा प्राह—'श्रीमता यदादिष्टं तत्साधितम्' इति । ततो राजा च पुत्रवधं ज्ञात्वा तमाह—'वत्सराज, खड्गप्रहारसमये तेन पुत्रेण किमुक्तम्' इति । वत्सस्तत्पत्रमदात् । राजा स्वभार्याकरेण दीपमानीय तानि पत्राक्षराणि वाचयति—

तत इति। **Vocabulary** : वैराग्य—indifference towards worldly pleasure, a feeling of other-worldliness. कृत्रिमविद्याविद्—शिल्पकार, कलाकार, artist. कुण्डल—ear-ring. वक्त्र—मुख, face. कनिष्ठ—लघु, younger.

व्याख्या—आगमय्य आ+गम्+णि+क्त्वा+(ल्यप्), आनाय्य । सुकुण्डलम्—शोभने कुण्डले यत्र (बहु०) सः, तम् । स्फुरद्वक्त्रम्—स्फुरद् वक्त्रयत्र (बहु०) सः, तम् । निमीलितनेत्रम्—निमीलिते नेत्रे यत्र (बहु०) सः, तम् ।

तब वत्सराज को वैराग्य हुआ और वह भोज से क्षमा मांगने लगा । उसे प्रणाम करके और उसे रथ पर बिठाकर नगर से बाहर ले जाकर जब घना अंधकार छा गया, तब उसे अपने घर को लाया और अपने भूमिगृह में बिठा दिया । (इस प्रकार) भोज की रक्षा की । तब वत्सराज शोभन कुण्डल को धारण किये हुए, शोभायमान मुख और बंद आँखोंवाले भोजकुमार के मस्तक

को कलाकारों द्वारा बनवाकर और उसे लेकर राजभवन को गया। राजा को प्रणाम किया और बोला। आपने जो आदेश दिया था, वह मैंने सम्पन्न कर दिया। तब राजा ने पुत्र-वध का समाचार पाकर उससे पूछा—वत्सराज! तलवार का प्रहार करते समय पुत्र ने क्या कहा था। तब वत्सराज ने वह पत्र दिया। राजा पत्नी के हाथ दीपक मँगवाकर उस पत्र के लेख को पढ़ने लगा।

मांधाता च महीपतिः कृतयुगालंकारभूतो गतः
सेतुर्येन महोदधौ विरचितः क्वासौ दशास्यान्तकः।
अन्ये चापि युधिष्ठिरप्रभृतयो याता दिवं भूपते!
नैकेनापि समं गता वसुमती नूनं त्वया यास्यति ॥३८॥

मान्धातेति। **Vocabulary** : कृतयुग—सत्युग। krita age. सेतु—पुल, bridge. दशास्य–रावण अन्तक—यम, विनाशक, the destroyer. दिव—स्वर्ग, the other world.

Prose Order : कृतयुगालङ्कारभूतः मान्धाता महीपतिः च गतः, येन महोदधौ सेतुः विरचितः असौ दशास्यान्तकः क्व ? भूपते ! अन्ये चापि युधिष्ठिरप्रभृतयः दिवं याताः, वसुमती एकेन अपि समं न गता, नूनं त्वया यास्यति।

व्याख्या—कृतयुगस्य सत्ययुगस्य। अलङ्कारभूतः अलङ्करणम्। महीपतिः—नृपः। महोदधौ—महान् उदधिः (कर्म०) सः, तस्मिन्। दशास्यान्तकः—दश आस्यानि यस्य (बहु०) सः। दशास्यस्य अन्तकः (ष० तत्पु०) आस्यम्—मुखम्; दशास्यो दशमुखः, अस्य अन्तकः अन्तकृत्, विनाशकः। युधिष्ठिरप्रभृतयः—युधिष्ठिरादयः। दिवं याताः—स्वर्गताः। वसुमती—पृथ्वी। समम्—सह। नूनमिति काकुः। नैव यास्यतीत्यर्थः।

सत्य युग के अलंकार भूत मांधाता नरेश भी चल बसे। कहाँ है रावण का वध करनेवाला वह रामचन्द्र, जिसने समुद्र पर पुल बँधवाया था। ऐ राजन् युधिष्ठिर आदि अन्य नरेश भी स्वर्ग को सिधार गये। पृथ्वी किसी के भी साथ नहीं गई। निश्चित ही तुम्हारे साथ जायगी ?

राजा च तदर्थं ज्ञात्वा शय्यातो भूमौ पपात । ततश्च देवीकरकमलचालित-चैलाञ्चलानिलेन ससंज्ञो भूत्वा 'देवि, मा माँ स्पृश हा हा पुत्रघातिनम्' इति विलपन्कुरर इव द्वारपालानानाय्य 'ब्राह्मणानानयत' इत्याह । ततः स्वाज्ञया समागतान्ब्राह्मणान्नत्वा 'मया पुत्रो हतः तस्य प्रायश्चित्तं वदध्वम्' इति वदन्तं ते तमूचुः—'राजन्, सहसा वह्निमाविश' इति । ततः समेत्य बुद्धिसागरः प्राह—'यथा त्वं राजाधम, तथैवामात्याधमो वत्सराजः । तव किल राज्यं दत्त्वा सिन्धुलनृपेण तेन त्वदुत्सङ्गे भोजः स्थापितः । तच्च त्वया पितृव्येणा-न्यत्कृतम् ।

राजेति । **Vocabulary** : चैल—उत्तरीय वस्त्र, outer garment. अंचल—आँचल, the skirt. संज्ञा--चेतनता, consciousness. कुरर—osprey. प्रायश्चित्त—atonement for the sin.

व्याख्या—देवीकरकमलेति । कर एवं कमलम् (कर्म०) करकमलम्, देव्याः करकमलम् (ष० तत्पु०), देवीकरकमलम्; चैलस्य अंचलः (ष० तत्पु०); चैलाञ्चल; देवीकरकमलेन चालितः (तृ० तत्पु०) देवीकरकमलचालितः; देवीकरकमलचालितः चैलाञ्चलः (कर्म०), तेन । ससंज्ञः—संज्ञयाः सह (बहु०) वर्त्तते इति सः ।

राजा ने जब पद्य का अभिप्राय समझा तब वह शय्या से पृथ्वी पर जा गिरा । जब रानी ने अपने कर-कमलों से वस्त्र के आँचल द्वारा हवा की, तब वह होश में आया । 'पुत्र को मरवा डालनेवाले मुझे मत छूओ ।' हरिण के बच्चे के समान इस प्रकार विलाप करता हुआ द्वारपालों को बुलवाकर कहने लगा कि ब्राह्मणों को बुला लाओ । तब अपने आदेशानुसार आये हुए ब्राह्मणों को नमस्कार करके कहने लगा—मैंने पुत्र को मार डाला है। इसका प्राय-श्चित्त कहिए। वे उसे कहने लगे—राजन् शीघ्र ही आग में जल मरो । तब समीप आकर बुद्धिसागर ने कहा—जिस प्रकार तुम राजाओं में निकृष्ट हो, वैसे ही वत्सराज भी मंत्रियों में अधम है। राजा सिन्धुल ने तुम्हें राज्य देकर तुम्हारी गोद में भोज को बिठाया था। चाचा होते हुए भी तुमने यह सब विपरीत ही किया है।

कतिपयदिवसस्थायिनि मदकारिणि यौवने दुरात्मानः ।
विदधति तथापराधं जन्मैव यथा वृथा भवति ॥३९॥

कतिपयेति । **Vocabulary** :–कतिपय—कुछ, a few. स्थायिन्—रहनेवाला, lasting. मदकारिन्—मदकारी, Intoxicating.

Prose Order : कतिपयदिवसस्थायिनि मदकारिणि यौवने दुरात्मानः तथा अपराधं विदधति यथा तेषां जन्म हि वृथा भवति ।

व्याख्या—कतिपयदिवसस्थायिनि कतिपयदिवसान् स्थातुं शीलं यस्य तत्, तस्मिन्, मदकारिणि—मदं कर्त्तुं शीलं यस्य तत्, तस्मिन्, ताच्छील्ये णिनिः । दुरात्मानः—दुष्ट आत्मा येषां (बहु०) ते ।

दुष्ट लोग कुछ ही दिनों तक रहनेवाले तथा मस्ती लानेवाले यौवन में इस प्रकार अपराध कर डालते हैं, जिस प्रकार मनुष्य का जन्म बेकार हो जाता है ।

सन्तस्तृणोत्सारणमुत्तमाङ्गा-
त्सुवर्णकोट्यर्पणमामनन्ति ।
प्राणव्ययेनापि कृतोपकाराः
खलाः परे वैरमिवोद्वहन्ति ॥४०॥

सन्त इति । **Vocabulary** : सन्तः—सज्जन, the good. उत्सारण—हटाना, removal उत्तमाङ्ग–शिर, head. कोटि–करोड़, a crore.. आमनन्ति—मानते हैं, regard. व्यय—खर्च, cost . उद्वहन्ति—धारण करते हैं, bear.

Prose Order : सन्तः उत्तमाङ्गात् तृणोत्सारणं सुवर्णकोट्यर्पणम् आमनन्ति । प्राणव्ययेनापि कृतोपकाराः खलाः परं वैरम् इव उद्वहन्ति ।

व्याख्या—सन्तः सज्जनाः । उत्तमाङ्गात्—शिरसः । तृणोत्सारणम्—तृणस्य उत्सारणम् अपनयनम् । सुवर्ण कोट्यर्पणम्–कोटिसुवर्णदानसमम् । आमनन्ति—मन्यन्ते । प्राणव्ययेन—प्राणानां व्ययः (ष० तत्पु०) तेन, प्राणार्पणेनापि । कृतोपकाराः—कृत उपकारो येभ्यस्ते तथाभूताः । खला दुष्टाः । परम्—महत् । वैरम इव । आमनन्ति—गणयन्ति ।

सज्जन अपने सिर से तिनके उतारनेवाले को करोड़ सुवर्ण मुद्राओं के देनेवाले के समान समझते हैं। दुर्जन प्राणों से उपकृत होने पर भी दूसरों के साथ वैर का सम्बन्ध रखते हैं।

उपकारश्चापकारो यस्य व्रजति विस्मृतिम् ।
पाषाणहृदयस्यास्य जीवतीत्यभिधा मुधा ॥४१॥

उपकार इति । Vocabulary : विस्मृति–विस्मरण, state of forgetfulness. पाषाण—पत्थर, stone. अभिधा—नाम, appellation. मुधा—व्यर्थ, in vain

Prose Order:—यस्य उपकारः अपकारः च विस्मृतं व्रजति, पाषाण-हृदयस्य अस्य जीवति इति अभिधा मुधा ।

व्याख्या—पाषाणहृदयस्य—पाषाणवद् हृदयं यस्य (बहु०) सः, तस्य, कठोरहृदयस्येत्यर्थः । अभिधा—अभिधानम् । मुधा—वृथैव ।

उपकार तथा अपकार को जो भूल जाता है, पत्थर के समान हृदयवाले उस व्यक्ति का जीवित कहलाना ही वृथा है।

यथाङ्कुरः सुसूक्ष्मोऽपि प्रयत्नेनाभिरक्षितः ।
फलप्रदो भवेत्काले तथा लोकः सुरक्षितः ॥४२॥

यथाङ्कुरः इति । Vocabulary : अङ्कुर—seed. सुसूक्ष्म—the subtlest. अभिरक्षित—परिपालित, guarded.

Prose Order : यथा प्रयत्नेन अभिरक्षितः सुसूक्ष्मः अपि अङ्कुरः काले फलप्रदः भवेत्, तथा सुरक्षितः लोकः ।

व्याख्या——स्पष्टम् ।

जिस प्रकार अत्यन्त सूक्ष्म अंकुर भी यदि सँभाल कर रखा जाय तो समय आने पर फल लाता है, उसी प्रकार सुरक्षित प्रजा भी समय पर फल देती है।

हिरण्यधान्यरत्नानि धनानि विविधानि च ।
तथान्यदपि यत्किञ्चित्प्रजाभ्यः स्युर्महीभृताम् ॥४३॥

हिरण्येति । **Vocabulary** : हिरण्य—सुवर्ण, gold. धान्य—corn. विविध—नाना प्रकार के, of various sorts

Prose Order : हिरण्यधान्यरत्नानि विविधानि धनानि च तथा यत् 'किञ्चिद् अन्यद् अपि महीभृतां प्रजाभ्यः स्युः ।

व्याख्या—हिरण्यधान्यरत्नानि—हिरण्यं च धान्यं च रत्नं च (द्वन्द्व) इति तानि ।

सुवर्ण, धान्य और रत्न तथा अनेक प्रकार के धन, अन्य प्रकार के जो भी कुछ द्रव्य हैं, वे सब राजाओं को प्रजा से प्राप्त होते हैं ।

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः पापे पापपराः सदा ।
राजानमनुवर्त्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः ॥४४॥

राज्ञि इति । **Vocabulary** : धर्मिन्—धर्मपरक, pious. धर्मिष्ठ—धार्मिक, pious. अनुवर्त्तन्ते—अनुसार चलते हैं,

Prose Order : राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठाः, पापे सदा पापपराः, राजानम् अनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः ।

व्याख्या—स्पष्टम्

यदि राजा धर्मपरायण है तो प्रजा भी धर्मपरायण होती है। यदि राजा पापी है तो प्रजा भी पापी है। प्रजाजन राजा के अनुसार चलते हैं। जैसा राजा होता है, प्रजा भी वैसी ही होती है।

ततो रात्रावेव वह्निप्रवेशनं निश्चिते राज्ञि सर्वे सामन्ताः पौराश्च मिलिताः 'पुत्रं हत्वा पापभयाद्भीतो नृपतिर्वह्निं प्रविशति' इति किंवदन्ती सर्वत्राजनि। ततो बुद्धिसागरो द्वारपालमाहूय 'न केनापि भूपालभवनं प्रवेष्टव्यम्, इत्युक्त्वा नृपमन्तःपुरे निवेश्य सभायामेकाकी सन्नुपविष्टः । ततो राजमरणवार्ता श्रुत्वा वत्सराजः सभागृहमागत्य बुद्धिसागरं नत्वा शनैः प्राह—'तात, मया भोजराजो रक्षितः, इति । बुद्धिसागरश्च कर्णे तस्य किमप्यकथयत्, तच्छ्रुत्वा वत्सराजश्च निष्क्रान्तः ।

ततो मुहूर्त्तेन कोऽपि करकलितदन्तीन्द्रदन्तदण्डो विरचितप्रत्यग्रजटाकलापः कर्पूरकरम्बितभसितोद्धूलितसकलतनुर्मूर्त्तिमान्मन्मथ इव स्फटिककुण्डलमण्डित-

कर्णयुगलः कौशेयकौपीनो मूर्त्तिमांश्चन्द्रचूड इव सभां कापालिकः समागतः। तं वीक्ष्य बुद्धिसागरः प्राह—'योगीन्द्र, कुत आगम्यते ? कुत्र ते निवेशश्च ? कापालिके त्वयि कश्चिच्चमत्कारकारी कलाविशेष औषधविशेष ऽप्यस्ति ?' योगी प्राह—

तत इति । Vocabulary : सामन्त—करदायी राजा लोग । किंवदन्ती—सुनी-सुनाई बात, rumour. कलित—गृहीत, held. दन्तीन्द्र—गजराज, lordly elephant. दन्त—tusk. प्रत्यग्र—अभिनव, recent. कलाप—समूह, a bundle. करम्बित—मिली हुई, inlaid. भसित—भस्म, ashes. उद्वर्त्तित—सुगन्धित, perfumed. कौशेय—रेशम, silk. कौपीन—कमर में बाँधने का वस्त्र—loin-cloth. मूर्त्तिमान्—साकार, embodied. चन्द्रचूड—शिव । कापालिक—हाथ में कपाल (खोपड़ी) लिये हुए एक योगी, an ascetic of the order of Siva.

व्याख्या—करकलितदन्तीन्द्रदन्तदण्डः—दन्तीनाम् इन्द्रः (ष० तत पु० दन्तीन्द्रस्य दन्तः (ष० तत्पु०), दतीन्द्रदन्तेन निर्मितः (मध्यमपदलोपि तृ० तत्पु०); करेण कलितः (तृ० तत्पु०); करकलितः; करकलितः दन्तीन्द्रदन्तदण्डः येन (बहु०) सः, हस्तगृहीतगजराजदन्तनिर्मितदण्डः । विरचितप्रत्यग्रजटाकलापः—जटानां कलापः (ष० तत्पु०), विरचितः प्रत्यग्रं यथा स्यात्तथा जटाकलापो येन (बहु०) सः । कर्पूरेति—कर्पूरेण करम्बितं (तृ० तत्पु०) कर्पूरकरम्बितम् (तृ० तत्पु०), कर्पूरकरम्बितं च तद् भसितम (कर्म०) इति कर्पूरकरम्बितभसितम्, कर्पूरकरम्बितभसितेने उद्वर्त्तिता (तृ० तत्पु०) कर्पूरकरम्बितभसितोद्वर्त्तिता, सकला चासौ तनुः (कर्म०) इति सकलतनुः; कर्पूरकरम्बितभसितोद्वर्त्तिता सकलतनुर्येन (बहु०) सः, कर्पूरसुगन्धितभस्मलिप्तसकलशरीरः। स्फटिककुण्डलमण्डितकर्णयुगलः—स्फटिकनिर्मिते कुण्डले (मध्यमपदलोपिकर्म०) स्फटिककुण्डले; कर्णयोर्युगलम् (ष० तत्पु०) कर्णयुगलम्; स्फटिककुण्डलाभ्यां मण्डितम् (तृ० तत्पु०), स्फटिककुण्डलमण्डितं कर्णयुगलं यस्य (बहु०) सः; कौशेयकौपीनः—कौशेयेन निर्मितं कौपीनं यस्य (मध्यमपदलोपिबहु०); चन्द्रचूडः—चन्द्रश्चूडायां यस्य (बहु०) सः, चन्द्रमौलिः । कापालिकः—कपालः अस्य अस्तीति सः [कपाल + ठक् (= इक्)]

जब राजा ने रात को ही अग्नि में प्रवेश करने का निश्चय किया तब सभी सामन्त और पुरवासी लोग एकत्र हुए। पुत्र को मारकर पाप के भय से भीत राजा अग्नि में प्रवेश करने लगा है—यह बात सभी जगह फैल गई। तब बुद्धिसागर ने द्वारपाल को बुलाकर कहा कि कोई भी राजभवन में प्रवेश न करे। इस प्रकार राजा को अन्तःपुर में बिठाकर सभा में अकेला ही बैठ गया। तब राजा के मरने की इच्छा के सम्बन्ध में सुनकर वत्सराज घर आकर, बुद्धिसागर को नमस्कार करके धीरे-धीरे बोले—श्रीमन्! मैंने भोज की रक्षा की है। बुद्धिसागर ने उसके कान में कुछ कहा। उसे सुनकर वत्सराज चला गया।

तब उसी क्षण वहाँ एक नरमुण्डधारी शैव योगी उपस्थित हुआ, मानों कि वह साकार शिव हो। रेशमी वस्त्र का कौपीन पहिने हुए था। उसके दोनों कान स्फटिक मणि के कुण्डलों से अलंकृत थे। वह ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानों साकार कामदेव हो। कर्पूर के सदृश श्वेत भस्म से उसका संपूर्ण शरीर अनुलिप्त था। उसने कृत्रिम जटाएँ पहिन रखी थीं। उसके हाथ में हाथी दाँत का बना हुआ एक दंड था। उसे देखकर बुद्धिसागर ने पूछा—योगीन्द्र! कहाँ से आ रहे हो और कहाँ के वासी हो? तुझ कपालधारी को किसी चमत्कार लानेवाली कला का तथा किसी विशेष औषधि का ज्ञान है क्या? योगी ने कहा—

'देशे देशे भवनं भवने भवने तथैव भिक्षान्नम्।
सरसि च नद्यां सलिलं शिवशिवतत्त्वार्थयोगिनां पुंसाम्॥४५॥

देशे देश इति। **Vocabulary :** तत्त्वार्थ—सत्यता, reality.

Prose Order :—शिवशिवतत्त्वार्थयोगिनां पुंसां देशे देशे भवनम्, भवने भवने तथैव भिक्षान्नम् सरसि नद्यां च सलिलम्।

व्याख्या—शिवशिवतत्त्वार्थयोगिनाम्—शिवस्वरूपः शिवः (म० कर्म०) शिवशिवः मङ्गलमयो महादेवः; शिवशिवस्य तत्त्वम् (ष० तत्पु०) शिवशिवतत्त्वम्, शिवशिवतत्त्वस्य अर्थः (ष० तत्पु०), शिवशिवतत्त्वार्थे योगः (स० तत्पु०)

सोऽस्यास्तीति तेषाम् । यद्वा शिव शिवेति वाक्यार्थावधारणेऽसमस्तं पृथक्पदद्वयाम् भिक्षान्नम्—भिक्षया लब्धम् अन्नम् (मध्यम० तृ० तत्पु०) ।

महादेव शिव के मंगलप्रद तत्त्व का अभिप्राय समझनेवाले व्यक्तियों के लिए देश-देश में भवन, भवन-भवन में भिक्षान्न और प्रत्येक नदी तथा जलाशय में जल सुलभ है ।

ग्रामे ग्रामे कुटी रम्या निर्झरे निर्झरे जलम् ।
भिक्षायां सुलभं चान्नं विभवैः किं प्रयोजनम् । ॥४६॥

ग्रामे ग्राम इति Vocabulary : कुटी—cottage. निर्झर—झरना, cataract. विभव—ऐश्वर्य,

Prose Order: ग्रामे ग्रामे कुटी रम्या, निर्झरे निर्झरे जलम्, भिक्षायाम् अन्नं च सुलभम्, विभवैः किं प्रयोजनम् ?

व्याख्या—ग्रामे ग्रामे—प्रतिग्रामम् । रम्या—रमणीया । निर्झरे निर्झरे—प्रतिनिर्झरम् । विभवैः—ऐश्वर्येण । किं प्रयोजनम्—कोऽर्थः ?

गाँव-गाँव में सुन्दर कुटी है । झरने-झरने में सुन्दर जल है । माँगने पर अन्न सुलभ है । हमें धन से क्या लाभ ?

देव, अस्माकं नैको देशः । सकलभूमण्डलं भ्रमामः । गुरूपदेशे तिष्ठामः । निखिलं भुवनतलं करतलामलकवत्पश्यामः । सर्पदष्टं विषव्याकुलं रोगग्रस्तं शस्त्रभिन्नशिरस्कं कालशिथिलितं तात, तत्क्षणादेव विगतसकलव्याधिसंचयं कुर्मः' इति । राजापि कुड्यान्तर्हित एव श्रुतसकलवृत्तान्तः सभामागतः कापालिकं दण्डवत्प्रणम्य, 'योगीन्द्र, रुद्रकल्प, परोपकारपरायण, महापापिना मया हतस्य पुत्रस्य प्राणदानेन मां रक्ष' इत्याह । अथ कापालिकोऽपि 'राजन्' मा भैषीः । पुत्रस्ते न मरिष्यति । शिवप्रसादेन गृहमेष्यति । परं श्मशानभमौ बुद्धिसागरेण सह होमद्रव्याणि प्रेषय' इत्यवोचत् । ततो राज्ञा 'कापालिकेन यदुक्तं तत्सर्वं तथा कुरु' इति बुद्धिसागरः प्रेषितः । ततो रात्रौ गूढ़रूपेण भोजोऽपि तत्र नदीपुलिने नीतः । 'योगिना भोजो जीवितः' इति प्रथा च समभूत् । ततो गजेन्द्रारूढो बन्दिभिः स्तूयमानो भेरीमृदङ्गादिघोषैर्जगद्दधिरीकुर्वन्पौरामात्य-परिवृतो भोजराजो राजभवनमगात् । राजा च तमालिङ्ग्य

रोदिति। भोजोऽपि रुदन्तं मुञ्जं निवार्यास्तौषीत्। ततः संतुष्टो राजा निर्जसिंहासने तं निवेशयित्वा छत्रचामराभ्यां भूषयित्वा तस्मै राज्यं ददौ। निजपुत्रेभ्यः प्रत्येकमेकैकं ग्रामं दत्वा परमप्रेमास्पदं जयन्तं भोजशकाशे निवेशयामास। ततः परलोकपरित्राणो मुञ्जोऽपि निजपट्टराज्ञीभिः सह तपोवनभूमिं गत्वा परं तपस्तेपे। ततो भोजभूपालश्च देवब्राह्मणप्रसादाद्राज्यं पालयामास।

देवेति। **Vocabulary** आमलक—आंवला, a fruit of Myrobalan. कुड्य—भीत, wall. अन्तर्हित—छिपा हुआ, hidden. कल्प—सदृश, like,, resembling. पुलिन—रेतीला, तट, sandy shore. वन्दी—Bard. भेरी—kettledrum. मृदङ्ग—Tabour. बधिरीकुर्वन्—बधिर करता हुआ, deafening.. पट्टराज्ञी—पटरानी, the chief queen.

व्याख्या—करतलामलकवत्—करस्य तलम् (ष० तत्पु०) करतलम्, करतले धृतः आमलकः (मध्यमपदलोपिसप्तमीतत्पु०) करतलामलकः, तद्वत्। सर्प-दष्टम्—सर्पेण दष्टः (तृ० तत्पु०) तम्। विषव्याकुलम्—विषेण व्याकुलः (तृ० तत्पु०), तम्। रोगग्रस्तम्—रोगेण ग्रस्तम् (तृ० तत्पु०) शस्त्रभिन्नशिरस्कम्—शस्त्रेण भिन्नम् (तृ०तत्पु०) शस्त्रभिन्नम्; शस्त्रभिन्नं शिरो यस्य (बहु०) सः, तम्। विगतसकलव्याधिसञ्चयम्—व्याधेः सञ्चयः (ष० तत्पु०) व्याधिसञ्चयः; सकलो व्याधिसञ्चयः (कर्म०) सकलव्याधिसञ्चयः; विगतः सकलव्याधिसञ्चयो यस्य (बहु०) इति सः, तम्। बधिरीकुर्वन्—अबधिरं बधिरं कुर्वन्, बधिर+च्वि+कृ+शतृ, प्र०एक०, (अभततद्भावे च्विः)। तेपे—तप्+लिट्, प्र० एक०।

देव! हमारा कोई नियत देश नहीं है। हम समस्त धरातल पर विचरते हैं। गुरुजनों के अनुशासन में रहते हैं। समस्त धरातल को, हथेली पर रखे हुए आँवले के समान, देखते हैं। साँप से डँसे हुए, विष से व्याकुल, रोग से ग्रस्त, शस्त्र द्वारा क्षतमस्तक व्यक्ति को महाराज! उसी क्षण समस्त रोगों से रहित कर देते हैं। राजा ने भी भित्ति के पीछे छिपकर सब बातें सुनीं। फिर वे सभा में आये। कपालधारी

योगी को साष्टांग प्रणाम किया और कहा—शिव के समान शक्तिशाली, दूसरों की भलाई में व्यग्र योगीन्द्र जी महाराज ! मैं महापापी हूँ । मैंने पुत्र का वध किया है । आप मुझे हतपुत्र का जीवन दान देकर मेरी रक्षा करें ।

तब योगी ने कहा—राजन् ! आप डरो मत । आपका पुत्र मरेगा नहीं । शिव की प्रसन्नता से घर को लौट आवेगा । किन्तु श्मशान-भूमि में बुद्धिसागर को हवनसामग्री के साथ भेजो ; योगी ने जो कुछ कहा है, वह सब पूरा करो । यह कहकर बुद्धिसागर को भेजा । तब रात को गुप्त रूप से भोज को भी नदी के रेतीले तट पर लाया गया । लोगों में यह बात फैल गई कि योगी ने भोज को जीवित कर दिया है । तब भोजराज एक विशाल हाथी पर चढ़कर पुरवासी लोगों तथा मंत्रियों के साथ राजभवन में आये, जबकि भाट उनकी प्रशंसा कर रहे थे; भेरी, मृदंग आदि के नाद से समस्त संसार बहरा हो रहा था । राजा उसे गले से लगाकर रोने लगे । भोज ने भी रुदन करते हुए मुंज को रुदन से हटाकर उसकी प्रशंसा की । तब सन्तुष्ट होकर राजा ने उसे अपने सिंहासन पर बिठाया । छत्र और चामरों से विभूषित करके उसे राज्य दिया । अपने पुत्रों को एक-एक गाँव देकर अपने अत्यन्त प्रेम-पात्र जयन्त को भोज के पास ही रखा । तब परलोक-प्राप्ति के लिए मुंज अपनी रानियों के साथ तपोवन में जाकर कड़ी तपस्या करने लगे । राजा भोज भी देवता तथा ब्राह्मणों की प्रसन्नता से राज्य का पालन करने लगे ।

ततो मुञ्जे तपोवनं याते बुद्धिसागरं मुख्यामात्यं विधाय स्वराज्यं बुभुजे भोजराजभूपतिः । एवमतिक्रामति काले कदाचिद्राज्ञा क्रीडोद्यानं गच्छता कोऽपि धारानगरवासी विप्रो लक्षितः । स च राजानं वीक्ष्य नेत्रे निमील्यागच्छन्राज्ञा पृष्टः—'द्विज, त्वं मां दृष्ट्वा न स्वस्तीति जल्पसि । विशेषेण लोचने निमीलयसि । तत्र को हेतुः ? इति । विप्र आह—'देव, त्वं वैष्णवोऽसि । विप्राणां नोपद्रवं करिष्यसि, ततस्त्वत्तो न मे भीतिः । किन्तु कस्मैचित्किमपि न प्रयच्छसि, तेन तव दाक्षिण्यमपि नास्ति । अतस्ते किमा-

शीर्वचसा । किं च प्रातरेव कृपणमुखावलोकनात्परतोऽपि लाभहानिः स्यादिति लोकोक्त्या लोचने निमीलिते । अपि च ।

ततो मुञ्जे इति । **Vocabulary**: विधाय—बनाकर, having made. त्वत्तः—तुझ से, from you.

व्याख्या—अतिक्रामति—अति+क्रम्+शतृ, सप्तमी एक०, भावलक्षणे सप्तमी, अतिक्रामति सति। त्वत्तः—युष्मद्+तसिल (पञ्चम्यर्थे तसिल्); परतः—पर+तसिल्, परस्मात् ।

जब मुंज तपोवन को चले गये तब राजा भोज बुद्धिसागर को प्रधान मंत्री बनाकर राज्य भोगने लगे। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर कभी क्रीडोद्यान को जाते समय राजा ने धारानगर में रहनेवाले किसी ब्राह्मण को देखा। उसने राजा को देखकर अपनी आँखें बन्द कर लीं। जब वह राजा की ओर आया तो राजा ने पूछा—ब्राह्मण! तूने मुझे देखकर आशीर्वाद नहीं दिया, पर आँखें बन्द कर ली हैं। इसका क्या कारण है? ब्राह्मण ने कहा—देव! आप विष्णुभक्त हो, ब्राह्मणों को कष्ट नहीं देते। इसलिए आपसे मुझे भय नहीं है। किन्तु आप किसी को कुछ नहीं देते, इसलिए आपमें शिष्टाचार नहीं, तब आपको आशीर्वाद से क्या लाभ? प्रातःकाल कृपण का मुख देखने से सारा दिन लाभ नहीं होता। इस लोकोक्ति के अनुसार मैंने आँखें बन्द कर ली हैं।

प्रसादो निष्फलो यस्य कोपश्चापि निरर्थकः ।
न तं राजानमिच्छन्ति प्रजाः षण्ठमिव स्त्रियः ॥४७॥

प्रसाद इति । **Vocabulary** : प्रसाद—प्रसन्नता, pleasure. निरर्थक—व्यर्थ, useless. षण्ठ—नपुंसक, eunuch.

Prose Order : यस्य प्रसादः निष्फलः, च कोपः अपि निरर्थकः, स्त्रियः षण्ढम् इव प्रजाः तं राजानं न इच्छन्ति ।

व्याख्या—यस्य राज्ञः प्रसादः प्रसन्नता निष्फलः व्यर्थः, तथैव कोपो रोषश्चापि निष्फलः, स्त्रियो नार्यः षण्ढं नपुंसकम् इव प्रजाः तं राजानं न इच्छन्ति न वांछन्ति ।

जिसकी प्रसन्नता किसी काम की नहीं और जिसका क्रोध भी व्यर्थ है, प्रजा उस राजा को नहीं चाहती, जिस प्रकार स्त्री नपुंसक पति को नहीं चाहती ।

अप्रगल्भस्य या विद्या कृपणस्य च यद्धनम् ।
यच्च बाहुबलं भीरोर्व्यर्थमेतत्त्रयं भुवि ॥४८॥

अप्रगल्भस्येति । Prose Order : अप्रगल्भ—दक्षता से रहित, modest. भीरु—डरपोक, timid.

Prose Order : अप्रगल्भस्य या विद्या, कृपणस्य च यद् धनम्, यच्च भीरोः बाहुबलम् एतत् त्रयं भुवि व्यर्थम् ।

व्याख्या—प्रगल्भस्य प्रगल्भताशून्यस्य, दक्षतारहितस्य विद्या निष्फला, कृपणस्य धनोपभोगपराङ्मुखस्य धनं निष्फलम्, भीरोः भयशीलस्य बाहुबलं व्यर्थम् ।

वक्तृत्व-रहित विद्वान की विद्या, कृपण का धन, डरपोक व्यक्ति का बाहु-बल—भूतल पर ये तीनों व्यर्थ हैं ।

देव, मत्पिता वृद्धः काशीं प्रति गच्छन्मया शिक्षां पृष्टः—'तात, मया किं कर्त्तव्यमिति । पित्रा चेत्थमभ्यधायि—

देव मत्पितेति । Vocabulary : इत्थम्—इस प्रकार, in this way. अभ्यधायि—कहा, was said.

देव ! जब मेरे पति बूढ़े हो गये और काशी को जाने लगे तब मैंने शिक्षा के उद्देश्य से उनसे पूछा—पिता ! मुझे क्या करना चाहिए, तब पिता ने इस प्रकार कहा—

यदि तव हृदयं विद्वन्सुनयं स्वप्नेऽपि मा स्म सेविष्ठाः ।
सचिवजितं षण्ढजितं युवतिजितं चैव राजानम् ॥४९॥

यदि तवेति । Vocabulary : सुनय—शोभन नीति से युक्त, inclined to a good policy. मा स्म सेविष्ठाः—सेवन नहीं करना, do not wait upon . सचिवजित—मंत्रियों के वशीभूत, one who is under the influence of the ministers.

Prose Order : विद्वन् ! यदि तव हृदयं सुनयं (तदा) सचिवजितं षण्ढजितं युवतिजितं चैव राजानं स्वप्ने अपि मा सेविष्ठाः स्म ।

व्याख्या—सुनयम्—शोभनो नयो यत्र (बहु०) तत् । मा सेविष्ठाः—माङ्.योगे अड्भावः । सचिवजितम् —सचिवेन जितः (तृ० तपु०) तम् ।

विद्वन् ! यदि तुम्हारा हृदय सुनीति पर चलना चाहता है, तो तुम स्वप्न में भी उस राजा की सेवा न करना, जो राजा मंत्रियों, नपुंसकों, तथा स्त्रियों के वश में रहता है ।

पातकानां समस्तानां द्वे परे तात पातके ।
एकं दुस्सचिवो राजा द्वितीयं च तदाश्रयः ॥५०॥

पातकानामिति । **Vocabulary** : पातक—पाप, sin. समस्त—सब, all. पर—बड़ा, the greatest. दुस्सचिव—जिसका मंत्री दुष्ट हो, one who has a bad minister. तदाश्रय—उसके आश्रय में रहना, his service.

Prose Order : तात ! समस्तानां पातकानां द्वे पातके परे । एकं दुस्सचिवः राजा, द्वितीयं च तदाश्रयः ।

व्याख्या—हे तात प्रिय, समस्तानां सर्वेषां पातकानां पापानां द्वे पातके पापद्वयी परे घोरतमे स्तः । दुस्सचिवः—दुष्ट सचिवो मंत्री यस्य (बहु०) सः । तदाश्रयः—तस्य दुष्टामात्यस्य राज्ञः आश्रयः सेवा ।

भगवन् ! सब पापों में उत्कृष्ट दो महान् पाप हैं । पहला—वह राजा जिसका मंत्री दुष्ट हो । दूसरा—उस राजा का आश्रय ।

अविवेकमतिर्नृपतिर्मन्त्री गुणवत्सु वक्रितग्रीवः ।
यत्र खलाश्च प्रबलास्तत्र कथं सज्जनावसरः ॥५१॥

अविवेकमतिरिति । **Vocabulary :** अविवेकमतिः—विचारहीन मति का, of indiscriminate intellect. वक्रितग्रीव—जिसने ग्रीवा को तिरछा किया है, one who is averse to. खल—दुष्ट, a mischief-monger.

Prose Order : यत्र नृपतिः अविवेकमतिः, गुणवत्सु मन्त्रिषु वक्रितग्रीवः, खलाश्च प्रबलाः, तत्र सज्जनावसरः कथम् ?

व्याख्या—यत्र । नृपतिः भूपतिः । अविवेकमतिः—न विवेकः अविवेकः (नञ् तत्पु०), अविवेकयुक्ता मतिर्यस्य (मध्यमपदलोपिबहु०) सः । गुणवत्सु—गुणिषु । मन्त्रिषु—सचिवेषु । वक्रितग्रीवः—वक्रिता ग्रीवा यस्य (बहु०) सः । प्रबलाः—प्रकृष्टबलयुक्ताः । सज्जनावसरः—सज्जनस्य अवसरः (ष० तत्पु०)

जब राजा की बुद्धि विचारशून्य हो जाती है और गुणी मंत्रियों से वह मुँह मोड़ लेता है और जहाँ दुष्टों का साम्राज्य है, वहाँ सज्जनों को रहने का अवसर कहाँ ?

राजा संपत्तिहीनोऽपि सेव्यः सेव्यगुणाश्रयः ।
भवत्याजीवनं तस्मात्फलं कालान्तरादपि ।।५२।।

राजेति । **Vocabulary** : सम्पत्ति—wealth. सेव्य—सेवा के योग्य, worthy of service. आजीवन—जबतक जीवन रहे, as long as this life lasts. कालान्तर—अन्यकाल, afterwards.

Prose Order : सेव्यगुणाश्रयः सम्पत्तिहीनः अपि राजा सेव्यः । तस्मात् कालान्तरात् अपि आजीवन फलं भवति ।

व्याख्या—सेव्यगुणाश्रयः—सेवितुं योग्याः सेव्याः (सेव्+यत्), सेव्या गुणाः (कर्म०) सेव्यगुणाः;, सेव्यगुणानाम् आश्रयः (ष० तत्पु०) आश्रयभूतः सेवनीयगुणान्वितः । सम्पत्तिहीनः—द्रव्यविहीनः । आजीवनम्—जीवनम् अभिव्याप्य । कालान्तरादपि-कस्मिंश्चिदपि काले ; तस्मात् फलं भवति ।

सम्पत्तिहीन राजा की भी सेवा उचित है, यदि उसमें सेवा के योग्य गुण हों । जीवन में किसी समय भी उससे फल मिल सकता है ।

अदातुर्दाक्षिण्यं नहि भवति । देव, पुरा कर्ण-दधीचि-शिवि-विक्रमप्रमुखाः क्षितिपतयो यथा परलोकमलंकुर्वाणा निजदानसमुद्भूतदिव्यनवगुणैर्निवसन्ति महीमण्डले, तथा किमपरे राजनः ?

अदातुरिति । **Vocabulary** : अदातुः दानपराङ्मुखस्य । दाक्षिण्यम् उपचारः, customary courtesy.

देव ! कृपण में सौजन्य नहीं होता । प्राचीनकाल में कर्ण, दधीचि, शिवि, विक्रम आदि राजा परलोक को सिधार गये, किन्तु उनमें दान से उत्पन्न दिव्य तथा नूतन गुणों के रहने से जैसे वे भूतल पर यश-रूपी शरीर में अब भी रहते हैं। क्या अन्य राजा भी वैसे रह सकते हैं ?

देहे पातिनि का रक्षा यशो रक्ष्यमपातवत् ।
नरः पतिकायोऽपि यशःकायेन जीवति ॥५३॥

देहे पातिनीति । Vocabulary : पातिन्—नाशशील, liable to fall, अपातवत्—अविनाशी, immortal. पतितकाय—जिसका शरीर नष्ट हो गया है, one who has lost his mortal frame. यशः-काय—यश-रूपी शरीर, body of reputation.

Prose Order : पातिनि देहे रक्षा का ? अपातवत् यशः रक्ष्यम् । पतितकायः अपि नरः यशः कायेन जीवति ।

व्याख्या—अपितुं शीलमस्येति (पत् णिनि) तस्मिन् पतनशीले देहे शरीरे रक्षा का ? तादृशस्य शरीरस्य रक्षणमनुचितम् । अपातवत्—अविनाशी । यशः । रक्षणीयम् । पतितकायः—पतितो नष्टः कायः शरीरं यस्य (बहु०) स तथाभूतः, परित्यक्तस्थलसूक्ष्मशरीरः । यशःकायेन—यशःशरीरेण जीवति ।

देह के नाशशील होने पर उसकी रक्षा से क्या लाभ ? अविनाशी यश की ही रक्षा उचित है । शरीर के नष्ट हो जाने पर भी मनुष्य यशरूपी शरीर से जीवित रहता है ।

पण्डिते चैव मूर्खे च बलवत्यपि दुर्बले ।
ईश्वरे च दरिद्रे च मृत्योः सर्वत्र तुल्यता ॥५४॥

पण्डिते चैव । Vocabulary: ईश्वर—धनी, rich. तुल्यता—समानता, equality, equal behaviour.

Prose Order : पण्डिते चैव मर्खे च, बलवति दुर्बले अपि, ईश्वरे च दरिद्रे च मृत्योः सर्वत्र तुल्यता ।

व्याख्या—स्पष्टम् ।

निमेषमात्रमपि ते वयो गच्छन्न तिष्ठति ।
तस्माद्देहेष्वनित्येषु कीर्तिमेकामुपार्जयेत् ।।५५।।

निमेषमात्रमिति । Vocabulary : निमेषमात्र—क्षण-मात्र, in an instant. वयस्—आयु, life. अनित्य—अस्थायी, mortal. उपार्जयेत्—अर्जन करे, should earn.

Prose Order: ते वयः निमेष मात्रम् अपि गच्छन् न तिष्ठति। तस्माद् अनित्येषु देहेषु एकां कीर्त्तिम् उपार्जयेत् ।

व्याख्या—ते तव वयः आयुः गच्छन् क्षीयमाणः निमेषमात्रं क्षणमात्रमपि न तिष्ठति क्षयान्न विरमति । तस्माद् हेतोः देहेषु शरीरेषु अनित्येषु अस्थायिषु सत्सु एकां केवलां कीर्त्तिम् उपार्जयेत् यशः सञ्चिनुयात् ।

तुम्हारी प्रगतिशील आयु पलभर भी स्थिर नहीं रहती । जबकि शरीर अनित्य है। मनुष्य को केवल यश का उपार्जन करना चाहिए ।

जीवितं तदपि जीवितमध्ये
गण्यते सुकृतिभिः किमु पुंसाम् ।
ज्ञानविक्रमकलाकुललज्जा-
त्यागभोगरहितं विफलं यत् ।।५६।।

जीवितमिति । Vocabulary: जीवित—life. गण्यते—गिना जाता है, is counted. सुकृतिन्—पुण्यात्मा, the virtuous.

Prose Order: पुंसां ज्ञानविक्रमकलाकुललज्जात्यागभोगरहितं यत् विफलं जीवितं तदपि सुकृतिभिः किमु जीवितमध्ये गण्यते ?

व्याख्या—पुंसां नराण्याम् । ज्ञानेति—ज्ञानं च विक्रमश्च कला च कुललज्जा च त्यागश्च भोगश्च (द्वन्द्व) इति ज्ञानविक्रमकलाकुललज्जात्यागभोगाः, तैः रहितम् (तृ० तत्पु०) अतएवं विफलं फलशून्यं जीवितम् । तदपि सुकृतिभिः पुण्यशीलैः नरैः ? किमु जीवितमध्ये गण्यते, न गण्यत इत्यर्थः ।

पुण्यशील व्यक्ति मनुष्यों के उस जीवन को भी क्या जीवन की गणना में रखते हैं, जो जीवन ज्ञान, पराक्रम, कला, वंशलज्जा, त्याग तथा भोग से रहित होने के कारण निष्फल है ।

राजापि तेन वाक्येन पीयूषपूरस्नात इव, परब्रह्मणिलीन इव, लोचनाभ्यां हर्षाश्रूणि मुमोच । प्राह च द्विजम्—'विप्रवर, शृणु ।'

राजापीति। **Vocabulary**: पीयूषपूर—अमृत का सरोवर, flood of nectar, परब्रह्मन्—absolute spirit, लीन—absorbed.

राजा भी उस वाक्य से अमृत की बाढ़ में नहाये हुए के समान, परब्रह्म में लीन-सा आनन्द के आँसू बहाने लगा और कहने लगा—'सुनो ब्राह्मण-श्रेष्ठ !'

सुलभाः पुरुषा लोके सततं प्रियवादिनः ।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः ॥५७॥

सुलभाः इति । **Vocabulary** : सततम्—निरन्तर, perpetually. प्रियवादिन्—प्रियवाक्य बोलनेवाला, speaker of pleasant words. पथ्य—हितकर, salutary. वक्ता—बोलनेवाला, speaker. श्रोता—सुननेवाला, hearer. दुर्लभ—rare.

Prose Order : लोके सततं प्रियवादिनः पुरुषा सुलभा, अप्रियस्य पथ्यस्य च वक्ता श्रोता च दुर्लभः ।

व्याख्या—लोके जगति सततं निरन्तरं प्रियवादिनो मधुरभाषिणः पुरुषा मर्त्याः सुलभाः सुखेन लभ्याः । अप्रियस्य कटुनः पथ्यस्य हितकरस्य च वाक्यस्यवक्ता कथयिता श्रोता आकर्णयिता च दुर्लभः दुखेन लभ्यः ।

संसार में निरन्तर प्रिय बोलनेवाले पुरुष सुलभ हैं । कटु किन्तु हितकर बचन कहने तथा सुननेवाला मनुष्य सुलभ नहीं है ।

मनीषिणः सन्ति न ते हितैषिणो
हितैषिणः सन्ति न ते मनीषिणः ।
सुहृच्च विद्वानपि दुर्लभो नृणां
यथौषधं स्वादु हितं च दुर्लभम् ॥५८॥

मनीषिणः इति । **Vocabulary**: मनीषिन्—बुद्धिमान, an intelligent person. हितैषिन्—हित चाहनेवाला, kindly disposed.

Prose Order: मनीषिणः सन्ति, ते हितैषिणः न । हितैषिणः सन्ति ते मनीषिणः न । सुहृत् च विद्वान् अपिनृणां दुर्लभः, यथा स्वादु हितं च औषधं दुर्लभम् ।

व्याख्या—मनीषिणः—विद्वांसः । सन्ति । ते । हितैषिणः—हितेच्छुकाः । न । सन्ति । हितैषिणो विद्वांसो न सन्ति । सुहृच्च विद्वांश्चेति दुर्लभः, यथा स्वादु मिष्टं च हितकरञ्च औषधं दुर्लभम् ।

विद्वान् तो (बहुत) हैं, किन्तु वे हितैषी नहीं होते । हितैषी भी सुलभ हैं, किन्तु वे विद्वान् नहीं होते । हितैषी और विद्वान् पुरुष मनुष्यों को दुर्लभ हैं, जैसे स्वादिष्ट और हितकर औषध दुर्लभ होती है ।

इति विप्राय लक्षं दत्त्वा 'किं ते नाम' इत्याह । विप्रः स्वनाम भूमौ लिखति 'गोविन्दः' इति । राजा वाचयित्वा 'विप्र' प्रत्यहं राजभवनमागन्तव्यम् । न ते कश्चिन्निषेधः । विद्वांसः कवयश्च कौतुकात्सभामानेतव्याः । कोऽपि विद्वान्न खलु दुःखभागस्तु, एनमधिकारं पालय' इत्याह ।

एवं गच्छत्सु कतिपयदिवसेषु राजा विद्वत्प्रियो दानवित्तेश्वर इति प्रथामगात् । ततो राजानं दिदृक्षवः कवयो नानादिग्भ्यः समागताः । एवं वित्तादिव्ययं कुर्वाणं राजानं प्रति कदाचिन्मुख्यामात्येनेत्थमभ्यधायि—'देव' राजानः कोशबला एव विजयिनः, नान्ये ।

इतीति । **Vocabulary** : प्रत्यहम्—प्रतिदिन, everyday. प्रथा—ख्याति, reputation. दिदृक्षु—देखने की इच्छा से युक्त, desirous of an interview

व्याख्या—प्रत्यहम्—अहनि अहनि (अव्ययीभाव) । दिदृक्षवः—(दृश्+सन्+उ, प्रथमा, बहु) द्रष्टुमिच्छवः । अभ्यधायि—अभि+धा+कर्मणि लुङ्, प्र० एक०, उक्तम् । कोशबलाः—कोश एव बलं येषाम् (बहु०), ते । विजयिनः—विजेतु शीलमेषाम् इति ते, (वि+जि+णिनि, प्रथमा बहु०) ।

इस प्रकार ब्राह्मण को एक लाख रुपये देकर पूछने लगा—तुम्हारा नाम क्या है ? ब्राह्मण ने अपना नाम पृथ्वी पर लिखा—गोविन्द । राजा ने पढ़ा और कहा—ब्राह्मण ! तुम प्रतिदिन राजभवन में आया करो । तुम्हें

कोई मनाही नहीं । विद्वान् और कविजनों को भी मनोरंजन के लिए सभा में लाया करो । कोई विद्वान् दुःखी न रहे । इस अधिकार का पालन करना ।

इस प्रकार कुछ दिनों के व्यतीत होने पर राजा की ख्याति होने लगी कि वह विद्वानों से प्रेम रखता है, दानी और धनी है । तब राजा के दर्शनार्थ कवि लोग देश-देशान्तरों से आने लगे । इस प्रकार धन आदि का व्यय करते हुए राजा से एक बार प्रधान मंत्री ने कहा—देव ! जिनका कोष समृद्ध रहता है, वे ही राजा विजयी होते हैं, अन्य नहीं ।

स जयी वरमातङ्गा यस्य तस्यास्ति मेदिनी ।
कोशो यस्य स दुर्धर्षो दुर्गं यस्य स दुर्जयः ॥५९॥

स जयी इति । **Vocabulary** : वरमातङ्ग—उत्तम हाथी, an elephant of noble breed. मेदिनी–पृथ्वी, earth. कोश–treasure. दुर्धर्ष—जिसका पराभव न हो सके, unassailable. दुर्जय—one who cannot be easily won.

Prose Order : यस्य वरमातङ्गाः सः जयी, तस्य मेदिनी अस्ति । यस्य कोशः सः दुर्धर्षः, यस्य दुर्गं सः दुर्जयः ।

व्याख्या—वरमातङ्गाः—वराः मातङ्गाः (कर्म०), हस्तिवराः । जयी—जेतुं शीलमस्यास्तीति सः । मेदिनी—पृथ्वी । दुर्धर्षः—अजय्यः ।

जिसके पास श्रेष्ठ हाथी हों, वही राजा विजयी होता है । उसी के अधिकार में पृथ्वी रहती है । जिसके पास कोष रहता है, उसका पराभव नहीं हो सकता । जिसके पास दुर्ग हो उसे जीतना सरल नहीं ।

देव, लोकं पश्य ।

प्रायो धनवतामेव धने तृष्णा गरीयसी ।
पश्य कोटिद्वयासक्तं लक्षाय प्रवणं धनुः ॥६०॥

देवेति । **Vocabulary** : गरीयसी—बड़ी, excessive. धनुष्—bow. कोटि (१) अग्रभाग, curved ends. (२) एक करोड़, a crore. आसक्त—लगा हुआ, attached; लक्ष—(१) उद्देश्य, a goal;

(२) लाख, a lac. प्रवण (१) झुका हुआ, bent, (२) प्रवृत्त, inclined towards.

Prose Order : प्रायः धनवताम् एव धने गरीयसी तृष्णा । कोटि-द्वयासक्तं लक्षाय प्रवणं धनुः पश्य ।

व्याख्या—प्रायः—बाहुल्येन । धनवताम्—धनिनाम् । एव । गरीयसी—बहुलतमा । तृष्णा । दृश्यते । कोटिद्वयासक्तम्—कोटिद्वयम्—कोटेर्द्वयम् (ष० तत्पु०), कोटिद्वये आसक्तम् (स० तत्पु०) कोटिद्वयासक्तम् । लक्षाय—लक्ष-संख्याताय द्रव्याय, शरपातलक्षाय वा । प्रवणं नतम् अभ्युद्यतं वा ।

देव ! संसार की प्रवृत्ति को देखिए—

प्रायः धनियों की ही धन में बड़ी तृष्णा रहती है । देखिए धनुष को, जो दो कोटि (दो करोड़ रुपयों अथवा दो अग्रभागों) से युक्त होने पर भी लक्ष (एक लाख अथवा निशाने) के लिए नतमस्तक रहता है ।

राजा च तमाह—

दानोपभोगवन्ध्या या सुहृद्भिर्या न भुज्यते ।
पुंसां समाहिता लक्ष्मीरलक्ष्मीः क्रमशो भवेत् ॥६१॥

राजेति । **Vocabulary** : उपभोग—enjoyment. वन्ध्या—sterile. समाहित—एकत्रित, composite. क्रमशः—in course of time.

Prose Order : समाहिता पुंसां लक्ष्मीः या दानोपभोगवन्ध्या या सुहृद्भिः न भुज्यते क्रमशः अलक्ष्मीः भवेत् ।

व्याख्या—समाहिता—एकत्रिता, (सम्+आ+धा+क्त+टाप्) । दानोपभोगवन्ध्या—दानं च उपभोगश्चेदि दानोपभोगौ (द्वन्द्व), तयोः वन्ध्या, (स० तत्पु०), दानोपभोगरहितेत्यर्थः । या च । सुहृद्भिः मित्रैः । न भुज्यते—नोपयुज्यते । सा तथाभूता सती । क्रमशः क्रमेण । अलक्ष्मीः लक्ष्मीगुणरहिता । भवेत्, विनश्यतीत्यर्थः ।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥

राजा ने उसे कहा—

मनुष्यों का संचित धन, जो दान और उपभोग में न आने के कारण निष्फल है, जिसे मित्रवर्ग भी उपभोग में नहीं लाता, समय पाकर नष्ट हो जाता है।

इत्युक्त्वा राजा तं मंत्रिणं निजपदाद्दूरीकृत्य तत्पदेऽन्यं निवेशयामास । आह च तत्—

लक्षं महाकवेर्देयं तदर्धं बिबुधस्य च ।
देयं ग्रामैकमर्धस्य तस्याप्यर्धं तदर्थिनः ॥६२॥

इत्युक्त्वेति । **Vocabulary**: पद—अधिकार स्थान—office. दूरीकृत्य—हटाकर, having dismissed. दिदेश—नियुक्त किया। विबुध—विद्वान्, a learned man. अर्ध—स्वल्प शिक्षित, half the learned. अर्थिन्—याचक, माँगनेवाला, a suitor.

Prose Order । महाकवेर्लक्षं देयम् । विबुधस्य च तदर्धं देयम् । अर्धस्य ग्रामैकं देयम्, तदर्थिनः तस्याप्यर्धम् ।

व्याख्या—विबुधस्य—विशेषेण बुधः (प्रादि तत्पु०), महापण्डितः, तस्य। देयम्—दा+यत्, दातव्यम् । ग्रामैकम्—ग्रामाणाम् एकम् (ष० तत्पु०)।

ऐसा कहकर राजा ने उस मंत्री को मंत्री-पद से हटा दिया । उस पद पर अन्य मंत्री की नियुक्ति की और कहा—

महाकवि को एक लाख रुपये दो, विद्वान् को उससे आधा, अपूर्ण विद्वान् को एक गाँव, याचक को आधा गाँव ।

यश्च मेऽमात्यादिषु वितरणनिषेधमनाः स हन्तव्यः । उक्तं च—

यद्ददाति यदश्नाति तदेव धनिनां धनम् ।
अन्ये मृतस्य क्रीडन्ति दारैरपि धनैरपि ॥६३॥

यश्चेति । **Prose Order :** यद् ददाति यद् अश्नाति तद् एव धनिनां धनम् । अन्ये मृतस्य दारैः अपि धनैः अपि क्रीडन्ति ।

व्याख्या—अश्नाति—भुङ्क्ते । दारशब्दो नित्यपुंलिङ्गः ।

मंत्री आदि अधिकारी-वर्ग में जो दान देने के विरुद्ध हो, उसका वध कर दो । कहा भी है ।

मनुष्य जिस धन को देता है, जिसे वह उपभोग में लाता है वही धनी का धन है। मरने के बाद दूसरे लोग उसकी स्त्रियों तथा धन का आनन्द लेते हैं।

प्रियः प्रजानां दातैव न पुनर्द्रविणेश्वरः ।
प्रयच्छन्काङ्क्ष्यते लोकैर्वारिदो नतु वारिधिः ॥६४॥

प्रिय इति । **Vocabulary**: द्रविणेश्वर—धनी, the lord of riches. प्रयच्छन्—देता हुआ, giving. काङ्क्ष्यते—चाहा जाता है, is liked. वारिद—मेघ, a cloud. वारिधि—समुद्र, an ocean.

Prose Order : प्रजानां दाता एव प्रियः, पुनः द्रविणेश्वरः न । लोकैः प्रयच्छन् वारिदः काङ्क्ष्यते, वारिधि न तु ।

व्याख्या—प्रजा दातारमेव वाञ्छन्ति, धनवन्तम् अदातारन्तु नेहन्ते । प्रयच्छन्—प्र+दा (यच्छ्)+शतृ, प्रथमा, एक०, वितरन् । वारिदः—वारि जलं ददातीति, मेघः । लोकैः—जनैः । काङ्क्ष्यते—इष्यते । वारिधिः—समुद्रः । न तु नैव ।

दानी राजा ही प्रजा को प्रिय होता है। धन का संचय करनेवाला कभी नहीं। जल न बरसाता हुआ भी बादल लोगों को प्रिय लगता है न कि जल का निधान समुद्र।

संग्रहैकपरः प्रायः समुद्रोऽपि रसातले ।
दातारं जलदं पश्य गर्जन्तं भुवनोपरि ॥६५॥

संग्रहैकपर इति । **Vocabulary** : संग्रह—accumulation. रसातल—पृथ्वी के नीचे का भाग, the nether part of the earth.

Prose Order : संग्रहैकपरः समुद्रः अपि प्रायः रसातले (वर्त्तते) दातारं भुवनोपरि गर्जन्तं जलदं पश्य ।

व्याख्या—संग्रहैकपरः—केवलं संग्रहशीलः, नतु वितरण प्रियः । समुद्रोऽपि अर्णवोऽपि । रसातले भूतले वर्त्तते, उच्चस्थानं न लभते । दानशीलो मेघस्तु भुवनोपरि गर्जन् आस्ते इति दानस्य महिमा ।

प्रायः संग्रह में ही संलग्न समुद्र पाताल को धँस गया है । दानी बादल को देखिए जो संसार के ऊपर गरजता है ।

एवं वितरणशालिनं भोजराजं श्रुत्वा कश्चित्कलिङ्गदेशात्कविरुपेत्य मासमात्रं तस्थौ । न च क्षोणीन्द्रदर्शनं भवति । आहारार्थं पाथेयमपि नास्ति । ततः कदाचिद्राजा मृगयाभिलाषी बहिर्निर्गतः । कविर्दृष्ट्वा राजानमाह—

एवमिति । वितरशालिन्—दानशील, one who is given to donating. पाथेय—मार्ग के लिए भोजन, provision for journey. मृगयाभिलाषी—शिकार का इच्छुक, fond of hunting.

इस प्रकार दानशील भोजराज के संबंध में सुनकर एक कवि कलिंग देश से आकर एक महीने तक वहाँ रहा । किन्तु उसे राजदर्शन न हो सके । आहार के लिए मार्ग का भोजन भी समाप्त हो गया । तब कभी शिकार की इच्छा से राजा बाहर निकला । तब कवि ने राजा को देखकर कहा—

दृष्टे श्रीभोजराजेन्द्रे गलन्ति त्रीणि तत्क्षणात् ।
शत्रोः शस्त्रं कवेः कष्टं नीवीबन्धो मृगीदृशाम् ॥६६॥

दृष्टे इति । **Vocabulary** : गलन्ति—गिर जाती हैं, fall off. नीविबन्ध—कमरपट्टा, the tie of the drawers. मृगीदृशाम्— of the fawn-eyed ladies.

Prose Order : श्रीभोजराजेन्द्रे दृष्टे तत्क्षणात् त्रीणि गलन्ति—शत्रोः शस्त्रम्, कवेः कष्टम्, मृगीदृशां नीविबन्धः ।

व्याख्या—श्रीभोजराजेन्द्रे—श्रीभोजमहाराजे । दृष्टे—दर्शनपथमुपेते सति । त्रीणि वस्तूनि । तत्क्षणात्—सद्य एव । गलन्ति—पतन्ति । शत्रोः—अरेः । शस्त्रम्—प्रहरणानि । कवेः—काव्यनिर्मातुः । कष्टम्—धनाद्यभावोत्थाऽऽपद् । मृगीदृशाम्—हरिणाक्षीणाम् । नीविबन्धः—कञ्चीबन्धनम् ।

महाराज भोज को देखते ही उसी क्षण तीन वस्तुएँ भमि पर गिर पड़ती हैं—शत्रु का शस्त्र, कवि का कष्ट और मृगनयनी स्त्रियों की करधनी ।

राजा लक्षं ददौ । ततस्तस्मिन्मृगयारसिके राजनि कश्चन पुलिन्दपुत्रो गायति । तद्गीतमाधुर्येण तुष्टो राजा तस्मै पुलिन्दपुत्राय पञ्चलक्षं ददौ । तदा कवि-

स्तद्दानमत्युन्नतं किरातपोतं च दृष्ट्वा नरेन्द्रपाणिकमलस्थपङ्कजमिषेण राजानं वदति—

रा जेति । **Vocabulary**: रसिक—आसक्त, fond of. पुलिन्द—भील, a mountaineer. किरात—भील, a person belonging to a savage tribe. पोत—पुत्र । पाणि—हाथ । मिष—pretext.

राजा ने उसे एक राख रुपये दिये । जब राजा शिकार में मस्त थे तब किसी शिकारी के पुत्र ने एक गीत गाया । उसके गीत की मधुरता से प्रसन्न होकर राजा ने उसे पाँच लाख रुपये दिये । तब कवि ने इतना भारी दान शिकारी के पुत्र को देते देखकर राजा के कमल सदृश हाथ में विराजमान कमल को संबोधित करते हुए राजा से कहा—

एते हि गुणाः पंकज सन्तोऽपि न ते प्रकाशमायान्ति ।
यल्लक्ष्मीवसतेस्तव मधुपैरुपभुज्यते कोशः ॥६७॥

एते इति । **Vocabulary**: लक्ष्मीवसति —(१) विष्णुप्रिया लक्ष्मी का स्थानस्वरूप; an abode of the Goddess Lakshmi; (२) धन का वासस्थान, an abode of wealth. कोश—(१) खजाना, a treasure; (२) कलिका, a bud, मधुप—(१) मधु पान करनेवाला, a drunkard, (२) मधुरस पीने वाला भ्रमर, a bee.

Prose Order: पंकज ! ते ऐते गुणास्तु सन्तः अपि प्रकाशं न आयान्ति । यद् लक्ष्मीवसतेः तव कोशः मधुपैः उपभुज्यते ।

व्याख्या—पंकज—पंके जायत इति सः, तत्सम्बुद्धौ, हे कमल ! ते तव एतेगुणाः वीरत्वादयः सन्तोऽपि त्वयि विद्यमाना अपि प्रकाशं न आयान्ति न प्रकाशन्ते । यद् यतः लक्ष्मीवसतेः लक्ष्म्याः श्रियः वसतिः वासः यत्र स लक्ष्मीवसतिः तस्य, लक्ष्मीवासभूतस्य तव कोशः सम्पद् रसकलिका वा मधुपैः भ्रमरैः मद्यपैः वा उपभुज्यते आस्वाद्यते गृह्यते वा ।

ऐ कमल ! ये तुम्हारे गुल तुझमें रहते हुए भी प्रकट नहीं होते; क्योंकि तुझमें लक्ष्मी का आवास होने पर तुम्हारा कोश (धन अथवा मधु), मधु (कमलरस अथवा मदिरा) पान करनेवाले भ्रमरों (लोगों) द्वारा उपयोग में लाजा जाता है ।

भोजस्तमभिप्रायं ज्ञात्वा पुनर्लक्षमेकं ददौ । ततो राजा ब्राह्मणमाह—

प्रभुभिः पूज्यते विप्र कलैव न कुलीनता ।
कलावान्मान्यते मूर्ध्नि सत्सु देवेषु शंभुना ॥६८॥

भोज इति । कुलीनता—family respectability. कलावान्—चन्द्रमा, the moon who is possessed of digits.

Prose Order : विप्र ! प्रभुभिः कलैव पूज्यते कुलीनता न, देदेषु सत्सु शम्भुना मर्घ्नि कलावान् मान्यते ।

व्याख्या—प्रभुभिः—स्वामिभिः । कला—आत्मगुणः । कुलीनता—कुटुम्ब-गुणः । कलावान्—कलायुक्तः । मान्यते पूज्यते । मूर्ध्नि—मस्तके ।

भोज ने उस अभिप्राय को समझकर फिर एक लाख रुपये दान में दिये । तब राजा ने ब्राह्मण से कहा—

ऐ ब्राह्मण ! स्वामी कला को ही सम्मान देते हैं, कुलीनता को नहीं । अन्य देवताओं के रहते हुए भी शिव ने कलायुक्त चन्द्रमा को अपने मस्तक पर धारण किया है ।

एवं वदति भोजे कुतोऽपि पञ्चषाः कवयः समागताः । तान्दृष्ट्वा राजा विलक्ष इवासीत्—'अद्यैव मयैतावद्वित्तं दत्तम्' इति । ततः कविस्तमभिप्रायं ज्ञात्वा नृपं पद्ममिषेण पुनः प्राह—

एवमिति । **Vocabulary** : पञ्चषाः—पाँच छः, five or six. विलक्षण—व्याकुल, bewildered. मिष—pretext.

व्याख्या—पञ्चषाः पञ्च षड्वा । विलक्षणः—सम्भ्रान्तः । अभिप्रायम्—मनोगतम् । पद्ममिषेण—कमलापदेशेन ।

भोज के ऐसा कहने पर कहीं से पाँच-छः कवि आ पहुँचे । उन्हें देखकर राजा लज्जित-सा हुआ—आज ही तो मैंने इतना धन दिया है । तब कवि ने उस अभिप्राय को जानकर कमल के बहाने राजा से फिर कहा—

किं कुप्यसि कस्मैचन सौरभचौराय कुप्य निजमधुने ।
यस्य कृते शतपत्र प्रतिपत्रं तेऽद्य मुग्यते भ्रमरैः ॥६९॥

किं कुप्यसीति । **Vocabulary :** कुप्यसि—कुपित होते हो get angry. सौरभचौर—गन्ध का चोर, fragrance-stealer. पाठान्तर में—सौरभसार—सुगन्ध का सारभूत । मधु—मधुर रस, sweet juice. शतपत्र—कमल, lotus.

Prose Order : कस्मैचन सौरभचौराय किं वा कुप्यसि, निजमधुने कुप्य । शतपत्र ! यस्य कृते अद्य ते प्रतिपत्रम् भ्रमरैः मृग्यते ।

व्याख्या—कस्मैचन अज्ञातकुलशीलाय किं किमर्थं कुप्यसि व्यर्थस्ते कोपः सौरभसाराय—सुगन्धसारभूताय । निजमधुने—निजमधुररसाय । कुप्य । यस्य मधुनः कृते । हे शतपत्र कमल ! अद्य । ते—तव । प्रतिपत्रम्—पत्रं पत्रम् प्रति भ्रमरैः मधुकरैः । मृग्यते—अन्विष्यते ।

पाठान्तरे तु, कस्मैचन सौरभचौराय गन्धापहर्त्रे भ्रमरायेति यावत्, किमु कुप्यसि ? शेषं पूर्ववत् ।

तुम किसी पर क्रोध क्यों करते हो ? उत्कृष्ट गन्धवासित स्वकीय मधु पर तुम क्रोध करो, जिस मधु के लिए ऐ कमल ! भ्रमरगण तुम्हारे एक-एक पत्ते को खोज रहा है ।

ततः प्रभुं प्रसन्नवदनमवलोक्य प्रकाशेन प्राह—

न दातुं नोपभोक्तुं च शक्नोति कृपणः श्रियम् ।
किंतु स्पृशति हस्तेन नपुंसक इव स्त्रियम् ॥७०॥

तत इति । Prose Order : कृपणः श्रियं न दातुं न च उपभोक्तुं शक्नोति । किन्तु नपुंसकः स्त्रियम् इव हस्तेन स्पृशति ।

व्याख्या—स्पष्टम्

तब प्रभु को प्रसन्नमुख देखकर उसे ही लक्षित करके बोला—

कृपण मनुष्य लक्ष्मी को न दे सकता है और न उसका उपभोग ही कर सकता है । जिस प्रकार नपुंसक मनुष्य स्त्री को हाथ से स्पर्श करता है, उसी प्रकार वह कृपण भी लक्ष्मीको हाथ से स्पर्श ही कर सकता है (उपभोगमें नहीं ला सकता)।

याचितो यः प्रहृष्येत दत्वा च प्रीतिमान्भवेत् ।
तं दृष्ट्वाप्यथवा श्रुत्वा नरः स्वर्गमवाप्नयात् ॥७१॥

याचित इति । **Prose Order** यः याचितः प्रहृष्येत दत्वा च प्रीतिमान् भवेत् तं दृष्ट्वा अथवा श्रुत्वा अपि नरः स्वर्गम् अवाप्नुयात् ।

व्याख्या—यो नरः अर्थिना याचितः प्रार्थितः सन् प्रहृष्येत हर्षमुपेयात्, दत्वा च प्रार्थितं वस्तु प्रार्थिने वितीर्य प्रीतिमान् प्रसन्नो भवेत् तं दृष्ट्वा अथवा श्रुत्वा अपि तद्दर्शनेन तद्विषयकश्रवणेन वा नरः स्वर्गम् अवाप्नुयात् प्राप्नोति। जो मनुष्य याचित होने पर प्रसन्न होता है और देकर अत्यन्त हर्ष का अनुभव करता है कोई भी मनुष्य उसे देखकर अथवा उसके सम्बन्ध में सुन-कर स्वर्ग को प्राप्त होगा।

ततस्तुष्टो राजा पुनरपि कलिङ्गदेशवासिकवये लक्षं ददौ। ततः पूर्वकविः पुरःस्थितान्षट्कवीन्द्रान्दृष्ट्वाह—'हे कवयः, अत्र महासरःसेतभूमौ वासी राजा यदा भवनं गमिष्यति तदा किमपि ब्रूत' इति। ते च सर्वे महाकवयोऽपि सर्वे राज्ञः प्रथमचेष्टितं ज्ञात्वावर्त्तन्त। तेष्वेकः सरोमिषेण नृपं प्राह—

आगतानामपूर्णानां पूर्णानामपि गच्छताम्।
यदध्वनि न संघट्टो घटानां तत्सरो वरम् ॥७२॥

तत इति। **Vocabulary** : सेतु—bank. अध्वन्—मार्ग, pat[h] [सं]घट्ट—collision.

Prose Order : अपूर्णानाम् आगतानाम्, पूर्णानां गच्छताम् अपि [घ]टानां यदध्वनि संघट्टः न, तत् सरोवरम् ।

व्याख्या—अपूर्णानाम्—न पूर्णाः (नञ् तत्पु०) अपूर्णाः तेषाम्, पूर्णानाम्—[ज]लभरितानाम् । यदध्वनि—यस्य अध्वनि मार्गे । संघट्टः—संघर्षः । नास्ति। [त]त् सरः वरम् अस्तीति शेषः ।

तब प्रसन्न होकर राजा ने फिर कलिंग देश के रहनेवाले कवि को एक [ला]ख रुपये दिये । तब पहले कवि ने सामने उपस्थित छः महाकवियों से [क]हा—हे कवियो! इस जलाशय के रेतीले किनारे पर राजा ठहरे हुए हैं। [ज]ब वे घर को लौटेंगे तब कुछ कहना। वे सब महाकवि भी राजा के पूर्व [क्रि]याओं से परिचित थे।

उनमें से एक ने जलाशय के बहाने राजा से कहा—

श्रेष्ठ है यह जलाशय जहाँ खाली घड़े आते हैं, किन्तु भरकर जाते हैं,

मार्ग में टकराते नहीं। (अर्थात् जो निर्धन धन के लिए आता है, उसे तत्काल धन मिल जाता है। मार्ग में ठहरना नहीं पड़ता)।

इति। तस्य राजा लक्षं ददौ। ततो गोविन्दपण्डितस्तान्कवीन्द्रान्दृष्ट्वा चुकोप। तस्य कोपाभिप्रायं ज्ञात्वा द्वितीयः कविराह—

कस्य तृषं न क्षययसि पिबति न कस्तव पयः प्रविश्यान्तः।
यदि सन्मार्गसरोवर नक्रो न क्रोडमधिवसति ॥७३॥

तस्येति। **Vocabulary** : क्षपयसि—शान्त करते हो, **quench.** पयः—जल। सन्मार्गसरोवर—श्रेष्ठ मार्ग पर स्थित जलाशय! **the best of lakes situated on the high road.** नक्र—मगर, **alligator.**

Prose Order : कस्य तृषं न क्षपयसि, तव अन्तः प्रविश्य कः पयः न पिबति, सन्मार्गसरोवर यदि नक्रः क्रोडं न अधिवसति?

व्याख्या—सन्मार्गसरोवर—सन् मार्गः (कर्म०), सन्मार्गे स्थितः सरोवरः (मध्यमपदलोपिसप्तमीतत्पु०) तत्सम्बुद्धौ। यदि नक्रः मकरः ते क्रोडं त्वदं न अधिवसति नाश्रयते, तदा त्वं कस्य पिपासोः तृषं पिपासां न क्षपयसि न अपनयसि, कः तव अन्तः प्रविश्य पयः जलं न पिबति?

राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये। तब गोविन्द पण्डित उन महाकवियों को देखकर कुपित हुए। उसके कोप का अभिप्राय जानकर दूसरे कवि ने कहा—

तुम किस की प्यास न बुझाते? कौन तुझ में प्रविष्ट होकर तुम्हारा जल पान न करता? ऐ सुन्दर मार्ग के किनारे पर स्थित जलाशय! यदि तुम्हारे भीतर मगर न रहता?

राजा तस्मै लक्षद्वयं ददौ। तं च गोविन्दपण्डितं व्यापारपदाद्दूरीकृत्य त्वयापि सभायामागन्तव्यम्, परं त केनापि दौष्ट्यं न कर्त्तव्यम् इत्युक्त्वा इतस्तेभ्यः प्रत्येकं लक्षं दत्वा स्वनगरनमागतः। ते च यथायथं गताः।

ततः कदाचिद्राजा मुख्यामात्यं प्राह—

विप्रोऽपि यो भवेन्मूर्खः स पुराद्बहिरस्त मे।
कुम्भकारोऽपि यो विद्वान्स तिष्ठतु पुरे मम ॥७४॥

राजेति । **Vocabulary** : व्यापारपद—अधिकार-स्थान, office. दूरीकृत्य—हटाकर, having removed. दौष्ट्य–दुष्टता, wickedness. यथायथम्—अपने-अपने स्थानों को—to their abodes. विप्र—ब्राह्मण । कुम्भकार—कुम्हार ।

Prose Order : यः विप्रः अपि मूर्खः भवेत् स मे पुराद् बहिः अस्तु । यः कुम्भकारः अपि विद्वान् सः मम पुरे तिष्ठतु ।

व्याख्या—यः विप्रः ब्राह्मणः अपि सन् मूर्खः मूढः भवेत् सः मे मम पुराद बहिः अस्तु निर्गच्छेत् । यः कुम्भकारः घटानां निर्माता सन् अपि विद्वान् स मम पुरे नगरे तिष्ठतु ।

राजा ने उसे दो लाख रुपये दिये और उस गोविन्द पंडित को अधिकार-स्थान से हटाकर कहा—तुमने भी सभा में आना किन्तु किसी से ईर्ष्या नहीं करना । तब उनमें से प्रत्येक को एक-एक लाख रुपये देकर राजा अपने नगर को आये । कवि भी जहाँ से आये थे, वहीं चले गये ।

तब कभी राजा ने प्रधान मन्त्री से कहा—

मूर्ख यदि ब्राह्मण भी हो तो वह मेरे नगर से बाहर चला जाय । विद्वान् यदि कुम्हार भी हो तो वह मेरे नगर में रहे ।

इसलिए धारानगरी में कोई भी मूर्ख नहीं रहा ।

इति । अतः कोऽपि न मूर्खोऽभूद्धारानगरे ।

ततः क्रमेण पञ्चशतानि विदुषां वररुचि-बाण-मयूर-रेफण-हरिशंकर-कलिङ्ग-कर्पूर-विनायक-मदन-विद्या-विनोद-कोकिल-तारेन्द्रमुखाः सर्वशास्त्रविचक्षणाः सर्वे सर्वज्ञाः श्रीभोजराजसभामलंचक्रुः । एवं स्थिते कदाचिद्विद्वद्वृन्दवन्दित-सिंहासनासीने कविशिरोमणौ कवित्वप्रिये विप्रप्रियबान्धवे भोजेश्वरे द्वारपाल एत्य प्रणम्य व्यजिज्ञपत्—'देव, कोऽपि विद्वान्द्वारि तिष्ठति' इति । अथ राज्ञा 'प्रवेशय तम्' इत्याज्ञप्ते सोऽपि दक्षिणेन पाणिना समुन्नतेन विराजमानो विप्रः प्राह—

'राजन्नभ्युदयोऽस्तु'

राजा— 'शंकरकवे किं पत्रिकायामिदम् ?'

कविः—'पद्यं'

राजा— 'कस्य'

कविः— 'तवैव भोजनृपते'

राजा— 'तत्पठ्यतां'

कविः— 'पठ्यते' ।

अत इति । **Vocabulary** : आसीन–स्थित, seated. एत्य–आकर, having come.

व्याख्या—सर्वज्ञाः—निखिलशास्त्रपारङ्गताः । विद्वद्वृन्दवन्दिते—विदुषां वृन्देन वन्दिते विद्वत्समूहार्चिते । सिंहासनासीने—सिंहासनम् आसीनः स्थितः, तस्मिन् । एत्य—आगत्य । व्यजिज्ञपत्—निवेदयामास । पाणिना—करेण । समुन्नतेन—उत्थापितेन ।

तब सब शास्त्रों में निपुण तथा सर्वज्ञ वररुचि, बाण, मयूर, रेफण, हरिशंकर, कलिङ्ग, कर्पूर, विनायक, मदन, विद्याविनोद, कोकिल, तारेन्द्र, आदि पाँच सौ विद्वानों ने अपने पदानुसार राजा भोज को सभा को अलंकृत किया।

जब एक बार कविशिरोमणि कवि-ब्राह्मण-बन्धु प्रिय भोजराज पंडित-वर्ग से सम्मानित सिंहासन पर विराजमान थे, द्वारपाल ने आकर प्रणाम करके निवेदन किया—देव एक विद्वान् द्वार पर खड़ा है। तब राजा ने आदेश दिया—'उसे लाओ'। अपने दाहिने हाथ को उठाकर उस तेजस्वी ब्राह्मण ने कहा—

कवि—राजन्! आपकी समृद्धि हो।

राजा—शंकर कवि इस पत्र पर क्या लिखा है ?

कवि—एक पद्य।

राजा—किसके सम्बन्ध में ?

कवि—राजन्! आप ही के सम्बन्ध में।

राजा—तो आप इसे पढ़िए।

कवि—हाँ, पढ़ता हूँ।

एतासामरविन्दसुन्दरदृशां द्राक्चामरान्दोलना-
द्वुद्वेल्लद्भुजवल्लिकङ्कणझणत्कारः क्षणं वार्यताम् ॥७५॥

राजन्निति। **Vocabulary** : अभ्युदय—prosperity. पत्रिका—paper. अरविन्द—कमल, lotus. द्राक्—शीघ्र, immediately. चामर—chowry. आन्दोलन—डुलाना, fanning. उद्वेल्लत्—घूमती हुई, moving to and fro. भुजवल्लि—बाहु-लता, creeper-like arm. कंकण—bracelet. झणत्कार—the tinkling sound. वार्यताम्—रोकिये, may order to stop.

Prose Order : राजन्, ! अभ्युदयः अस्तु, शंकरकवे! इदं पत्रिकायां किम्? पद्यम्, कस्य? तवैव,, पापठ्यताम्, पठ्यते। एतासाम् अरविन्दसुन्दरदृशां द्राक् चामरान्दोलनाद् उद्वेल्लितभुजवल्लिकङ्कणझणत्कारः क्षणं वार्यताम्।

व्याख्या—अभ्युदयः—कल्याणं, मङ्गलं वाऽस्तु। पापठ्यताम्— पुनः-पुनः पठ्यताम्। अरविन्दसुन्दरदृशाम्—अरविन्दमिव सुन्दरे दृशे यासाम् (बहु०) ताः तासाम्, द्राक् झटिति। चामरान्दोलनात्—चामराणाम्–आन्दोलनम् (ष० तत्पु०) तस्मात्। उद्वेल्लद्भुजवल्लिकंकणझणत्कारः—भुजवल्लिः—भुजः वल्लिरिव (उपमितकर्मधारयः), उद्वेल्लन्ती भुजवल्लिः (विशेषणविशेष्य कर्म०); भुज-वल्ल्यां धृतं कङ्कणम् (मध्यमपदलोपिसप्तमीतत्पु०); कंकणस्य झणत्कारः (ष० तत्पु०)।

(किन्तु) कमल के सदृश सुन्दर नयनोंवाली रमणियों के द्वारा बार-बार पंखा हिलाने पर उनकी हिलती हुई भुजलताओं पर बँधे हुए कंकणों की झन-झनाहट को तो क्षण-भर के लिये बन्द कराइए।

यथा यथा भोजयशो विवर्धते
सितां त्रिलोकीमिव कर्तुमुद्यतम्।
तथा तथा मे हृदयं विदूयते
प्रियालकालिधवलत्वशङ्कया ॥७६॥

यथायथेति । **Vocabulary :** त्रिलोकी—three worlds. सिता—श्वेत, white. विदूयते—व्यथित होता है, is pained. अलक—बाल, hair. आलि—पंक्ति, range.

Prose Order : त्रिलोकी सिताम् इव कर्त्तुम् उद्यतं भोजयशः यथा यथा विवर्धते तथा तथा मे हृदयं प्रियालकालिधवलत्वशंकया विदूयते।

व्याख्या—त्रिलोकीम्—त्रयाणां लोकानां समाहारः (द्विगु) इति त्रिलोकी, ताम् । सिताम्—श्वेताम् । भोजयशः—भोजस्य यशः (ष० तत्पु०) । प्रियालकालिधवलत्वशंकया—प्रियायाः अलकाः, अलकानि वा (ष० तत्पु०), प्रियालकानाम् आलिः (ष० तत्पु०) ; प्रियालकालेः धवलत्वम् (ष० तत्पु०) ; तस्य शंका (ष० तत्पु०) तया । यद्वा—प्रियालका अलयः भ्रमरा इव (उपमित कर्म०) ।

जैसे-जैसे भोज की कीर्त्ति फैलती है, मानों कि वह तीनों भुवनों को श्वेत करने लगी हो, वैसे ही मेरा हृदय दुखित हो रहा है कि कहीं प्रिया के काले केश सफेद न हो जायँ।

ततो राजा शंकरकवये द्वादशलक्षं ददौ। सव विद्वांसश्च विच्छायवदना बभूवुः। परं कोऽपि राजभयान्नावदत्। राजा च कार्यवशाद् गृहं गतः।

तत इति । व्याख्या—विच्छायवदनाः—विच्छायाम्—विगता छाया यस्मादिति विच्छायम्; छाया शोभा, विच्छायं वदनं (येषाम्) (बहु०), ते—मलिनमुखाः। विभूपालम्—विगतो भूपालो यस्याः (बहु०) सा, ताम् भूपालरहिताम् । अज्ञता—अज्ञस्य भावः, ताम्, मूर्खताम्।

तब राजा ने शंकर कवि को बारह लाख रुपये दिये। सभी विद्वानों के मुख मलिन हो गये। किन्तु राजा के भय से किसी ने कुछ नहीं कहा और राजा भी कार्यवश महल को चले गये।

ततो विभूपालां सभां दृष्ट्वा विबुधगणस्तं निनिन्द—'अहो नृपतेरज्ञता। किमस्य सेवया। वेदशास्त्रविचक्षणेभ्यः स्वाश्रयकविभ्यो लक्षमदात् । किमनेन वितुष्टेनापि। असौ च केवलं ग्राम्यः कविः शंकरः। किमस्य प्रागल्भ्यम्।' इत्येवं कोलाहलरवे जाते कश्चिदभ्यगात्कनकमणिकुण्डलशाली दिव्यांशुकप्रावरणो नृपकुमार इव मृगमदपङ्कलङ्कितगात्रो नवकुसुमसमभ्यर्चितशिराश्चन्दनाङ्ग-

रागेण विलोभयन्विलास इव मूर्त्तिमान्कवितेव तनुमाश्रितः शृङ्गाररस्यरसस्य स्यन्दं इव सस्यन्दो महेन्द्र इव महीवलयं प्राप्तो विद्वान् । तं दृष्ट्वा सा विद्वत्परिषद् भयकौतुकयोः पात्रमासीत् । स च सर्वान्प्रणिपत्य प्राह—'कुत्र भोजनृपः ?' ते तमूचुः—'इदानीमेव सौधान्तरं गतः' इति। ततोऽसौ प्रत्येकं तेभ्यस्ताम्बूलं दत्वा गजेन्द्रकुलगतो मृगेन्द्र इवासीत् । तत स महापुरुषः शंकरकविप्रदानेन कुपितां-स्तान्बुद्ध्वा प्राह—'भवद्भिः शंकरकवये द्वादशलक्षाणि प्रदत्तानीति न मन्तव्यम्, अभिप्रायस्तु राज्ञो नैव बुद्धः । यतः शंकरपूजने प्रारब्धे शंकरकविस्त्वेकेनैव लक्षेण पूजितः । किं तु तन्निष्ठांस्तन्नाम्ना विभ्राजितानेकादशरुद्राशंकरान-परान्मूर्त्तीन्प्रत्यक्षाञ्ज्ञात्वा तेषां प्रत्यकमेकैकं लक्षं तस्मै शंकरकवय एव शंकर-मूर्त्तये प्रदत्तमिति राज्ञोऽभिप्रायः' इति सर्वेऽपि चमत्कृतास्तेन ।

ततः कोऽपि राजपुरुषस्तद्विद्वत्स्वरूपं द्रागाज्ञे निवेदयामास । राजा च स्वमभिप्रायं साक्षाद्विदितवन्तं तं महेशमिव महापुरुषं मन्यमानः सभामभ्यगात् । स च 'स्वस्ति' इत्याह राजानम् । राजा च तमालिङ्ग्य प्रणम्य निजकरकमलेन तत्करकमलमवलम्ब्य सौधान्तरं गत्वा प्रोत्तुङ्गगवाक्ष उपविष्टः प्राह—'विप्र भवन्नाम्ना कान्यक्षराणि सौभाग्यावलम्बितानि । कस्य वा देशस्य सुजानान्बाधते' इति। ततः कविर्लिखति राज्ञो हस्ते 'कालिदासः' इति । राजा वाचयित्वा पादयोः पतति ।

ततस्तत्रासीनयोः कालिदासभोजराजयोरासीत्संध्या । राजा 'सखे, संध्यां वर्णय' इत्यवादीत् ।

कालिदासः—

इत्येवम् इति। **Vocabulary** : कोलाहलरव—a huge uproar. कनक—सुवर्ण, gold. अंशुक—उत्तरीय वस्त्र, upper garment. मृगमद—कस्तूरी, musk. पंक—घोल, cream, ointment. कलंकित—लिप्त, besmeared (lit. blackened). चन्दनाङ्गराग—चूर्णित चन्दन का घोल, sandal paste. मूर्त्तिमान्—साकार, embodied. विलास—सौन्दर्य, beauty. विभ्राजित—शोभायमान, glorified.

व्याख्या—कनकमणिकुण्डलशाली—मणिकुण्डले—मणिना युक्ते कुण्डले इति मणिकुण्डले (मध्यम तृ० तत्पु०); कनकेन निर्मिते मणिकुण्डले इति । कनकमणि कुण्डले (मध्यम० तृ० तत्पु०), कनकमणिकुण्डलाभ्यां शालते इति। (तृ० तत्पु०); दिव्यांशुकप्रावरणः—दिव्यम् अंशुकम् (कर्म०), दिव्यांशुकम्; दिव्यांशुकं प्रावरणं: (परिधानवस्त्रं) यस्य (बहु०) सः । मृगमदेति—मृगमदः—कस्तूरिका, मृगमदस्य पङ्कः (ष०तत्पु०) मृगमदपङ्कः; मुगमपदङ्केन कलंकितं (—मलिनितं) गात्रं यस्य (बहु०) सः, कस्तूरिकायाः कृष्णवर्णत्वात्तदभ्यर्चितगात्राणां मलिनितत्वम् । नवकुसुमेति—नवानि कुसुमानि (कर्म०) नवकुसुमानि, नवकुसुमैः समभ्यर्चितम् (तृ० तत्पु०); नवकुसुमसमभ्यर्चितं शिरो यस्य (बहु०) सः । चन्दनाङ्गरागेण—चन्दनस्य अङ्गरागः (ष० तत्पु०), तेन। सौधान्तरगतः—अन्यः सौधः सौधान्तरम् (कर्म०), सौधान्तरं गतः (द्वि० तत्पु०), द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः इति समासः। प्रोत्तुङ्गवाक्षे प्रकर्षेण उत्तुङ्ग (प्रादि तत्पु०), प्रोत्तुङ्गः, प्रोत्तुङ्गः गवाक्षः (कर्म०) प्रोत्तुङ्गगवाक्षः। सौभाग्यावलम्बितानि—सौभाग्येनअवलम्बितानि (तृ० तत्पु०) । भवन्नाम्नेति । किं भवतां नामेत्यर्थः। कस्य वा देशस्येति—कस्माद्देशाद् भवान् समागतः?

यह देखकर कि सभा में राजा नहीं है, विद्वानों ने उसकी निन्दा करना शुरू किया—आश्चर्य है राजा की मूर्खता पर! इसकी सेवा से क्या लाभ? वेद-शास्त्रों में निपुण स्वाश्रित कवियों को तो इसने एक लाख ही दिया है। इसके प्रसन्न रहने पर भी क्या लाभ? वह शंकर तो ग्रामीण कवि ही रहा। वह क्या जाने कविता को। इस प्रकार कोलाहल होने पर एक विद्वान् कवि वहाँ आ पहुँचा, जिसने कानों में सुवर्णमय मणियुक्त कुंडल पहिने थे, जो उज्ज्वल दुपट्टा ऊपर लिये था, राजकुमार के समान जिसके अंग कस्तूरी के घोल से अनुलिप्त थे, जिसका शिरोभाग अभिनव पुष्पों से अलंकृत था, चन्दन-चूर्ण के अंगलेप से आकर्षित करता हुआ ऐसा दीखता था, मानों कि साकार सौन्दर्य हो, मानों कि कविता का आकार हो, मानों कि शृंगार रस का निष्यन्द हो।

उसे देखकर वह पण्डित-सभा भीत और चकित हो गई और उसने सभी

को प्रणाम करके पूछा—राजा भोज कहाँ हैं? उन्होंने उसे कहा—वे अभी महल के भीतर गये हैं। तब उसने उनमें से प्रत्येक को पान दिया। तब वह हाथियों के झुंड के बीच सिंह के समान दीखने लगा। तब उस महापुरुष को विदित हुआ कि शंकर कवि को धन मिलने से वे सब कुपित हैं। उसने कहा—आप ऐसा मत समझिए कि बारह लाख रुपये शंकर कवि को ही दिये गये हैं। आपने राजा का अभिप्राय नहीं समझा। शंकर की पूजा करते हुए तो शंकर कवि की एक ही लाख से पूजा की गई, किन्तु उसके साथी और उसके नाम से सुशोभित ग्यारह रुद्रों को शंकर की प्रत्यक्ष अन्य मूर्त्तियाँ समझकर उनमें से प्रत्येक को एक-एक लाख रुपये दे दिये हैं। यह है राजा का अभिप्राय। सभी उस कथन से चकित हुए।

तब कभी किसी राजपुरुष ने इस विद्वान् के सम्बन्ध में राजा को सूचित किया। राजा को जब विदित हुआ कि उसने मेरा अभिप्राय जान लिया है तब वह उस महापुरुष को शिव समझता हुआ सभा में आया और विद्वान् ने राजा को आशीर्वाद दिया। राजा ने भी उसे गले लगाया और प्रणाम किया। अपने कमल-सदृश हाथ में उसका कमल-सदृश हाथ लेकर महल के भीतर जाकर एक उन्नत झरोखे के सामने बैठकर बोला—ब्राह्मण! आपके नाम में किन-किन अक्षरों को सौभाग्य मिला है? (अर्थात् आपका नाम क्या है?) आपकी अनुपस्थिति किस देश के सज्जनों को व्यथित कर रही है (अर्थात् आप किस देश से आये हो)?

तब कवि ने राजा के हाथ पर लिखा—'कालिदास'। राजा ने पढ़कर उसकी पाद-वन्दना की।

तब कालिदास और भोजराज के वहाँ बैठे-बैठे सन्ध्या हो गई। राजा ने कहा—मित्र सन्ध्या का वर्णन करो।

कालिदास ने कहा—

व्यसनिन इव विद्या क्षीयते पङ्कजश्री-
र्गुणिन इव विदेशे दैन्यमायान्ति भृङ्गाः।

कुनृपतिरिव लोकं पीडयत्यन्धकारो
धनमिव कृपणस्य व्यर्थतामेति चक्षुः ।।७।।

व्यसनिन इति । **Vocabulary** : व्यसनिन्—व्यसनशील, addicted to vice. पङ्कजश्री—कमलशोभा—the beauty of the lotuses. दैन्य—दीनभाव, dejection. भृङ्ग—भ्रमर, the bee. कुनृपति—दुष्ट राजा, the wicked monarch.

Prose Order : व्यसनिनः विद्या इव पङ्कजश्रीः क्षीयते । विदेशे गुणिनः इव भृङ्गाः दैन्यम् आयान्ति । कुनृपतिः इव अन्धकारः लोकं पीडयति । कृपणस्य धनम् इव चक्षुः व्यर्थताम् एति ।

व्याख्या—व्यसनिनः—व्यसनम् अस्यास्तीति सः, व्यसनशीलस्य । पङ्कजश्रीः—पङ्के जायत इति पङ्कजम् (पङ्क+जन्+ड), पङ्कजस्य श्रीः (षष्ठी तत्पु०) । क्षीयते—नश्यति । विदेशे गुणिनो गुणवन्तो यथा दैन्यम् दीनभावम् आयान्ति तथा भृङ्गा भ्रमरा अपि दैन्यम् आयान्ति । कुनृपतिः—कुत्सितश्चासौ नृपतिरिति (कर्म०), कुगतिप्रादयः । पीडयति—व्यथयति । कृपणस्य अदातुर्धनमिव, यथा कृपणधनं नश्यति तथा चक्षुरपि दृष्टिविहीनं हतप्रभ च जायते ।

(सन्ध्या के समय) कमलों की शोभा नष्ट हो जाती है जैसे कि व्यसनी पुरुष की विद्या । भ्रमर दीनता का अनुभव करते हैं, जैसे विदेश में गुणी मनुष्य । अन्धकार दुष्ट राजा की तरह लोगों को पीड़ित करता है । नेत्र कृपण के संचित धन के समान व्यर्थ हो जाते हैं ।

पुनश्च राजानं स्तौति कविः—

उपचारः कर्त्तव्यो यावदनुत्पन्नसौहृदाः पुरुषाः ।
उत्पन्नसौहृदानामुपचारः कैतवं भवति ।।६७८।।

पुनश्चेति । **Vocabulary** : उपचार—दाक्षिण्य, formality. सौहृद—मैत्री, friendly familiarity. कैतव—ठगी, fraud.

Prose Order : यावद् अनुत्पन्नसौहृदाः पुरुषाः, उपचारः कर्त्तव्यः । उत्पन्नसौहृदानाम् उपचारः कैतवं भवति ।

व्याख्या—अनुत्पन्नसौहृदाः—न उत्पन्नम् अनुत्पन्नम् (नञ् तत्पु०), अनुत्पन्नं सौहृदं येषां (बहु०), ते, अस जातसुहृद्भावाः। उत्पन्नसौहृदानाम्—उपजातसुहृद्भावानाम्। उपचारः—दाक्षिण्यम्। कैतवं—धौर्त्यम्। भवति। कवि ने फिर से राजा की स्तुति की—

किसी मनुष्य के साथ जबतक मैत्री न हो तबतक उससे औपचारिक व्यवहार (जिसमें स्वच्छन्दता नहीं होती) करना चाहिए। जब मैत्री हो जाय तब उपचार करना धोखा है।

दत्ता तेन कविभ्यः पृथ्वी सकलापि कनकसंपूर्णा।
दिव्यां सुकाव्यरचनां क्रमं कवीनां च यो विजानाति ॥७६॥

दत्तेति। **Vocabulary** : कनकसम्पूर्ण—स्वर्ण से भरपूर, full of gold. दिव्य—शोभायुक्त, brilliant. काव्य-रचना—poetical production. क्रम—प्रतिष्ठाक्रम, the rank and file.

Prose Order : यः दिव्यां सुकाव्यरचनां कवीनां क्रमं च विजानाति तेन कविभ्यः सकला अपि कनकसम्पूर्णा पृथ्वी दत्ता।

व्याख्या—यो राजा, अन्यो वा कश्चिन्नरः, दिव्यां शोभादिसद्गुणविशिष्टाम्, सुकाव्यरचनाम्—शोभनं काव्यं सुकाव्यम् (प्रादिकर्म०), सुकाव्यस्य रचना (ष० तत्पु०) सुकाव्यरचना ताम्। क्रमम्—प्रतिष्ठाक्रमम्। विजानाति—विशेषेण जानाति। तेन कविभ्यः सकला समस्ताऽपि कनकसम्पूर्णा कनकेन सुवर्णेन सम्पूर्णा पृथ्वी दत्ता।

जिस मनुष्य ने कवियों की दिव्य काव्य-रचना को तथा उसके क्रम को जान लिया है, उसने सुवर्ण से भरी सम्पूर्ण पृथ्वी को कवियों के प्रति समर्पित किया है।

सुकवेः शब्दसौभाग्यं सत्कविर्वेत्ति नापरः।
वन्ध्या न हि विजानाति परां दौहृदसंपदम् ॥८०॥

सुकवेरिति। **Vocabulary** : शब्दसौभाग्य—शब्दों का सौन्दर्य, beauty of words. सत्कवि—उत्तम कवि, a good poet. वन्ध्या—

सन्ततिहीन नारी, a barren woman. दौर्हृद—गर्भवती स्त्री की इच्छा the longing of a barren woman.

Prose Order : सत्कविः सुकवेः शब्दसौभाग्यं वेत्ति, अपरः न। वन्ध्या परां दौर्हृदसम्पदं नहि विजानाति।

व्याख्या—सुकविः शोभनः कविरेव सत्कवेः शोभनस्य कवेः शब्दसौभाग्यं रचनासौन्दर्यं वेत्ति जानाति, अपरः अन्यः न। वन्ध्या सन्ततिविहीना नारी परां महतीम, अस्वकीयां वा दौर्हृदसम्पदं गर्भावस्थाकालीनं मनोऽभिलाषं नहि विजानाति; तस्यास्तादृगवस्थायाः कदाप्यभावात्।

श्रेष्ठ कवि के सुन्दर शब्द-विन्यास को महाकवि ही जानता है, दूसरा नहीं जानता। बाँझ स्त्री गर्भवती की गर्भकालीन अभिलाषा को नहीं जान सकती।

इति। ततः क्रमेण भोजकालिदासयोः प्रीतिरजायत।

ततः कालिदासं वेश्यालम्पटं ज्ञात्वा तस्मिन्सर्वे द्वेषं चक्रुः। न कोऽपितं स्पृशति। अथ कदाचित्सभामध्ये कालिदासमालोक्य भोजेन मनसा चिन्तितम्—'कथमस्य प्राज्ञस्यापि स्मरपीडाप्रमादः' इति। सोऽपि तदभिप्रायं ज्ञात्वा प्राह—

ततः क्रमेणेति। **Vocabulary :** लम्पट—अनुरक्त, hankering after. प्रमाद—असावधानता, carelessness.

व्याख्या—वेश्यालम्पटम्—वेश्यायां लम्पटः (स० तत्पु०) तम्। स्मरपीडाप्रमादः—स्मरपीडा—स्मरकृता पीडा (मध्यमपदलोपिकर्मधारय) स्मरपीडा; स्मरपीडायां प्रमादः (सप्तमीतत्पु०), सत्यामपि कामपीडायां नैष क्षुभ्यति; कामपथमेवाश्रयते, तत्कृतां पीडां च सहत इत्यर्थः।

तब क्रम से भोज और कालिदास का परस्पर प्रेम हो गया।

तब कालिदास को वेश्यासक्त देखकर उसके साथ सभी द्वेष करने लगे। उसे कोई भी नहीं छूता था। तब कभी सभा में कालिदास को देखकर भोज ने मन में विचार किया। विद्वान् होने पर भी कैसे यह काम-क्लेश से सतर्क नहीं। कालिदास ने भी राजा का अभिप्राय जानकर कहा—

चेतोभुवश्चापलताप्रसङ्गे
का वा कथा मानुषलोकभाजाम् ।
यद्दाहशीलस्य पुरां विजेतु-
स्तथाविधं पौरुषमर्धमासीत् ॥८१॥

चेतोभुव इति। **Vocabulary** : चेतोभू—कामदेव, mind-born God of love. चापलता—चञ्चलता, wanton nature. मानुषलोकभाज्—मनुष्य-लोक का वासी, a mortal. दाहशील—जलाने के स्वभाव से युक्त, of cumbustible nature. पौरुष—पुरुषार्थ, strength.

Prose Order : चेतोभुवः चापलताप्रसङ्गे मानुषलोकभाजां कथा का वा, यद् दाहशीलस्य पुरां विजेतुः तथाविधं पौरुषं अर्धम् आसीत ।

व्याख्या—चेतोभुवः, चेतसः चेतसि वा भवतीति चेतोभूः मनोभूः कामः तस्य (उपपदतत्पु०) । चापलताप्रसङ्गे—चापलता—चपलस्य भावः (चपल+अण्) चापलम्, तदेव चापलता, चापलतायाः प्रसङ्गः (ष० तत्पु०) तस्मिन् । मानुषलोकभाजम्—मानुषाणां लोकः (ष० तत्पु०) मानुषलोकः, मानुषलोकं भजते इति मानुषलोकभाक् (उपपदतत्पु०) तेषाम् । कथैव वार्त्तैव का । यद् यतः दाहशीलस्य दहनोग्रव्यापारस्य, यद्वा यस्य (कामस्य) दाहः यद्दाहः (ष० तत्पु०) तच्छीलस्य यद्दाहपरायणस्य । पुरां विजेतुः दुर्गविध्वंसकस्य, नगरविध्वंसकस्य वा । तथाविधं पौरुषं शक्तिः । अर्धम्आसीत् ।

मनोजन्मा कामदेव की चंचलता के सम्बन्ध में मनुष्यलोक के प्राणियों की तो बात ही क्या ? दुर्गविध्वंसक दाहशील महादेव का वह श्रवणनीय पराक्रम भी आधा ही रह गया ।

ततस्तुष्टो भोजराजः प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कालिदासो भोजं स्तौति—

महाराज श्रीमञ्जगति यशसा ते धवलिते
पयःपारावारं परमपुरुषोऽयं मृगयते ।
कपर्दी कैलासं करिवरमभौमं कुलिशभृ-
त्कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥८२॥

तत इति। **Vocabulary** : श्रीमन्— illustrious. पयःपारावार—क्षीरसमुद्र, milky ocean. परमपुरुष—विष्णु, Supreme God. मृगयते—ढूँढ़ता है, seeks for. कपर्दी—शिव। करिवर—सुन्दर हाथी। अभौम—दिव्य, divine or celestial. कलानाथ—चन्द्रमा। कमलभवन—कमलवासी ब्रह्मा, Brahma who dwells into the lotus. हंस—swan.

Prose Order : महाराज श्रीमन्! ते यशसा धवलिते जगति अयं परमपुरुषः पयःपारावारं मृगयते, कपर्दी कैलासम्, कुलिश-भृत् अभौमं करिवरं, कलानाथं राहुः, अधुना कमलभवनः हंसम्।

व्याख्य—हे महाराज, महांश्चासौ राजेति (कर्म०), तत्संबुद्धौ, ते तव। यशसा कीर्त्या धवलिते (धवल+इतच्) शुभ्रताम् गते। जगति। अयम्। परमपुरुषः—परमः पुरुषः (कर्म०) विष्णुः। पयःपारावारं—पयसः पारावारः (ष० तत्पु०) तं क्षीरसमुद्रम्। मृगयते—अन्विष्यति। कपर्दी—कपर्दोऽस्यातीति कपर्दी, जटाजूटवान्। कैलासम्—कैलासपर्वतम्। कुलिशभृत्—कुलिशंबिभर्तीति सः (उपपदतत्पु०), इन्द्रः। अभौमम्—अपार्थिवम्, दिव्यमिति यावत्। करिवरम्—हस्तिश्रेष्ठम्, ऐरावतम् अन्विष्यतीति सर्वत्रावधार्यम्। राहुः कलानाथं चन्द्रम् अन्विष्यति। कमलभवनः—कमले भवनं यस्य (बहु०) सः, ब्रह्मा हंसम् अन्विष्यति।

तब भोजराज ने प्रसन्न होकर प्रति वर्ण एक लाख रुपये दिये। तब कालिदास ने भोज की स्तुति की—

महाराज! श्रीमन्! आपके यश से जगत् के धवलित हो जाने पर विष्णु महाराज क्षीरसमुद्र को खोजने लगे हैं, शिव कैलास को, वज्रधारी इन्द्र दिव्य गजेन्द्र ऐरावत को, राहु चन्द्रमा को और अब ब्रह्मा कमल को।

नीरक्षीरे गृहीत्वा निखिलखगततीर्याति नालीकजन्मा
चक्रं धृत्वा तु सर्वानटति जलनिधींश्चक्रपाणिर्मुकुन्दः।
सर्वानुत्तुङ्गशैलान्दहति पशुपतिः फालनेत्रेण पश्य-
न्व्याप्ता त्वत्कीर्तिकान्ता त्रिजगति पते भोजराज क्षितीन्द्र ॥८३॥

नीरक्षीर इति। **Vocabulary**: नीर—जल, water. क्षीर—दुग्ध, milk. खग—पक्षी, bird. तति—समूह, group. नालीक—कमल, नालीकजन्मन्—ब्रह्मा, the lotus-born Brahma. तक्र—छाछ, मठ्ठा, butter-milk. अटति—घूमता है, wanders. चक्रपाणि—holding discus in hand. उत्तुङ्ग—उन्नत, lofty फाल—मस्तक, forehead. फालनेत्र—शिव की तीसरी आँख, जो कि मस्तक पर है, the third eye of Shiva on the forehead. पशुपति—शिव, the lord of animals.

Prose Order: नालीकजन्मा नीरक्षीरे गृहीत्वा निखिलखगततीः याति। चक्रपाणिः मुकुन्दः तक्रं धृत्वा तु सर्वान् जलनिधीन् अटति। पशुपतिः फालनेत्रेण पश्यन् सर्वान् उत्तुङ्गशैलान् दहति। नृपते क्षितीन्द्र भोजराज त्वत्कीर्त्तिकान्ता त्रिजगति व्याप्ता।

व्याख्या—नालीकजन्मा नालीके नालीकाद्वा जन्म यस्य सः (बहु०), ब्रह्मा। नीरक्षीरे नीरं क्षीरञ्चेति (द्वन्द्व), ते दुग्धं जलञ्च गृहीत्वाऽऽदाय, निखिलखगततीः—खे शून्ये गगने गच्छन्तीति ते खगाः पक्षिणः, खगानां ततिः (ष० तत्पु०) खगततिः पक्षिसमूहः निखिला चासौ खगततिश्चेति (विशेषण-विशेष्य कर्मधारय), ताः याति गच्छति। भोजराजयशसा धवलिते जगति सर्वेऽपि पक्षिणो धवलिताः। कथमसौ हंसं विचिनुयात्, हंसाहि नीरक्षीरविवेकिनः अतः नीरक्षीरे करे धृत्वा निखिलखगसमुदायं प्रत्येति। चक्रपाणिः—चक्रं पाणौ यस्य (व्यधिकरण बहु०) सः, हस्तधृतचक्रः। मुकुन्द—विष्णुः। तक्रम—आलोडितं दधि। धृत्वा—गृहीत्वा। सर्वान् जलनिधीन् समुद्रान् अटति भ्रमति। पशुपतिः—शिवः। फालनेत्रेण तृतीयेन चक्षुषा। पश्यन् विलोकयन्। सर्वान् उत्तुङ्गशैलान् उन्नतगिरीन्। दहति—ज्वलयति। क्षितीन्द्रः—क्षितेः इन्द्रः (ष० तत्पु०), तत्सम्बुद्धौ। त्वत्कीर्त्तिकान्ता—तव कीर्त्तिः—त्वत्कीर्त्तिः—(ष० तत्पु०), त्वत्कीर्त्तिश्चासौ कान्ता इव (कर्म०), व्याप्ता प्रसृता।

ब्रह्मा जी जल और दूध लेकर सभी पक्षियों के पास जा रहे हैं। चक्रपाणि विष्णु हाथ में मठ्ठा को लेकर सभी समुद्रों पर घूम रहे हैं। अपने मस्तक के नेत्र से देखते हुए पशुपति महादेव भी सभी ऊँचे पवतों को दग्ध

कर रहे हैं । ऐ क्षितीश भोजराज ! तुम्हारी कीर्त्तिकान्ता तीनों भुवनों में व्याप रही है।

विद्वद्राजशिखामणे तुलयितुं धाता त्वदीयं यशः
कैलासं च निरीक्ष्य तत्र लघुतां निक्षिप्तवान्पूर्त्तये ।
उक्षाणं तदुपर्युमासहचरं तन्मूर्ध्नि गङ्गाजलं
तस्याग्रे फणिपुङ्गवं तदुपरि स्फारं सुधादीधितिम् ।।८४।।

विद्वदिति । **Vocabulary** : शिखामणि—शिरोमणि, crest-jewels. तुलयितुम—तोलने के लिए, in order to weigh. धाता—ब्रह्मा । लघुता—हल्कापन, lightness in weight. निक्षिप्तवान्–रखा, put. पूर्तये—पूरा करने के लिए, to equal the counter-balance. उक्षन्—बैल, a bull. उमासहचर—शिव, the companion of Parvati, i. e. Shiva. फणि—सर्प, a snake. पुङ्गव—श्रेष्ठ; फणिपुङ्गव—नागों में श्रेष्ठ, the best of the snakes, i. e. शेषनाग । स्फार—कम्पशील, quivering. सुधादीधिति—अमृतकिरण चन्द्रमा, the nectar-rayed moon.

Prose Order : विद्वद्राजशिखामणे ! धाता त्वदीयं यशः तुलयितुं कैलासं निरीक्ष्य तत्र च लघुतां निरीक्ष्य पूर्त्तये उक्षाणं निक्षिप्तवान् , तदुपरि उमासहचरं निक्षिप्तवान् तन्मूर्ध्नि गङ्गाजलं निक्षिप्तवान्, तस्याग्रे फणिपुङ्गवम्, तदुपरि स्फारं सुधादीधितिम् (निक्षिप्तवान्) ।

व्याख्या—विद्वद्राजशिखामणे—विद्वांसश्च अमी राजानः (कर्म०) इति विद्वद्राजानः, तेषु शिरोमणिः (स० तत्पु०) सः, तत्सम्बुद्धौ ! धाता—ब्रह्मा । त्वदीयम्—तव । यशः—कीर्त्तिम् । तुलयितुं तुलायाम् आरोप्य परिमातुम् । कैलासं गिरिम् । निरीक्ष्य विलोक्य । तत्र तुलायां लघुतां निरीक्ष्य पूर्त्तये तल्लघुतापूरणाय उक्षाणं नन्दिनं वृषभं निक्षिप्तवान् । तदुपरि तस्य वृषभस्य उपरि उमासहचरम् उमायाः सहचर (ष० तत्पु०), तम् । तन्मूर्ध्नि तच्छिरसि गङ्गाजलम्—गङ्गाया जाह्नव्या जलं सलिलम् । तस्य अग्रे फणिपुङ्गवम्-फणिषु पुङ्गवः (स० तत्पु०) तम्, तदुपरि स्फारं कम्पमानं सुधादीधितिम्—

सुधामया दीधतयो यस्य (बहु०) सः, तम, चन्द्रमसम् । निक्षिप्तवान् इति सर्वत्र सम्बध्यते ।

ऐ विद्वानों तथा राजाओं के शिरोमणि भोज ! ब्रह्मा ने आपके यश को तोलने के लिए कैलास को देखा, किन्तु वहाँ भी कमी पाई । कमी की पूर्त्ति के लिए उस पर बैल को रखा, बैल पर शिव को, शिव पर गंगा को, गंगा पर शेषनाग को, शेषनाग पर अमृत की किरणोंवाले चन्द्रमा को ।

स्वर्गाद्गोपाल कुत्र व्रजसि सुरमुने भूतले कामधेनो-
र्वत्सस्यानेतुकामस्तृणचयमधुना मुग्ध दुग्धं न तस्याः ।
श्रुत्वा श्रीभोजराजप्रचुरवितरणं व्रीडशुष्कस्तनी सा
व्यर्थो हि स्यात्प्रयासस्तदपि तदरिभिश्चर्वितं सर्वमुर्व्याम् ॥८५॥

स्वर्गादिति । **Vocabulary :** सुरमुनि—देवताओं का मुनि, नारद, the sage of Gods. चय—समूह, heap. मुग्ध—मूर्ख, O silly one. प्रचुर—विशाल । वितरण—दान । प्रचुरवितरण— magnanimous munificence. व्रीडा—लज्जा । शुष्क—सूखा हुआ, dry. चर्वितम्—खा लिया है, eaten up. उर्वी—पृथ्वी, earth.

Prose Order : गोपाल ! स्वर्गात् कुत्र व्रजसि ? सुरमुने ! भूतले कामधेनोर्वत्सस्य तृणचयम् आनेतुकामः । मुग्ध ! अधुना तस्या दुग्धं न । श्रीभोजराजप्रचुरवितरणं श्रुत्वा सा व्रीडशुष्कस्तनी । प्रयासः व्यर्थः हि स्यात् तदपि तदरिभिः सर्वम् उर्व्यां चर्वितम् ।

व्याख्या—गोपाल ! गाः पालयतीति गोपालः, तत्सम्बुद्धौ ! स्वर्गात् कुत्र व्रजसि स्वर्गमपहाय कुत्र यासीत्यर्थः । नारदमुनिकृतस्य प्रश्नस्योत्तरमाह—सुरमुने ! सुराणां देवानां मुनिः, नारदः, तत्सम्बुद्धौ ! भूतले पृथिव्याम् । कामधेनोः देव-सुरभेः वत्सस्य कृते तृणचयं तृणसमूहम् आनेतुकामः भूतले यामीति गोपालस्य नारदं प्रत्युत्तरम् । गोपालस्योत्तरं श्रुत्वा नारदः पुनस्तं पृच्छति—मुग्ध मूर्ख ! तस्या धेनोः दुग्धं किं न, यतस्त्वं तृणानयनाय भूतलं गच्छसि ? गोपालस्य नारदं प्रत्युत्तरम्—श्रीभोजराजस्य प्रचुरवितरणं श्रुत्वा सा व्रीडशुष्कस्तनी व्रीडया शुष्काः स्तनाः यस्याः (बहु०) सा तथाभूता लज्जया शुष्कस्तनी, अतएव दुग्ध-

रहिता सञ्जाता । भोजराजस्य प्रचुरवितरणं कामधेनोर्वितरणादप्यधिकतरमिति कामधेनोः कृते महानयं व्रीडाविषयः । गोपालस्यैतदुत्तरमाकर्ण्य पुनर्ब्रूते सुरमुनिर्नारदः—व्यर्थो ह्ययं प्रयासः सर्वं तत्तृणम् भोजराजस्य अरिभिरुर्व्यां चर्वितम् । भोजराजेन पराक्रान्ताः शत्रवो वनं पलायिताः, तत्रान्नाद्यभावात् तैः सर्वं तृणं भक्षितमिति तृणकृते भूतले गमनस्यासस्ते व्यर्थ एव ।

गोपाल ! तुम स्वर्ग से कहाँ जा रहे हो ? नारद—पृथ्वी पर जा रहा हूँ, कामधेनु के बछड़ा के लिए घास लाने को । मूर्ख ! क्या वह दूध नहीं देती ? भोजराज की महती दानशीलता को सुनकर लज्जावश उसके स्तनों का दूध सूख गया है । घास लाने का प्रयत्न भी व्यर्थ ही होगा; क्योंकि पृथ्वी पर वह सब घास भी भोजराज के शत्रुओं ने चबा ली है ।

तुष्टो राजा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कदाचिच्छ्रुतिस्मृतिपारङ्गताः केचिद्राजानं कवित्वप्रियं ज्ञात्वा क्वचिन्नगराद्बहिः 'भुवनेश्वरीप्रसादेन कवित्वं करिष्यामः' इत्युपविष्टाः ।' तेष्वेकेन पण्डितंमन्येनैकश्चरणोऽपाठि—

'भोजनं देहि राजेन्द्र'

इति । अन्येनापाठि—

'घृतसूपसमन्वितम् ।'

इति । उत्तरार्धं न स्फुरति । ततो देवताभवनं कालिदासः प्रणामार्थमगात् । तं वीक्ष्य द्विजा ऊचुः—'अस्माकं समग्रवेदविदामपि भोजः किमपि नार्पयति । भवादृशां हि यथेष्टं दत्ते । ततोऽस्माभिः कवित्वविधानधियात्रागतम् । चिरं विचार्य पूर्वार्धमभ्यधायि उत्तरार्धं कृत्वा चेदेहि । ततोऽस्मभ्यं किमपि प्रयच्छति ।' इत्युक्त्वा तत्पुरस्तादर्धमभाणि । स च तच्छ्रुत्वा

'माहिषं च शरच्चन्द्रचन्द्रिकाधवलं दधि' ।।८६।।

इत्याह

तुष्ट इति । **Vocabulary :** श्रुतिः—वैदिकसाहित्य, Vedic lore. स्मृति—आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त निरूपक साहित्य, legal lore. पण्डितम्मन्य—स्वयं को पण्डित समझनेवाला, who thought

himself a learned man. चरण-अपाद, **foot.** सूप--**soup.** अर्पयति--देता है। विधान--निर्माण, **making.** माहिष--भैंस का, **of buffalo.** शरच्चन्द्र--शरद् ऋतु का चन्द्रमा, **autumnal moon.** दधि--दही, **curd.**

व्याख्या--प्रत्यक्षरम्--अक्षरम् अक्षरं प्रति, अव्ययीभाव। श्रुतिस्मृतिपारम्--श्रुतिः वेदेभ्य आरभ्य उपनिषत्पर्यन्तो ग्रन्थकलापः। स्मृतिः-मन्वादिग्रन्थसमूहः। श्रुतिश्च स्मृतिश्चेति (द्वन्द्व) श्रुतिस्मृती, तयोः पारम् (ष० तत्पु०)। नगराद्बहिः--बहिर्योगे पञ्चमी। पण्डितम्मन्येन--आत्मानं पण्डितं मन्यत इति पण्डितम्मन्यः, पण्डित+मन्+खश् (आत्ममाने खश्च), इति खश्, चाद् णिनिः, पण्डितमानी इति वा, (अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् इति मुमागमः), माहिषम्-महिषस्येदम्, महिष+अण्। दौवारिकान्--द्वारपालान्।

प्रसन्न होकर राजा ने प्रति वर्ण एक-एक लाख रुपये दिये।

तब कभी श्रुति-स्मृति के पारंगत कुछ पण्डितों को विदित हुआ कि राजा का कविता से प्रेम है। वे नगर से बाहर कहीं जा बैठे और सोचने लगे कि भगवती भुवनेश्वरी की प्रसन्नता से हम कविता करेंगे। उनमें से एक ने जो अपने को अधिक विद्वान् समझता था, पद्य का एक पाद पढ़ा--महाराज! मुझे भोजन दीजिए।

दूसरे ने श्लोक का दूसरा पाद पढ़ा--

घृत और दाल से युक्त

किन्तु श्लोक के उत्तरार्द्ध की रचना में मतिस्फुरण नहीं हुआ। तब कालिदास देवता को प्रणाम करने के लिए मन्दिर में गये। उन्हें देखकर ब्राह्मणों ने कहा--हम सभी वेदों के ज्ञाता हैं तो भी भोज हमें कुछ नहीं देते। आप-जैसों को मनवांछित देते हैं। इसलिए, हम कविता करने के विचार से यहाँ आये हैं। चिरकाल तक सोचकर उन्होंने पद्य का पूर्वार्द्ध सुनाया और कालिदास से कहा कि उत्तरार्द्ध का निर्माण कर दें तब हमें राजा कुछ देंगे। ऐसा कहकर उन्होंने उसके सामने आधा पद्य पढ़ा। कालिदास ने उसे सुनकर कहा--

और शरत्काल की चाँदनी के समान श्वेत भैंस का दही।

ते च राजभवनं गत्वा दौवारिकानूचुः--'वयं कवितां कृत्वा समागतः। राजानं दर्शयत' इति। ते च कौतुकाद्धसन्तो गत्वा राजानं प्रणम्य प्राहुः--

राजमाषनिभैर्दन्तैः कटिविन्यस्तपाणयः।
द्वारि तिष्ठन्ति राजेन्द्र च्छान्दसाः श्लोकशत्रवः ॥८७॥

राजमाषेति। **Vocabulary :** राजमाष--उडद, bean-seed. निभ—तुल्य, similar. कटि—कमर, hip. छान्दस—वैदिक विद्वान्, a Vedic scholar. श्लोकशत्रु—कविता के शत्रु, the enemy of versification.

Prose Order : हे राजेन्द्र राजमाषनिभैः दन्तैः (उपलक्षिताः), कटिविन्यस्तपाणयः, छान्दसाः श्लोकशत्रवः द्वारि तिष्ठन्ति।

व्याख्या—हे राजेन्द्र! राज्ञां राजसु वा इन्द्रः, तत्सम्बुद्धौ। राजमाषनिभैः:-राजमाषस्य निभास्तुल्यास्तैः, कृष्णवर्णैर्दन्तैरुपलक्षिता इत्यर्थः। कटिविन्यस्तपाणयः कट्यां कटिप्रदेशे विन्यस्तः पाणिर्यैस्ते, कटिप्रदेशप्रदत्तहस्ताः। छान्दसा-वैदिकवाङ्मयविज्ञातारः: श्लोकशत्रवः--कवित्वानभिज्ञाः। द्वारि द्वारदेशे। तिष्ठन्ति भवद्दर्शनाय भवदनुज्ञां परिपालयन्ति।

दृष्टराजसंसदः--व्याख्या : दृष्टा राज्ञः संसद् सभा यैस्ते तथाभूताः।

वे राजमहल को गये और द्वारपालों से बोले--'हम कविता बना लाये हैं (उसे) राजा को दिखाइए। वे विनोदपूर्वक हँसे और जाकर राजा को प्रणाम करके बोले--

जिनके दाँत उड़दों के समान हैं, हाथों को कमर पर रखे हुए वे वेदज्ञ विद्वान्, महाराज! द्वार पर खड़े हैं, जिन्हें श्लोक-रचना का ज्ञान नहीं।

इति। राज्ञा प्रवेशितास्ते दृष्टराजसंसदो मिलिताः सन्तः सहैव कवित्वं पठन्ति स्म। राजा तच्छ्रुत्वोत्तरार्धं कालिदासेन कृतमिति ज्ञात्वा विप्रानाह—'येन पूर्वार्धं कारितं तन्मुखात्कवित्वं कदाचिदपि न कारयितव्यम्। उत्तरार्धस्य किंचिद्दीयते, न पूर्वार्धस्य।' इत्युक्त्वा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ। तेषु च दक्षिणामादाय

गतेषु कालिदासं वीक्ष्य राजा--प्राह--'कवे, उत्तरार्धं त्वया कृतम्' इति। कविराह--

अधरस्य मधुरिमाणं कुचकाठिन्यं दृशोश्च तैक्ष्ण्यं च।
कवितायां परिपाकं ह्यनुभवरसिको विजानाति ॥८८॥

अधरस्येति। **Vocabulary :** अनुभवरसिक, an experienced. person. मधुरिमा--मधुरता, sweetness. काठिन्य--कठिनता, stiffness. तैक्ष्ण्य--तीक्ष्णता, sharpness. परिपाक--perfection.

Prose Order : अनुभवरसिकः हि अधरस्य मधुरिमाणं कुचकाठिन्यं दृशोः तैक्ष्ण्यं च कवितायां परिपाकं च विजानाति।

व्याख्या--अनुभवरसिकः--अनुभवरसेन युक्तः पुरुषः हि एव, नत्वन्यः अधरस्य ओष्ठस्य मधुरिमाणं मधुरत्वं कुचकाठिन्यं कुचयोः स्तनयोः काठिन्यं कठिनत्वं दृशोर्नेत्रयोः तैक्ष्ण्यं तीक्ष्णतां च कवितायां कवित्वे परिपाकं परिपूर्णतारसं विजानाति।

राजा की आज्ञा से उन्हें वहाँ लाया गया। उन्होंने राजसभा को देखा और एक साथ मिलकर कविता का पाठ करने लगे। राजा ने उसे सुनकर समझ लिया कि पद्य के उत्तरार्द्ध की रचना कालिदास ने की है। तब ब्राह्मणों से कहा--जिसने पूर्वार्द्ध की रचना की है, उससे कविता कभी नहीं करानी चाहिए। उत्तरार्द्ध के लिए कुछ देते हैं। पूर्वार्द्ध के लिए कुछ नहीं। यह कहकर प्रति वर्ण एक-एक लाख रुपये दिये। दक्षिणा लेकर जब वे चले गये, तब कालिदास को देखकर राजा ने कहा--कवि! उत्तरार्द्ध की रचना तुमने की है। कवि ने कहा--

अधर की मिठास, स्तनों की कठोरता, आँखों की तीक्ष्णता और कविता की परिपक्वता को अनुभवी व्यक्ति ही जानता है।

राजा च--सुकवे, सत्यं वदसि।

अपूर्वो भाति भारत्याः काव्यामृतफले रसः।
चर्वणे सर्वसामान्ये स्वादवित्केवलं कविः ॥८९॥

राजा चेति। **Vocabulary :** भारती--वाग्देवी, the God-

dess of learning. काव्यामृतफल—काव्यरूपी अमृत का फल। चर्वण—चबाना, chewing. सर्वसामान्य—equal to all. स्वादवित्—one who realizes flavour.

Prose Order : भारत्याः काव्यामृतफले अपूर्वः रसः भाति। सर्वसामान्ये चर्वणे केवलं कविः स्वादवित्।

व्याख्या—भारत्या वाग्देव्याः। काव्यामृतफले—काव्यमेव अमृतम् (कर्म०) इति काव्यामृतम्, काव्यामृतस्य फलम् (ष० तत्पु०) काव्यामृतफलम्, तस्मिन्। अपूर्वः—न पूर्वः (नञ् तत्पु०)। भाति अनुभूयते। सर्वसामान्ये—सर्वेषां सामान्यम् (ष० तत्पु०), तस्मिन् सर्वसाधारणे। चर्वणे—अशने, पठने इति यावत्। केवलं कविः—कविरेव। स्वादवित्—आस्वादरसाभिज्ञः।

राजा ने कहा—कविराज! तूने ठीक कहा है।

भारती के काव्यामृतरूपी फल का रस अपूर्व लक्षित होता है। जब 'क सभी उस फल को चबा सकते हैं, उसके रस के आस्वाद से कवि ही परिचित है।

संचिन्त्य संचिन्त्य जगत्समस्तं त्रयः पदार्था हृदयं प्रविष्टाः।
इक्षोर्विकारा मतयः कवीनां मुग्धाङ्गनापाङ्गतरङ्गितानि ॥६०॥

सञ्चिन्त्येति। Vocabulary : सञ्चिन्त्य—taking in view. इक्षु—गन्ना. sugar-cane. विकार—modification. मति—बुद्धि, intellect. मुग्धा—बालभाव तथा यौवन के मध्यस्थित नारी, a maiden of undeveloped youth. अङ्गना—नारी, a lady. अपाङ्ग—कटाक्ष, side-glance. तरङ्गित—लहरें, waves.

Prose Order : समस्तं जगत् सञ्चिन्त्य सचिन्त्य त्रयः पदार्थाः हृदयं प्रविष्टाः, इक्षोः विकाराः, कवीनां मतयः, मुग्धाङ्गनापाङ्गतरङ्गितानि।

व्याख्या—समस्तं सम्पूर्णं जगत् विश्वं सञ्चिन्त्य सचिन्त्य पुनःपुनर्विचारविषयीकृत्य त्रयः पदार्थाः त्रीणि वस्तूनि हृदयं प्रविष्टाः हृदयमभिव्याप्य स्थितानि, हृदयमात्रग्राह्याणि सन्तीति यावत्। इक्षोर्विकाराः—स्वादिष्टानि मोदकादीनि मिष्टानि, कवीनां मतयः—काव्यानि, मुग्धाङ्गनापाङ्गतरङ्गितानि—

मुग्धा चासौ अङ्गनेति मुग्धाङ्गना (कर्म०), मुग्धाङ्गनायाः अपाङ्ग (ष० तत्पु०), मुग्धाङ्गनापाङ्गः, मुग्धाङ्गनापाङ्गः तरङ्गितम् इवेति (उपमितकर्मधारयः), तानि।

संपूर्ण जगत् को ध्यान में लाकर (अपना वासस्थान ढूँढ़ते-ढूँढ़ते) तीनों पदार्थ हृदय में जा छिपे—ईख का रस (गुड़, शक्कर आदि), कवियों की बुद्धि तथा मदमाती युवतियों के कटाक्ष निरीक्षण।

ततः कदाचिद्द्वारपालकः प्रणम्य भोजं प्राह—'राजन्, द्रविडदेशात्कोऽपि लक्ष्मीधरनामा कविर्द्वारमध्यास्ते' इति। राजा 'प्रवेशय' इत्याह। प्रविष्टमेव सूर्यमिव विभ्राजमानं चिरादप्यविदितवृत्तान्तं प्रेक्ष्य राजा विचारयामास। आह च—

आकारमात्रविज्ञानसंपादितमनोरथाः।
धन्यास्ते ये न शृण्वन्ति दीनाः क्वाप्यर्थिनां गिरः॥६१॥

ततः कदाचिदिति। Vocabulary : द्वारपालक—door-keeper. अध्यास्ते—खड़ा है, is waiting at. विभ्राजमान—शोभायमान, shining. चिरात्—चिरकाल से। आकारमात्र—mere appearance. अर्थिन्—याचक, suitor.

Prose Order : आकारमात्रविज्ञानसम्पादितमनोरथाः ते धन्याः ये क्वापि अर्थिनां दीनाः गिरः न शृण्वन्ति।

व्याख्या—आकारेति—आकार एव आकारमात्रम् (आकार-मात्रच्); आकारमात्रस्य विज्ञानम् (ष० तत्पु०) आकारमात्रविज्ञानम्; आकारमात्रविज्ञानेन सम्पादितं मनोरथं यैः (बहु०) ते, धनिनः धन्याः कृतकृत्या ये क्वापि अर्थिनां याचकानां दीनाः कातराः गिरः न शृण्वन्ति नाकर्णयन्ति।

तब कभी द्वारपाल ने प्रणाम करके भोज से कहा—राजन्! द्रिवड़ देश से लक्ष्मीधर नाम का एक कवि द्वार पर खड़ा है।

राजा ने कहा—उसे लाओ।

राजा ने उसे देखा कि ज्योंही वह सभा में प्रविष्ट हुआ सूर्य की नाईं

चमकने लगा। बहुत देर से भी राजा उसके आगमन-कारण से परिचित नहीं हुए। राजा सोचने लगा और बोला—

आकार मात्र के विज्ञान से (याचकों के) मनोरथ को सिद्ध करनेवाले धन्य हैं वे लोग जो कहीं भी याचकों के दीन वचन नहीं सुनते।

स चागत्य तत्र राजानं 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा तदाज्ञयोपविष्टः प्राह—'देव, इयं ते पण्डितमण्डिता सभा। त्वं च साक्षाद्विष्णुरसि। ततः किं नाम पाण्डित्यं मम। तथापि किं चिद्वच्मि—

भोजप्रतापं तु विधाय धात्रा
शेषैर्निरस्तैः परमाणुभिः किम्।
हरेः करेऽभूत्पविरम्बरे च
भानुः पयोधेरुदरे कृशानुः ॥६२॥

स चेति। स्वस्तीत्युक्त्वा—आशीर्वाद देकर, having pronounced blessings. प्रताप—valour. शेष—remaining. निरस्त—वर्जित, अनुपयुक्त discarded. परमाणु—atom. हरि—इन्द्र। पवि—वज्र, a thunderbolt. अम्बर—आकाश। कृशानु—अग्नि, fire.

Prose Order: धात्रा भोजप्रतापं तु विधाय शेषैः निरस्तैः परमाणुभिः किम् (व्यधायि)? हरेः करे पविः अभूत्, अम्बरे च भानुः, पयोधेः उदरे कृशानुः।

व्याख्या—धात्रा ब्रह्मणा भोजप्रतापं भोजस्य प्रतापं विधाय रचयित्वा शेषैः अन्यैः निरस्तैः भोजप्रतापनिर्माणेऽनुपयुक्तैः परमाणुभिः किं निर्मायि! तदेवाह—हरेः इन्द्रस्य करे हस्ते पविर्वज्रम् अभूत्, अम्बरे गगने च भानुः रविः अभूत्, पयोधेः समुद्रस्य उदरेऽभ्यन्तरे कृशानुः अग्निः अभूत्।

उसने आकर राजा को आशीर्वाद दिया। राजादेश से वह बैठ गया और कहने लगा—देव! आपकी यह सभा पण्डितों से शोभायमान है। आप साक्षात् विष्णु हो। तब मुझमें कौन-सा पाण्डित्य है? तो भी मैं कुछ कहता हूँ।

प्रतापशाली भोज का निर्माण कर निर्माणावशेष परमाणुओं से किन पदार्थों की रचना की जाय—यह सोचकर ब्रह्मा ने वज्र की, जो कि इन्द्र के हाथ में है, सूर्य की, जो कि आकाश में स्थित है, अग्नि की, जो कि समुद्र के भीतर है, रचना की।

इति। ततस्तेन परिषच्चमत्कृता। राजा च तस्य प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ। पुनः कविराह—देव, मया सकुटुम्बेनात्र निवासाशया समागतम्।

क्षमी दाता गुणग्राही स्वामी पुण्येन लभ्यते।
अनुकूलः शुचिर्दक्षः कविर्विद्वान्सुदुर्लभः ॥६३॥

तत इति। **Vocabulary :** परिषत्—सभा, assembly. चमत्कृत—wonderstruck. क्षमी—क्षमायुक्त, of forbearing nature. दाता—of liberal nature गुणग्राही—one who can acknowledge merit. अनुकूल—आज्ञाकारी, obedient, also faithful. शुचि—शुद्धचरित्र, honest. दक्ष—निपुण, dexterous.

Prose Order : क्षमी दाता गुणग्राही स्वामी पुण्येन लभ्यते। अनुकूलः शुचिः दक्षः कविः विद्वान् सुदुर्लभः।

व्याख्या—क्षमी क्षमावान्, दाता दानी, गुणग्राही गुणानां ग्रहीता स्वामी, पुण्येन लभ्यते प्राप्यते। अनुकूलः विधेयः, शुचिः शुद्धचारित्रः, दक्षः निपुणः, कविः विद्वान् पण्डितः सुदुर्लभः दुःखेन लब्धुं शक्यः।

तब उस कवि से सभा की शोभा बढ़ गई। राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये। फिर कवि ने कहा—देव! यहाँ रहने की आशा से मैं कुटुम्ब-सहित आया हूँ।

क्षमाशील, दानी, गुणग्राही स्वामी पुण्य से प्राप्त होता है। अनुकूल, विश्वसनीय निपुण तथा विद्वान् कवि अत्यन्त दुर्लभ हैं।

इति। ततो राजा मुख्यामात्यं प्राह—'अस्मै गृहं दीयताम्' इति। ततो निखिलमपि नगरं विलोक्य कमपि मूर्खममात्यो नापश्यत्, यं निरस्य विदुषे गृहं दीयते। तत्र सर्वत्र भ्रमन्कस्यचित्कुविन्दस्य गृहं वीक्ष्य कुविन्दं प्राह—'कुविन्द, गृहान्निःसर। तव गृहं विद्वानेष्यति' इति। ततः कुविन्दो राजभवन-

मासाद्य राजानं प्रणम्य प्राह—'देव, भवदमात्यो मां मूर्खं कृत्वा गृहान्निःसारयति, त्वं तु पश्य मूर्खः पण्डितो वेति।

काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि
यत्नात्करोमि यदि चारुतरं करोमि।
भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ
श्रीसाहसाङ्क कवयामि वयामि यामि ॥९४॥

ततो राजेति। **Vocabulary :** मुख्यामात्य—prime minister. निरस्य—निकालकर, having expelled.

चारुतर—सुन्दर, fine. भूपाल—राजा। मौलि—मस्तक, forehead. मणि—gem. मण्डित—भूषित, adorned. पादपीठ—आश्रयभूत चरण, the sheltering feet. कवयामि—कविता करता हूँ, 1 make a poem. वयामि—जुलाहे का काम करता हूँ, 1 weave. यामि—आजीविका चलाता हूँ—1 make my living.

Prose Order : काव्यं करोमि चारुतरं नहि करोमि यदि चारुतरं करोमि यत्नात् करोमि। भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ श्रीसाहसाङ्क कवयामि वयामि यामि।

व्याख्या—काव्यं करोमि रचयामि, चारुतरं सुन्दतरं नहि करोमि। यदि चारुतरं करोमि यत्नात् करोमि। भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ—भूपालानां मौलिः (ष० तत्पु०) भूपालमौलिः; भूपालमौलौ मणिः (स० तत्पु०) भूपाल-मौलिमणिः; भूपालमौलिमणिना मण्डितौ पादौ पीठौ इव यस्य (बहु०) सः, तत्सम्बुद्धौ। श्रीसाहसांक ! अहं कवयामि कवित्वं करोमि। वयामि वस्त्राणि रचयामि। एवं यामि धनम् उपार्जयामि।

तब राजा ने प्रधान मन्त्री से कहा—इसे रहने को घर दीजिए। तब समूचे नगर में ढूँढ़ने पर भी मन्त्री ने किसी मूर्ख को नहीं पाया, जिसे निकालकर विद्वान् कवि को उसका घर दिया जाय। यहाँ वहाँ सभी जगह घूमकर किसी कोष्ठा के घर को देखकर उसे बोला। कोष्ठा ! घर से निकलो, तुम्हारे घर में विद्वान् आकर रहेगा। तब कोष्ठा राजमहल को गया। राजा को प्रणाम

करके बोला—देव ! आपका मन्त्री मुझे मूर्ख मानकर घर से निकालता है। आप जाँच कीजिए कि मैं मूर्ख हूँ अथवा बुद्धिमान् ।

कविता निर्माण करता हूँ, किन्तु सुन्दर नहीं कर पाता । यदि सुन्दर कविता कर पाऊँ तो वह यत्न से होगी। पराक्रम गुणों से उपलक्षित तथा सामन्तों के शिरोमुकुट की मणियों से विभूषितपाद ! हे राजन् ! कविता बनाता हूँ, वस्त्र बुनता हूँ, निर्वाह करता हूँ ।

ततो राजा त्वंकारवादेन वदन्तं कुविन्दं प्राह—'ललिता ते पदपङ्क्तिः, कवितामाधुर्यं च शोभनम्, परन्तु कवित्वं विचार्य वक्तव्यम्' इति । ततः कुपितः कुविन्दः प्राह—'देव, अत्रोत्तरं भाति। किन्तु न वदामि। राजधर्मः पृथग्विद्वद्धर्मात्' इति। राजा प्राह—'अस्ति चेदुत्तरं ब्रूहि' इति। कुविन्दः प्राह—'देव, कालिदासादृतेऽन्यं कविं न मन्ये। कोऽस्ति ते सभायां कालिदासादृते कवितातत्त्वविद्विद्वान् ।

ततो राजेति। Vocabulary : त्वंकारवादः, तू शब्द का प्रयोग the use of the word 'thou'. ललित—सुन्दर, graceful. पद-पंक्ति—पदों की पङ्क्ति, range of words. राजधर्म—the royal prerogative. विद्वद्धर्म the privileges of the learned. ऋते—विना, except.

व्याख्या—त्वङ्कारवादेन श्रीभोजराजं सम्बोधयता कुविन्देन प्रयुक्तस्य त्वङ्कारशब्दस्य ग्राम्यदोषत्वमाचक्षाणो भोजराज आह—कवित्वं विचार्य कर्त्तव्यम् इति ।

अत्रोत्तरं भाति—सप्तोत्तरनवतितमे (९७) श्लोके कुविन्दोत्तरं बोध्यम् । राजधर्मः पृथक् विद्वद्धर्मात्—राजधर्ममनुसरन् कुविन्द उत्तरं वक्तुं नोत्सहते। राजोक्तिर्न सर्वथा प्रतिकूलनीया इत्यभिप्रायेणाह—राजधर्मः पृथग् इति । कालिदासाद् ऋते—ऋतेयोगे पञ्चमी । कवितातत्त्वविद्—कवितायाः तत्त्वं (ष० तत्पु०) कवितातत्त्वम्, कवितातत्त्वं वेत्ति इति (उपपद तत्पु०) सः ।

तब राजा ने 'तू' शब्द का प्रयोग करते हुए कोष्ठा से कहा—आपकी पद-रचना लालित्यपूर्ण है और कविता भी मधुर तथा सुन्दर है, किन्तु कविता

को विचार करके ही बोलना चाहिये। तब कुपित हो कोष्ठा ने कहा—देव! इसका उत्तर तो बहुत अच्छा है किन्तु मैं नहीं कहता, क्योंकि पण्डितधर्म से राजधर्म भिन्न है। राजा ने कहा—यदि उत्तर है तो बताओ। कोष्ठा ने कहा—देव! कालिदास के बिना मैं किसी दूसरे को कवि नहीं मानता। तुम्हारी सभा में कौन है जो कालिदास के बिना कविता के तत्त्व को जानता हो?

यत्सारस्वतवैभवं गुरुकृपापीयूषपाकोद्भवं
तल्लभ्यं कविनैव नैव हठतः पाठप्रतिष्ठाजुषाम्
कासारे दिवसं वसन्नपि पयःपूरं परं पङ्किलं
कुर्वाणः कमलाकरस्य लभते किं सौरभं सैरिभः ।६५।

यदिति । **Vocabulary** : सारस्वत—वाक् सम्बन्धी, pertaining to learning. वैभव—wealth. पीयूष—अमृत, ambrosia. हठतः—हठपूर्वक, forcibly. पाठ—recitation. प्रतिष्ठाजुष्—प्रसिद्ध, renowned. कासार—सरोवर, pond. पयःपूर—जलसमूह, an aggregate of water. पङ्किल—पङ्कयुक्त, miry. कमलाकर—सरोवर, a lotus pond. सौरभ—सुगन्ध, fragrance. सैरिभ—भैंसा, a buffalo.

Prose Order : यत् गुरुकृपापीयूषपाकोद्भवं सारस्वतवैभवं तत् कविना एव लभ्यम्, हठतः प्रादप्रतिष्ठाजुषां नैव लभ्यम्। कासारे दिवसं वसन् अपि पयःपूरं परं पंकिलं कुर्वाणः सैरिभः किं कमलाकरस्य सौरभं लभते ?

व्याख्या—गुरुकृपेति । गुरोः कृपा (ष० तत्पु०) गुरुकृपा, पीयूषस्य पाकः (ष० तत्पु०), गुरुकृपा एव पीयूषपाकः (कर्म०), पाकाद् उद्भवोयस्य (बहु०) तत् । सारस्वतवैभवम्—सारस्वतस्य वैभवम्—(ष० तत्पु०), तत् कविनैव लभ्यम्, नत्वन्येन केनचित् । पाठप्रतिष्ठाजुषाम्—पाठस्य प्रतिष्ठा (ष० तत्पु०) पाठप्रतिष्ठा, पाठप्रतिष्ठां जुषन्ते (—सेवन्ते) इति पाठप्रतिष्ठाजुषः, तेषाम्, पाठमात्रप्रतिष्ठाभोजान्तु तद् वैभवं हठतोऽपि बलात्कारेणापि नैव लभ्यम्। तत्रोदाहरणमाह—कासारे जलाशये दिवसं पूर्णम् अहो यावद् वसन्नपि सैरिभः

महिषः पयःपूरं पयसः पूरं सलिल-समूहं पंकिलं पंकग्रस्तं कुर्वाणः कमलाकरस्य कमलिनः सरोवरस्य सौरभं गन्धं, सुवासं न लभते नाप्नोति ।

गुरु की अमृत-रूपी कृपा के फलस्वरूप विद्या का वैभव कवि को ही प्राप्त होता है। किसी तरह पाठमात्र से प्रतिष्ठा को प्राप्त व्यक्तियों को वह सुलभ नहीं है। जलाशय में सारा दिन पड़े रहने से जल को नितान्त मलिन करता हुआ भैंसा क्या कमलों के सुवास को पा सकता है?

अयं मे वाग्गुम्फो विशदपदवैदग्ध्यमधुरः
स्फुरद्बन्धो वन्ध्यः परहृदि कृतार्थः कविहृदि ।
कटाक्षो वामाक्ष्या दरदलितनेत्रान्तगलितः
कुमारे निःसारः स तु किमपि यूनः सुखयति ॥९६॥

अयमिति । **Vocabulary**: वाग्गुम्फ—string of speech. विशद—स्पष्ट, clear. पद—word. वैदग्ध्य—निपुणता, dexterity. मधुर—sweet. स्फुरद्बन्धः—with a glittering knot. वन्ध्य—ineffective. कृतार्थ—effective. कटाक्ष—a side—glance. वामाक्षी—a fair-eyed lady. दर—ईषत्—कुछ, a little. दलित—खुला हुआ, opened. अन्त–अकोना, corner. गलित—cast. कुमार—child. निस्सार—सारहीन, ineffective. यूनः—युवापुरुषों को, to the youth. सुखयति—आनन्द देता है, pleases.

Prose Order: विशदपदवैदग्ध्यमधुरः स्फुरद्बन्धः अयं मे वाग्गुम्फः परहृदि वन्ध्यः कविहृदि कृतार्थः। दरदलितनेत्रान्तगलितः वामाक्ष्याः कटाक्षः कुमारे निस्सारः स तु यूनः किमपि सुखयति।

व्याख्या—विशदेति—विशदानि पदानि (कर्म०) विशदपदानि, विशदपदानां वैदग्ध्यम् (ष० तत्पु०) विशदपदवैदग्ध्यम्, तेन मधुरः (तृ० तत्पु०)। स्फुरन् बन्धो यत्र (बहु०) सः पदविन्याससौष्ठवसमलङ्कृतः। अयं मे मम वाग्गुम्फः पदबन्धो वाक्यरचना गा परहृदि इतरजने वन्ध्यः कुण्ठितप्रभावः, कविहृदि कवित्वनिर्माणसामर्थ्यवतो जनस्य हृदये कृतार्थः फलीभूतप्रभावः। दरदलितनत्रान्तगलितः—दरदलितः—दरम (ईषद्) दलितम्—दरदलितम्

(कर्म०), दरदलिते नेत्रे (कर्म०) दरदलितनेत्रे, किञ्चिद्विकसितनयने । ०नेत्रयोः अन्तः (ष० तत्पु०), दरदलितनेत्रान्ताभ्यां गलितः (ष० तत्पु०), किञ्चिदुद्घाटितनयनान्तव्यापारितः । वामाक्ष्याः—वामे अक्षिणी यस्याः (बहु०) सा वामाक्षी, सुन्दरलोचना नारी तस्याः । कटाक्षः—वक्रेक्षणम् । कुमारे—यौवनमनारुढे । निस्सारः—सारहीनः । परं यूनः—यौवनमारूढान् पुरुषान् । सुखयति आनन्दयति ।

यह मेरी वाक्य-रचना स्पष्ट पदों के कलात्मक प्रयोग से मधुर है। उसका वर्णविन्यास चमत्कारपूर्ण है । साधारण व्यक्तियों के हृदय में फलीभूत नहीं होती । कवि के हृदय में ही चरितार्थ होती है । कुछ तिरछे नेत्रों के बीच में से व्यापारित वामलोचना युवती के कटाक्ष का प्रभाव मुग्ध बालक पर नहीं पड़ता, किन्तु युवक को अवर्णनीय आनन्द देता है ।

विद्वज्जनवन्दिता सीता प्राह—

विपुलहृदयाभियोग्ये खिद्यति काव्ये जडो न मौर्ख्ये स्वे ।
निन्दति कञ्चुकमेव प्रायः शुष्कस्तनी नारी ॥६७॥

विद्वज्जनवन्दितेति । Vocabulary : विपुलहृदय—विशालहृदय का मनुष्य, a large-hearted person. अभियोग्य—worthy. जड़-मूर्ख, a stupid person. मौर्ख्य—मूर्खता, stupidity. कञ्चुक—Jacked. शुष्कस्तनी—क्षीण कुचोंवाली ।

Prose Order : जड़ः विपुलहृदयाभियोग्ये काव्ये खिद्यति स्वे मौर्ख्ये न । शुष्कस्तनी नारी प्रायः कञ्चुकम् एव निन्दति ।

व्याख्या—जडः—मूर्खः । विपुलहृदयाभियोग्ये—विपुलं च तद् हृदयम् (कर्म०) इति विपुलहृदयम्, विपुलहृदयस्य अभियोग्यम्, (ष० तत्पु०) इति विपुलहृदयाभियोग्यम्, तस्मिन् विशालहृदयग्राह्ये सहृदयास्वादनीये काव्ये खिद्यति खेदम् एति, स्वमौर्ख्ये न खिद्यति । काव्यस्य दोषान् आचष्टे स्वमौर्ख्यन्तु न निन्दति । शुष्कस्तनी—शुष्कौ स्तनौ यस्याः (बहु०) सा । नारी—युवती । बाहुल्येन । कञ्चुकम एव निन्दति कञ्चुककारस्यैव दोषं वक्ति, नतु स्वशुष्कस्तनयोरित्यर्थः ।

विद्वज्जनों से सम्मानित सीता ने कहा—

सुहृदयग्राह्य काव्य में जड़ मनुष्य दोष ढूँढ़ता है अपनी मूर्खता में नहीं। प्रायः सूखे स्तनोंवाली युवती कंचुक की ही निन्दा करती है अपने सूखे स्तनों की नहीं।

ततः कुविन्दः प्राह—

बाल्ये सुतानां सुरतेऽङ्गनानां
स्तुतौ कवीनां समरे भटानाम्
त्वंकारयुक्ता हि गिरः प्रशस्ताः
कस्ते प्रभो मोहभरः स्मर त्वम् ॥९८॥

तत कुविन्द इति। **Vocabulary :** बाल्य—बाल्यावस्था, childhood. सुरत—मैथुन, love-sport. समर-युद्धभूमि—a battle-field. त्वङ्कार—'तू' शब्द, the use of the word 'thou'. गिरः—words. प्रशस्त—प्रशंसनीय, worthy of praise. मोहभर—मोहातिशय, overwhelming ignorance.

Prose Order : सुतानां बाल्ये, अङ्गनानां सुरते, कवीनां स्तुतौ, भटानां समरे त्वङ्कारयुक्ताः गिरः हि प्रशस्ताः। हे प्रभो! ते मोहभरः कः त्वं स्मर।

व्याख्या—सुतानां—पुत्राणाम्—अपत्यानामिति यावत्, बाल्ये—शैशवे, अङ्गनानां—युवतीनां, सुरते—मैथुने, कवीनां स्तुतौ—राजादिप्रशंसायाम्, भटानां—वीराणां, समरे—युद्धे, त्वङ्कारयुक्ताः—त्वंशब्दोपन्यस्ता गिरः—वचांसि, प्रशस्ताः—रमणीयाः। हे प्रभो! स्वामिन् राजन् इति वा, ते मोहभरः मोहातिशयः कः, बुद्धिमान्द्यं किम्? स्मर—विचारय।

तब कोष्ठा ने कहा—

बचपन में बालकों के, सुरत क्रीड़ा में युवतियों के, स्तुति में कवियों के, युद्ध में वीरों के 'तू' शब्द से युक्त वचन शोभा देते हैं। प्रभो! आप किस अज्ञान में पड़े हो (कि मेरी कविता में 'तू' शब्द का प्रयोग आपको बुरा लगा) सोचिए तो सही।

ततो राजा 'साधु भोः कुविन्द' इत्युक्त्वा तस्याक्षरलक्षं ददौ । 'मा भैषीः' इति पुनः कुविन्दं प्राह ।

एवं क्रमेणातिक्रान्ते कियत्यपि काले बाणः पण्डितवरः परं राज्ञा मान्यमानोऽपि प्राक्तनकर्मतो दारिद्र्यमनुभवति । एवं स्थिते नृपतिः कदा चिद्रात्रावेकाकी प्रच्छन्नवेषः स्वपुरे चरन्बाणगृहमेत्यातिष्ठत् । तदा निशीथे बाणो दारिद्र्यव्याकुलतया कान्तां वक्ति—'देवि, राजा कियद्वारंमम मनोरथमपूरयत् । अद्यपि पुनः प्रार्थितो ददात्येव । परन्तु निरन्तरप्रार्थनारसे मूर्खस्यापि जिह्वा जडीभवति ।' इत्युक्त्वा मुहूर्तार्धं मौनेन स्थितः । पुनः पठति—

हर हर पुरहर परुषं क्व हलाहलफल्गुयाचनावचसोः ।
एकैव तव रसज्ञा तदुभयरसतारतम्यज्ञा ॥६॥

ततो राजेति । **Vocabulary :** भैषीः—डरो, be afraid. प्राक्तन—पुरातन, पूर्वजन्म के, former or previous.

पुरहर—पुरों के नाशक अथवा त्रिपुरासुर के विध्वंसक, the destroyer of demon Pura, or the destroyer of the cities and fortresses. परुष—severity. हलाहल—विष, a poison. फल्गु—विफलीभूत, rejected. याचना—प्रार्थना, entreaty. रसज्ञा—जिह्वा, tongue. तारतम्य—grade.

Prose Order : हर हर ! पुरहर ! हलाहलफल्गुयाचनावचसोः परुषं क्व ? एकैव तव रसज्ञा तदुभयरसतारतम्यज्ञा ।

व्याख्या—पुरहर ! पुरस्य त्रिपुरासुरस्य दैत्यस्य, पुराणां दुर्गाणां वा हरः (ष० तत्पु०) सः, तत्सम्बुद्धौ । हलाहलफल्गुयाचनावचसोः—फल्गुयाचना—फल्गु चासौ याचना चेति (कर्म०); फल्गुयाचनावचः—फल्गु याचनायाः वचः (ष० तत्पु०) इति फल्गुयाचनावचः । हलाहलं च फल्गुयाचनावचश्चेति (द्वन्द्व०) तयोः पुरुषं पारुष्यस्यान्तरमिति यावत्, को जानाति न कोऽपि जानातीत्यर्थः । एका तव रसज्ञा जिह्वैव तयोरुभयोः (ष० तत्पु०) रसस्य (ष० तत्पु०) तारतम्यं जानातीति सा (उपपदतत्पु०), तथाभूताऽस्ति ।

'ठीक है कोष्ठा' कहकर राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये । इस प्रकार

क्रमशः कुछ समय व्यतीत होने पर विद्वानों में श्रेष्ठ बाण यद्यपि राजा से बहुत सम्मानित थे, तो भी पूर्वजन्म के कर्मवश निर्धन ही रहे। कभी राजा रात्रि में अकेला गुप्तवेश में घूमता हुआ बाण के घर के पास आकर ठहर गया। तब रात्रि में बाण निर्धनता से व्याकुल होकर स्त्री से कहने लगा—देवि! राजा ने कई बार मेरे मनोरथ को पूर्ण किया है। अब भी फिर प्रार्थना करने से देता ही है, किन्तु बार-बार प्रार्थना करते हुए मूर्ख की भी जिह्वा नहीं चलती। ऐसा कहकर क्षणमात्र के लिए चुप रहा। फिर कहने लगा—

त्रिपुरान्तक हर महादेव! हलाहल विष की तथा प्रार्थना ठुकराने की निष्ठुरता में कितना अन्तर! एक तुम्हारी जिह्वा ही दोनों रसों के अन्तर को जानती है।

देवि,

दारिद्र्यस्यापरा मूर्त्तिर्याच्ञा न द्रविणाल्पता।
अपि कौपीनवाञ्शंभुस्तथापि परमेश्वरः ॥१००॥

देवीति। **Vocabulary :** दारिद्र्य—निर्धनता, indigence. याच्ञा—solicitation. द्रविणाल्पता—धनाभाव, want of wealth. कौपीन—loin cloth. परमेश्वर—महेश्वर, the supreme God.

Prose Order : दारिद्र्यस्य अपरा मूर्त्तिः याच्ञा, द्रविणाल्पता न, अपि शम्भुः कौपीनवान् तथापि परमेश्वरः।

व्याख्या—दारिद्र्यस्या निर्धनतायाः। अपरा अन्या। मूर्त्तिः रूपम्। याच्ञा याचनम्। द्रविणाल्पता—द्रविणस्य द्रव्यस्य अल्पता न्यूनता न। कौपीनवान्—कौपीनमात्रवस्त्रावशेषः। शम्भुः—शिवः। तथापि कौपीनमात्रवसनावशेषत्वेऽपि। परमेश्वरः महेश इति गण्यते।

देवि!

निर्धनता की दूसरी मूर्त्ति है याचना, न कि धन की न्यूनता। शिव कौपीन-मात्र पहने हुए हैं, तो भी महेश्वर कहलाते हैं।

सेवा सुखानां व्यसनं धनानां
याच्ञा गुरूणां कुनृपः प्रजानाम्।

प्रनष्टशीलस्य सुतः कुलानां
मूलावघातः कठिनः कुठारः ॥१०१॥

सेवेति । Vocabulary : व्यसन—addiction to vice. प्रनष्टशील—immoral. मूलावघात—striking at the root. कुठार—axe.

Prose Order : सुखानां सेवा, धनानां व्यसनम्, गुरूणां याच्ञा, प्रजानां कुनृपः, कुलानां प्रनष्टशीलः सुतश्च मूलावघातः कठिनः कुठारः ।

व्याख्या—सुखानाम् आमोदप्रमोदादीनाम् । सेवा भृत्यत्यम् । धनानां द्रव्याणाम् । व्यसनं द्यूतमद्यपानादि । गुरूणां महताम् । याच्ञा प्रार्थना । प्रजानां विशाम् । कुनृपः कुत्सितो राजा । कुलानां वंशानाम् प्रनष्टशीलः आचारहीनः । सुतः पुत्रः । मूलावघातः समूलोच्छेदकः । कठिनः तीक्ष्णः । कुठारः परशुः । वर्तत इति शेषः ।

सेवा सुख की, व्यसन धन की, याचना गुरुत्व की, दुष्ट राजा प्रजा की, दुश्शील पुत्र कुल की जड़ पर प्रहार करनेवाली कठोर कुल्हाड़ी है ।

तत्सत्यपि दारिद्र्ये राज्ञो वक्तुं मया स्वयमशक्यम् ।
यच्छन्क्षणमपि जलदो वल्लभतामेति सर्वलोकस्य ।
नित्यप्रसारितकरः करोति सूर्योऽपि संतापम् ॥१०२॥

तत्सत्यपीति । Vocabulary : यच्छन्—देता हुआ, giving. क्षणमपि—क्षणमात्रमपि, for a while. वल्लभता—प्रियता, the state of being favourite. एति—प्राप्त होता है, attains. प्रसारित—फैलाये हुए, extended or stretched. कर—हाथ, hand or रश्मि, rays. सन्तापं करोति, तपाता है, becomes aggressive; अथवा दुःख देता है ।

Prose Order : जलदः क्षणम् अपि यच्छन् सर्वलोकस्य वल्लभताम् एति । नित्यप्रसारितकरः सूर्यः अपि सन्तापं करोति ।

व्याख्याः—जलदः मेघः । क्षणं क्षणमात्रमपि । यच्छन् ददानः जलमिति शेषः । सर्वलोकस्य सर्वेषाम् । वल्लभतां प्रियताम् । एति गच्छति । नित्यप्रसारितकरः नित्यं प्रसारिताः करा रश्मयो येन (बहु०) सः, प्रतिदिनं विस्तीर्णरश्मिः

अथवा याच्ञार्थं प्रसारितहस्तः। सूर्यः भानुरपि। सन्तापं सम्यक् तापम्। करोति विधत्ते।

तो निर्धन होने पर भी मैं स्वयं राजा से कुछ नहीं कह सकता।

मेघ क्षणभर भी जलदान करता हुआ सभी को प्रिय लगता है। प्रतिदिन हाथ (किरणों को) फैलाता हुआ सूर्य सभी को सन्ताप देता है।

किं च देवि, वैश्वदेवावसरे प्राप्ताः क्षुधार्ताः पश्चाद्यान्तीति तदेव मे हृदयं दुनोति।

दारिद्र्यानलसंतापः शान्तः संतोषवारिणा।
याचकाशाविघातान्तर्दाहः केनापशाम्यते ॥१०३॥

किञ्चेति। **Vocabulary :** वैश्वदेव—भोज. के समय समस्त देवताओं को बलिप्रदान, an offering to all the gods in meal time. क्षुधार्त्त—भूख से पीड़ित, distressed with hunger. दुनोति—सन्ताप देता है, grieves. अनल—अग्नि, fire. सन्ताप—heat. सन्तोष-वारि—water of contentment. अन्तर्दाह—अन्तर्ज्वाला, heart-burning. उपशाम्यते—शान्त होता है।

Prose Order : दारिद्र्यानलसन्तापः सन्तोषवारिणा शान्तः। याचकाशाविघातान्तर्दाहः केन उपशाम्यते ?

व्याख्या—दारिद्र्यानलसन्तापः—दरिद्रस्य भावः दारिद्र्यम् दारिद्र्यमेव अनलः अग्निः (कर्म०), दारिद्र्यानलस्य सन्तापः (ष० तत्पु०) । सन्तोष-वारिणा—सन्तोष एव वारि जलम् (कर्म०) तेन सन्तोषरूपिणा सलिलेन। शान्तः शमं नीतः। याचकाशाविघातान्तर्दाहः—याचकानाम् आशा (ष० तत्पु०) याचकाशा, याचकाशाया विघातः (ष० तत्पु०); याचकाशाविघातकृतः अन्त-र्दाहः (म० कर्म०), केन साधकतमेन करणेन उपशाम्यते शान्ति नीयते, न केनापीत्यर्थः।

किन्तु देवि! ये भूख से पीड़ित लोग वैश्वदेवबलि के समय आकर लौट जाते हैं यही बात मेरे हृदय को सताती है।

निर्धनता-रूपी अग्नि का सन्ताप सन्तोष-रूपी जल से शान्त हो जाता है।

भिखारी की आशा को ठुकराने से उत्पन्न हृदय की जलन किस प्रकार शान्त हो सकती है ?

राजा चैतत्सर्वं श्रुत्वा 'नेदानीं किमपि दातुं योग्यम् । प्रातरेव बाणं पूर्ण-मनोरथं करिष्यामि ।' इति निष्क्रान्तः

कृतो यैर्न च वाग्मी च व्यसनी तं न यैः पदम् ।
यरात्मसदृशो नार्थी किं तैः काव्यैर्बलैर्धनैः ॥१०४॥

राजेति । **Vocabulary :** वाग्मी—प्रवचनपटु, eloquent. व्यसनी—व्यसनशील, ambitious. पद—स्थान, position. अर्थी—याचक, suitor.

Prose Order : तैः काव्यैः किं यैः वाग्मी न च कृतः; तैः बलैः किं यैः व्यसनी तं पदं न कृतः, तैः धनैः किं यैः अर्थी आत्मसदृशः न कृतः ।

व्याख्या—तैः काव्यैः किम्, तत्काव्यं व्यर्थमिति भावः । यैः काव्यैः । वाग्मी प्रवचनपटुः । न कृतः न जनितः । तैः बलैः किम्, तद्बलं व्यर्थमिति भावः यैः बलैः । व्यसनी उद्योगशीलः । तं पदं स्वाभिप्रेतस्थानम् । न कृतः न प्रापितः । तैः धनैः किम् तद्धनं व्यर्थम्, यैः धनैः अर्थी याचकः । आत्मसदृशः धनीत्यर्थः न कृतः ।

राजा ने यह सब सुना और सोचा । इस समय कुछ देना उचित नहीं । प्रातःकाल ही बाण का मनोरथ पूर्ण करूँगा ।

राजा चले गये ।

उन काव्यों से क्या लाभ, जिनसे मनुष्य वक्ता न बने ? उस बल से क्या लाभ, जिससे कष्ट में पड़े व्यक्ति को न बचा सके ? उस धन से क्या लाभ, जिससे याचक को अपने समान धनी न बना सके ?

एवं पुरे परिभ्रममाणे राजनि वर्त्मनि चोरद्वयं गच्छति । तयोरेकः प्राह शकुन्तः—'सखे, स्फारान्धकारविततेऽपि जगत्यञ्जनवशात्सर्वं परमाणुप्रायमपि वसु सर्वत्र पश्यामि । परं संभारगृहानीतकनकजातमपि न मे सुखाय' इति । द्वितीयो मरालनामा चोर आह—'आहृतं संभारगृहात्कनकजातमपि न हितमिति कस्माद्धेतोरुच्यते' इति । ततः शकुन्तः प्राह—'सर्वतो नगररक्षकाः परिभ्र-

मन्ति । सर्वोऽपि जागरिष्यत्येषां भेरीपटहादीनां निनादेन। तस्मादाहृतं विभज्य स्वस्वभागागतं धनमादाय शीघ्रमेव गन्तव्यम् इति । मरालः प्राह—'सखे, त्वमनेन कोटिद्वयपरिमितमणिकनकजातेन किं करिष्यसीति ।

शकुन्तः—'एतद्धनं कस्मैचिद्द्विजन्मने दास्यामि यथायं वेदवेदाङ्गपारगोऽन्यं न प्रार्थयति ।'

एवमिति। **Vocabulary :** स्फार—घोर, deep. वितत—व्याप्त, pervaded. अञ्जन—सिद्धाञ्जन, mystical collyrium. परमाणु—an atom. वसु—धन, wealth. सम्भारगृह—कोष, treasury. आहृत—चोरित, stolen. कनकजात—सुवर्ण-समूह, heap of gold. निनाद—शब्द, sound. पारग—पारदृश्वा, well-versed.

व्याख्या—सम्भारगृहानीतकनकजातम्—सम्भारयुक्तं गृहम् (म० कर्म०) सम्भारगृहम्; कनकस्य जातम् (ष० तत्पु०); सम्भारगृहाद् आनीतम् (ष० तत्पु०); सम्भारगृहानीतं कनकजातम् (कर्म०) सम्भारगृहानीतकनकजातम् । द्विजन्मने दास्यामि—चतुर्थी सम्प्रदाने ।

इस प्रकार सोचते-सोचते जब राजा नगर में घूम रहे थे तब मार्ग में दो चोर जा रहे थे। उनमें से शकुन्त नाम के एक चोर ने कहा—मित्र! मेरे पास एक अंजन है, जिससे इस घोर अंधकार से भरे संसार में परमाणुओं की तरह सूक्ष्म धन को भी मैं सभी जगह देख सकता हूँ, किन्तु कोषगृह से सुवर्ण आदि धन यदि चुरा लें तो भी मुझे सुख नहीं मिलेगा। मराल नाम के दूसरे चोर ने कहा—"कोषगृह से चोरित सुवर्ण आदि धन भी मुझे हर्षप्रद नहीं होगा"—इस प्रकार क्यों कहते हो?

तब शकुन्त ने कहा—नगर के चारों ओर रक्षक घूम रहे हैं। भेरी, पटह आदि के निनाद से सभी लोग जाग पड़ेंगे । तब जितना हमने चुरा लिया है उसी को बाँटकर अपने-अपने भाग का धन लेकर शीघ्र ही चला जाय।

मराल ने कहा—मित्र! लगभग इस दो करोड़ मणि, सुवर्ण आदि को तुम किस काम में लाओगे?

शकुन्त—यह धन किसी ब्राह्मण को दूँगा ताकि वेदवेदाङ्गों का ज्ञाता वह ब्राह्मण किसी दूसरे से प्रार्थना न करे।

मरालः—सखे चारु ।

ददतो युध्यमानस्य पठतः पुलकोऽथ चेत्।
आत्मनश्च परेषां च तद्दानं पौरुषं स्मृतम् ॥१०५॥

ददत इति। Vocabulary : ददत्—दान करते हुए, donating. युध्यमान—युद्ध करते हुए, fighting. पुलक—रोमाञ्च, standing of hair at an end. पौरुष—पुरुषत्व, manhood.

Prose Order : ददतः युध्यमानस्य पठतः आत्मनः च परेषां च अथ चेत् पुलकः तद्दानं पौरुषं स्मृतम्।

व्याख्या—ददतः द्रव्यं वितरतः युध्यमानस्य युद्धं कुर्वतः पठतः स्वाध्यायं कुर्वतः पुरुषस्य आत्मनः च परेषां च अथ चेत् यदि पुलकः रोमाञ्चः तद्दानं द्रव्यवितरणं युद्धं स्वाध्यायश्चेति त्रितयं पौरुषं पुरुषगुणरूपेण ख्यातं स्मृतम्।

मराल—मित्र! ठीक ही है।

दान देते हुए, युद्ध करते हुए, अध्ययन करते हुए, मनुष्य के अपने तथा दर्शकों के जब रोम खड़े हो जाते हैं तब वही दान, युद्ध तथा अध्ययन पुरुषार्थ कहलाता है।

अनेन दानेन तव कथं पुण्यफलं भविष्यति।'

शकुन्तः—'अस्माकं पितृपैतामहोऽयं धर्मः, यच्चौर्येण वित्तमानीयते'

मरालः—'शिरश्छेदमङ्गीकृत्यार्जितं द्रव्यं निखिलमपि कथं दीयते ?'

अनेन दानेनेति। Vocabulary : पुण्यफलम्—The fruit of your merit. पितृपैतामहः—बाप-दादा से आया हुआ, ancestral. शिरश्छेद—सिर कटाना, the risk of life.

व्याख्या—अनेन दानेन चौर्योपार्जितस्य द्रव्यस्य वितरणेन तव पुण्यफलं कथं भविष्यतीति मरालस्य प्रश्ने शकुन्तक एवमाह—अस्माकं पितृपैतामहोऽयं धर्मः। पितृपैतामहः—पितृपितामहक्रमाद् आगतः। वित्तं—द्रव्यम्। आनीयते—

उपार्ज्यते। शकुन्तकस्योत्तरमाकर्ण्य मरालस्य पुनः प्रश्नः—शिरश्छेदम् अङ्गीकृत्य जीवितं संशये निधाय उपार्जितं निखिलमपि द्रव्यं कथं दीयते ?

शकुन्त ने कहा—हमारे पिता-पितामह से यही रीति चली आई है कि चोरी से धन लाया जाता है।

मराल—सिर कट जाने तक की परिस्थिति में अपने को डालकर जो धन इकट्ठा किया, वह सब कैसे दिया जाय ?

शकुन्तः—

मूर्खो नहि ददात्यर्थं नरो दारिद्र्यशङ्कया ।
प्राज्ञस्तु वितरत्यर्थं नरो दारिद्र्यशङ्कया ॥१०६॥

मूर्ख इति। **Vocabulary** : शङ्का—भय, fear. प्राज्ञ—बुद्धिमान्, a wise person. वितरति—देता है ।

Prose Order : मूर्खः नरः दारिद्र्यशङ्कया अर्थं नहि ददाति । प्राज्ञः तु नरः दारिद्र्यशङ्कया अर्थं वितरति ।

व्याख्या—मूर्खः कर्त्तव्याकर्त्तव्यविवेकपराङ्मुखः नरः दारिद्र्यशङ्कया दारिद्र्यभयेन दरिद्रः स्यामिति भयेन अर्थं धनं नहि ददाति। प्राज्ञो बुद्धिमांस्तु नरः दारिद्र्यशङ्कया दारिद्र्ये सति कथमहं दातुं प्रभविष्यामि इति बुद्ध्याऽनागत एव दारिद्र्ये धनं वितरति।

शकुन्त—मूर्ख निर्धन हो जाने के भय से धन नहीं देता। विद्वान् इसलिए धन देता है कि कहीं धन नष्ट हो जाने से वह दान न कर सके।

मरालः—

किञ्चिद्वेदमयं पात्रं किञ्चित्पात्रं तपोमयम् ।
पात्राणामुत्तमं पात्रं शूद्रान्नं यस्य नोदरे ॥१०७॥

किञ्चिदिति। **Vocabulary** : पात्र—योग्य व्यक्ति, a deserving person. वेदमय—वेदज्ञाननिपुण, efficient in Vedic lore. तपोमय-तपश्चर्या-रत, well-versed in the practice of penance. उदर—belly.

Prose Order : किञ्चिद्वेदमयं पात्रम्, किञ्चित् तपोमयं पात्रम्, पात्राणाम् उत्तमं पात्रं यस्य उदरे शूद्रान्नं न ।

व्याख्या—किञ्चित् पात्रं वेदमयम्—कश्चिद्विद्वान् वेदशास्त्रनिपुणः, किञ्चित् तपोमयं पात्रम्—कश्चित् तपोऽभ्यासरतः । सर्वेषाम् उत्तमस्तु नरः स एव यस्य उदरे शूद्रान्नं नैव वर्त्तते ।

मराल—कोई व्यक्ति वेदज्ञ होने के कारण दान-योग्य है, कोई तप के कारण । सर्वोत्कृष्ट दान-योग्य व्यक्ति वही है, जिसने शूद्र का अन्न न खाया हो ।

शकुन्तः—'अनेन वित्तेन किं करिष्यति भवान् ?"

मरालः—'सखे, काशीवासी कोऽपि विप्रबटुरत्रागात् । तेनास्मत्पितुःपुरः काशीवासफलं व्यावर्णितम् । ततोऽस्मत्तातो बाल्यादारभ्य चौर्यं कुर्वाणो दैववशात्स्वपापान्निवृत्तो वैराग्यात्सकुटुम्बः काशीमेष्यति । तदर्थमिदं द्रविणजातम् ।'

शकुन्तक इति । **Vocabulary**: बटु—ब्रह्मचारी, a student. व्यावर्णितम्—वर्णन किया, described. बाल्य—बचपन, childhood. आरभ्य—beginning with. वैराग्य—indifference towards worldly pleasures. एष्यति—जायगा, will go. द्रविणजातम्—धनराशि, the store of wealth.

व्याख्या—काशीवासी—काश्यां वसितुं शीलमस्येति सः (उपपद०), काशी+वस्+णिनि (=इन्) प्र० एक० । विप्रबटुः—ब्राह्मणकुमारः । व्यावर्णितम्—विशेषेण वर्णितम् । बाल्यात्—शैशवात् । एष्यति—गमिष्यति । द्रविणजातम्—धनराशिः ।

शकुन्त ने कहा—इस धन से तुम क्या करोगे ?

मराल—मित्र ! काशी का रहनेवाला एक ब्राह्मण बालक यहाँ आया है। उसने हमारे सामने काशी में रहने का फल वर्णन किया । पिता जो बचपन से चोरी करते रहे, दैवयोग से अब बुरा आचरण छोड़कर वैराग्य से कुटुम्ब-सहित काशी को जायेंगे । उनके लिए यह सब धनराशि है ।

शकुन्तः—'महद्भाग्यं तव पितुः । तथा हि—

वाराणसीपुरीवासवासनावासितात्मना ।
किं शुना समतां याति वराकः पाकशासनः ॥१०८॥

वाराणसीति । **Vocabulary :** वाराणसी—काशी । वासना—इच्छा—a longing. वासित, व्याप्त, infused. वराक—दीन, wretched. पाकशासन—इन्द्र ।

Prose Order : वराकः । पाकशासनः वाराणसीपुरीवासवासनावासितात्मना शुना किं समतां याति ?

व्याख्या—वराकः दीनः । पाकशासनः इन्द्रः । वाराणसी चासौ पुरी (कर्म०) इति वाराणसीपुरी । वाराणसीपुर्यां वासः (स० तत्पु०) वाराणसीपुरीवासः । वाराणसीपुरीवासस्य वासना (ष० तत्पु०) । वाराणसीपुरीवासवासनया वासित आत्मा यस्य (बहु०) स तेन । शुना सारमेयेण । किं समतां तुलनां याति, न यातीत्यर्थः । काशीवासाभिलाषी सारमेयोऽपि देवराजाद् उत्कृष्टतरः ?

शकुन्त ने कहा—अहोभाग्य है आपके पिता का ! क्योंकि काशीपुरी में रहने के संसर्ग से उत्पन्न शुभवासनाओं से पवित्रित आत्मावाले कुत्ते से दयनीय इन्द्र की क्या तुलना हो सकती है ?

ऊषरं कर्मसस्यानां क्षेत्रं वाराणसी पुरी ।
यत्र संलभ्यते मोक्षः समं चण्डालपण्डितैः ॥१०९॥

ऊषरमिति । **Vocabulary** : ऊषरक्षेत्र—बंजर भूमि, a barren field. सस्य—corn. समम्—समान रूप से, equally.

Prose Order : वाराणसी पुरी कर्मसस्यानाम् ऊषरं क्षेत्रम्, यत्र चण्डालपण्डितैः समं मोक्षः संलभ्यते ।

व्याख्या—वाराणसी पुरी—काशी नगरी । कर्मसस्यानां—कर्मबीजस्य । ऊषरं क्षेत्रम्—मरुप्रदेशः । यत्र—वाराणस्यां नगर्याम् । चण्डालपण्डितैः—निकृष्टोत्कृष्टवर्गीयैः पुरुषैः । समं—तुल्यम् । मोक्षः—मुक्तिः । संलभ्यते—सम्प्राप्यते ।

काशीपुरी कर्म-रूपी बीज का एक ऊसर खेत है (जहाँ बोया हुआ बीज फल नहीं लाता), जहाँ चांडालों और पंडितों को एक साथ मुक्ति मिलती है।

मरणं मङ्गलं यत्र विभूतिश्च विभूषणम् ।
कौपीनं यत्र कौशेयं सा काशी केन मीयते ।।११०।।

मरणमिति । **Vocabulary** : मङ्गल—शुभ, a blessing. विभूति—भस्म, ashes. विभूषण—अलंकार, ornament. कौपीन—कटिवस्त्र, a loin cloth. कौशेय—रेशमी वस्त्र, a silken garment. मीयते—is measured.

Prose Order : यत्र मरणं मङ्गलं विभूतिश्च विभूषणम्, यत्र कौपीनं कौशेयं सा काशी केन मीयते ?

व्याख्या—यत्र नगर्यां मरणं मृत्युः मङ्गलं शुभहेतुः, यत्र विभूतिर्भस्म विभूषणम् अलङ्करणम्, यत्र कौपीनं] कटिवस्त्रं कौशेयम् उत्तमवस्त्रम्, सा काशी वाराणसी पुरी केन नरेण मीयते मातुं शक्यते न केनापि मातुं शक्यत इत्यर्थः ।

जहाँ मरण मंगलकार्य है, भस्म भूषण है, कौपीन रेशमी वस्त्र के समान है, उस काशी के महत्त्व का कौन मान लगा सकता है ?

एवमुभयोः संवादं श्रुत्वा राजा तुतोष। अचिन्तयच्च मनसि—'कर्मणां गतिः सर्वथैव विचित्रा । उभयोरपि पवित्रा मतिः' इति ।

ततो राजा विनिवृत्य वनान्तरे पितृपुत्रावपश्यत । तत्र पिता पुत्रं प्राह—'इदानीं परिज्ञातशास्त्रतत्त्वोऽपि नृपतिः कार्पण्येन किमपि न प्रयच्छति । किं तु ।

एवमुभयोरिति । **Vocabulary**: संवाद—बातचीत, conversation. परिज्ञात—विदित, conversant. कार्पण्य—कृपणता, miserliness.

व्याख्या—संवादम्—वार्त्तालापम् । तुतोष—प्रासीदत् । विचित्रा—आश्चर्यावहा । विनिवृत्य—अपसृत्य । भवनान्तरे—अन्यस्मिन् भवने ।

परिज्ञातशास्त्रतत्त्वः—परिज्ञातं शास्त्रस्य तत्त्वं येन (बहु०) सः। कार्पण्येन—कृपणतया। प्रयच्छति—वितरति।

इस प्रकार उन दोनों का संवाद सुनकर राजा प्रसन्न हुए और मन में सोचने लगे। कर्मों की गति सर्वथा ही न्यारी है। दोनों का हृदय स्वच्छ है।

तब राजा वहाँ से लौटे और एक दूसरे मकान में उन्होंने पिता-पुत्र को देखा। वहाँ पिता ने पुत्र से कहा—राजा शास्त्रवेत्ता भी कृपण है। अब हमें कुछ नहीं देता।

अर्थिनि कवयति कवयति पठति च पठति स्तवोन्मुखे स्तौति।
पश्चाद्यामीत्युक्ते मौनी दृष्टिं निमीलयति ॥१११॥

अर्थिनीति। **Vocabulary** : अर्थिन्—याचक, a suitor. कवयति—कविता बनाने पर, on making a poem. कवयति—कविता बनाता है, Composes a poem. पठति—कविता सुनाने पर, on reciting a poem. पठति—कविता सुनाता है, he recites a poem. स्तवोन्मुख—one about to praise. मौनी—one who keeps silent. दृष्टिं निमीलयति—आँखें बंद कर लेता है, closes his eyes.

Prose Order : अर्थिनि कवयति कवयति, पठति च पठति स्तवोन्मुखे स्तौति, पश्चाद् यामि इत्युक्ते मौनी दृष्टिं निमीलयति।

व्याख्या—अर्थिनि—याचके। कवयति—कवितां कुर्वाणे। कवयति—कवितां करोति। पठति—कवितां पठति सति। पठति—स्वयं कविताम् उच्चारयति। स्तवोन्मुखे—स्तवाय उन्मुखः (चतुर्थी तत्पु०), तस्मिन्, स्तुतिमुखे। स्तौति—कवेरेव स्तुतिं कर्त्तुमारभते। पश्चाद् उपर्युक्तेषूपक्रमेषु फलमनावहत्सु। यामि गच्छामि। इति एवम्। उक्ते याचकेन निवेदिते सति। मौनी मौनमालम्ब्य वर्त्तमानः। दृष्टिं नेत्रे। निमीलयति—पिदधाति।

जब याचक कविता बनाता है तब वह भी कविता बनाता है। जब याचक कविता सुनाता है तब वह भी अपनी कविता सुनाता है। जब याचक स्तुति करने लगता है तब वह भी स्तुति करने लगता है। फिर 'अच्छा, हम चलते हैं' ऐसा कहने पर मौन होकर आँखें बन्द कर लेता है।

राजाप्येतच्छ्रुत्वा तत्समीपं प्राप्य 'मैवं वद' इति स्वगात्रात्सर्वाभरणान्युत्तार्य दत्त्वा तस्मै ततो गृहमासाद्य कालान्तरे सभामुपविष्टः कालिदासं प्राह—'सखे,

राजेति । **Vocabulay** : उत्तार्य—उतारकर, having divested himself of. आसाद्य—पहुँचकर, having reached. कालान्तर—अन्य समय, another time.

राजा ने जब यह सुना तब वह उसके समीप जाकर बोला—'ऐसा मत कहो।' अपने अंगों से सभी भूषण उतारकर उसे देकर घर को आया। किसी समय सभा में बैठकर कालिदास से कहा—

कवीनां मानसं नौमि तरन्ति प्रतिभाम्भसि ।

ततः कविराह—

यत्र हंसवयांसीव भुवनानि चतुर्दश ॥११२॥

कवीनामिति । **Vocabulary**: मानस—मन, mind, or मानस—मानसरोवर, Manasa lake. नौमि—नमस्कार करता हूँ, I bow. तरन्ति—तैरते हैं, swim. प्रतिभाम्भस्—बुद्धिरूपी जल, intellectual water. पोत—नाव, a canoe. वयस्—पक्षिन्, a bird. भुवन—world.

Prose Order : कवीनां मानसं नौमि, प्रतिभाम्भसि यत्पोतेन चतुर्दश भुवनानि वयांसि इव तरन्ति ।

व्याख्या—अहम् । कवीनाम्—काव्यनिर्माणशालिनां विदुषाम् । मानसम्—हृदयम् । नौमि—वन्दे । अत्र कविमानसस्य मानससरोवरेण सादृश्यम् उक्तम् । प्रतिभाम्भसि प्रज्ञारूपिणि मानसजले । यत्पोतेन—यस्य कवेः काव्यरूपेण जलतरणसाधनेन । चतुर्दश भुवनानि—भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम् इत्येतन्नामकानि उपर्युपरि विद्यमानानि सप्त भुवनानि, तथा च अतलवितल-सुतलरसातलतलातलमहातलपातालनामकानि अधोऽधो विद्यमानानि सप्त भुवनानि, इत्येवं प्रकारेण चतुर्दश भुवनानि । वयांसीव मानससरोवरस्थिता विहगा इव । तरन्ति—उन्नीयते ।

मैं कवियों के मन को नमस्कार करता हूँ, जिस मन के प्रतिभा-रूपी जल में—तब कवि ने पूर्त्ति की—

हंसों के समान चौदह भुवन तैरते हैं।

ततो राजा प्रत्यक्षरं मुक्ताफललक्षं ददौ।

ततः प्रविशति द्वारपालः—'देव, कोऽपि कौपीनावशेषो विद्वान्द्वारि तिष्ठति' इति। राजा—'प्रवेशय।' ततः प्रवेशितः कविरागत्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वानुक्त एवोपविष्टः प्राह—

ततो राजेति। Vocabulary: प्रत्यक्षर,—एक-एक अक्षर के लिए, per letter. मुक्ताफल—मोती, pearl. कौपीन—loin-cloth.

व्याख्या—प्रत्यक्षरम्—अक्षरम् अक्षरं प्रति, अव्ययीभावः। मुक्ताफल-लक्षम्—मुक्तानां फलम् (ष० तत्पु०),—मुक्ताफलम्; मुक्ताफलानां लक्षम् (ष० तत्पु०)। ददौ—दत्तवान्। कौपीनावशेषः—कौपीनमात्रपरिधानः। अनुक्तः न उक्तः (नञ् तत्पु०)।

तब राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख मोती दिये।

फिर द्वारपाल ने प्रवेश करके कहा—

देव! एक विद्वान् जो कि कौपीन-मात्र पहिने हुए है, द्वार पर खड़ा है।

राजा ने कहा—भीतर लाओ। तब कवि को लाया गया। उसने आकर आशीर्वाद दिया। जब राजा ने कुछ नहीं कहा तो (स्वयं ही) बैठकर बोला—

इह निवसति मेरुः शेखरो भूधराणा-
मिह हि निहितभाराः सागराः सप्त चैव।
इदमतुलमनन्तं भूतलं भूरिभूतो-
द्भवधरणसमर्थं स्थानमस्मद्विधानाम् ॥११३॥

इहेति। Vocabulary : भूधर—पर्वत, mountain. मेरु—सुमेरु। शेखर—शिखररूप, the crest. अतुल—अनुपम, peerless. अनन्त—endless. भूत—प्राणी, beings. उद्भव—उत्पत्ति, creation.

Prose Order : भूधराणां शेखरः मेरुः इह निवसति। सप्त

सागराः चैव इह हि विहितभाराः। इदं भूरिभूतोद्भवधरणसमर्थम् अतुलम् अनन्तं भूतलम् अस्मद्विधानां स्थानम्।

व्याख्या—भूधराणाम्—धरतीति धरः, भुवो धरः भूधरः पर्वतः, तेषाम्। शेखरः—शिखरभूतः। मेरुः पर्वतः। इह भूतले। निवसति आस्ते। सप्त सागराः सप्तसमुद्राः। इह अत्र। निहितभाराः—निहितः भारः यैः (बहु०) ते। इदम्। अतुलम्—अनुपमम्। अनन्तम्—असीम। भूरिभूतोद्भवधरणसमर्थम्—भूरयो भूताः भूरिभूताः (कर्म०), भूरिभूतानाम् उद्भवः (ष० तत्पु०), तस्य धरणम् (ष० तत्पु०), तस्मिन् समर्थम् (स० तत्पु०)। अस्मद्विधानाम्—अस्मत्सदृशानाम्। स्थानं निवासः।

पर्वतराज मेरु यहीं रहते हैं। अपना भार रखे हुए सात समुद्र भी यहीं पर हैं। यह अतुल, अनन्त तथा अनेकों प्राणियों को उठाने में समर्थ धरातल मुझ-जैसे व्यक्तियों का निवास-स्थान है।

राजा—'महाकवे, किं ते नाम। अभिधत्स्व।'

कविः—'नामग्रहणं नोचितं पण्डितानाम्। तथापि वदामो यदि जानासि।

राजेति। **Vocabulary :** अभिधत्स्व, कहो। नामग्रहणम्—नाम्नः ग्रहणम् (ष० तत्पु०) नाम लेना।

राजा—महाकवि! आपका नाम क्या है? बताइए।

कवि—विद्वान् अपना नाम लेना उचित नहीं समझते तो भी हम नाम लेते हैं—यदि आप समझ सकें।

नहि स्तनंधयी बुद्धिर्गभीरं गाहते वचः।
तलं तोयनिधेर्द्रष्टुं यष्टिरस्ति न वैणवी॥११४॥

नहीति। **Vocabulary :** स्तनन्धयी—स्तन-पान करनेवाले दुधमुँहे (बालक) की, belonging to the breast-sucking child. गभीर—गम्भीर, serious. गाहते—जान सकती है, makes out the sense of. तोयनिधि—समुद्र, ocean. यष्टि—लकड़ी, staff. वैणवी—बाँस की बनी हुई, made of bamboo.

Prose Order : स्तनन्धयी बुद्धिः गभीरं वचः नहि गाहते । तोयनिधेः तलं द्रष्टुं वैणवी यष्टिः न अस्ति।

व्याख्या—स्तनं धयत इति स्तनन्धयः शिशुः तस्य इयं स्तनन्धयी । बुद्धिः मनीषा । गभीरम् गुर्वर्थपूर्णं वचः । नहि गाहते बोद्धुं न शक्नोति । तोयनिधेः—तोयस्य निधिः (ष० तत्पु०) तोयनिधिः तस्य, समुद्रस्य । तलम्—अन्तम् । द्रष्टुम्—अवलोकयितुम् । वैणवी—वेणुनिर्मिता यष्टिः । न अस्ति—न प्रभवति ।

माता के स्तनों का दूध पीनेवाले बालक की बुद्धि गंभीर वचन को समझ नहीं सकती। बाँस की लकड़ी समुद्र का तल देखने को समर्थ नहीं।

देव, आकर्णय ।

च्युतामिन्दोर्लेखां रतिकलहभग्नं च वलयं
समं चक्रीकृत्य प्रहसितमुखी शैलतनया ।
अवोचद्यं पश्येत्यवतु गिरिशः सा च गिरिजा
स च क्रीडाचन्द्रो दशनकिरणापूरिततनुः ॥११५॥

देवेति । **Vocabulary :** च्युत—पतित, fallen. इन्दु—चन्द्रमा, the moon. लेखा—कला, crescent. रतिकलह—amorous. quarrel. भग्न—गिरा हुआ—fallen. वलय—कङ्कण, bracelet. सम—बराबर, equally. चक्रीकृत्य—बराबर करके, having shaped. it into a wheel. शैलतनया—पार्वती । गिरिशः—शिव । गिरिजा—पार्वती । क्रीडाचन्द्र—the play-moon. दशन—दाँत, teeth. आपूरित—युक्त, filled. तनु—शरीर, body.

Prose Order : च्युताम् इन्दोर्लेखां रतिकलहभग्नं वलयं च समं चक्रीकृत्य शैलतनया प्रहसितमुखी (सती) 'पश्य' (इति) यम् अवोचत्, गिरिशः, सा गिरिजा च, सः दशनकिरणापूरिततनुः क्रीडाचन्द्रः च अवतु ।

व्याख्या—च्युतां भ्रष्टां मस्तकादिति शेषः । इन्दोः चन्द्रस्य । लेखां कलाम् । रतिकलहभग्नं रतिकाले यः कलहः स रतिकलहः (स० तत्पु०) तस्मिन् भग्नः (स० तत्पु०), तत् । वलयं कङ्कणम् । समम् उभयम् । चक्रीकृत्य मण्डलाकारं

विधाय । शैलतनया—शैलस्य तनया (ष० तत्पु०), हिमाचलपुत्री । प्रहसितमुखी—प्रहसितं मुखं यस्याः (बहु०), सा तथाभूता । यम् । पश्य—अवलोकय । इत्यवोचत् अकथयत् । सेः गिरिशः—शिवः । सा । गिरिजा—पार्वती । स च । दशनकिरणापूरिततनुः—दशनानां किरणैः आपूरिता तनुः यस्य (बहु०) सः, दन्तरश्मिभिर्व्याप्तशरीरः क्रीडाचन्द्रः—क्रीडार्थं निर्मितः चन्द्रः (चतुर्थी तत्पु०) । अवतु—रक्षतु ।

देव ! सुनिए—

प्रणय-कलह के समय (शिव के मस्तक से) पतित चन्द्रलेखा को तथा (अपने) कंकण को एक साथ रथ-चक्र के समान गोलाकार बनाकर पार्वती हँस पड़ी और जिस (शिव) से कहा कि यह देखो वह शिव और वह (स्वयं) पार्वती तथा खिलौना-सा चन्द्र, जिसके शरीर पर (पार्वती की) किरणें पड़ रही थीं, आपकी रक्षा करें।

कालिदासः—'सखे क्रीडाचन्द्र, चिराद्दृष्टोऽसि। कथमीदृशी ते दशा मण्डले विराजत्यपि राजनि बहुधनवति ?'

कालिदास इति । Vocabulary : क्रीडाचन्द्र—एक कवि का नाम, **the name of a poet.** चिरदृष्टः—चिरकाल में दीखे हो, **seen after a long time.**

व्याख्या—चिरदृष्टः—चिराद् दृष्टः (प० तत्पु०) । मण्डले मण्डले—प्रतिमण्डलम् । विराजति—सुशोभमाने ।

कालिदास—मित्र क्रीडाचन्द्र ! बहुत देर से तुझे देखा है । प्रान्त-प्रान्त में महाधनी राजाओं के विराजमान होने पर भी तुम्हारी यह दशा क्यों ?

क्रीडाचन्द्रः—

धनिनोऽप्यदानविभवा गण्यन्ते धुरि महादरिद्राणाम् ।
हन्ति न यतः पिपासामतः समुद्रोऽपि मरुरेव ।।११६।।

धनिनोऽपीति । Vocabulary : अदानविभव—जो दानशील नहीं है, **not generous in gifts.** गण्यन्ते—गिने जाते हैं, **are counted.**

धुरि—आगे, as the foremost. महादरिद्र—the poorest. पिपासा—तृषा, thirst. मरु–ऊसर भूमि, the desert.

Prose Order : अदानविभवाः धनिनः अपि महादरिद्राणां धुरि गण्यन्ते। यतः पिपासां न हन्ति अतः समुद्रः अपि मरुः एव।

व्याख्या—अदानविभवाः—दानाय विभवः (च० तत्पु०) दानविभवः, नास्ति दानविभवो येषां ते अदानविभवाः अदानशालिन इत्यर्थः । धनिनः अपि धनवन्तोऽपि । महादरिद्राणां सर्वथा धनरहितानाम् । धुरि अग्रे । गण्यन्ते । यतः यस्मात् कारणात् । पिपासां जलपानेच्छाम् । न हन्ति न अपनयति । अतः अस्मात् कारणात् । समुद्रः सागरः अपि । मरुः धन्वस्थानम् । एव ।

क्रीडाचन्द्र—कृपण धनी भी महादरिद्रों में मुखिया गिने जाते हैं । क्योंकि वह प्यास को शान्त नहीं करता इसलिए समुद्र भी मरुस्थल है ।

किं च—

उपभोगकातराणां पुरुषाणामर्थसंचयपराणाम् ।
कन्यामणिरिव सदने तिष्ठत्यर्थः परस्यार्थे ।।११७।।

किञ्चेति । Vocabulary : उपभोग—enjoyment. कातर—कायर, coward. सञ्चय—accumulation.

Prose Order : उपभोगकातराणाम् अर्थसञ्चयपराणां पुरुषाणाम् अर्थः सदने कन्यामणिः इव परस्य अर्थे तिष्ठति ।

व्याख्या—उपभोगकातराणाम्—उपभोगाय उपभोगे वा कातराः, तेषाम्, अर्थानुपभोगपराणामित्यर्थः । अर्थसञ्चयपराणाम्—अर्थस्य सञ्चयः (ष० तत्पु०) अर्थसञ्चयः, स परमम् उद्देश्यं येषाम्, (बहु०) तेषाम् । अर्थः धनम् । सदने गृहे । कन्यामणिरिव कन्यारत्नमिव । परस्यार्थे अन्येषां कृते । तिष्ठति ।

धन का उपभोग करने से भीरु तथा उसके सञ्चय में व्यग्र पुरुषों का धन, घर में कन्यारत्न के समान दूसरे के लिए ही होता है ।

सुवर्णमणिकेयूराडम्बरैरन्यभूभृतः ।
कलयैव पदं भोज तेषामाप्नोति सारवित् ।।११८।।

सुवर्णेति । **Vocabulary:** सुवर्ण—gold. मणि—gem. केयूर—armlet. आडम्बर—दिखावा, show. भूभृत्—king. सारवित्—तत्त्व का ज्ञाता, one who understands the essence of poetry. कला—art.

Prose Order : भोज ! अन्यभूभृतः सुवर्णमणिकेयूराडम्बरैः शोभन्ते । सारवित् तेषां पदं कलयैव आप्नोति ।

व्याख्या—भोज ! अन्यभूभृतः अन्ये भूभृतः राजानः । सुवर्णमणिकेयूराडम्बरैः—सुवर्णं च मणयश्च केयूरं चेति सुवर्णमणिकेयूराणि (द्वन्द्व) तैः । शोभन्ते—विराजन्ते । सारवित्—सारज्ञः । तेषां भूभृताम् । पदं स्थानम् । कलयैव—काव्यकलासाधनेनैव । आप्नोति लभते ।

सुवर्ण, मणि तथा भुजकंकण के आडम्बर से ही अन्य राजा राजा कहलाते हैं । हे भोज ! मनुष्य काव्य कला द्वारा ही उनका स्थान पाता है ।

सुधामयानीव सुधां गलन्ति
विदग्धसंयोजनमन्तरेण ।
काव्यानि निर्व्याजमनोहराणि
वाराङ्गनानामिव यौवनानि ॥११६॥

सुधामयानीति । **Vocabulary** सुधामय— made of nectar. सुधा—अमृत, nectar. गलन्ति—बरसाते हैं, shower. विदग्ध—निपुण, clever; or विट, advertiser. संयोजन— arrangement; or association. अन्तरेण—विना, without. निर्व्याजमनोहर—स्वभावसुन्दर, artlessly beautiful. वाराङ्गना—वेश्या, a courtezan. यौवन—यौवन-सौन्दर्य—the bloom of youth.

Prose Order निर्व्याजमनोहराणि काव्यानि वाराङ्गनानां यौवनानि इव विदग्धसंयोजनमन्तरेण सुधामयानीव सुधां गलन्ति ।

व्याख्या—निर्व्याजमनोहराणि—निर्गतो व्याजात् (प्रादि तत्पु०) इति निर्व्याजः, निर्व्याजं स्वभावतो यथा स्यात्तथा मनोहराणि सुन्दराणि । काव्यानि । वाराङ्गनानां वेश्यानां यौवनानि इव । विदग्धसंयोजनं सालंकारशब्दरचनाम्

अन्तरेण विनैव, अथ वा विटप्रचारमनपेक्ष्यैव । सुधामयानीव अमृतमयानीव सुधां पीयूषम् । गलन्ति—वर्षन्ति ।

शब्द तथा अर्थ के निपुणतम उपन्यास के बिना भी अथवा विट के द्वारा समागम-प्रबन्ध न होने पर भी वेश्याओं के यौवन के समान स्वभाव-सुन्दर काव्य अमृत बरसाते हैं, मानों कि वे अमृतमय ही हों ।

ज्ञायते जातु नामापि न राज्ञः कवितां विना ।
कवेस्तद्व्यतिरेकेण न कीर्त्तिः स्फुरति क्षितौ ॥१२०॥

ज्ञायत इति । **Vocabulary** व्यतिरेक—पृथक्त्व exclusion or separation.

Prose Order कवितां विना राज्ञः नाम अपि जातु न ज्ञायते । तद्व्यतिरेकेण क्षितौ कवेः कीर्त्तिः न स्फुरति ।

व्याख्या—कवितां विना—कवित्वम् अन्तरेण । राज्ञः—भूपतेः । नाम—संज्ञा । अपि जातु—कदाचित् । न ज्ञायते—न ख्यातिमेति । तद्व्यतिरेकेण—राज्ञ आश्रयं विना । क्षितौ—पृथिव्याम् । कवेः । कीर्त्तिः—यशः न स्फुरति न प्रसरति ।

बिना कविता के राजा का नाम भी कभी नहीं विदित होता । उस राजा के बिना कवि की भी भूतल पर कीर्त्ति नहीं फैलती ।

मयूरः—

ते वन्द्यास्ते महात्मानस्तेषां लोके स्थिरं यशः ।
यैर्निबद्धानि काव्यानि ये च काव्ये प्रकीर्त्तिताः ॥१२१॥

मयूर इति । **Vocabulary** वन्द्य—वन्दनीय, deserving to be praised. स्थिर—lasting.

Prose Order : ते वन्द्याः, ते महात्मानः, तेषां लोके स्थिरं यशः, यैः काव्यानि निबद्धानि, ये च काव्ये प्रकीर्तिताः ।

व्याख्या—ते वक्ष्यमाणगुणविशिष्टाः । वन्द्याः—वन्दनार्हाः । ते महात्मानः—महानुभावाः । तेषाम् । लोके—भुवने । यशः—कीर्त्तिः । स्थिरम्—

स्थायी । वर्तत इति शेषः । यैः । काव्यानि । निबद्धनि—रचितानि । ये च । काव्ये । प्रकीर्त्तिताः ।

मयूरकवि बोले—

जिन्होंने काव्य-रचना की है और जिनकी कीर्त्ति का काव्य में गान हुआ है, वे वन्दनीय हैं; वे महापुरुष हैं और उनका यश संसार में स्थिर है ।

वररुचिः—

पदव्यक्तिव्यक्तीकृतसहृदयाबन्धललिते
कवीनां मार्गेऽस्मिन्स्फुरति बुधमात्रस्य धिषणा ।
न च क्रीडालेशव्यसनपिशुनोऽयं कुलवधू-
कटाक्षाणां पन्थाः स खलु गणिकानामविषयः ।।१२२।।

वररुचिरिति । **Vocabulary :** पदव्यक्ति—शब्द-व्यंजना, the suggestive meaning of words. व्यक्तीकृत—प्रकटित, manifested. सहृदय—कोमल हृदय-युक्त, tender-hearted. आबन्ध—रचना, stringing together. ललित—graceful. मार्ग—पद्धति, track. बुधमात्र—केवल विद्वान्, only wise. धिषणा—बुद्धि, wisdom. स्फुरति—प्रकटित होती है, flashes. क्रीडालेश—sportive pleasures. व्यसन— addiction. पिशुन—सूचक, indicative. कुलवधू—उच्च कुल की बहू, respectable women. कटाक्ष—side-glance. पृथिन्—मार्ग, track. विषय—sphere.

Prose Order : पदव्यक्तिव्यक्तीकृतसहृदयाबन्धललिते कवीनाम् अस्मिन् मार्गे बुधमात्रस्य धिषणा भवति । अयं कुलवधूकटाक्षाणां पन्थाः क्रीडालेशव्यसनपिशुनः न च, स खलु गणिकानामविषयः ।

व्याख्या—पदव्यक्तिव्यक्तीसहृदयाबन्धललिते—पदानां व्यक्तिः (ष० तत्पु०), पदव्यक्तिः, पदव्यक्त्या व्यक्तीकृताः (तृ० तत्पु०) पदव्यक्तिव्यक्तीकृताः, ते च ये सहृदयाः (कर्म०), तैर्गर्भिमैः आबन्धः (आ समन्ताद् बन्धः) (म० तृ० तत्पु०), तेन ललितः (तृ० तत्पु०), तस्मिन् पदरचनाप्रकटितसज्जनचरित्र-विन्यासशोभिते । कवीनाम् । अस्मिन् निर्दिष्टे । मार्गे । बुधमात्रस्य केवलं

विदुष एव । धिषणा बुद्धिः । स्फुरति उन्नमति । अयं निर्दिष्टपूर्वः । कुलवधू-कटाक्षणाम्–कुले (उत्तमकुले) सञ्जाताः परिणीताश्च वध्वः कुलवध्वः (म० स० तत्पु०), तासां कटाक्षाः (ष० तत्पु०), तेषाम् । पन्था मार्गः । क्रीडालेशव्यसन-पिशुनः—क्रीडाया लेशः (ष० तत्पु०), क्रीडालेशः–अक्रीडालेशस्य व्यसनम् (ष० तत्पु०) क्रीडालेशव्यसनम्, तस्य । पिशुनः सूचकः । नहि नैव वर्तत इति शेषः । सः पन्थाः । खलु निश्चयेन । गणिकानां वेश्यानाम् । अविषयः अभाजनम् ।

वररुचि ने कहा—

जिनकी सहृदयता उनकी पद-रचना से व्यक्त होती है, उन कवियों की प्रबन्ध-रचना से मनोहर इस मार्ग में केवल विद्वान् की ही बुद्धि की गति है। कुलवधू के कटाक्षों का मार्ग रतिक्रीड़ा के व्यसन का सूचक नहीं होता। वेश्याएँ उसकी बराबरी नहीं कर सकती हैं।

राजा क्रीडाचन्द्राय विंशतिगजेन्द्रान्ग्राम पञ्चकं च ददौ। ततो राजानं कविः स्तौति—

कङ्कणं नयनद्वन्द्वे तिलकं करपल्लवे ।
अहो भूषणवैचित्र्यं भोजप्रत्यर्थियोषिताम् ॥१२३॥

राजेति । **Vocabulary** : गजेन्द्र—lordly elephant. कंकण--bracelet or tears. तिलक—an ornament or तिलोदक, an oblation of sesamum seeds and water. करपल्लव—कोमल हाथ, leaf-like tender hand. प्रत्यर्थिन्–शत्रु, enemy. योषित्—नारी, female.

Prose Order : नयनद्वन्द्वे कङ्कणं करपल्लव तिलकम् अहो भोज-प्रत्यर्थियोषिताम् भूषणवैचित्र्यम् !

व्याख्या—नयनद्वन्द्वे नयनयोः द्वन्द्वम् (ष० तत्पु०), तस्मिन्, नेत्रयुगले। कङ्कणम् मुक्तामयम् अश्रुभूषणम् । करपल्लवे—करः पल्लव इव (उपमित-कर्मधारयः), तस्मिन् कोमलकरे । तिलकम्—भूषणविशेषः । अहो—आश्चर्यम् । भोजप्रत्यर्थियोषिताम्–भोजस्य प्रत्यर्थिनः (ष० तत्पु०),

भोजप्रत्यर्थिनः । भोजप्रत्यर्थिनां योषितः (ष० तत्पु०), तेषाम्, भोजारातिमहिलानाम् । भूषणपरिधानकर्मणि दक्षताराहित्यम् ।

राजा ने क्रीडाचन्द्र को बीस हाथी और पाँच गाँव दिये । तब कवि ने राजा की स्तुति की ।

नेत्रों में कंकण (आँसू), हाथों में तिलक (तिलोदक), इस प्रकार विचित्र है भोज के शत्रुओं की नारियों का भूषण पहनने का ढंग !

तुष्टो राजा पुनः प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कदाचित्कोऽपि जराजीर्णसर्वाङ्गसंधिः पण्डितो रामेश्वरनामा सभामभ्यगात् । स चाह—

पंचाननस्य सुकवेर्गजमांसैर्नृपश्रिया ।
पारणा जायते क्वापि सर्वत्रैवोपवासिनः ।।१२४।।

तुष्ट इति । **Vocabulary :** जरा—बुढ़ापा, old age, जीर्ण—शिथिल, worn out. सन्धि—joint. पञ्चानन—सिंह, lion. पारणा—तृप्ति, satisfaction. उपवासिन्—fasting or suffering from lack of wealth.

Prose Order : उपवासिनः पञ्चाननस्य गजमांसैः, उपवासिनः सुकवेः नृपश्रिया क्वापि सर्वत्र एव पारणा जायते ।

व्याख्या—उपवासिनः निराहारस्य सिंहस्य । गजमांसैः गजामिषैः । उपवासिनः द्रव्यरहितस्य । सुकवेः उत्तमकाव्यनिर्माणदक्षतायुक्तस्य । नृपश्रिया राजलक्ष्म्या । क्वापि अनिर्दिष्टस्थान एव । सर्वत्र स्थानविशेषनिरपेक्षयैव । पारणा तृप्तिः । जायते सम्पद्यते ।

प्रसन्न होकर राजा ने फिर प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । तब कभी रामेश्वर नाम का एक विद्वान्, जिसके अंगों का सन्धि-भाग बुढ़ापे से जर्जर हो गया था, सभा में आया और बोला—

सब स्थानों में उपवास-व्रत धारण किये हुए कवि की राजलक्ष्मी से और निराहार व्रत धारण किये हुए सिंह की व्रत-पारणा हाथी के मांस से होती है ।

वाहानां पण्डितानां च परेषामपरो जनः ।
कवीन्द्राणां गजेन्द्राणां ग्राहको नृपतिः परः ॥१२५॥

वाहानामिति Vocabulary : वाह—भारवाहक पशु beasts of burden. अपर—साधारण, common. पर—श्रेष्ठ the noble.

Prose Order : परेषां वाहानां पण्डितानां च अपरः जनः ग्राहकः । कवीन्द्राणां गजेन्द्राणां ग्राहकः परः नृपतिः ।

व्याख्या—परेषाम् असाधारणानाम् । वाहानां भारवाहकानाम् पण्डितानां विदुषां च । अपरः असाधारणः । जनः ग्राहकः । कवीन्द्राणां कविवराणाम् । गजेन्द्राणां दन्तिवराणां च । ग्राहकः गुणपरिचेता । परः कश्चिद् विशेषज्ञः । नृपतिः । एव भवतीति शेषः ।

साधारण मनुष्य वाहन, पण्डित आदि (साधारण) वस्तुओं के ग्राहक होते हैं । महाकवियों तथा गजेन्द्रों का ग्राहक राजा ही होता है ।

एवं हि ।

सुवर्णैः पट्टचैलैश्च शोभा स्याद्वारयोषिताम् ।
पराक्रमेण दानेन राजन्ते राजनन्दनाः ॥१२६॥

एवंहीति । Vocabulary : पट्टचैल—रेशमी वस्त्र, silken costume. वारयोषित्—वेश्या, a courtezan. पराक्रम—valour. राजनन्दन—prince.

Prose Order : सुवर्णैः पट्टचैलैः च वारयोषितां शोभा स्यात् । राजनन्दनाः पराक्रमेण दानेन रोचन्ते ।

व्याख्या—सुवर्णैः हिरण्मयैराभरणैः । पट्टचैलैः क्षौमवसनैः । वारयोषितां पण्यस्त्रीणां वेश्यानामिति यावत् । शोभा दीप्तिः । स्यात् जायते । राजनन्दनाः राजकुमाराः पराक्रमेण बलेन । दानेन द्रव्यवितरणेन । राजन्ते शोभन्ते ।

सुवर्ण तथा रेशमी वस्त्रों से वेश्याओं की शोभा होती है। राजकुमार पराक्रम और दान के द्वारा शोभा पाते हैं ।

इत्याकर्ण्य राजा रामेश्वरपण्डिताय सर्वाभरणान्युत्तार्य लक्षद्वयं प्रायच्छत् । ततः स्तौति कविः—

भोज त्वत्कीर्त्तिकान्ताया नभोभाले स्थितं महत् ।
कस्तूरीतिलकं राजन्गुणाकर विराजते ॥१२७॥

इत्याकर्ण्येति । **Vocabulary** : आकर्ण्य—सुनकर । उत्तार्य—उतारकर । नभस्—आकाश, sky. भाल—मस्तक, forehead. कस्तूरी—गन्धकयुक्त द्रव्यविशेष, musk. गुणाकर—mine of merit.

Prose Order : गुणाकर राजन् भोज ! त्वत्कीर्त्तिकान्तायाः नभोभाले स्थितं महत् कस्तूरीतिलकं विराजते ।

व्याख्या—गुणाकर—गुणानाम् आकरः (ष० तत्पु०), तत्सम्बुद्धौ । त्वत्कीर्त्तिकान्तायाःतव कीर्त्तिः (ष० तत्पु०) त्वत्कीर्त्तिः, त्वत्कीर्त्तिरेव कान्ता (कर्म) तस्याः, तव यशोरूपिण्या नार्याः । नभोभाले—नभ एव भालम् (कर्म०), तस्मिन्, गगनमये मस्तके स्थितं विराजमानम् । महत् विशालम् । कस्तूरीतिलकम्—कस्तूरी मृगमदः, कस्तूरीगर्भितं तिलकम् (मध्यमपदलोपि कर्म०) कस्तूरीतिलकम् । विराजते शोभते ।

यह सुनकर राजा ने रामेश्वर पण्डित को सभी गहने उतार कर दे दिये । दो लाख मुद्राएँ दीं । तब कवि स्तुति करने लगे ।

गुणनिधान महाराज भोज ! आपकी कीर्त्तिरूपी कान्ता का कस्तूरीतिलक आकाश-रूपी मस्तक पर सुशोभित हो रहा है ।

बुधाग्रे न गुणान्ब्रूयात्साधु वेत्ति यतः स्वयम् ।
मूर्खाग्रेऽपि च न ब्रूयाद्बुधप्रोक्तं न वेत्ति सः ॥१२ ॥

बुधाग्र इति । **Vocabulary** : बुध—विद्वान्, the learned. अग्र—आगे, सामने, before. वेत्ति—जानता है, knows.

Prose Order : बुधाग्रे गुणान् न ब्रूयात्ः यतः साधुः स्वयं वेत्ति मूर्खाग्रे अपि च न ब्रूयात् सः बुधप्रोक्तान् वेत्ति ।

व्याख्या—बुधाग्रे—बुधस्य अग्रे (ष० तत्पु०), विद्वत्पुरतः । गुणान् स्ववैशिष्ट्यम् । न ब्रूयात् न वदेत् । यतः येन कारणेन । साधुः बुधः । स्वयम् अभिहितोऽपि । वेत्ति जानाति । मूर्खाग्रे—मूर्खस्य अग्रे (ष० तत्पु०) । अपि ।

न ब्रूयात् न वदेत् । सः । बुधप्रोक्तान्—बुधेन प्रोक्ताः (तृ० तत्पु०) बुधप्रोक्ताः, तान् । न वेत्ति बोद्धुमसमर्थः ।

विद्वान् के आगे गुणों का बखान नहीं करना चाहिए; क्योंकि सज्जन पुरुष स्वयं उन्हें जान लेता है। मूर्ख के सामने भी नहीं करना चाहिए; क्योंकि वह विद्वान् के कथन को नहीं जानता।

तेन चमत्कृताः सर्वे ।

रामेश्वरकविः—

ख्यातिं गमयति सजनः सुकविर्विदधाति केवलं काव्यम् ।
पुष्णाति कमलमम्भो लक्ष्म्या तु रविर्नियोजयति ॥१२६॥

तेन चमत्कृता इति । **Vocabulary** : चमत्कृत—चकित, wonderstruck. ख्याति—प्रसिद्धि, fame. गमयति—कराता है, causes to make. सुजन—सज्जन, a noble person. विदधाति—निर्माण करता है, makes. काव्य—poetry. पुष्णाति—पुष्ट करता है ।

Prose Order : सुजनः ख्यातिं गमयति । सुकविः केवलं काव्यं विदधाति । अम्भः कमलं पुष्णाति । रविः तु लक्ष्म्या नियोजयति ।

व्याख्या—सुजनः शोभनः जनः (प्रादि कर्म०) । ख्यातिं प्रसिद्धिम् । गमयति जनयति । सुकविः शोभनः कविः । केवलम् । काव्यम् । विदधाति निर्मिमीते । अम्भः जलम् । कमलं सरसिजम् । पुष्णाति वर्धयति । रविः सूर्यः । लक्ष्म्या श्रिया । नियोजयति सम्बध्नाति ।

इसीसे सभी को आश्चर्य हुआ।

रामेश्वर कवि बोले—

उत्तम कवि केवल काव्य की रचना करता है। सज्जन उसे प्रसिद्धि देता है। जल कमल को पुष्ट करता है, किन्तु सूर्य उसे सुशोभित करता है।

ततस्तुष्टो राजा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ । राजेन्द्रं कविः प्राह—

कवित्वं न शृणोत्येव कृपणः कीर्तिवर्जितः ।
नपुंसकः किं कुरुते पुरःस्थितमृगीदृशा ॥१३०॥

ततस्ततुष्ट इति । **Vocabulary** : कवित्व—a poem. कृपण—

a miser. नपुंसक—an impotent. पुरःस्थित—सम्मुख विराजमान, standing before. मृगीदृश—हरिणी के नेत्रों के समान नेत्रों से युक्त नारी, a fawn-eyed lady.

Prose Order : कीर्त्तिवर्जितः कृपणः कवित्वं नैव शृणोति। नपुंसकः पुरःस्थितमृगीदृशा किं कुरुते ?

व्याख्या—कीर्त्तिवर्जितः कीर्त्या वर्जितः (तृ० तत्पु०), यशोविहीनः। कृपणः अर्थोपभोगविमुखः। कवित्वं कविताम्। नैव। शृणोति आकर्णयति। तत्र दृष्टान्तमाह—नपुंसकः क्लीबः पुमान्। पुरःस्थितमृगीदृशा—पुरःस्थिता मृगीदृक् (विशेषणविशेष्यकर्म०) तया। किं कुरुते न किमपि कुरुत इत्यर्थः।

तब राजा ने प्रसन्न होकर उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये। तब कवि ने महाराज से कहा—

कीर्त्ति-रहित कृपण व्यक्ति कविता को नहीं सुनता। सामने खड़ी मृगनयनी नारी से नपुंसक को क्या लाभ ?

सीता प्राह—

हता दैवेन कवयो वराकास्ते गजा अपि।
शोभा न जायते तेषां मण्डलेन्द्रगृहं विना ॥१३१॥

सीतेति। Vocabulary : वराक—दीन, poor. मण्डलेन्द्र—राजा, king.

Prose Order : ते वराकाः कवयः गजाः अपि दैवेन हताः। मण्डलेन्द्रगृहं विना तेषां शोभा न जायते।

व्याख्या—ते प्रख्यातगुणाः। वराकाः दीनाः। कवयः काव्यप्रणेतारः। गजाः हस्तिनः अपि। दैवेन अदृष्टकर्मणा। हता विनाशं गमिताः। मण्डलेन्द्रगृहम्—मण्डलेन्द्रः भूपतिः, तस्य गृहं तदाश्रयम्। विना अन्तरेण। तेषां कवीन्द्राणां गजेन्द्राणां च। शोभा कीर्त्तिर्दीप्तिर्वा। न जायते।

सीता ने कहा—

दैव द्वारा हत कवि तथा वे दयनीय हाथी भी राजगृह के बिना शोभा को नहीं पा सकते।

कालिदासः—

अदातृमानसं क्वापि न स्पृशन्ति कवेर्गिरः ।
दुःखायैवातिवृद्धस्य विलासास्तरुणीकृताः ॥१३२॥

कालिदास इति । Vocabulary : अदातृमानस—दान की ओर विमुख, averse to charity. न स्पृशन्ति—प्रभावित नहीं करते do not influence. विलास—हाव-भाव, amorous dalliance. तरुणी—युवती, a youthful lady.

Prose Order : कवेः गिरः अदातृमानसं क्वापि न स्पृशन्ति । तरुणीकृताः विलासाः अतिवृद्धस्य दुःखाय एव ।

व्याख्या—कवेः काव्यप्रणेतुः । गिरो वाचः । अदातृमानसम् अदानशीलम् । क्वापि । न स्पृशन्ति नाकर्षयन्ति । तरुणीकृताः युवतीकृताः । विलासा हावभावादयः । अतिवृद्धस्य दूरापेतयौवनस्य । दुःखायैव, दुःखप्रदा एव भवन्ति ।

कालिदास ने कहा—

जो दानी नहीं है, उसके हृदय पर कवि के वचन का प्रभाव नहीं पड़ता । युवती के हाव-भाव वृद्ध मनुष्य को दुःखित करने के लिए ही होते हैं ।

राजा प्रतिपण्डितं लक्षं दत्तवान् ।

ततः कदाचिद्राजा समस्तादपि कविमण्डलादधिकं कालिदासमवलोक्यायान्तं परं वेश्यालोलत्वेन चेतसि खेदलवं चक्रे । तदा सीता विद्वद्वृन्दवन्दिता तदभिप्रायं ज्ञात्वा प्राह—देव,

दोषमपि गुणवति जने दृष्ट्वा गुणरागिणो न खिद्यन्ते ।
प्रीत्यैव शशिनि पतितं पश्यति लोकः कलङ्कमपि ॥१३३॥

राजेति । Vocabulary : लोल—one hankering after. अभिप्राय—intent. गुणरागिन्—one who takes delight in the good qualities of others. न खिद्यन्ते—are not distressed.

Prose Order : गुणरागिणः गुणवति जने दोषमपि दृष्ट्वा न खिद्यन्ते । लोकः शशिनि पतितं कलङ्कम् अपि प्रीत्यैव पश्यति ।

व्याख्या—गुणरागिणः गुणानुरागपराः गुणग्राहिण इति यावत । गुणवति

गुणिनि। जने पुरुषे। दोषमपि गुणाभावमपि। दृष्ट्वा विलोक्य। न खिद्यन्ते न दूयन्ते। लोकः जनः। शशिनि चन्द्रमसि। पतितं प्रतिबिम्बितम्। कलङ्क धराच्छायाभूतं मालिन्यम्। प्रीत्यैव प्रेम्णैव। पश्यति विलोकयति।

राजा ने प्रत्येक पण्डित को एक-एक लाख रुपये दिये।

तब कभी राजा सम्पूर्ण कविमण्डल में श्रेष्ठ कवि कालिदास को आते हुए देखकर और उसका वेश्यानुराग सोचकर खिन्न हुए। तब विद्वानों से सम्मानित सीता ने अभिप्राय को जानकर कहा—

गुणों से प्रेम रखनेवाले मनुष्य गुणवान् व्यक्ति में दोष को भी देखकर खिन्न नहीं होते। चन्द्रमा के कलङ्क को भी लोग प्रेमपूर्ण दृष्टि से ही देखते हैं।

तुष्टो राजा सीतायै लक्षं ददौ। तथापि कालिदासं यथापूर्वं न मानयति यदा, तदा स च कालिदासो राज्ञोऽभिप्रायं विदित्वा तुलामिषेण प्राह—

प्राप्य प्रमाणपदवीं को नामास्ते तुलेऽवलेपस्ते।
नयसि गरिष्ठमधस्तात्तदितरमुच्चैस्तरां कुरुषे ॥१३४॥

तुष्ट इति। **Vocabulary** : मिष—बहाना, pretext. तुला—तराजू, balance. प्रमाण—measure. पदवी—स्थान, status. अवलेप—अहंकार, arrogance. गरिष्ठ—गुरुतम, the weighty. अधस्तात्—नीचे, lower. इतर—भिन्न, the other उच्चैस्तर—उन्नत।

Prose Order : प्रमाणपदवीं प्राप्य हे तुले ! ते कः नाम अवलेपः ? प्रतिष्ठम् अधस्तात् नयसि, तदितरम् उच्चैस्तरां कुरुषे।

व्याख्या—तुलामिषेण—तुलाव्याजेन, तुलां सम्बोधयन्नित्यर्थः।

प्रमाणपदवीम्—प्रकर्षेण मीयतेऽनेनेति प्रमाणम्। प्रमाणस्य पदवी (ष० तत्पु०) प्रमाणपदवी, ताम्। प्राप्य अधिगम्य। हे तुले ! ते तव। को नाम, नामेति सम्भावनायाम्। अवलेपः गर्वः। गरिष्ठम्—गुरुतमम्। अधस्तात् नीचैः। नयसि प्रापयसि। तदितरम्—तस्माद् भिन्नम्। उच्चैस्तराम्—उन्नतम्। करोषि विधत्से।

सन्तुष्ट होकर राजा ने सीता को एक लाख रुपये दिये।

तो भी जब राजा कालिदास का पूर्ववत् सम्मान न करने लगे तब कालिदास ने राजा के अभिप्राय को जानकर तराजू के बहाने कहा—

हे तराजू! ऊँचे को नीचा और नीचे को ऊँचा ले जाती हो—इस प्रकार अधिकार (और तुला पक्ष में मान) पद को पाकर तुझे गर्व क्यों होने लगा है?

पुनराह—

यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मा-
त्स्वदेशरागेण हि याति खेदम्।
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः
क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति ॥१३५॥

पुनराहेति। Vocabulary : गति—course. राग—प्रेम, love. खेद—कष्ट, distress. क्षार—saline. कापुरुष—मूर्ख लोग, silly people.

Prose Order : यस्य सर्वत्र गतिः अस्ति स कस्मात् स्वदेशरागेण खेदं याति? अयं तातस्य कूपः इति ब्रुवाणाः कापुरुषाः क्षारं जलं पिबन्ति।

व्याख्या—यस्य नरस्य। सर्वत्र सर्वस्मिन् देशे। गतिः गमनसामर्थ्यं जीवन-भृतिसाधनार्जनक्षमत्वं च। अस्ति विद्यते। सः नरः। कस्माद् हेतोः। स्वदेश रागेण स्वदेशप्रेम्णा। खेदं दुःखं पीडां वा। याति सहते। अयं तातस्य पितुः। कूपः। इति एवं प्रकारेण। ब्रुवाणाः भाषमाणाः। कापुरुषाः क्षुद्रजनाः। क्षारं लवणास्वादयुक्तम्। जलम्। पिबन्ति।

फिर कहा—

जिसकी सभी स्थानों में गति अक्षुण्ण है, वह क्योंकर अपने देशानुराग से कष्ट पाता है। यह कुआँ हमारे पिता ने बनवाया था, ऐसा कहते हुए नीच पुरुष (उसका) खारा जल पीते हैं।

ततो राजा कृतामवज्ञां नमसि विदित्वा कालिदासो दुर्मना निजवेश्म ययौ।

अवज्ञास्फुटितं प्रेम समीकर्त्तुं क ईश्वरः।
सन्धिं न याति स्फुटितं लाक्षालेपेन मौक्तिकम् ॥१३६॥

तत इति। **Vocabulary** : अवज्ञा—अपमान, humiliation. विदित्वा—जानकर, realizing. दुर्मनाः—खिन्नमन, disguested. वेश्म—गृह, place of residence. स्फुटित—खंडित, shattered. समीकर्त्तुम्—मिलाने के लिए, to repair. स्फुटित—फूटा हुआ, broken. मौक्तिक—मोती, a pearl. लाक्षा—lac. लेप—plaster. सन्धिं न याति—cannot be joined.

Prose Order : अवज्ञास्फुटितं प्रेम समीकर्त्तुं कः ईश्वरः ? स्फुटितं मौक्तिकं लाक्षालेपेन सन्धिं न याति ?

व्याख्या—अवज्ञास्फुटितम् अवज्ञया अपमानेन स्फुटितं भिन्नम्। प्रेम अनुरागम्। समीकर्त्तुं सन्धातुं क ईश्वरः कः प्रभुः, न कोऽपीति भावः। स्फुटितं खण्डितम्। मौक्तिकम् मुक्ताफलम्। लाक्षालेपेन लाक्षाया लेपः (ष० तत्पु०), तेन। सन्धिं सन्धानम्। न याति न गच्छति। तथा चोक्तम्—

सुहृद् दुष्टं हि यो मित्रं पुनः सन्धातुमिच्छति।
स विनाशमवाप्नोति गर्भमश्वतरी यथा॥

तब राजकृत अपमान को हृदय में रखकर कालिदास उदास होकर अपने घर को चले गये।

अपमान से खंडित प्रेम को गाँठने की किसे शक्ति है? खण्डित मोती लाख के लेप से सन्धित नहीं किया जा सकता।

ततो राजापि खिन्नः स्थितः। ततो लीलावती खिन्नं दृष्ट्वा राजानं विषादकारणमपृच्छत्। राजा च रहसि सर्वं तस्यै प्राह। सा च राजमुखेन कालिदासावज्ञां ज्ञात्वा पुनः प्राह—देव प्राणनाथ, सर्वज्ञोऽसि।

स्नेहो हि वरमघटितो न वरं संजातविघटितस्नेहः।
हृतनयनो हि विषादी न विषादी भवति जात्यन्धः॥१३७॥

ततो राजापीति। **Vocabulary** : खिन्न—व्यथित, distressed. विषाद—दुःख, grief. रहस्—एकान्त, privacy. सर्वज्ञ—omniscient.

अघटित—अप्रसन्न, that which has not happened or

occurred. हृतनयन—जिसकी आँखें नष्ट हो गई हों, one who has lost his sight. विषादिन्—दुःखी, distressed.

Prose Order : अघटितः स्नेहः हि वरम्, सञ्जातविघटितस्नेहः न वरम्, हृतनयनः हि विषादी, जात्यन्धः विषादी न ।

व्याख्या—अघटितः न घटितः (नञ् तत्पु०) असम्पन्नः । स्नेहः प्रेम । वरम् इष्टः । सञ्जातविघटितस्नेहः—सञ्जातः (सम्पन्नः) विघटितः (विश्लिष्टश्च) असौ स्नेहः (कर्म०), न वरम् । हृतनयनः—हृते (नष्टे) नयने (लोचने) यस्य (बहु०) सः, हृतदृष्टिः । विषादी शोकाकुलः यथा भवति तथा खलु जात्यन्धो जन्मनः अन्धः विषादी शोकाकुलः न भवति ।

दूयते न तथा जात्यन्धः ।

तब राजा भी खिन्न हुए ।

तब लीलावती ने राजा को खिन्न देख शोक का कारण पूछा । राजा ने एकान्त में उसे सब कुछ कहा और वह राजा से कालिदास के अपमानित होने की बात सुन बोली—देव प्राणेश्वर ! आप सब कुछ जानते हो ।

प्रेम न होना ही भला । किन्तु प्रेम होने के बाद प्रेम का भङ्ग होना उचित नहीं । जन्म से अन्धे को वैसा शोक नहीं होता जैसा कि नेत्रयुक्त मनुष्य को नेत्रहीन होने पर ।

परं कालिदासः कोऽपि भारत्याः पुरुषावतारः । तत्सर्वभावेन संमानयैनं विद्वद्भ्यः । पश्य—

दोषाकरोऽपि कुटिलोऽपि कलङ्कितोऽपि
मित्रावसानसमये विहितोदयोऽपि ।
चन्द्रस्तथापि हरवल्लभतामुपैति
नैवाश्रितेषु गुणदोषविचारणा स्यात् ।।१३८।।

परं त्विति । **Vocabulary** : भारती—सरस्वती, Goddess of learning. पुरुषावतारः—पुरुषरूपी अवतार, descended in a male form. दोषाकर—चन्द्रमा, the moon, or a mine of fault. (दोषा—night, or दोषाणाम् आकरः) । कुटिल—curved

in form or crooked. कलङ्कि:—कलङ्कयुक्त अथवा निंदित, **spotted or defamed.** मित्र—सूर्य, **the sun or a friend** अवसान—अस्त अथवा अवनति, **disappearance or fall.** उदय—प्रकट होना अथवा उन्नत होना, **rise.** हर—शिव। वल्लभता—**favour.** आश्रित—सेवक, **dependent.** गुण—**merit.** दोष—**demerit** विचारणा—**discrimination.**

Prose Order : दोषाकरः अपि, कुटिलः अपि, कलङ्कितः अपि, मित्रावसानसमये विहितोदयः अपि चन्द्रः तथा अपि हरवल्लभताम् उपेति, आश्रितेषु गुणदोषविचारणा नैव स्यात्।

व्याख्या—दोषाकरः दोषाणाम् आकरः (ष० तत्पु०), दोषसमूहयुक्तोऽपि, कुटिलोऽपि कुटिलचारित्रोऽपि, कलङ्कितोऽपि दूषितोऽपि, मित्रावसानसमये—मित्रस्य सुहृदः अवसानम् अन्तः तस्य समये काले स्वसुहृदोऽवनतिकाले, विहितोदयोऽपि, चन्द्रः सुधाकरः, हरवल्लभतां शिवप्रियताम् उपेति गच्छति, आश्रितेषु सेवकभावमुपगतेषु, गुणदोषविचारणा गुणागुणविवेकः नैव स्यात् नैव जायते। दोषाकर इत्यादीनाम् अपरः परिहारार्थोऽपि।

दोषाकरः—दोषा रात्रि, तस्याः करः निशाकरः। कुटिलः—अष्टम्यादौ कुटिलाकारवान्, कलङ्कितः कलङ्केन युक्तः, मित्रावसानसमये—मित्रस्य सूर्यस्य अवसानम् अस्तमनम् तस्य समये काले। विहितोदयः विहितः जनित उदयो यस्य सः।

किन्तु कालिदास सरस्वती के एक अपूर्व अवतार हैं। अतः सब प्रकार से उसे अन्य विद्वानों की अपेक्षा अधिक सम्मान दो।

देखिए—

दोषों की खदान, कुटिल तथा दूषित और मित्र के विनाश पर उदय होनेवाला चन्द्रमा भी शिव को प्रिय है। आश्रितों के गुणों तथा दोषों का विचार नहीं करना चाहिए। (चन्द्रमा के पक्ष में—निशाकर, वक्र, कलंक से चिह्नित तथा सूर्य के अस्त होने पर उदय को प्राप्त चन्द्रमा भी शिव को प्रिय है।)

राजा 'प्रिये, सर्वमेतत्सत्यमेव' इत्यङ्गीकृत्य 'श्वः कालिदासं प्रातरेव संतोषयिष्यामि' इत्यवोचत् ।

अन्येद्यू राजा दन्तधावनादिविधिं विधाय निर्वर्तितनित्यकृत्यः सभां प्राप। पण्डिताः कवयश्च गायका अन्ये प्रकृतयश्च सर्वे समाजग्मुः। कालिदासमेकमनागतं वीक्ष्य राजा स्वसेवकमेकं तदाकारणाय वेश्यागृहं प्रेषयामास। स च गत्वा कालिदासं नत्वा प्राह—'कवीन्द्र, त्वामाकारयति भोजनरेन्द्रः' इति। ततः कविर्व्यचिन्तयत्—'गतेऽह्नि नृपेणावमानितोऽहमद्य प्रातरेवाकारणे किं कारणमिति ।

यं यं नृपोऽनुरागेण सम्मानयति संसदि ।
तस्य तस्योत्सारणाय यतन्ते राजवल्लभाः ॥१३६॥

राजेति । **Vocabulary** : अङ्गीकृत्य—स्वीकार कर, having accepted. श्वः—कल, to-morrow. सन्तोषयिष्यामि—प्रसन्न करूँगा, I shall satisfy. अन्येद्युः, दूसरे दिन, next morning. दन्तधावन–tooth-washing निर्वर्त्तित—समाप्त, finished. नित्यकृत्य—दैनिक कार्य-कलाप, daily rite. प्रकृति—प्रजा । आकारण—आह्वान, a call सम्मानयति—सम्मान करता है, respects. संसदि—सभा में, in the assembly. उत्सारण—उखाड़ना, down fall.

Prose Order : नृपः अनुरागेण यं यं संसदि सम्मानयति राजवल्लभाः तस्य तस्य उत्सारणाय यतन्ते ।

व्याख्या—नृपः राजा । अनुरागेण प्रेम्णा । यं यं कविं विद्वांसञ्च । संसदि राजसभायाम् । सम्मानयति पुरस्कुरुते । राजवल्लभाः राज्ञः वल्लभाः नृपप्रियाः । तस्य तस्य कवेः विदुषश्च उत्सारणाय समुन्मूलनाय अवनत्यै च यतन्ते चेष्टन्ते ।

राजा ने कहा—कल कालिदास को प्रातःकाल ही सन्तुष्ट करूँगा। दूसरे दिन राजा ने दन्तधावन आदि दैनिक क्रिया को निपटाया। फिर सभा में गया। पण्डित, कवि, गायक तथा प्रजा के अन्य लोग सभी आये। जब राजाने देखा कि कालिदास नहीं आया है, तो उसने अपने एक सेवक को उसे बुलाने के लिए वेश्या के घर भेजा और वह जाकर प्रणाम करके कालिदास

से बोला—कविराज ! आपको भोज नरेश बुलाते हैं : तब कवि ने सोचा—कल तो राजा ने मेरा अपमान किया था, आज प्रातः ही मुझे क्यों बुलाते हैं।

राजा जिस व्यक्ति को सभा में प्रेमपूर्वक सम्मान देता है उसी व्यक्ति को हटाने के लिए राजप्रिय लोग यत्न करते हैं।

किंतु विशेषतो राज्ञान्वहं मान्यमाने मयि मायाविनो मत्सराद्वैरं बोधयन्ति।

अविवेकमतिर्नृपतिर्मन्त्री गुणवत्सु वक्रितग्रीवः।
यत्र खलाश्च प्रबलास्तत्र कथं सज्जनावसरः ॥१४०॥

किन्त्विति । Vocabulary : अन्वहम्—प्रतिदिन, every day. मान्यमान—सम्मानित, respected. मायाविन्—कपटी, the deceivers. मत्सर—ईर्ष्या, jealousy. वैर—शत्रुता, enmity. बोधयन्ति—उत्पन्न करते हैं, create.

अविवेक—want of discrimination. वक्रित—वक्रीकृत, i. e. averse. वक्रितग्रीव—पराङ्मुख, one who has turned a deaf ear to. अवसर—opportunity.

Prose Order : यत्र अविवेकमतिः नृपतिः, गुणवत्सु मन्त्रिषु वक्रितग्रीवः, खलाः च प्रबलाः, तत्र सज्जनावसरः कथम् ?

व्याख्या—यत्र सभायाम् । अविवेकमतिः—न विवेकः अविवेकः (नञ् तत्पु०), अविवेकेन युक्ता मतिर्यस्य (मध्यमपदलोपि बहु०) सः, गुणदोषविचाररहीनः । नृपतिः—भूपतिः । गुणवत्सु—गुणिषु । मन्त्रिषु—सचिवेषु ॥ वक्रितग्रीवः वक्रिता ग्रीवा येन (बहु०) सः, पराङ्मुखः । खलाः—दुष्टाः ॥ प्रबलाः । प्रकर्षेण बलयुक्ताः । तत्र सभायाम् । सज्जनावसरः—सज्जनस्य साधोः अवसरः अवकाशः । कथम्, नैवास्तीति भावः ।

इति विचारयन्सभामागच्छन् । ततो दूरे समायान्तं वीक्ष्य सानन्दमासनादुत्थाय 'सुकवे, मत्प्रियतम, अद्य कथं विलम्बः क्रियते' इति भाषमाणः पञ्चषट्पदानि संमुखो गच्छति । ततो निखिलापि सभा स्वासनादुत्थिता । सर्वे सभासदश्च चमत्कृताः । वैरिणश्चास्य विच्छायवदना बभूवुः । ततो राजा निजकरकमलेनास्य करकमलमवलम्ब्य स्वासनदेशं प्राप्य तं च सिंहासनमुपवेश्य

स्वयं च तदाज्ञया तत्रैवोपविष्टः । ततो राजसिंहासनारूढे कालिदासे बाणकविर्दक्षिणं बाहुमुद्धृत्य प्राह—

भोजः कलाविद्रुद्रो वा कालिदासस्य माननात् ।
विबुधेषु कृतो राजा येन दोषाकरोऽप्यसौ ।।१४१।।

इति विचारयन्निति । **Vocabulary** : वीक्ष्य—देखकर, on seeing. विच्छायवदन—मलिन मुख, disappointed. कलावित्—कलाओं का ज्ञाता, versed in art. अथवा चन्द्रमा से युक्त । मानन—सम्मान देना । विबुध—विद्वान्, the learned, अथवा देवता, the gods. दोषाकर—चन्द्रमा, the moon, अथवा दोषों की खान, the mine of faults.

Prose Order : कालिदासस्य माननात् भोजः कलावित्, रुद्रो, वा (कलावित्), येन असौ दोषाकरः अपि विबुधेषु राजा कृतः ।

व्याख्या—कालिदासस्य कवेः । माननात् आदरक्रियया । भोजः भोजराजः । कलावित् कलानिपुण इति गण्यते । रुद्रः शिवो वा कलाविद् गण्यते । येन भोजराजेन । दोषाकरः वेश्यालम्पटत्वाद् दोषाणाम् आकरः अपि कालिदासः । विबुधेषु विद्वत्सु । राजा अग्रगण्यः । कृतः । अथवा, येन रुद्रेण । दोषाकरः निशाकरः चन्द्रः । विबुधेषु । राजा नृपतिः । कृतः । अत्र शब्दालङ्कारेण वैचित्र्यम् ।

ऐसा सोचते-सोचते सभा में आया ।

तब कालिदास को दूर से आते देखकर आनन्दपूर्वक आसन से उठकर राजा ने कहा—कविश्रेष्ठ प्रिय ! आज तूने विलम्ब क्योंकर किया ? ऐसा कहकर पाँच-छह पग आगे चला। तब सभी सभिक आसनों पर खड़े हो गये। सभी को आश्चर्य हुआ। शत्रुओं के मुख मुरझा गये। तब राजा अपने कर-कमल में उसका कर-कमल लेकर अपने आसन-स्थान को जाकर और उसे सिंहासन पर बिठाकर स्वयं भी उसकी आज्ञा से वहीं बैठ गया। जब कालिदास राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए तब बाणकवि दाहिनी भजा को उठाकर बोले—

कालिदास को सम्मान देने से भोज अथवा (चन्द्रमा को मस्तक पर आश्रय देने से रुद्र) कलावित् हैं (=कलावित्—काव्यकला अथवा चन्द्रकला के ज्ञाता), जिसने दोष की खान कालिदास को विद्वानों में तथा निशाचर चन्द्रमा को देवों में राजा बना दिया है।

ततोऽस्य विशेषेण विद्वद्भिः सह वैरानलः प्रदीप्तः।

ततः कैश्चिद् बुद्धिमद्भिर्मन्त्रयित्वा सर्वैरपि विद्वद्भिर्भोजस्य ताम्बूलवाहिनी दासी धनकनकादिना संमानिता। ते च तां प्रत्युपायमूचुः—'सुभगे, अस्मत्कीर्तिमसौ कालिदासो गलयति। अस्मासु कोऽपि नैतेन कलासाम्यं प्रवहते। वत्से, यथैनं राजा देशान्तरं निःसारयति तद्भूक्त्या कर्तव्यम्' इति। दासी प्राह—'भवद्भ्यो हारं प्राप्य मया युष्मत्कार्यं क्रियते। तन्मम प्रथमं हारो दातव्यः' इति। ततः सा ताम्बूलवाहिनी तैर्दत्तं हारमादाय व्यचिन्तयत्। तथा हि—'बुधैरसाध्यं किं वास्ति' ततः समतिक्रामत्सु कतिपयवासरेषु दैवादेकाकिनि प्रसुप्ते राजनि चरणसंवाहनादिसेवामस्य विधाय तत्रैव कपटेन नेत्रे निमील्य सुप्ता। ततश्चरणचलनेन राजानमीषज्जागरूकं सम्यग्ज्ञात्वा प्राह—'सखि मदनमालिनि, स दुरात्मा कालिदासो दासीवेषेणान्तःपुरं प्राप्य लीलादेव्या सह रमते।' राजा तच्छ्रुत्वोत्थाय प्राह—'तरङ्गवति, किं जागर्षि' इति। सा च निद्राव्याकुलेव न शृणोति। राजा च तस्या अपध्वनिं श्रुत्वा व्यचिन्तयत्—'इयं तरङ्गवती निद्रायां स्वप्नवशंगता वासनावशाद्देव्या दुश्चरितं प्राह। स च स्त्रीवेषेणान्तःपुरमागच्छतीत्येतदपि संभाव्यते। को नाम स्त्रीचरितं वेद' इति। ततश्चेत्थं विचार्य राजा परेद्युः प्रातरात्मनि कृत्रिमज्वरं विधाय शयानः कालिदासं दासीमुखेनानाय्य तदागमनानन्तरं तथैव लीलादेवीं चानाय्य देवीं प्रत्यवदत्—'प्रिये, इदानीमेव मया पथ्यं भोक्तव्यम्' इति। इत्युक्ते सापि 'तथैव' इति पथ्यं गृहीत्वा राज्ञे रजतपात्रे दत्त्वा तत्र तमुद्गदालीं प्रत्यवेषयत्। ततो राजापि तयोरभिप्रायं जिज्ञासमानः श्लोकार्धं प्राह—

ततोऽस्येति। **Vocabulary**: वैरानल—वैराग्नि, fire of enmity. प्रदीप्त—संधुक्षित, blazed. मन्त्रयित्वा—मन्त्रणा करके, having counselled. ताम्बूलवाहिनी—betel-bearer. कनक—

सुवर्ण, gold. गलयति—विनाश कर रहा है—is undoing. ईषत्—किञ्चित्, somewhat. जागरूक—जागता हुआ, awakened. वासना—संस्करण, impression. दुश्चरित—दुष्ट चरित्र, bad character. कृत्रिम—कपट, pretended. मुद्ग दाली—मूँग की दाल, the bean—grain. प्रत्यवेषयत्—परोसा, served.

तब कालिदास का विद्वानों से वैर विशेष रूप से भभक उठा—

तब कुछ विद्वानों से मंत्रणा करके सभी विद्वानों ने भोज की ताम्बूलवाहिनी दासी को धन, सुवर्ण आदि से सम्मानित किया। उन्होंने उसे उपाय बताया। सुन्दरी! हमारे यश को कालिदास नष्ट कर रहा है। हममें से कोई भी कला में इसकी समता नहीं रखता। प्रिये! ऐसा प्रकार निकालो, जिससे राजा इसे अपने देश से निकाल दे। दासी ने कहा—मैं आपसे एक हार लेकर आपका यह कार्य करूँगी। अतः पहले मुझे हार दीजिए। तब उस ताम्बूल-वाहिनी दासी ने उनसे हार लेकर सोचा—बुद्धिमान् व्यक्ति के लिए क्या असाध्य है?

तब कुछ दिनों के अनन्तर अकस्मात् जब राजा अकेला सोया पड़ा था, तब वह दासी उसके पाँव दाब वहीं कपट से आँखें बन्द करके सो गई। तब पाँव हिलाने से राजा को कुछ जागता-सा जानकर बोली—सखी मदन-मालिनी! वह दुरात्मा कालिदास दासी के वेष में आकर लीलादेवी के साथ रमण करता है। राजा ने यह सुना और बैठकर कहा—तरङ्गवती! क्या जाग रही हो? उसने सुना और अनसुना कर निद्रा से व्याकुल-सा अपने को प्रकट किया। राजा ने उसका गुनगुनाना सुनकर मन में सोचा—यह तरङ्गवती नींद के वश में है। संस्कार के प्रभाव से देवी के दुश्चरित्र के सम्बन्ध में बोली है। सम्भव है कि वह कालिदास स्त्री के वेष में अन्तःपुर में आता हो। स्त्री के चरित्र को कौन जानता है? तब इस प्रकार सोचकर राजा दूसरे दिन प्रातःकाल ज्वर का ढोंग बनाकर शय्या पर लेट गया। दासी को सन्देश देकर कालिदास को बुलवाया। उसके आने के बाद उसी दासी के द्वारा लीलादेवी को भी बुलवाया और उससे कहा—प्रिये! अभी मुझे पथ्य लेना है।

'हाँ' कहकर वह पथ्य लाई। चाँदी के बरतन में मूँग की दाल परोस दी। तब राजा ने उन दोनों के अभिप्राय को जानने की इच्छा से आधा श्लोक पढ़ा।

मुद्गदाली गदव्याली कवीन्द्र वितुषा कथम् ।

इति । ततः कालिदासो देव्यां समीपवर्त्तिन्यामप्युत्तरार्धं प्राह—

अन्धोवल्लभसंयोगे जाता विगतकञ्चुकी ॥१४२॥

मुद्गदालीति । **Vocabulary** : मुद्गदाली—मूँग की दाल, the bean-grain. गदव्याली—रोग-नाश के लिए नागिन, which serves as an antidote (lit. a female-snake) for the disease. वितुषा—छिलकों से रहित, without husks. अन्धस्—अन्न । विगत-कञ्चुकी—कञ्चुक-रहित, naked.

Prose Order : कवीन्द्र ! मुद्गदाली गदव्याली वितुषा कथं जाता ? अन्धोवल्लभसंयोगे विगतकञ्चुकी जाता ।

व्याख्या—कवीन्द्र कविषु कवीनां वा इन्द्रः कवीन्द्रः तत्सम्बुद्धौ । मुद्गदाली—मुद्गस्य दाली (ष० तत्पु०) । गदव्याली—गदाय रोगाय व्याली सर्पिणी, रोगप्रणाशकारणभूता । वितुषा—तुषरहिता । कथम् इति प्रश्नः ? तदुत्तरमाह—अन्धोवल्लभसंयोगे—अन्धः अन्नम् स एव वल्लभः (कर्म०), तस्य संयोगः (ष० तत्पु०), तस्मिन्, अन्नरूपपतिसमागमे । विगतकञ्चुकी—विगतं कञ्चुकं यस्याः सा, वसनशून्या नग्नेति यावत् । संजाता ।

देवी के समीप रहने पर भी कालिदास ने श्लोक का उत्तरार्ध (इस प्रकार) कहा—अपने भोजन-रूपी प्रिय के संयोग में यह नग्न हो गई है ।

देवी तच्छ्रुत्वा परिज्ञातार्थस्वरूपा सरस्वतीव तदर्थं विदित्वा स्मेरमुखी मनागिव बभूव । राजाप्येतद्दृष्ट्वा विचारयामास—'इयं पुरा कालिदासे स्निह्यति । अनेनं तस्यां समीपवर्त्तिन्यामपीत्थमभ्यधायि । इयं च स्मेरमुखी बभूव । स्त्रीणां चरित्रं को वेद ।

अश्वप्लुतं वासवगर्जितं च
स्त्रीणां च चित्तं पुरुषस्य भाग्यम् ।

अवर्षणं चाप्यतिवर्षणं च
देवो न जानाति कुतो मनुष्यः ॥१४३॥

देवीति । **Vocabulary** : परिज्ञात—विदित, understood. स्मेरमुखी—हँसमुखी, of smiling face. मनाक्—कुछ, a little. अभ्यधायि—कहा, said.

अश्वप्लुत—घोड़े का कूदना, the gallop of a horse. वासवगर्जित—मेघ का गर्जन, the thunder of a cloud. अवर्षण—the want of rain. अतिवर्षण—the excess of rain.

Prose Order : अश्वप्लुतं, वासवगर्जितं, स्त्रीणां च चित्तम्, पुरुषस्य भाग्यम्, अवर्षणम् च, अतिवर्षणम् च, देवः न जानाति, मनुष्यः कुतः ?

व्याख्या—अश्वप्लुतम् अश्वस्य प्लुतम् (ष० तत्पु०) अश्वप्लुतम् वासवगर्जितम्—वासवस्य गर्जितम् (ष० तत्पु०) वासवगर्जितम् । स्त्रीणां नारीणाम् । चित्तम्—मनः । पुरुषस्य भाग्यम् । अवर्षणम्—वर्षाभावः तम् । अतिवर्षणम्—वर्षातिरेकः, तम् । देवो न जानाति, मनुष्यः कुतः ।

देवी ने वह पद्य सुना । अर्थज्ञात्री वाग्देवी के समान उसके अभिप्राय को समझा और मुस्कराया । राजा ने भी यह देखकर सोचा—इसका कालिदास से पहले से ही प्रेम है : देवी की उपस्थिति में भी इसने ऐसा कहा है और यह भी हँसी है । कौन जाने स्त्रियों के चरित्र को ?

घोड़े की चाल, मेघ का गर्जन, स्त्रियों का मन और पुरुष का भाग्य तथा अतिवृष्टि और अनावृष्टि—इन्हें दैव भी नहीं जानता, मनुष्य का क्या कहना ?

किंत्वयं ब्राह्मणो दारुणापराधित्वेऽपि न हन्तव्य इति विशेषेण सरस्वत्याः पुरुषावतारः, इति विचार्य कालिदासं प्राह—'कवे, सर्वथास्मद्देशे न स्थातव्यम् । किं बहुनोक्तेन । प्रतिवाक्यं किमपि न वक्तव्यम् ।' ततः कालिदासोऽपि वेगेनोत्थाय वेश्यागृहमेत्य तां प्रत्याह—'प्रिये, अनुज्ञां देहि । मयि भोजः कुपितः स्वदेशे न स्थातव्यमित्युवाच । अहह !

अघटितघटितं घटयति सुघटितघटितानि दुर्घटीकुरुते ।
विधिरेव तानि घटयति यानि पुमान्नैव चिन्तयति ॥१४४॥

किं स्वयमिति **Vocabulary** : प्रतिवाक्य—उत्तर, reply. अनुज्ञा—permission. अघटित—अनहोनी, undevised. घटित—घटनाएँ, plans. घटयति—सम्पन्न करता है, sets about. दुर्घटी-कुरुते—नष्ट कर देता है, upsets.

Prose Order : अघटित घटितानि घटियति, घटितघटितानि दुर्घटी-कुरुते, यानि पुमान् नैव चिन्तयति तानि विधिः एव घटयति ।

व्याख्या—अघटितघटितानि—अघटितानि च तानि घटितानि असम्पन्न-कार्याणि । घटयति—निष्पादयति । घटितघटितानि—निष्पन्नकार्याणि । दुर्घटी-कुरुते—घातयति । यानि कार्याणि पुमान् पुरुषः नैव चिन्तयति बुद्धिगोचरीकरोति तानि कार्याणि विधिरेव भाग्यमेव घटयति निष्पादयति ।

किन्तु घोर अपराध होने पर भी ब्राह्मण होने के नाते इसका वध उचित नहीं, जबकि यह पुरुष-रूप में सरस्वती का अवतार है । यह सोचकर राजा भोज बोले—कवि ! किसी प्रकार से भी हमारे देश में न रहना । अधिक कहने से क्या लाभ ? इसका उत्तर अपेक्षित नहीं । तब कालिदास भी सहसा उठकर वेश्या के घर पहुँचे और उसे कहने लगे—प्रिये ! आज्ञा दो । भोज मुझपर कुपित हो गये हैं और उन्होंने आज्ञा दी है कि हमारे देश में न रहना ।

दैव ही अघटित घटनाओं को परिणत करता है और घटित घटनाओं को वियोजित करता है । जिन बातों को मनुष्य कभी ध्यान में नहीं लाता, उन्हें दैव ही सम्पन्न करता है ।

किं च किमपि विद्वद्वृन्दचेष्टितमेवेति प्रतिभाति । तथा हि ।

बहूनामल्पसाराणां समवायो दुरत्ययः ।
तृणैर्विधीयते रज्जुर्बध्यन्ते तेन दन्तिनः ॥१४५॥

किञ्चेति । **Vocabulary** : अल्पसार—of little strength. समवाय—संगठन, union. दुरत्यय—दृढ़, hard to overcome. रज्जु—रस्सी, rope. बध्यन्ते—बाँधे जाते हैं, are tied.

Prose Order : बहूनाम् अल्पसाराणां समवायः दुरत्ययः । तृणैः रज्जुः विधीयते, तेन दन्तिनः बध्यन्ते ।

व्याख्या—अल्पसाराणाम्—अल्पः सारः बलं येषाम्। (बहु०) ते अल्पसाराः तेषाम् । बहूनाम् । समवायः सङ्घः । दुरत्ययः दुरतिक्रमः । तृणैः रज्जुः विधीयते क्रियते, तेन रज्जुना दन्तिनः गजाः बध्यन्ते ।

इसमें कुछ विद्वानों का ही हाथ दीखता है; क्योंकि स्वल्प शक्ति रखती हुई भी वस्तुएँ यदि बहुत संख्या में आ मिलें तो उनका गठबन्धन अटूट हो जाता है। तिनकों की रस्सी बनती है, उससे हाथी बाँधे जाते हैं।

ततो विलासवती नाम वेश्या तं प्राह—

तदेवास्य परं मित्रं यत्र संक्रामति द्वयम् ।
दृष्टे सुखं च दुःखं च प्रतिच्छायेव दर्पणे ॥१४६॥

तत इति । **Vocabulary** : सङ्क्रामति—सङ्क्रान्त हो जाता है, is reflected or transferred. प्रतिच्छाया—प्रतिबिम्ब, reflection, दर्पण—mirror.

Prose Order : तद् एव अस्य परं मित्रं यत्र दृष्टे दर्पणे प्रतिच्छायेव सुखं च दुःखं च द्वयं सङ्क्रामति ।

व्याख्या—तदेव नान्यत् । अस्य । परम उत्कृष्टम् । मित्रं सुहृत् यत्र यस्मिन् । दृष्टे विलोकिते सति । दर्पणे मुकुरे । प्रतिच्छायेव प्रतिबिम्ब इव सुखं च दुःखं च । द्वयम् उभयम् । सङ्क्रामति सङ्क्रान्तं भवति ।

तब विलासवती वेश्या ने कालिदास से कहा—

वही परम मित्र होता है, जिसके दर्शनमात्र से अपना सुख और दुःख दोनों, दर्पण में प्रतिबिम्ब के समान, उसमें संक्रान्त हो जाते हैं ।

दयित, मयि विद्यमानायां किं ते राज्ञा, किं वा राजदत्तेन वित्तेन कार्यम् । सुखेन निःशङ्कं तिष्ठ मद्गृहान्तः कुहरे' इति। ततः कालिदासस्तत्रैव वसन्कतिपयदिनानि गमयामास ।

ततः कालिदासे गृहान्निर्गते राजानं लीलादेवी प्राह—'देव, कालिदास-

कविना साकं नितान्तं निबिडतमा मैत्री । तदिदानीमनुचितं कस्माकृतं यस्य देशेऽप्यवस्थानं निषिद्धम् ।

इक्षोरग्रात्क्रमशः पर्वणि पर्वणि यथा रसविशेषः ।
तद्वत्सज्जनमैत्री विपरीतानां च विपरीता ।।१४७।।

दयिते इति । **Vocabulary :** विद्यमानायाम्––रहते हुए । अन्तःकुहर—भूमिगृह, **underground.** निबिडतम––घनिष्ठ, **fast.** इक्षु—गन्ना, **sugarcane.** पर्वन्—गाँरी, **joint.**

Prose Order : यथा इक्षोः अग्रात् क्रमशः पर्वणि पर्वणि रसविशेषः, तद्वत् सज्जनमैत्री, विपरीतानां च विपरीता ।

व्याख्या––यथा इक्षोः । अग्राद् अग्रभागात् । क्रमशः क्रमेण । पर्वणि पर्वणि प्रतिपर्व । रसविशेषः विशिष्टो रसः । अनुभूयते । सज्जनमैत्री सज्जनस्य सौहृदम् । तद्वत् तथैव, उत्तरोत्तरक्रमेण वर्धते । विपरीतानां दुर्जनानाम् । मैत्री । विपरीता उत्तरोत्तरक्रमेण क्षीयते ।

प्रिय! जब मैं सेवा में उपस्थित हूँ तब राजा अथवा राजा से प्राप्त धन से क्या लाभ? सुखपूर्वक निश्शंक होकर मेरे घर की भीतरी गुफा में रहो। तब कालिदास ने वहीं रहकर कुछ दिन व्यतीत किये ।

तब घर से कालिदास के चले जाने पर लीला देवी ने राजा से कहा–– देव! कालिदास से आपकी घनिष्ठ मैत्री थी । तब आपने इसे देश में रहने को भी निषेध करके यह अनुचित काम क्यों किया ?

जैसे ईख के ऊपरी भाग से नीचे की ओर गठान-गठान में क्रमशः रस बढ़ता जाता है, सज्जनों की मैत्री भी उसी प्रकार प्रतिदिन बढ़ती जाती है। दुर्जनों की मैत्री का क्रम इससे भिन्न होता है (अर्थात् जैसे ईख के मूलभाग से ऊपर की ओर प्रतिजोड़ में क्रमशः रस कम होता जाता है, दुर्जनों की मैत्री भी उसी प्रकार प्रतिदिन घटती जाती है ।)

शोकारातिपरित्राणं प्रीतिविस्रम्भभाजनम् ।
केन रत्नमिदं सृष्टं मित्रमित्यक्षरद्वयम् ।।१४८।।

शोकारातीति । **Vocabulary** : अराति—शत्रु, **enemy,** परित्राण—

रक्षक, a saviour विस्रम्भ—विश्वास, confidence. भाजन—पात्र, object.

Prose Order : शोकारातिपरित्राणं प्रीतिविस्रम्भभाजनं मित्रम् इति इदम् अक्षरद्वयं रत्नं केन सृष्टम् ?

व्याख्या—शोकारातिपरित्राणम्—शोक एव अरातिः (कर्म०), शोकारातिः—शोकारिः, शोकारातिः परित्राणम् (ष० तत्पु०), शोकशत्रोः परिरक्षकम्। प्रीतिविस्रम्भभाजनम्—प्रीतिश्च विस्रम्भश्चेति प्रीतिविस्रम्भौ (द्वन्द्व), प्रीतिविस्रम्भयोः भाजनम् (ष० तत्पु०), प्रीतिविश्वासपात्रम् । मित्रं सुहृद् । इतीदम् अक्षरद्वयं वर्णद्वयम् । रत्नं मणिमयम् । केन । सृष्टं रचितम् ?

शोकरूपी शत्रु से रक्षा करनेवाला, प्रेम और विश्वास का पात्र दो अक्षरों से निर्मित यह 'मित्र'रत्न किसने रचा है ?

राजाप्येतल्लीलादेवीवचनमाकर्ण्य प्राह—'देवि, केनापि ममेत्यभिधायि यत्कालिदासो दासीवेषेणान्तःपुरमासाद्य देव्या सह रमते' इति। मया वै तद्व्यापारजिज्ञासया कपटज्वरेणायं भवती च वीक्षितौ। ततः समीपवर्त्तिन्यामपि त्वय्युत्तरार्धमित्थं प्राह। तच्चाकर्ण्य त्वयापि कृतो हासः। ततश्च सर्वमेतद् दृष्ट्वा ब्राह्मणहननभीरुणा मया देशान्निःसारितः। त्वां च न दाक्षिण्येन हन्मि' इति। ततो हासपरा देवी चमत्कृता प्राह—'निःशङ्कं देव, अहमेव धन्या यस्यास्त्वं पतिरीदृशः। यत्त्वया भुक्तशीलाया मम मनः कथमन्यत्र गच्छति। यतः सर्वकामिनीभिरपि कान्तोपभोगे स्मर्तव्योऽसि। अहह देव, त्वं यदि मां सतीमसतीं वा कृत्वा गमिष्यसि, तर्ह्यहं सर्वथा मरिष्ये' इति। ततो राजापि 'प्रिये, सत्यं वदसि' इति। ततः सा भूपतिः पुरुषै रहिमानयामास। तप्तं लोहगोलकं कारयामास। धनुश्च सज्जं चक्रे। ततो देवी स्नाता निजपातिव्रत्यानलेन देदीप्यमाना सुकुमारगात्री सूर्यमवलोक्य प्राह—'जगच्चक्षुस्त्वं सर्वसाक्षी सर्वं वेत्सि।

जाग्रति स्वप्नकाले च सुषुप्तौ यदि मे पतिः।
भोज एव परं नान्यो मच्चित्ते भावितोऽस्ति नु ॥१४६॥

राजापीति । **Vocabulary** : जिज्ञासा—जानने की इच्छा, a desire to ascertion. कपटज्वर— pretension of fever. दाक्षिण्य—शिष्टाचार, courtesy. अहि—साँप, a snake. पातिव्रत्य—पतिव्रता धर्म, chastity. देदीप्यमान—अतिशय से दीप्त, excessively bright.

जाग्रत्—जाग्रदवस्था, the state of wakefulness. स्वप्नकाल—the state of dream. सुषुप्ति—the state of sound sleep. भावित—manifested.

Prose Order : जाग्रति स्वप्नकाले सुषुप्तौ च यदि मे पतिः मच्चित्ते भोज एव अन्यः न, नु भावितः अस्तु।

व्याख्या—जाग्रति जाग्रदवस्थायाम् । स्वप्नकाले स्वप्नावस्थायाम् । सुषुप्तौ सुष्वापावस्थायाम् । यदि चेत् । मे मम । पतिः भर्त्ता । मच्चिते मम मनसि भोज एव । अन्यः अपरः । न । नु सत्पक्षे वितर्कः । भावितः प्रकटितः । अस्तु भवतु ।

लीलादेवी के वचन को सुनकर राजा ने कहा—देवी ! किसी ने मुझे कहा है कि कालिदास दासी के वेष में रनिवास में आता है और वहाँ रानी के साथ रमण करता है। इस बात की यथार्थता जानने को मैंने ज्वर का ढोंग रचकर तुम दोनों की परीक्षा ली है। तुम्हारी उपस्थिति में भी उसने इस प्रकार (अश्लील) पद्यार्ध की रचना की। उसे सुनकर तू भी हँस पड़ी। यह सब देखकर ब्रह्महत्या से डरकर मैंने उसे देश से निकाल दिया। शिष्टाचार के नाते तुम्हारा वध नहीं करता। तब देवी ने हँसकर विस्मय से कहा—देव ! निश्चित ही मैं धन्य हूँ, जिसके तुम पति हो। तुम्हारे साथ रमण करने के बाद मेरा मन दूसरे पर कैसे आसक्त हो सकता है ? तुझे तो सभी नारियाँ अपने पतियों के साथ रमण करते समय याद करती हैं। शोक ! तुम मुझ सती को असती समझकर त्याग दोगे तो मैं अवश्य ही आत्मघात कर लूँगी।

तब राजा ने कहा—प्रिये ! तुम सत्य कह रही हो। तब राजा ने सेवकों

के द्वारा एक साँप मँगवाया। एक लोहे के गोले को आग से तपवाया और एक धनुष को तैयार किया। अपने पातिव्रत्य के तेज से शोभायमान तथा कोमलाङ्गी देवी ने सूर्य को देखकर कहा--भगवान्! तुम संसार के नेत्र हो, सब वृत्तान्त के वेत्ता हो। तुम्हें सब कुछ विदित है।

जागते-सोते और स्वप्न में यदि मेरा पति भोज है, दूसरा कोई नहीं, तो यह सत्य प्रकट हो जाय।

इत्युक्त्वा ततो दिव्यत्रयं चक्रे। ततः शुद्धायामन्तःपुरे लीलावत्यां लज्जानतशिरा नृपतिः पश्चात्तापातुरः 'देवि, क्षमस्व पापिष्ठं माम्। किं वदामि' इति कथयामास। राजा च तदाप्रभृति न निद्राति, न च भुङ्क्ते, न केनचिद्वक्ति। केवलमुद्विग्नमनाः स्थित्वा दिवानिशं प्रविलपति—'किं नाम मम लज्जा, किं नाम दाक्षिण्यम्, क्व गाम्भीर्यम्। हा हा कवे, कविकोटिमुकुटमणे, कालिदास, हा मम प्राणसम, हा मूर्खेण किमश्राव्यं श्रावितोऽसि। अवाच्यमुक्तोऽसि' इति प्रसुप्त इव, ग्रहग्रस्त इव, मायाविध्वस्त इव पपात। ततः प्रियाकरकमलसिक्तजलसंजातसंज्ञः कथमपि तामेव प्रियां वीक्ष्य स्वात्मनिन्दापरः चिरमतिष्ठत्। ततो निशानाथहीनेव निशा, दिनकरहीनेव दिनश्री, वियोगिनीव योषित्, शक्ररहितेव सुधर्मा, न भाति भोजभूपालसभा रहिता कालिदासेन। तदाप्रभृति न कस्यचिन्मुखे काव्यम्। न कोऽपि विनोदसुन्दरं वचो वक्ति।

ततो गतेषु केषुचिद्दिनेषु कदाचिद्राकापूर्णेन्दुमण्डलं पश्यन्पुरश्च लीलादेवीमुखेन्दुं वीक्ष्य प्राह—

'तुलणं अणु अणुसरइ ग्लौसो मुहचन्दस्स खु एदाए।'

इत्युक्त्वेति। **Vocabulary** : दिव्यत्रय— three divine ordeals : (1) the ordeal of snake-bite; (2) the ordeal of fire; (3) the ordeal of bow-shot. शुद्धा—कलङ्करहित, the stainless. आतुर—व्यथित, distressed. पश्चात्ताप--repentance. पापिष्ठ—अत्यन्तपापयुक्त, the most sinful. उद्विग्नमनस—sorrowful. विप्रलपति—laments. अश्राव्य--श्रवण के अयोग्य, that which is not worthy of hearing. अवाच्य--अकथनीय, that

which is not worthy of being uttered. ग्रहग्रस्त—swallowed by a shark. मायाविध्वस्त—overcome by illusion. निशानाथ—चन्द्रमा, the moon. दिनकर—सूर्य, the sun. दिनश्री—दिन की शोभा, the glory of the day. योषित—नारी, a woman. सुधर्मा—देवसभा, the assembly of the gods. शक्र—इन्द्र, the lord of the gods. राका—पूर्णिमा, the full-moon night. तुलना—अनुकरण, imitation. अनुसरति—follows. ग्लौ—the moon.

Prose Order : सः ग्लौः एतस्याः खलु मुखचन्द्रस्य तुलनाम् अनु अनुसरति ।

व्याख्या—स गगनमण्डलस्थः । ग्लौः चन्द्रः । एतस्याः नायिकायाः । खलु निश्चयेन । मुखचन्द्रस्य । तुलनां साम्यम् । अनुसरति अनुकरोति ।

यह कहकर उसने तीन दिव्यों से अपनी परीक्षा दी।

जब अन्तःपुर में लीलावती शुद्ध प्रमाणित हुई तब लज्जा से राजा ने सिर झुका लिया। पश्चात्ताप से युक्त होकर वे देवी से बोले—देवी! मुझ पापी को क्षमा कीजिए। क्या कहूँ? राजा तब से न सोते, न खाते और न किसी से बोलते थे। केवल उदास रहकर दिन-रात विलाप करते—"अब मेरी लज्जा कहाँ? शिष्टाचार कहाँ? गम्भीरता कहाँ? कवि कालिदास! मेरे प्राणतुल्य मित्र! कविशिरोमणि! मुझ मूर्ख ने तुझे कैसा अश्रवणीय वचन सुनाया। अकथनीय बात कही!" इस प्रकार सोया हुआ-सा, मगर से पकड़ा हुआ-सा, माया से विनष्ट हुआ-सा पृथ्वी पर गिर पड़ा। जब प्रिया ने अपने करकमलों से उसपर जल सींचा तब वह होश में आया। कष्ट से ही अपनी प्रिया को देख सका। अपनी निन्दा करता हुआ चिरकाल तक बैठा रहा। तब चन्द्ररहित रात्रि के समान, सूर्य-रहित दिन के सदृश, पति-वियुक्त युवती के तुल्य, इन्द्र-रहित देवसभा के समान भोजराज की सभा भी कालिदास

के बिना सुहाती नहीं थी। तब से किसी के मुख से कविता नहीं निकलती थी। ना ही कोई व्यक्ति विनोद के सुन्दर वचन कहता था।

कुछ दिन व्यतीत होने पर कभी रात्रि में पूर्ण चन्द्रमण्डल को देखकर और अपने सामने लीलादेवी के मुखचन्द्र को देखकर राजा ने कहा—

इस (रानी) के मुखचन्द्र की समता पाने को चन्द्रमा निश्चित ही इसका अनुकरण करता है।

कुत्र च पूर्णेऽपि चन्द्रमसि नेत्रविलासाः, कदा वाचो विलसितम् । प्रातश्चोत्थितः प्रातर्विधीन्विधाय सभां प्राप्य राजा विद्वद्वरान्प्राह—
'अहो कवयः, इयं समस्या पूर्यताम् ।' ततः पठति—

'तुलणं अणु अणुसरइ ग्लौसो मुहचन्दरस्स खु एदाए ।'

पुनराह—'इयं चेत्समस्या न पूर्यते भवद्भिः मद्देशे न स्थातव्यम्' इति । ततो भीतास्ते कवयः स्वानि गृहाणि जग्मुः । चिरं विचारि तेऽप्यर्थे कस्यापि नार्थसंगतिः स्फुरति । ततः सर्वैर्मिलित्वा बाणः प्रेषित। ततः सभां प्राप्याह राजानम्—'देव, सर्वैर्विद्वद्भिरहं प्रेषितः। अष्टवासरानवधिमभिधेहि। नवमेऽह्नि पूरयिष्यन्ति ते। न चेद्देशान्निर्गच्छन्ति।' ततो राजा 'अस्तु' इत्याह। ततो बाणस्तेषां विज्ञाप्य राजसंदेशं स्वगृहमगात् । ततोऽष्टौ दिवसा अतीताः अष्टमदिनरात्रौ मिलितेषु कविषु बाणः प्राह—'अहो तारुण्यमदेन राजसंमान-मदेन किंचिद्विद्यामदेन कालिदासो निःसारितोऽभवत् । समे भवन्तः सर्व एव कवयः । विषमे स्थाने तु स एक एव कविः। तं निःसार्येदानीं किं नाम महत्त्वमासीत् । स्थिते तस्मिन्कथमियमवस्थास्माकं भवेत् । तन्निःसारे या या बुद्धिः कृता सा भवद्भिरेवानुभूयते ।

कुत्र चेति। **Vocabulary** : नेत्रविलास—आँखों के हावभाव, amorous gestures. वाचो विलसितम्—वाणी का विलास, flash of conversation. अर्थसङ्गति—अर्थ का उचित सम्बन्ध, appropriateness of the sense. वासर—दिन, day. अवधि—limit. तारुण्यमद—

यौवन का गर्व, **pride of youth**. विषमस्थान—कठिनता का अवसर, **the time of difficulty.** निस्सार्य—निकालकर, **having got him expelled.** निस्सार—**expulsion.**

पूर्ण चन्द्रमा में भी नेत्रों के हावभाव कहाँ ? और कहाँ वाग्विलास ?

प्रातःकाल उठकर प्रातःकाल का दैनिक कार्य समाप्त करके सभा में आकर राजा ने पूज्य विद्वानों से कहा—कविगण! इस समस्या की पूर्त्ति करो और वह समस्या उन्हें सुनाई।

इसके मुखचन्द्र की समता पाने को चन्द्रमा निस्सन्देह इसका अनुसरण करते हैं।

और कहा—

यदि आप इस समस्या की पूर्त्ति न कर सकोगे तो मेरे देश में रहना न होगा। तब वे कवि भयभीत होकर अपने-अपने घर को चल दिये।

चिरकाल तक अर्थ का विचार करने पर भी किसी को अर्थ की संगति का स्फुरण न हुआ। तब सबने मिलकर बाण को भेजा। तब सभा में आकर उसने राजा से कहा—देव! सभी विद्वानों ने मुझे भेजा है। आठ दिन की अवधि दीजिए। नौवें दिन समस्या की पूर्त्ति करेंगे। नहीं तो देश को छोड़ेंगे। तब राजा ने कहा—अच्छा। तब बाण उन्हें राजा का सन्देश पहुँचाकर अपने घर को गये। आठ दिन व्यतीत हुए। आठवें दिन की रात को जब सभी कवि सम्मिलित हुए तब बाण ने कहा—ओह! यौवन के मद से, राजप्राप्त सम्मान के घमंड से, कुछ विद्या के गर्व से आपलोगों ने कालिदास को देशत्याग करवाया। कठिनाई न होने पर तो आप सभी कवि हैं, किन्तु कठिनाई के समय तो वही एक कवि है। उसे देशत्याग कराकर आपको क्या गौरव मिला? उसके रहते हमारी यह अवस्था क्यों होती? उसको देशत्याग कराने में आपकी समझ में जो कुछ आया, उसका अनुभव अब आपको हो ही रहा है।

सामान्यविप्रविद्वेषे कुलनाशो भवेत्किल ।
उमारूपस्य विद्वेषे नाशः कविकुलस्य हि ॥१५०॥

सामान्येति । **Vocabulary** : सामान्य—साधारण, Ordinary. विप्र—ब्राह्मण । उमा-रूप—पार्वती-रूप, Of the form of Parvati.

Prose Order:—सामान्यविप्रद्वेषे च किल कुलनाशः भवेत् । उमा-रूपस्य विद्वेषः हि कविकुलस्य नाशः ।

व्याख्या—सामान्यः विप्रः (कर्म०) सामान्यविप्रः, सामान्यविप्रेण द्वेषः (तृ० तत्पु०) सामान्यविप्रद्वेषः, तस्मिन् । किल निश्चयेन । कुलनाशः कुलस्य नाशः (ष० तत्पु०), वंशोच्छेदः । भवेत् स्यात् । उमारूपस्य—शिवावतारस्य कालिदासस्य । विद्वेषः वैरम् । कविकुलस्य कवीनाम् । नाशः नाशकारणम् ।

साधारण ब्राह्मण से द्वेष करने पर निश्चित ही कुल नष्ट हो जाता है । शिव-स्वरूप कालिदास से द्वेष रखने पर कविकुल का नाश ही निश्चित है ।
ततः सर्वे गाढं कलहायन्तेस्म मयूरादयश्च । ततस्ते सर्वान्कलहान्निवार्य सद्यः प्राहुः—'अद्यैवावधिः पूर्णः कालिदासमन्तरेण न कस्यचित्सामर्थ्यमस्ति समस्यापूरणे ।

सङ्ग्रामे सुभटेन्द्राणां कवीनां कविमण्डले ।
दीप्तिर्वा दीप्तिहानिर्वा मुहूर्त्तनैव जायते ॥१५१॥

ततः सर्वे इति । **Vocabulary** गाढम्—बहुत, very much. कलहायन्ते—कलह करने लगे, began to quarrel. निवार्य—हटाकर, having stopped or prevented. सद्यः—एकदम, at once. प्राहुः—बोले, said. पूर्ण—समाप्त, expired. अन्तरेण—बिना । सामर्थ्य—शक्ति, power. समस्यापूरण— completion of the stanza.

सङ्ग्राम—युद्धक्षेत्र, battle-field. भटेन्द्र—शूरवीरयोद्धा—warrior-

lord. दीप्ति—तेज, promotion. दीप्तिहानि—निस्तेज होना, fall. मुहूर्त्त—क्षण, instant.

Prose Order : भटेन्द्राणां सङ्ग्रामेषु कवीनां कविमण्डले मुहूर्त्तेनैव दीप्तिर्वा दीप्तिहानिर्वा जायते ।

व्याख्या—भटेन्द्राणां वीरयोद्धृणां सङ्ग्रामेषु युद्धेषु, कवीनां काव्यप्रणेतृणां कविमण्डले कविगोष्ठीषु, मुहूर्त्तेनैव क्षणादेव दीप्तिर्यशोवृद्धिः, दीप्तिहानिः मानहानिर्वा जायते भवति ।

तब मयूर आदि सभी कवि बहुत झगड़ने लगे। सभी झगड़ों को रोककर एक दम बोले—आज अवधि समाप्त हुई। समस्यापूर्त्ति में कालिदास के बिना किसी की शक्ति नहीं ।

वीर सैनिकों का युद्ध में, कवियों का कविमण्डल में मान अथवा अपमान क्षणभर में ही हो जाता है।

यदि रोचते ततोऽद्यैव मध्यरात्रे प्रमुदितचन्द्रमसि निगूढमेव गच्छामः संपत्तिसंभारमादाय। यदि न गम्यते श्वो राजसेवका अस्मान्बलान्निःसारयन्ति। तदा देहमात्रेणैवास्माभिर्गन्तव्यम् । तदद्य मध्यरात्रे गमिष्यामः ।' इति सर्वे निश्चित्य गृहमागत्य बलीवर्दव्यूढेषु शकटेषु संपद्भारमारोप्य रात्रावेव निष्क्रान्ताः । ततः कालिदासस्तत्रैव रात्रौ विलासवतीसदनोद्याने वसन्पथि गच्छतां तेषां गिरं श्रुत्वा वेश्याचेटीं प्रेषितवान्—'प्रिये, पश्य क एते गच्छन्ति ब्राह्मणा इव ।' ततः सा समेत्य सर्वानपश्यत् । उपेत्य च कालिदासं प्राह—

एकेन राजहंसेन या शोभा सरसोऽभवत् ।
न सा बकसहस्रेण परितस्तीरवासिना ॥१५२॥

यदि रोचते इति । Vocabulary : मध्यरात्रे—आधी रात में, in the middle of the night. प्रमुदित—उदित, rise. निगूढ़—

गुप्त, secretly. सम्पत्तिसम्भार—धनराशि, a load of movable property. श्वः—to-morrow. निस्सारयन्ति—निकाल देंगे, will turn us out. देहमात्र—केवल शरीर, mere body. बलीवर्द—बैल, bull. व्यूढ—yoked. शकट—गाड़ी, cart.

राजहंस—royal swan. शोभा—splendour. सरस्—lake. बक—crane.

Prose Order : एकेन राजहंसेन या सरसः शोभा अभवत् सा परितः तीरवासिना बकसहस्रेण न (भवति)।

व्याख्या—एकेन राजहंसेन। सरसो जलाशयस्य। या शोभा। अभवत्। परितः अभितः तीरवासिना तटवर्त्तिना। बकसहस्रेण। सा। न अभवत्।

यदि आपको पसन्द हो तो आज ही अर्धरात्रि के समय चन्द्रमा का उदय होने पर अपनी धनराशि को लेकर बिना बताये ही चल दें। यदि नहीं जायेंगे तो कल राजा के सेवक हमें बलपूर्वक निकाल देंगे। तब हमें बिना सम्पत्ति लिये ही जाना पड़ेगा। तो आज अर्धरात्रि के समय चलेंगे। इस प्रकार वे सब सोचकर अपने-अपने घर आये। बैलगाड़ियों पर धनराशि को लादकर रात को ही चल दिये। कालिदास उस रात को विलासवती के महल के बगीचे में ठहरे थे। उस मार्ग से जाते हुए उन कवियों का स्वर कालिदास के कानों में पड़ा। तब उन्होंने वेश्या की दासी को भेजा—देखो, ये कौन जा रहे हैं? ब्राह्मणों की भाँति दीखते हैं। तब वहाँ वह आई और सभी को देखा। लौटकर कालिदास से कहा—

जलाशय की जो शोभा एक राजहंस से थी, वह शोभा आसपास के तटों पर रहनेवाले हजारों बगलों से भी नहीं है।

सर्वे च बाणमयूरप्रमुखाः पलायन्ते, नात्र संशयः' इति। कालिदासः—'प्रिये, वेगेन वासांसि भवनादानय, यथा पलायमानान्विप्रान्रक्षामि।

किं पौरुषं रक्षति यद् न वार्त्ता-
किं वा धनं नार्थिजनाय यत्स्यात् ।
सा किं क्रिया या न हितानुबद्धा
किं जीवितं साधुविरोधि यद्वै ॥१५३॥

सर्वे चेति। **Vocabulary** : प्रमुखाः—आदयः, the rest. पलायन्ते—भाग रहे हैं, are running away. वासांसि—वस्त्राणि, garments.

पौरुष—पुरुषार्थ, strength. आर्त्त—पीड़ित, distressed. क्रिया—undertaking. हितानुबद्ध—beneficial. साधुविरोधि—साधुओं से विरोध करनेवाला, inimical to the good.

Prose Order : पौरुषं किं यद् वा आर्त्तान् न रक्षति, वा धनं किं यत् अर्थिजनाय न स्यात्। सा क्रिया किं या हितानुबद्धा न। जीवितं किं यत् वै साधुविरोधि ।

व्याख्या—पौरुषं बलम्। किम्—व्यर्थमिति शेषः। यत्। आर्त्तान् पीडितान्। न रक्षति न त्रायते। धनं द्रव्यम् ! किं वा, व्यर्थमिति यावत्। यत्। अर्थिजनाय याचकाय। न स्यात् लाभकरं न भवेत् । सा क्रिया किं या हितानुबद्धा हितेन अनुबद्धा सङ्गता न। जीवितं किम्, जीवितेन किं प्रयोजनम्, यद्वै साधुविरोधि सज्जनप्रतिकूलकारि भवेत् ।

बाण, मयूर आदि सभी कवि भाग रहे हैं । इसमें सन्देह नहीं । कालिदास ने कहा—प्रिये ! जल्दी ही घर से वस्त्र लाओ ताकि भागते हुए ब्राह्मणों को बचा सकूँ ।

वह बल ही क्या जो पीड़ितों की रक्षा न कर सके। वह धन ही क्या जो याचकों के लिए न हो। वह काम ही क्या जो हितकर न हो। वह जीवन ही क्या जो सज्जनों से द्वेष रखे ॥१५३॥

ततः स कालिदासश्चारवेषं विधाय खड्गमुद्वहन्क्रोशार्धमुत्तरं गत्वा तेषामभिमुखमागत्य सर्वान्निरूप्य 'जय' इत्याशीर्वचनमुदीर्य पप्रच्छ चारणभाषया--'अहो विद्यावारिधयः, भोजसभायां संप्राप्तमहत्त्वातिशयाः, बृहस्पतय इव संभूय कुत्र जिगमिषवो भवन्तः । कच्चित्कुशलं वः । राजा च कुशली । अस्माभिः काशीदेशादागम्यते भोजदर्शनाय वित्तस्पृहया च । ततः परिहासं कुर्वन्तः सर्वे निष्क्रान्ताः । ततस्तेषु कश्चित्तद्गिरमाकर्ण्य तं च चारणं मन्यमानः कुतूहलेन विपश्चित्प्राह--'अहो चारण, शृणु । त्वया पश्चादपि श्रोष्यत एव । अतो मयाद्य वोच्यते । राज्ञा किलैभ्यो विद्वद्भ्यः पूरणाय समस्योक्ता । तत्पूरणाशक्ताः कुपितराज्ञो भयाद्देशान्तरे क्वचिज्जिगमिषव एते निश्चक्रमुः, चारणः--'राज्ञा का वा समस्या प्रोक्ता ।' ततः पठति स विपश्चित्--

'तुलणं अणु अणुसरइ ग्लौसो मुहचन्दस्स खु एदाए ।'

चारणः--'एतत्साध्वेव गूढार्थम् । एतत्पूर्णेन्दुमण्डलं वीक्ष्य राज्ञा पाठि । एतस्योत्तरार्धमिदं भवितुमर्हति--

ततः स इति । **Vocabulary** : चारवेषम्--(चारस्य गुप्तचरस्य वेषः तम्), disguise of a spy. चारणभाषा--गुप्तचरों की भाषा, the dialogue of a spy. विद्यावारिधि--विद्या-समुद्र, ocean of learning. महत्वातिशय--विशेष गौरव, the supreme honour. जिगमिषवः--गमनेच्छुक, desirous of going. कच्चित्--क्या । पूरण--पूर्त्ति, completion. गूढार्थ--गुप्त अर्थ युक्त, full of hidden meaning. उत्तरार्ध--द्वितीय अर्ध, the other half.

अनु--अनुकरण, imitation. प्रतिपद्--the first day of the moon.

Prose Order : तस्य चन्द्रस्य अनु इति अनुकृतिः प्रतिपदि कथं वर्ण्यते ?

व्याख्या--तस्य नायिकामुखचन्द्रस्य अनुकृतिः चन्द्रेण निशाकरेण प्रतिपदि उदयारम्भदिवसे कथं क्रियते, कर्तुं न शक्यते ।

तब कालिदास ने गुप्त वेष रच तलवार उठाई । आध कोस उत्तर की

ओर गया। उनके सामने पहुँचा। सब को देखकर जय शब्द से आशीर्वाद दिया और भाटभाषा में बोला:—आप विद्यासागर हैं। आपको भोज की सभा में विशेष महत्त्व प्राप्त हो चुका है। आप बृहस्पति के सदृश बुद्धिमान हैं। आपलोग एक साथ कहाँ जाना चाहते हैं? क्या आपको यहाँ कष्ट तो नहीं? राजा तो कुशलपूर्वक हैं? हम धन की इच्छा से भोज के दर्शन को काशी से आ रहे हैं। तब हँसते-हँसते वे सभी चल दिये। तब उनमें से एक विद्वान उसकी बात सुनकर और उसे भाट समझकर आश्चर्य से बोला—भाट! सुनो, तुम पीछे भी सुनोगे ही। अतः मैं अभी कहता हूँ। राजा ने इन विद्वानों को एक समस्या पूर्त्ति के लिए दी थी। तब उस विद्वान ने समस्या सुनाई–इस (रानी) के मुखचन्द्र की बराबरी करने को चन्द्रमा निश्चय ही इसका अनुकरण कर रहा है।

भाट ने कहा—ठीक ही इस पद्य का अर्थ गूढ़ है। पूर्णिमा के चन्द्रमा को देखकर राजा ने इस कविता को पढ़ा है। इसका उत्तरार्द्ध इस प्रकार का होना चाहिए।

प्रतिपदा को उस चन्द्रमा द्वारा नायिका के सौन्दर्य का अनुकरण कैसे कहा जा सकता है?

'अणु इति वण्र्यदि कहं अणुकिदि तस्सं प्पडिपदि चन्दस्स ॥"
सर्वे श्रुत्वा चमत्कृताः। ततश्चारणः सर्वान्प्रणिपत्य निर्ययौ। ततः सर्वे विचारयन्ति स्म—'अहो, इयं साक्षात्सरस्वती पुंरूपेण सर्वेषामस्माकं परित्राणायागता नायं भवितुमर्हति मनुष्यः। अद्यापि किमपि केनापि न ज्ञायते। ततः शीघ्रमेव गृहमासाद्य शकटेभ्यो भारमुत्तार्य प्रातः सर्वैरपि राजभुवनमागन्तव्यम्। न चेच्चारण एव निवेदयिष्यति। ततो झटिति गच्छामः।' इति योजयित्वा तथा चक्रुः। ततो राजसभां गत्वा राजानमालोक्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा विविशुः। ततो बाणः प्राह—'देव, सर्वज्ञेन यत्त्वया पठ्यते तदीश्वर एव वेद। केऽमी वराका उदरंभरयो द्विजाः। तथाप्युच्यते—

सर्वे श्रुत्वेति। **Vocabulary** : निर्ययौ—चला गया, went away. साक्षात् सरस्वती the very goddess of learning,

पुरुष—पुरुषरूप, the form of a man. वेद—जानता है, knows. उदरम्भरय:—पेट भरनेवाले, selfishly voracious.

तुलना—अनुकरण, imitation. अनुसरति—अनुसरण करता है, follows. ग्लौ—चन्द्रमा, the moon. अनु—अनुकरण, imitation. प्रतिपद्—the first day of the moon.

Prose Order : स: ग्लौ: एतस्या: खलु मुखचन्द्रस्य तुलनाम् अनु अनुसरति । तस्य चन्द्रस्य अनु इति अनुकृति: प्रतिपदि कथं वर्ण्यते ?

व्याख्या—स गगनमण्डलस्थ: । ग्लौ: चन्द्र: । एतस्या: नायिकाया: । खलु निश्चयेन । मुख चन्द्रस्य । तुलनां साम्यम् । अनुसरति अनुकरोति । इति पूर्वार्द्धम् । तस्य नायिकाचन्द्रस्य अनुकृति: चन्द्रेण निशाकरेण प्रतिपदि स्वोदयारम्भदिवसे कथं क्रियते, कर्तुं न शक्यते इत्यर्थ: । इत्युत्तरार्द्धम् ।

सभी सुनकर चकित हो गये । तब सबको प्रणाम करके भाट चल दिया । सब सोचने लगे । ओह साक्षात् सरस्वती पुरुष रूप में हम सबकी रक्षा के लिये पधारी है । यह मनुष्य तो नहीं हो सकती । अब भी किसी को कुछ ज्ञात नहीं । तब शीघ्र ही घर जाकर गाड़ियों से भार उतार कर प्रातः सभी राजभवन में सम्मिलित हों । अन्यथा भाट ही समस्या पूर्त्ति कर देगा । तो शीघ्र चलें । यह योजना बनाई और उस पर चले । तब राजसभा में जाकर राजा को देखकर आशीर्वाद देकर वे बैठ गये ।

बाण ने कहा—आप सर्वज्ञ हैं । जो समस्या आपने प्रस्तुत की है उसकी पूर्त्ति तो भगवान ही जाने । आजीविका चलाने वाले दयनीय ब्राह्मण इसे क्या समझें । तो भी कुछ कहते हैं ।

इसके मुखचन्द्र की बराबरी के लिए चन्द्रमा निश्चित ही इसका अनुकरण करता है । प्रतिपदा को उस चन्द्रमा द्वारा नायिका के सौन्दर्य का अनुकरण कैसे कहा जाय ?

राजा यथाव्यवसितस्याभिप्रायं विदित्वा 'सर्वथा कालिदासो दिवसप्राप्यस्थाने निवसति । उपायैश्च सर्वं साध्यम् ।' इत्याह । ततो बाणाय रुक्माणां पञ्चदशलक्षाणि प्रादात् । संतोषमिषेणैव विद्वद्वृन्दं स्वं स्वं सदनं प्रति प्रेषितम् ।

गते च विद्वन्मण्डले शनैर्द्वारपालायादिष्टं राज्ञा—'यदि केचिद् द्विजन्मान आयास्यन्ति तदा गृहमध्यमानेतव्याः।' ततः सर्वमपि वित्तमादाय स्वगृहं गते बाणे केचित्पण्डिता आहुः—'अहो, बाणेनानुचितं व्यधायि। यदसावप्यस्माभिः सह नगरान्निष्क्रान्तोऽपि सर्वमेव धनं गृहीतवान्। सर्वथा भोजस्य बाणस्वरूपं ज्ञापयिष्यामः। यथा कोऽपि नान्यायं विधत्ते विद्वत्सु।' ततस्ते राजानमासाद्य ददृशुः। राजा तान्प्राह—'एतत्स्वरूपं ज्ञातमेव। भवद्भिर्यथार्थतया वाच्यम्।' ततस्तैः सर्वमेव निवेदितम्। ततो राजा विचारितवान्—'सर्वथा कालिदासश्चारणवेषेण मद्भयान्मदीयनगरमध्यास्ते।' ततश्चाङ्गरक्षकानादिदेश—'अहो, पलाय्यन्तां तुरङ्गाः।' ततः क्रीडोद्यानप्रयाणे पटहध्वनिरभवत्—'अहो, इदानीं राजा देवपूजाव्यग्र इति शुश्रुमः। पुनरिदानीं क्रीडोद्यानं गमिष्यति' इति व्याकुलाः सर्वे भटाः संभूय पश्चाद्यान्ति। ततो राजा तैर्विद्वद्भिः सहाश्वमारुह्य रात्रौ यत्र चारणप्रसङ्गः समजनि, तत्प्रदेशं प्राप्तः। ततो राजा चरतां चौराणां पदज्ञाननिपुणानाहूय प्राह—'अनेन वर्त्मना यः कोऽपि रात्रौ निर्गतस्तस्य पदान्यद्यापि दृश्यन्ते, तानि पश्यन्तु' इति। ततो राजा प्रतिपण्डितं लक्षं दत्त्वा तान्प्रेषयित्वा च स्वभवनमगात्। ते च पदज्ञा राजाज्ञया सर्वतश्चरन्तोऽपि तमनवेक्षमाणा विमूढा इवासन्। ततश्च लम्बमाने सवितरि कामपि दासीमेकं पदत्राणं त्रटितमादाय चर्मकारवेश्म गच्छन्तीं दृष्ट्वा तुष्टा इवासन्। ततस्तत्पदत्राणं तया चर्मकारकरे न्यस्तं वीक्ष्य तैश्च तस्यः करान्मिषेणादाय रेणुपूर्णे पथिमुक्त्वा तदेव पदं तस्येति ज्ञात्वा तां च दासीं क्रमेण वेश्याभवनं विशन्तीं वीक्ष्य तस्या मन्दिरं परितो वेष्टयामासुः। ततश्च तैः क्षणेन भोजश्रवणपथविषयमभिज्ञानवार्ता प्रापिता। ततो राजा सपौरः सामात्यः पद्भ्यामेव विलासवतीभवनमगात्। ततस्तछ्रुत्वा विलासवतीं प्राह कालिदासः—'प्रिये, मत्कृते किं कष्टं ते पश्य।' विलासवती—'सुकवे,

उपस्थिते विप्लव एव पुंसां
समस्तभावः परिमीयतेऽतः।
अवाति वायौ नहि तूलराशे-
र्गिरेश्च कश्चित्प्रतिभाति भेदः ॥१५५॥

राजेति । **Vocabulary** : व्यवसित—निश्चित, determined. अभिप्राय—significance, purport. विदित्वा—जानकर, on knowing. दिवसप्राप्यस्थान—एक दिन में प्राप्त होनेवाला स्थान, the place of a day's reach. उपाय—expedient. रुक्म—सुवर्ण मुद्रा, gold coin. द्विजन्मन्—ब्राह्मण, ज्ञापयिष्यामः—कहेंगे, we shall reveal. अनुचितं व्यधायि—अनुचित किया है, has not done well. आसाद्य—पहुँचकर, having approached. अङ्गरक्षक— body-guard. क्रीडोद्यान—pleasure garden. प्रयाण—प्रस्थान, the start. पटहध्वनि—the beating of the drum. चारणप्रसङ्ग—गुप्तचर मिलने की घटना, the event of meeting the spy. पदज्ञाननिपुण—पद चिह्नों की पहचान में निपुण, expert in the knowledge of foot prints. लम्बमान—अस्त होनेवाला, going to set. पदत्राण—जूता, a shoe. चर्मकार—चमार, a shoe maker. मिष—बहाना, pretext. रेणुपूर्ण—धूलि से भरा हुआ, dusty. परितः—चारों ओर से, on all sides. वेष्टयामासुः—घेर लिया, surrounded. अभिज्ञान—पहचान, identification.

। विप्लव—विपत्ति Calamity. समस्तभाव—सामूहिक शक्ति, the collective strength. परिमीयते—प्रतीत होती है, is manifested. अवाति—न चलने पर when it is not blowing. तूलराशि—रुई का ढेर, cotton-heap. प्रतिभाति—प्रतीत होता है, appears.

Prose Order : विप्लवे उपस्थिते एव अतः पुंसां समस्तभावः परिमीयते । वायौ अवाति तूलराशेः गिरेश्च कश्चिद् भेदः नहि प्रतिभाति ॥

व्याख्या—विप्लवे विपदि । उपस्थिते सम्प्राप्त एव । अतः कारणात् । पुंसां नृणाम् । समस्तभावः सामर्थ्यम् । परिमीयते परीक्ष्यते इति यावत् । वायौ पवने । अवाति अचलति सति । तूलराशेः कर्पाससमूहस्य । गिरेः पर्वतस्य च । कश्चित् कोऽपि । भेदः भिन्नत्वम् । नहि प्रतिभाति न दृश्यते ।

जब राजा को अपना निश्चित अभिप्राय विदित हुआ तब उसने कहा कि सर्वथा कालिदास ऐसे स्थान में रहता है जहाँ मनुष्य एक दिन में चलकर पहुँच सके। उपाय द्वारा उसका मिलना सम्भव है। तब बाण को पन्द्रह लाख रुपये दिये। सन्तुष्ट होने का बहाना करके सभी विद्वानों को अपने-अपने घर भेज दिया।

विद्वानों के जाने पर धीरे-धीरे राजा ने द्वारपाल से कहा—यदि कोई ब्राह्मण पधारे तो उसे घर लाना।

जब समग्र धनराशि को लेकर बाण अपने घर को चल दिये कुछ पण्डितों ने कहा—ओह! बाण ने ठीक नहीं किया। वह भी तो हमारे साथ नगर से चल दिया था, अब सभी धन को ले बैठा है। हम भोज से बाण की चालाकी ठीक-ठीक बता देंगे ताकि विद्वानों से कोई धोखा न कर सके। तब वे राजा के पास गये और उनसे मिले। उन्होंने उसे सब कुछ कह सुनाया। तब राजा ने सोचा। निश्चय ही कालिदास भाट के वेष में मेरे ही नगर में है। तब उसने अपने अंगरक्षकों को आज्ञा दी—घोड़ों को दौड़ाओ। तब क्रीड़ोद्यान में चलने के लिए नगाड़ा बजा। ओह! अभी तो राजा देवपूजा में लगे थे हमने सुना है, फिर अभी क्रीड़ोद्यान को जा रहे हैं। इस प्रकार घबराये हुए सभी सैनिक इकट्ठे होकर राजा के पीछे चलने लगे। तब राजा उन विद्वानों के साथ घोड़े पर चढ़कर रात को जहाँ भाट मिला था वहाँ पहुँचा। तब राजा ने गतिशील चोरों के पदचिह्न पहचानने वालों को बुलाकर कहा—इस मार्ग से जो कोई रात को गया है उसके पदचिह्न अब भी दीखते हैं उन्हें खोजिये। तब राजा ने प्रत्येक पण्डित को एक-एक लाख रुपये देकर अपने-अपने घर भेजा और स्वयं भी अपने महल को आया। पदचिह्न के खोजी भी राजा के आदेश से चारों ओर घूमे किन्तु उसे न पाकर मूर्ख से दीखने लगे। जब सूर्य अस्त होने को चला उन्होंने टूटा जूता लिये चमार के घर जाती हुई एक दासी को देखा। वे कुछ प्रसन्न हुए। दासी ने उस जूते को चमार के हाथ में दिया। उन्होंने वह जूता उसके हाथ से किसी बहाने ले लिया, रेतीले मार्ग में उसे रख दिया। यह चिह्न तो उसी के हैं ऐसा

जानकर उस दासी को वेश्या के घर प्रवेश करती हुई देख उन्होंने उसका घर चारों ओर से घेर लिया। तब उन्होंने क्षण ही में अपनी खोज की बात राजा के कानों तक पहुँचाई। तब राजा पुरवासियों और मंत्रियों के साथ पैदल ही विलासवती के घर पहुँचे। तब यह सुनकर कालिदास ने विलासवती से कहा—प्रिये! देखो मेरे निमित्त तुझे कैसा कष्ट हुआ?

विलासवती ने कहा—कविश्रेष्ठ!

विपत्ति के आ पड़ने पर ही पुरुषों के सभी भाव व्यक्त होते हैं। वायु के न चलने पर रूई के ढेर तथा पर्वत में कुछ अन्तर नहीं दीखता है।

मित्रस्वजनबन्धूनां बुद्धेर्धैर्यस्य चात्मनः।
आपन्निकषपाषाणो जनो जानाति सारताम् ॥१५६॥

मित्रेति। **Vocabulary** : आपत्—विपत्ति, calamity. निकष—कसौटी, touchstone. सारता—सामर्थ्य, strength.

Prose Order : आपन्निकषपाषाणः जनः मित्रस्वजनबन्धूनां बुद्धेः वित्तस्य आत्मनः च सारतां जानाति।

व्याख्या—आपन्निकषपाषाणः—आपदेव निकषपाषाणो यस्य (बहु०) सः, अर्शाद्यच्। तथाभूतो जनः मित्रस्वजनबन्धूनाम्—मित्राणि सुहृदः, स्वजनाः, स्वाभिन्नहृदयाः। बन्धवः—बान्धवाः। तेषाम्। बुद्धेः प्रज्ञायाः। वित्तस्य धनस्य। आत्मनः स्वस्य च। सारतां शक्तिम्। जानाति ज्ञानविषयीकरोति।

मित्र, स्वजन, बन्धु, बुद्धि, धैर्य तथा अपने बल की परख मनुष्य विपत्ति-रूपी कसौटी पर ही कर सकता है।

अप्रार्थितानि दुःखानि यथैवायान्ति देहिनः।
सुखानि च तथा मन्ये दैवमत्रातिरिच्यते ॥१५७॥

अप्रार्थितानीति। **Vocabulary** अप्रार्थित—unsought for अतिरिच्यते—is a stronger force.

Prose Order : यथैव देहिनः अप्रार्थितानि दुःखानि आयान्ति तथा सुखानि च। अत्र दैवम् अतिरिच्यते।

व्याख्या—यथैव देहिनः पुरुषस्य अप्रार्थितानि अयाचितानि दुःखानि आयान्ति आपतन्ति तथा सुखान्यपि अयाचितानि समायान्ति । अत्रास्मिन् विषये दैवं भाग्यमेव अतिरिच्यते बलवदिति ज्ञेयम् । दैवकारणकान्येव सुखानि दुःखानि च ।

शरीरधारी व्यक्तियों को जिस प्रकार दुःख बिना बुलाये ही आ जाते हैं वैसे सुख भी। दीनता ही विशेष महत्व रखती है।

सुकवे, राज्ञा त्वयि मनाङ्निराकृते वचसापि मया सदेहं दासीवृन्दं प्रदीप्तवह्नौ पतिष्यति ।' कालिदासः—'प्रिय, नैवं मन्तव्यम् । मां दृष्ट्वा विकासीकृतास्यो भोजः पादयोः पतिष्यति' इति । ततो वेश्यागृहं प्रविश्य भोजः कालिदासं दृष्ट्वा ससंभ्रममाश्लिष्य पादयोः पतति । स राजा पठति च—

सुकवे इति । **Vocabulary :** मनाक्—किञ्चित्, a bit. निराकृत—अपमानित, insulted. वृन्द—समूह, all. विकासीकृतास्य—प्रफुल्लवदन, full of smiling face. ससम्भ्रमम्—सहसा, hastily. आश्लिष्य—आलिंगन करके, having embraced.

कविश्रेष्ठ ! राजा ने तुम्हारा कुछ भी निरादर किया तो ये सभी दासियाँ मेरे साथ जलती हुई आग में भस्म हो जायेंगी।

कालिदास ने कहा—प्रिये, ऐसा मत सोचो। मुझे देखकर राजा का मुख-कमल विकसित हो उठेगा और वह मेरे चरणों में गिर पड़ेगा। तब वेश्या के घर में प्रविष्ट होकर भोज ने कालिदास को देखा। एकदम उसका आलिङ्गन किया, चरणों में गिर पड़ा और कहने लगा।

गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा ।
मा भून्मनः कदाचिन्मे त्वया विरहितं कवे ॥१५८॥

गच्छत इति । **Prose Order** कवे ! गच्छतः तिष्ठतः वापि जाग्रतः स्वपतोऽपि वा, मे मनः कदाचित् त्वया विरहितं मा अभूत् ।

व्याख्या—गच्छतः गमनक्रियावतः । तिष्ठतः स्थितिशीलस्य । जाग्रतः जागरणक्रियावतः । स्वपतः स्वापमवस्थितस्य । मे मम । मनः चित्तम् । त्वया विरहितं त्वच्चिन्तनशून्यम् । मा अभूत् न स्यात् ।

चलते, बैठते अथवा जागते वा सोते हुए भी मेरा मन, हे कवि, कभी तुझसे वियुक्त न हो।

कालिदासस्तच्छ्रुत्वा व्रीडावनताननस्तिष्ठति। राजा च कालिदासमुखमुन्नमय्याह—

कालिदास कलावास दासवच्चालितो यदि।
राजमार्गे व्रजन्नत्र परेषां तत्र का त्रपा ॥१५६॥

कालिदास इति। **Vocabulary** : व्रीडा—लज्जा, bashfulness. अवनतानन—नीचा मुख करके, with his face bent downwards. उन्नमय्य—ऊँचा करके, uplifting. कलावास—कलाओं का निवासस्थान, abode of poetic art. चालित—चलने को बाधित किया, made to walk. त्रपा—लज्जा।

Prose Order : कलावास कालिदास! यदि (अहं) दासवत् चालितः अत्र राजमार्गे व्रजन् (तिष्ठामि) तत्र परेषां का त्रपा ?

व्याख्या—कलावास—कलाया आवासः (ष० तत्पु०) कलावासः, तत्सम्बुद्धौ, हे कालिदास! यदि अहं भोजराजोऽपि दासवत् भृत्यवत् चालितः अत्र राजमार्गे पथि पद्भ्यामेव व्रजन् आयातः, तत्र परेषाम् अन्येषां तु कथैव का ?

कालिदास ने जब यह सुना तो उसने लज्जा से अपना मुँह नीचे को कर लिया और राजा ने उसका मुख ऊँचा करके कहा—

कलाओं के आवासक्षेत्र हे कालिदास! यदि तुमने मुझे सड़क पर चलते-चलते दूसरों के घर तक दास के समान घुमाया है तो उसमें लज्जा की बात ही क्या ?

धन्यां विलासिनीं मन्ये कालिदासो यदेतया।
निबद्धः स्वगुणैरेव शकुन्त इव पञ्जरे ॥१६०॥

धन्यामिति। **Vocabulary** : धन्या—blessed. विलासिनी—वेश्या courtezan. निबद्ध—बँधा हुआ, captured. शकुन्त—पक्षी, a bird. पञ्जर—cage.

Prose Order : विलासिनीं धन्यां मन्ये यदेतया एषः कालिदासः पञ्जरे शकुन्त इव स्वगुणैः निबद्धः ।

व्याख्या—विलासिनीं वेश्याम् । धन्यां भाग्यशीलाम् । मन्ये चिन्तयामि । यद् एतया वेश्यया । एषः कालिदासः । पञ्जरे लोहादिधातुघटिताश्रय रूपिणि यन्त्रे । शकुन्तः विहग इव । स्वगुणैः सौन्दर्यादिभिः । निबद्धः बन्धं गमितः ।

विलासिनी वेश्या को मैं धन्य समझता हूँ क्योंकि इसने इसे अपने गुणों से बाँध रखा है जैसे तोते को पिंजड़े में बाँधते हैं ।

राजा नेत्रयोर्हर्षाश्रु मार्जयति कराभ्यां कालिदासस्य । ततस्तत्प्राप्तिप्रसन्नो राजा ब्राह्मणेभ्यः प्रत्येकं लक्षं ददौ । निजतुरगे च कालिदासमारोप्य सपरिवारो निजगृहं ययौ ।

कियत्यपि कालेऽतिक्रान्ते राजा कदाचित्संध्यामालोक्य प्राह—

राजेति । **Vocabulary** हर्षाश्रु—आनन्द के आँसू, **tears of joy**. मार्जयति—पोंछा, **wiped out**. तुरग—अश्व, **a horse**. परिवार—सेवकवर्ग, **attendants**.

राजा ने कालिदास के आनन्दपूर्ण नेत्रों के आँसुओं को हाथों से पोंछा । तब कालिदास के मिलन से प्रसन्न होकर राजा ने प्रत्येक ब्राह्मण को एक-एक लाख रुपये दिये । अपने घोड़े पर कालिदास को चढ़ाकर परिवार-सहित अपने घर को गया ।

कुछ दिन व्यतीत होने पर राजा ने कभी सन्ध्या को देखकर कहा—

'परिपतति पयोनिधौ पतङ्गः'

ततो बाणः प्राह—

'सरसिरुहामुदरेषु मत्तभृङ्गः ।'

ततो महेश्वरकविः—

'उपवनतरुकोटरे विहङ्गः'

ततः कालिदासः प्राह—

'युवतिजनेषु शनैः शनैरनङ्गः' ॥१६१॥

परिपततीति । Vocabulary : परिपतति—गिरता है, **falls.**

पयोनिधि—समुद्र, **an ocean**. पतङ्ग—सूर्य, **the sun**. सरसिरुह—कमल, **the lotus**. उदर-अभ्यन्तर— **interior**. मत्त—मस्त, **intoxicated**. भृङ्ग—भ्रमर, **a bee** उपवन—बगीचा, **the garden** विहंग—पक्षी **a bird**. युवतिजन—नारियाँ, **youthful maidens**. अनंग—काम **cupid**.

Prose Order : पतङ्ग पयोनिधौ परिपतति । सरसिरुहाम् उदरेषु मत्तभृङ्गः (परिपतति) । उपवनतरुकोटरेषु विहङ्गः (परिपतति) युवतिजनेषु शनैः शनैः अनङ्गः (परिपतिति) ।

व्याख्या—पतङ्गः सूर्यः । पयोनिधौ—पय एव निधिर्यस्य (बहु०) इति सः पयोनिधिः सागरः तत्र । परिपतति निमज्जति । सरसिरुहां कमलानाम्, सरसिरुहाम् इत्यत्र युधिष्ठिरादिवद् अलुक्सप्तमीसमासः । उदरेषु कुक्ष्यन्तरे । मत्तभृङ्गः मदमत्तः भ्रमरः । परिपतति निलीयते । उपवनतरुकोटरेषु—वनस्य समीपम् उपवनम् (अव्ययी०), उपवनेषु तरवः (स० तत्पु०) उपवनतरवः उद्यानपादपाः, उद्यानतरुषु कोटरम् (स० तत्पु०) उद्यानतरुकोटरम्, तेषु । विहङ्गः पतत्री । परिपतति प्रविशति । युवतिजनेषु अङ्गनासु । मन्दं मन्दं शनैश्शनैः । अनङ्गः कामः परिपतति प्रसरति ।

सूर्य समुद्र में डूब रहा है ।

तब बाण ने कहा—जैसे कमलों के बीच मदमस्त भ्रमर ।

तब महेश्वर कवि बोले—उद्यान के वृक्षों की खुलार में जैसे पक्षी ।

तब कालिदास ने कहा—युवतियों के शरीर में कामदेव धीरे-धीरे प्रवेश करते हैं ।

तुष्टो राजा लक्षं लक्षं ददौ । चतुर्थचरणस्य लक्षद्वयं ददौ ।

कदाचिद्राजा बहिरुद्यानमध्ये मार्गं प्रत्यागच्छन्तं कमपि विप्रं ददर्श । तस्य करे चर्ममयं कमण्डलुं वीक्ष्य तं चातिदरिद्रं ज्ञात्वा मुखश्रिया विराजमानं चावलोक्य तुरङ्गं तदग्रे निधायाह—'विप्र, चर्मपात्रं किमर्थं पाणौ वहसि' इति । स च विप्रो नूनं मुखशोभया मृदूक्त्या च भोजइति विचार्याह—"देव, वदान्यशिरोमणौ भोजे पृथ्वीं शासति लोहताम्राभावः समजनि । तेन

चर्ममयं पात्रं वहामि' इति । राजा—'भोजे शासति लोहताम्राभावे को हेतुः।" तदा विप्रः पठति—

अस्य श्रीभोजराजस्य द्वयमेव सुदुर्लभम् ।
शत्रूणां शृङ्खलैर्लोहं ताम्रं शासनपत्रकैः ॥१६२॥

तुष्ट इति । **Vocabulary** : चरण—पाद, foot of a verse. चर्ममय—चमड़े का बना हुआ, made of leather. कमण्डलु—water bowl. वदान्य—दानशील, generous. ताम्र—copper. शृङ्खल—जंजीर, chaining. शासनपत्रक—plates of gifts.

Prose Order : अस्य श्रीभोजराजस्य द्वयम् एव सुदुर्लभम्—शत्रूणां शृखलैः लोहम्, शासनपत्रकैः ताम्रम् ।

व्याख्या—अस्य श्रीभोजनृपतेः द्वयम् एव सुदुर्लभम्—अत्यन्त दुष्प्राप्यम् शत्रूणाम् अरीणां शृखलैः बन्धनैः लोह दुर्लभम्, शासनपत्रकैः शासनपट्टैः ताम्रं दुर्लभं सञ्जातम् ।

प्रसन्न होकर राजा ने उन दोनों को एक-एक लाख रुपये दिये। चौथे चरण के लिए दो लाख रुपये दिये ।

एक बार राजा ने नगर के बाहर बगीचे के बीच की सड़क पर से चलते हुए एक ब्राह्मण को देखा । उसके हाथ में चमड़े के कमण्डलु थे, उसे बहुत निर्धन जानकर और उसके मुख-तेज को देखकर और घोड़े को उसके आगे थामकर बोला—ब्राह्मण ! तुम चमड़े के पात्र को क्योंकर हाथ में लिए हो ? मुख की शोभा से और मधुर वाणी से निश्चित ही यह भोज है यह सोचकर उस ब्राह्मण ने कहा—देव ! दान-शिरोमणि भोज के पृथ्वी पर शासन करते हुए लोहे और ताँबे का अभाव हो गया है, इसलिए चमड़े का पात्र उठाये हुए हूँ। राजा ने पूछा—राजा भोज के शासन करते हुये लोहे और ताँबे का अभाव में क्या कारण है ? तब ब्राह्मण ने कहा—

राजा भोज के शासन में दो वस्तुओं का नितान्त अभाव हो गया है—शत्रुओं की कड़ियों से लोहे का और दान के ताम्रपट्टों से ताँबे का ।

ततस्तुष्टो राजा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

कदाचिद् द्वारपालः प्राह—'धारेन्द्रः, दूरदेशादागतः कश्चिद्विद्वान्द्वारि तिष्ठति । तत्पत्नी च । तत्पुत्रः सपत्नीकः । अतोऽतिपवित्रं विद्वत्कुटुम्बं द्वारि तिष्ठति' इति । राजा—'अहो गरीयसी शारदाप्रसादपद्धतिः ।' तस्मिन्नवसरे गजेन्द्रपाल आगत्य राजानं प्रणम्य प्राह—'भोजेन्द्र, सिंहलदेशाधीश्वरेण सपादशतं गजेन्द्राः प्रेषिताः षोडश महामणयश्च ।' ततो बाणः प्राह—

स्थितिः कवीनामिव कुञ्जराणां
स्वमन्दिरे वा नृपमन्दिरे वा ।
गृहे गृहे किं मशका इवैते
भवन्ति भूपालविभूषिताङ्गाः ॥१६३॥

ततस्तुष्ट इति । **Vocabulary** : गरीयसी—महती, great. शारदा—सरस्वती, Goddess of learning प्रसाद—प्रसन्नता, pleasure. पद्धति—प्रकार, course. सपादशत—सवा सौ, one hundred and twentyfive. स्थिति—स्थान, place. कुञ्जर, हाथी, elephant. मन्दिर—गजशाला अथवा महल । मशक—मच्छर, mosquitoe. विभूषित—adorned or decked.

Prose Order : कवीनां कुञ्जराणाम् इव स्थितिः स्वमन्दिरे वा नृपमन्दिरे वा । भूपालविभूषिताङ्गा एते मशका इव किं गृहेगृहे भ्रमन्ति ?

व्याख्या—कुञ्जराणां हस्तिनां स्थितिः अवस्थानं स्वमन्दिरे गजशालायां नृपमन्दिरे प्रासादे वा शोभते । भूपालविभूषिताङ्गाः—भुवं पालयतीति भूपालः (उपपद तत्पु०), भूपालेन विभूषितानि प्रसाधितानि अङ्गानि अवयवा येषां ते । एते कवयो गजाश्च । मशका इव । गृहे गृहे प्रतिगृहम् । भ्रमन्ति पर्यटन्ति ।

तब प्रसन्न होकर राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । एक बार द्वारपाल ने कहा—धारा-नरेश ! दूर देश से आकर एक विद्वान् द्वार पर खड़ा है—उसकी पत्नी भी तथा-पत्नी सहित उसका पुत्र भी । एक अत्यन्त पवित्र विद्वान का कुटुम्ब द्वार पर खड़ा है । तब राजा ने कहा—ओह असीम है शारदा की प्रसन्नता का प्रकार ! उसी समय हस्तिशाला के अधिकारी ने

आकर प्रणाम कर राजा से कहा—भोजराज ! सिंहलदेश के स्वामी ने सवा सौ हाथी भेजे हैं साथ ही सोलह महामणियाँ भी । तब बाण ने कहा—

कवियों के सदृश हाथियों की शोभा अपने स्थान में अथवा राजभवन में होती है। राजाओं द्वारा विभूषित अंगों वाले ये हाथी अथवा कवि मच्छरों के सदृश घर-घर में क्यों घूमते-फिरते हैं ।

ततो राजा गजावलोकनाय बहिरगात् । ततस्तद्विद्वत्कुटुम्बं वीक्ष्य चोलपण्डितो राज्ञः प्रियोऽहमिति गर्वं दधार । यन्मया राजभवनमध्यं गम्यते । विद्वत्कुटुम्बं तु द्वारपालज्ञापितमपि बहिरास्ते । तदा राजा तच्चेतसि गर्वं विदित्वा चोलपण्डितं सौधाङ्गणान्निः सारितवान् ।

काशीदेशवासी कोऽपि तण्डुलदेवनामा राज्ञे 'स्वस्ति' इत्युक्त्वाऽतिष्ठत् । राजा च तं पप्रच्छ—'सुमते, कुत्र निवासः ।' तण्डुलदेवः—

वर्तते यत्र सा वाणी कृपाणीरिक्तशाखिनः ।
श्रीमन्मालवभूपाल तत्र देशे वसाम्यहम् ॥१६४॥

ततो राजेति । Vocabulary : सौध—महल, palace. अङ्गण—आंगन, courtyard. निस्सारितवान्—निकाल दिया, expelled. कृपाणी—तलवार, sword. रिक्तशाखिन्—रिक्त हस्त, indigent.

Prose Order : श्रीमन् मालवभूपाल ! यत्र रिक्तशाखिनः वाणी कृपाणी वर्तते । अह तत्र देशे वसामि ।

व्याख्या—श्रीमन् श्रीयुत् । मालवभूपाल—मालवनरेश ! यत्र यस्मिन् देशे । रिक्तशाखिनः रिक्तहस्तस्य, शस्त्रहीनस्य, निर्धनस्येतिवा । नरस्य । वाणी गीः । कृपाणी खड्गवदाचारमाणा । वर्तते । अह तत्र तस्मिन् देशे । वसामि, तत्र देशे मम वास इति ।

तब राजा हाथियों को देखने के लिए बाहर गये। तब विद्वान् के कुटुम्ब को देखकर चोल पण्डित को गर्व हुआ कि मैं राजा का प्रेमपात्र हूँ; क्योंकि राजभवन के भीतर मेरा प्रवेश अनिवार्य है । द्वारपाल द्वारा राजा को सूचित करने पर भी विद्वान का कुटुम्ब बाहर ही खड़ा है । जब राजा ने चोल

पण्डित के मन का गर्व समझ लिया और उसे महल के आँगन से निकाल दिया।

काशी निवासी तण्डुलदेव नामक कवि राजा को आशीर्वाद देकर बैठ गया। राजा ने उससे पूछा—विद्वन्! तुम कहाँ के वासी हो?

तण्डुलदेव ने कहा—श्रीमन् मालव-नरेश। मैं उस देश का वासी हूँ, जहाँ शून्य हाथवाले मनुष्य की वाणी ही तलवार है।

तुष्टो राजा तस्मै गजेन्द्रसप्तकं ददौ।

ततः कोऽपि विद्वानागत्य प्राह—

तपसः संपदः प्राप्यास्तत्तपोऽपि न विद्यते।
येन त्वं भोज कल्पद्रुदृग्गोचरमुपेष्यसि ॥१६५॥

तुष्ट इति। **Vocabulary** : सम्पद्—धन, riches. कल्पद्रु—कल्पद्रुम, दृग्गोचर—दृष्टिगोचर, the object of sight.

Prose Order : सम्पदः तपसा प्राप्याः तत् तपः अपि न विद्यते येन भोजकल्पद्रुः त्वं दृग्योचरम् उपेष्यसि।

व्याख्या—तपसा हेतुना। सम्पदः धनानि। लभ्याः प्राप्याः। तत् तपः सम्पत्प्राप्तिहेतुकम्। न विद्यते न गण्यते। तपस्तु तदेव येन भोजकल्पद्रुमस्त्वम् अस्मन्नयनगोचरो भवसि।

प्रसन्न होकर राजा ने उसे सात हाथी दिये।

तब एक विद्वान् ने आकर कहा—

तप द्वारा सम्पत्ति प्राप्त होती है, वह तप भी तो हमने नहीं किया। जिससे कल्पद्रुम रूप भोजराज! तुम हमारी दृष्टि का विषय बने हो।

तस्मै राजा दशगेन्द्रान्ददौ।

ततः कश्चिद्ब्राह्मणपुत्रो भूम्भारवं कुर्वाणोऽभ्येति। ततः सर्वे संभ्रान्ताः 'कथं भूम्भारवं करोषि' इति राज्ञा स्वदृग्गोचरमानीतः पृष्टः। स प्राह—

देव त्वद्दानपाथोधौ दारिद्र्यस्य निमज्जतः।
न कोऽपि हि करालम्बं दत्ते मत्तेभवायक ॥१६६॥

तस्मै राजेति। **Vocabulary** : रव—शब्द, sound. पाथोधि—समुद्र, ocean. निमज्जत्—डूबता हुआ, sinking. करालम्ब—हस्तालम्बन, hand of help. इभ—हाथी, elephant.

Prose Order : मत्तेभदायक देव ! त्वद्दानपाथोधौ निमज्जतः दारिद्र्यस्य कोऽपि करालम्बं नहि दत्ते।

व्याख्या—मत्तेभदायक—मत्त इभः (कर्म०), तेषां दायकः (ष० तत्पु०) तत्सम्बुद्धौ। त्वद्दानपाथोधौ—तव दानं त्वद्दानम् (ष० तत्पु०); त्वद्दानम् एव पाथोधिः (कर्म०), तस्मिन्, तव दानसागरे। निमज्जतः निमज्जनोन्मुखस्य। दारिद्र्यस्य अकिञ्चनत्वस्य। कोऽपि कश्चिदपि जनः। करालम्बं हस्ताश्रयम्। न दत्ते न वितरति।

राजा ने उसे दस हाथी दिये।

तब एक ब्राह्मण का बालक चिल्लाता हुआ आया। उसे देख सभी घबरा गये कि यह क्योंकर चिल्ला रहा है। राजा ने उसे अपने सामने बुलवाकर पूछा। उसने उत्तर दिया—

मदमस्त हाथियों के दाता हे देव! आपके दानरूपी सागर के जल में डूबते हुए दारिद्र्य को (अर्थात् मुझ दरिद्र बालक को) कोई भी हाथ का सहारा नहीं देता। तब प्रसन्न होकर राजा ने उसे तीस हाथी दिये।

ततस्तुष्टो राजा तस्मै त्रिंशद्गजेन्द्रान्प्रादात्।

ततः प्रविशति पत्नीसहितः कोऽपि विलोचनो विद्वान् 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा प्राह—

निजानपि गजान्भोजं ददानं प्रेक्ष्य पार्वती।
गजेन्द्रवदनं पुत्रं रक्षत्यद्य पुनः पुनः ॥१६७॥

ततस्तुष्ट इति। **Vocabulary** विलोचन—अन्धा, blind. गजेन्द्रवदन—गजमुख, गणेश।

Prose Order : पार्वती निजान् अपि गजान् ददानं भोज प्रेक्ष्य अद्य पुनः पुनः गजेन्द्रवदनं पुत्रं रक्षति।

व्याख्या—पार्वती गिरिजा । निजान्—स्वीयान् । अपि गजान् करीन् । ददानं वितरन्तम् अर्थिभ्य इति शेषः । भोज राजानम् । प्रेक्ष्य विलोक्य । गजेन्द्रवदनम्—गजेन्द्रस्यैव वदनं यस्य (बहु०) सः, तम् गजाननम् । पुत्रं स्वतनयं गणेशम् । रक्षति गोपायति । कदाचिद् भोजो गजशङ्कया गणपतिमपि विप्रेभ्यो दद्याद् इति शङ्कते ।

तब पत्नी-सहित एक अंधा विद्वान् पधारा और आशीर्वाद देकर बैठ गया।

पार्वती ने जब देखा कि राजा भोज निजी हाथियों को भी दान में देने लगे हैं तब आज वह अपने पुत्र गजानन की बार-बार रक्षा करती है।

ततो राजा सप्त गजांस्तस्मै ददौ ।

ततो राजा विद्वत्कुटुम्बं तदैव पुरतः स्थितं वीक्ष्य ब्राह्मणं प्राह—

'क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ।'

वृद्धद्विजः प्राह—

घटो जन्मस्थानं मृगपरिजनो भूर्जवसनो
वने वासः कन्दादिकमशनमेवंविधगुणः ।
अगस्त्यः पाथोधिं यदकृत कराम्भोजकुहरे
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१६८॥

ततो राजेति । **Vocabulary :** क्रियासिद्धि, कार्य में सफलता, success in an undertaking. सत्त्व—शक्ति, valour. उपकरण—सामग्री, accessories. भूर्ज—भोजपत्र, barks of birch. कन्द—roots. अशन—भोजन, food. कुहर—गुहा, cavity.

Prose Order : जन्मस्थानं घटः मृगपरिजनः, भूर्जवसनम्, वने वासः, कन्दादिकम् अशनम्, एवंविधगुणः अगस्त्यः यत् कराम्भोजकुहरे पाथोधिम् अकृत, महतां क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति, उपकरणे न ।

व्याख्या—जन्मस्थानम्—जन्मनः स्थानम् (ष० तत्पु०), घटः कुम्भः । मृगपरिजनः—मृगा एव परिजनः सेवकवर्गः (कर्म०), अरण्यचरसहवासः । भूर्जवसनम्—भूर्जकृतं वसनं वस्त्रम् । वने अरण्ये । वासो वसतिः । कन्दादिकं कन्दमूलादि । अशनं भोजनम् । एवंविधगुणसम्पन्नः । अगस्त्यो मुनिः । यत् ।

कराम्भोजकुहरे—करः अम्भोजमिव (उपमितकर्म०), स एव कुहरः (कर्म०) तस्मिन् करतले । यत् । पाथोधिं समुद्रम् । अकृत कृतवान् । महतां महापुरुषाणाम् । क्रियासिद्धिः कार्यसाफल्यम् । सत्त्वे सामर्थ्ये भवति, उपकरणे सामर्थ्यानपेक्षिणि प्रपञ्चे तु नाश्रिता भवति ।

तब राजा ने उसे सात हाथी दिये ।

तब राजा ने विद्वान् के कुटुम्ब को सामने खड़ा देख ब्राह्मण से कहा—

महापुरुषों की कार्यसिद्धि शरीर में ही रहती है, बाहरी सामग्री में नहीं । वृद्ध ब्राह्मण ने कहा—

जिसका कुम्भ जन्म स्थान है, हरिण कुटुम्ब है, भूर्जपत्र वस्त्र है, वन में वास है, कन्द आदि भोजन हैं, इस प्रकार के गुणों से सम्पन्न अगस्त्य ने समुद्र को अपने कर-कमलों के कुहर में जो रखा, इससे सिद्ध होता है कि महापुरुषों की कार्यसिद्धि शरीर पर आश्रित है, बाहरी सामग्री पर नहीं ।

ततो राजा बहुमूल्यानपि षोडशमणींस्तस्मै ददौ । ततस्तत्पत्नीं प्राह राजा—'अम्ब, त्वमपि पठ ।' देवी—

रथस्यैकं चक्रं भुजगयमिताः सप्त तुरगा
निरालम्बो मार्गश्चरणविकलः सारथिरपि ।
रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभसः
क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१६१॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : यमित—बँधे हुए, controlled. निरालम्ब—आलम्बन-रहित, propless. चरणविकल—चरणहीन, crippled.

Prose Order : रथस्य एकं चक्रम्, सप्त तुरगा भुजगयमिताः, मार्गः निरालम्बः, सारथिः अपि चरणविकलः, रविः प्रतिदिनम् अपारस्य नभसः अन्तं याति एव । महतां क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति उपकरणे न ।

व्याख्या—रथस्य वाहनस्य । एकम् अद्वितीयम् । चक्रम् । सप्तसंख्याकाः । तुरगा अश्वाः । भुजगयमिताः भुजगैः सर्पैः यमिता यन्त्रिताः मार्गः पन्थाः । निरालम्बः निराधारः । सारथिः अपि यन्ता अपि । चरणविकलः चरणाभ्यां पादाभ्यां विकलः हीनः । रविः सूर्यः । प्रतिदिनं प्रत्यहम् । अपारस्य ।

अनवद्ये: । नभस: आकाशस्य । अन्तं पारं याति गच्छति । महतां महापुरुषाणाम् । क्रियासिद्धि: कार्यसाफल्यम् । सत्त्वे पराक्रमे । तिष्ठति । उपकरणे बाह्याङ्गेषु न ।

तब राजा ने बहुमूल्य सोलह रत्न उसे दिये। तब उसकी पत्नी से कहा—माता! आप भी समस्या-पूर्त्ति कीजिए। वे बोली—

रथ का एक पहिया, सर्परस्सियों से बँधे हुए सात घोड़े, निराधार सड़क और पादरहित सारथि के होने पर भी सूर्य प्रतिदिन अपार आकाश के पार हो जाता है, अत: महापुरुषों की कार्यसिद्धि उनके शरीर पर अवलम्बित है न कि बाहरी सामग्री पर।

राजा तुष्ट: सप्तदश गजान्सप्त रथांश्च तस्यै ददौ । ततो विप्रपुत्रं प्राह राजा—'विप्रसुत, त्वमपि पठ।' विप्रसुत:—

विजेतव्या लंका चरणतरणीयो जलनिधि-
र्विपक्ष: पौलस्त्यो रणभुवि सहायाश्च कपय: ।
पदातिर्मर्त्योऽसौ सकलमवधीद्राक्षसकुलं
क्रियासिद्धि: सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१७०॥

राजा तुष्ट इति । Vocabulary : चरणतरणीय—crossed on feet. विपक्ष—शत्रु, enemy. पौलस्त्य, Pulastya's son, Ravana. पदाति—पैदल, striding on foot.

Prose Order : लङ्का विजेतव्या, जलनिधि: चरण-तरणीय:, पौलस्त्य: विपक्ष:, रणभुवि सहायाश्च कपय:, पदाति: असौ मर्त्य: सकलं रावणकुलम् अवधीत् । महतां क्रियासिद्धि: सत्त्वे भवति उपकरणे न ।

व्याख्या—लङ्का दशाननपुरी विजेतव्या वशीकार्या । जलनिधि: सागर: । चरणतरणीय: चरणाभ्यां पादाभ्यां तरणीय: पारं गन्तव्य: । पौलस्त्य: पुलस्त्य महर्षेरपत्यं रावण: । विपक्ष: शत्रुत्वेन वर्त्तते । रणभुवि रणाङ्गणे । सहाया: साहाय्यकारिण: । कपय: वानरा: । पदाति: पद्भ्यामेव गच्छन् । असौ प्रख्यातचरित: । मर्त्य: मानुष: । सकलं समस्तम् । राक्षसकुलं रक्षस्समूहम् । अवधीत् अहन् । महतां महापुरुषाणाम् । क्रियासिद्धि: कार्यसाफल्यम् ।

त्वे सामर्थ्ये भवति, उपकरणे सामर्थ्यानपेक्षिणि प्रपञ्चे तु नाश्रिता ति ।

राजा ने प्रसन्न होकर सत्रह हाथी और सात रथ उसे दिये । तब ब्राह्मण के पुत्र से राजा ने कहा--

राजा—ब्राह्मण-पुत्र ! तुम भी समस्या-पूर्त्ति करो ।

ब्राह्मण के पुत्र ने कहा—लङ्का को जीतना है । समुद्र को लाँघना है । पुलस्त्य का पुत्र रावण शत्रु है । युद्ध में सहायक वानर हैं । मनुष्यदेहधारी भगवान् रामचन्द्र ने पैदल ही समग्र राक्षस-वंश को मार डाला । महापुरुषों की कार्यसिद्धि शरीर पर आश्रित है न कि बाहरी सामग्री पर ।

तुष्टो राजा विप्रसुतायाष्टादश गजेन्द्रान्प्रादात् । ततः सुकुमारमनोज्ञनिखिलाङ्गावयवालंकृतां शृङ्गाररसोपजातमूर्त्तिमिव चम्पकलतामिव लावण्यगात्रयष्टिं विप्रस्नुषां वीक्ष्य 'नूनं भारत्याः काऽपि लीलाकृतिरियम्' इति चेतसि नमस्कृत्य राजा प्राह--'मातः, त्वमप्याशिषं वद ।'

विप्रस्नुषा—'देव, शृणु ।

> **धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चञ्चलदृशां**
> **दृशां कोणो बाणः सुहृदपि जडात्मा हिमकरः ।**
> **स्वयं चैकोऽनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति**
> **क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१७१॥**

तुष्टो राजेति । **Vocabulary :** सुकुमार—अत्यन्त कोमल, very tender. मनोज्ञ—मनोहर, charming. गात्रयष्टि—सुन्दर अङ्ग, beautiful parts of the body. स्नुषा—बहू, daughter-in-law. लीलाकृति—a graceful aspect.

पौष्प—पुष्पमय, flowery. मौर्वी—प्रत्यञ्चा, the string of the bow. चञ्चलदृक्—चञ्चलनेत्रयुक्त, the tremulous eyed one. कोण—corner. जडात्मा, the cold-natured or जलात्मा, watery. हिमकर—चन्द्रमा, the moon.

Prose Order : पौष्पं धनुः मधुकरमयी मौर्वी, चञ्चलदृशां दृशां कोणः बाणः, सुहृदपि जडात्मा हिमकरः, स्वयं च एकः अनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति । महतां क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति उपकरणे न ।

व्याख्या—पौष्पम्—पुष्पमयम् । धनुः । मधुकरमयी—भ्रमरमयी मौर्वी प्रत्यञ्चा । चञ्चलदृशां चञ्चलाक्षीणाम् । दृशां कोणः कटाक्षः । बाणः सरः । सुहृदपि मित्रंच । जडात्मा उदासीनः, डलयोरभेदात् जलात्मेति श्लेषः । हिमकरः चन्द्रः । स्वयं च आत्मना । एकः अद्वितीयः, असहाय इति यावत् । अनङ्गः कामः । सकलभुवनं समस्तं विश्वम् । व्याकुलयति दुनोति । महतां महापुरुषाणाम् । क्रियासिद्धिः कार्यसाफल्यम् । सत्त्वे सामर्थ्ये । भवति । उपकरणे सामर्थ्यानपेक्षिणि प्रपञ्चे तु नाश्रिता भवति ।

प्रसन्न होकर राजा ने ब्राह्मण के पुत्र को अठारह हाथी दिये । तब राजा ने ब्राह्मण की पुत्रवधू को देखा । कोमल और मनोहर अंगों से अलंकृत होने से जो शृंगाररस की साक्षात् मूर्त्ति प्रतीत होती थी, चम्पकलता के समान जिसका सुन्दर शरीर शोभायमान था । 'निश्चित ही यह वाग्देवी की विलासमयी मूर्त्ति है' यह सोच मन में नमस्कार करके राजा ने कहा—
माता ! तुम भी आशीर्वाद दो—

ब्राह्मण की पुत्रवधू ने कहा—

पुष्प का धनुष है । भ्रमरों की प्रत्यञ्चा है । चञ्चल नेत्रोंवाली स्त्रियों के नेत्रकोण का बाण है । मित्र भी जडात्मा चन्द्रमा ही मिला है । स्वयं अंगरहित तथा असहाय है तो भी समस्त भुवन को तंग कर रखा है । महान् पुरुषों की कार्यसिद्धि अपने शरीर के बल पर आश्रित है न कि बाहरी आडम्बर पर ।

चमत्कृतो राजा लीलादेवीभूषणानि सर्वाण्यादाय तस्यै ददौ । अनर्घ्यांश्च सुवर्णमौक्तिकवैदूर्यप्रवालांश्च प्रददौ ।

ततः कदाचित्सीमन्तनामा कविः प्राह—

पन्थाः संहर दीर्घतां त्यज निजं तेजः कठोरं रवे
श्रीमन्विन्ध्यगिरे प्रसीद सदयं सद्यः समीपे भव ।

.त्त्वे सामर्थ्ये भवति, उपकरणे सामर्थ्यानपेक्षिणि प्रपञ्चे तु नाश्रिता ति।

राजा ने प्रसन्न होकर सत्रह हाथी और सात रथ उसे दिये। तब ब्राह्मण के पुत्र से राजा ने कहा--

राजा--ब्राह्मण-पुत्र! तुम भी समस्या-पूर्त्ति करो।

ब्राह्मण के पुत्र ने कहा--लङ्का को जीतना है। समुद्र को लाँघना है। पुलस्त्य का पुत्र रावण शत्रु है। युद्ध में सहायक वानर हैं। मनुष्यदेहधारी भगवान् रामचन्द्र ने पैदल ही समग्र राक्षस-वंश को मार डाला। महापुरुषों की कार्यसिद्धि शरीर पर आश्रित है न कि बाहरी सामग्री पर।

तुष्टो राजा विप्रसुतायाष्टादश गजेन्द्रान्प्रादात्। ततः सुकुमारमनोज्ञनिखिलाङ्गावयवालंकृतां शृङ्गाररसोपजातमूर्त्तिमिव चम्पकलतामिव लावण्यगात्रयष्टिं विप्रस्नुषां वीक्ष्य 'नूनं भारत्याः काऽपि लीलाकृतिरियम्' इति चेतसि नमस्कृत्य राजा प्राह--'मातः, त्वमप्याशिषं वद।'

विप्रस्नुषा--'देव, शृणु।

> **धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चञ्चलदृशां**
> **दृशां कोणो बाणः सुहृदपि जडात्मा हिमकरः।**
> **स्वयं चैकोऽनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति**
> **क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१७१॥**

तुष्टो राजेति। **Vocabulary**: सुकुमार--अत्यन्त कोमल, very tender. मनोज्ञ--मनोहर, charming. गात्रयष्टि--सुन्दर अङ्ग, beautiful parts of the body. स्नुषा--बहू, daughter-in-law. लीलाकृति--a graceful aspect.

पौष्प--पुष्पमय, flowery. मौर्वी--प्रत्यञ्चा, the string of the bow. चञ्चलदृक्--चञ्चलनेत्रयुक्त, the tremulous eyed one. कोण--corner. जडात्मा, the cold-natured or जलात्मा, watery. हिमकर--चन्द्रमा, the moon.

Prose Order : पौष्पं धनुः मधुकरमयी मौर्वी, चञ्चलदृशां दृशां कोणः बाणः, सुहृदपि जडात्मा हिमकरः, स्वयं च एकः अनङ्गः सकलभुवनं व्याकुलयति । महतां क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति उपकरणे न ।

व्याख्या—पौष्पम्—पुष्पमयम् । धनुः । मधुकरमयी—भ्रमरमयी मौर्वी प्रत्यञ्चा । चञ्चलदृशां चञ्चलाक्षीणाम् । दृशां कोणः कटाक्षः । बाणः सरः । सुहृदपि मित्रंच । जडात्मा उदासीनः, डलयोरभेदात् जलात्मेति श्लेषः । हिमकरः चन्द्रः । स्वयं च आत्मना । एकः अद्वितीयः, असहाय इति यावत् । अनङ्गः कामः । सकलभुवनं समस्तं विश्वम् । व्याकुलयति दुनोति । महतां महापुरुषाणाम् । क्रियासिद्धिः कार्यसाफल्यम् । सत्त्वे सामर्थ्ये । भवति । उपकरणे सामर्थ्यानपेक्षिणि प्रपञ्चे तु नाश्रिता भवति ।

प्रसन्न होकर राजा ने ब्राह्मण के पुत्र को अठारह हाथी दिये । तब राजा ने ब्राह्मण की पुत्रवधू को देखा । कोमल और मनोहर अंगों से अलंकृत होने से जो श्रृंगाररस की साक्षात् मूर्त्ति प्रतीत होती थी, चम्पकलता के समान जिसका सुन्दर शरीर शोभायमान था । 'निश्चित ही यह वाग्देवी की विलासमयी मूर्त्ति है' यह सोच मन में नमस्कार करके राजा ने कहा—

माता ! तुम भी आशीर्वाद दो—

ब्राह्मण की पुत्रवधू ने कहा—

पुष्प का धनुष है । भ्रमरों की प्रत्यञ्चा है । चञ्चल नेत्रोंवाली स्त्रियों नेत्रकोण का बाण है । मित्र भी जडात्मा चन्द्रमा ही मिला है । स्वयं अंगरहित तथा असहाय है तो भी समस्त भुवन को तंग कर रखा है । महा पुरुषों की कार्यसिद्धि अपने शरीर के बल पर आश्रित है न कि बाहरी आडम्बर पर ।

चमत्कृतो राजा लीलादेवीभूषणानि सर्वाण्यादाय तस्यै ददौ । अनर्घ्यांश्च सुवर्णमौक्तिकवैदूर्यप्रवालांश्च प्रददौ ।

ततः कदाचित्सीमन्तनामा कविः प्राह—

पन्थाः संहर दीर्घतां त्यज निजं तेजः कठोरं रवे
श्रीमन्विन्ध्यगिरे प्रसीद सदयं सद्यः समीपे भव ।

इत्थं दूरपलायनश्रमवतीं दृष्ट्वा निजप्रेयसीं
श्रीमन्भोज तव द्विषः प्रतिदिनं जल्पन्ति मूर्च्छन्ति च ॥१७२॥

चमत्कृत इति । **Vocabulary :** चमत्कृतः—चकित होकर, being wonder-struck. अनर्घ्य—अमूल्य, Precious. वैदूर्य, मूँगे, lapis lazuli.

संहर—त्यागो, give up. दीर्घता—दूरी length. कठोर—प्रचंड, scorching. सदय—दयायुक्त, kind. प्रेयसी—प्रिया, beloved. मूर्च्छन्ति—मूर्च्छित होते हैं, fall to swooning.

Prose Order : पन्थाः । दीर्घतां संहर, रवे ! निजं कठोरं तेजः त्यज, श्रीमन्, सदय विन्ध्यगिरे प्रसीद, सद्यः समीपे भव । श्रीमन् भोज ! तव द्विषः इत्थं दूरपलायनश्रमवतीं निजप्रेयसीं दृष्ट्वा प्रतिदिनं जल्पन्ति मूर्च्छन्ति च ।

व्याख्या—पन्थाः मार्ग ! दीर्घतां दैर्घ्यं दूरतामिति यावत्, संहर संक्षिप । रवे सूर्य ! निजं स्वं कठोरं तीक्ष्णं तेजः औष्ण्यं त्यज परिहर । श्रीमन् शोभा-युक्त सदय दयायुक्त विन्ध्यगिरे विन्ध्यपर्वत प्रसीद प्रसन्नो भव; सद्यः शीघ्रं समीपे निकटे भव । श्रीमन् भोज ! तव द्विषः शत्रवः इत्थम् अनेन प्रकारेण दूरपलायनश्रमवतीं दूरात् पलायनं धावनं तस्मात् उत्थितो यः श्रमः परिश्रम-स्तेन युक्तां खिन्नामिति यावत् निजप्रेयसीं स्वस्त्रियः दृष्ट्वा विलोक्य प्रतिदिनं प्रतिदिवस जल्पन्ति भाषन्ते मूर्च्छन्ति मुह्यन्ति च ।

विस्मित होकर राजा ने लीलादेवी के सभी गहने लेकर उसे दे दिये और बहुमूल्य सुवर्ण, मोती, वैदूर्य एवं मूँगे आदि भी दिये। तब कभी सीमंत नाम के कवि ने कहा—

मार्ग ! अपनी दीर्घता को छोड़ो। सूर्य ! अपने तीक्ष्ण तेज को त्यागो। श्रीमन् विन्ध्याचल प्रसन्न होओ और कृपा करके शीघ्र ही समीप आ जाओ। स प्रकार दूर भागने से थकी हुई अपनी स्त्रियों को देखकर तुम्हारे शत्रु तिदिन बड़बड़ाते हैं, मूर्च्छित भी होते हैं।

तस्मिन्नेव क्षणे कश्चित्सुवर्णकारः प्रान्तेषु पद्मरागमणिमण्डितं सुवर्णभाजनमादाय राज्ञः पुरो मुमोच। ततो राजा सीमन्तकविं प्राह--
'सुकवे, इदं भाजनं कामपि श्रियं दर्शयति।' ततः कविराह—

धारेश त्वत्प्रतापेन पराभूतस्त्विषांपतिः।
सुवर्णपात्रव्याजेन देव त्वामेव सेवते ॥१७३॥

तस्मिन्निति। **Vocabulary** : सुवर्णकार—सोनार, a goldsmith. प्रान्त कोण, corner. पद्मराग—a ruby.

पराभूत—तिरस्कृत, over-powered. त्विषांपति—सूर्य, the sun, the lord of lights. व्याज, बहाना, pretext.

Prose Order : देवधारेश! त्विषां पतिः त्वत्प्रतापेन पराभूतः सुवर्णपात्रव्याजेन त्वामेव सेवते।

व्याख्या—धारेश—धाराया ईशः (ष० तत्पु०), तत्सम्बुद्धौ। त्विषां पतिः सूर्यः। त्वत्प्रतापेन तव प्रतापेन। पराभूतः तिरस्कृतः सन् सुवर्णपात्रव्याजेन सुवर्णनिर्मितं पात्रं (म० कर्म०) सुवर्णपात्रम्, तस्य व्याजः (ष० तत्पु०) तेन, सुवर्णपात्रस्वरूपं विधायेत्यर्थः, त्वामेव सेवते त्वां सेवितुमुपस्थितः। सूर्यप्रतापादपि भोजप्रतापो गरीयान् इति भावः।

उसी समय एक सुवर्णकार ने किनारों पर पद्मरागमणि से मंडित एक सुवर्णपात्र को लेकर राजा के सामने रखा। तब राजा ने सीमंत कवि से कहा—कविश्रेष्ठ! यह पात्र एक अपूर्व शोभा को प्रकट कर रहा है। तब कवि ने कहा—

धारेश! आपके प्रताप से सूर्य भी तिरस्कृत हो गये। देव! सुवर्ण पात्र के बहाने वे तुम्हारी सेवा के लिए उपस्थित हैं।

ततस्तुष्टो राजा तदेव पात्रं मुक्ताफलैरापूर्य प्रादात्।

कदाचिद्राजा मृगयारसेन पुरः पलायमानं वराहं दृष्ट्वा स्वयमेकाकितया दूरं वनान्तमासादितवान्। तत्र कञ्चन द्विजवरमवलोक्य प्राह—'द्विज, कुत्र गन्तासि?'

द्विजः——धारानगरम् ।

भोजः——किमर्थम् ।

द्विजः——भोजं द्रष्टुं द्रविणेच्छया । स पण्डिताय दत्ते । अहमपि मूर्खं न याचे ।

भोजः——विप्र, तर्हि त्वं विद्वान्कविर्वा ।

द्विजः——महाभाग, कविरहम् ।

भोजः——तर्हि किमपि पठ ।

द्विजः——भोजं विना मत्पदसरणिं न कोऽपि जानाति ।

राजा——ममाप्यमरवाणीपरिज्ञानमस्ति । राजा च मयि स्निह्यति । त्वद्गुणं च श्रावयिष्यामि । किमपि कलाकौशलं दर्शय ।

विप्रः——किं वर्णयामि ।

राजा——कलमानेतान्वर्णय ।

विप्रः——

कलमाः पाकविनम्रा मूलतलाघ्रातसुरभिकल्हाराः ।
पवनाकम्पितशिरसः प्रायः कुर्वन्ति परिमलश्लाघाम् ॥१७४॥

ततस्तुष्ट इति । **Vocabulary** : मुक्ताफल——मोती, pearls. आपूर्य——भरकर, having filled. प्रादात्——दिया, gave. मृगयारस——शिकार की इच्छा, fondness for hunting. पलायमान——भागते हुए, running. वराह——सूअर, swine. वनान्त——वनप्रदेश । आसादितवान्——पहुँचा, reached. द्रविण——धन, wealth. सरणि——शैली, style. अमरवाणी,——देववाणी, the language of Gods.

कलम——rice-plants. विनम्र——झुके हुए, bent. पाक——ripeness. आघ्राण——आघ्राणित——कम्पित, shaken by the wind. सुरभि——सुगन्धयुक्त, fragrant. कल्हार——कमल, a lotus. परिमल——गन्ध, fragrance. श्लाघा——प्रशंसा, appreciation.

Prose Order : पाकविनम्राः मूलतलाघ्राणसुरभिकल्हाराः पवनाकम्पितशिरसः प्रायः परिमलश्लाघां कुर्वन्ति ।

व्याख्या—पाकविनम्राः पाकेन परिपक्वतया विनम्रा नताः । मूलतलाघ्राणसुरभिकल्हाराः—मूलतले प्ररोहस्थले आघ्राणाः कम्पमानाः सुरभिणः कल्हारा येषां (बहु०) ते । पवनाकम्पितशिरसः—पवनेन आकम्पितं शिरो येषां (बहु०) ते तथाभूताः । शिरो विधुन्वन्तः शिरोविधूननेन प्रायो बाहुल्येन परिमलश्लाघां कमलवर्तिनः परिमलस्य गन्धस्य श्लाघां प्रशंसां कुर्वन्ति विदधति ।

तब प्रसन्न होकर राजा ने वही पात्र मोतियों से भरकर कवि को दिया। कभी राजा शिकार की अभिलाषा से सामने भागते हुए सूअर को देखकर असहाय होने के कारण दूर तक वन के भीतर पहुँच गये । वहाँ एक श्रेष्ठ ब्राह्मण को देखकर बोले—ब्राह्मण! तुम किधर जा रहे हो?

ब्राह्मण ने कहा—धारा नगरी को।

भोज ने कहा—क्यों?

ब्राह्मण ने कहा—धन की इच्छा से भोज के दर्शनार्थ।

भोज—वे तो विद्वान् को दान देते हैं।

ब्राह्मण—मैं भी मूर्ख से नहीं माँगता हूँ।

भोज—ब्राह्मण! क्या तुम विद्वान् हो अथवा कवि?

ब्राह्मण—महाभाग! मैं कवि हूँ।

भोज—तो कुछ सुनाओ।

ब्राह्मण—बिना भोज के मेरी पद-पंक्ति को कोई भी नहीं समझ सकता।

भोज—मैंने भी देववाणी पढ़ी है। राजा को मुझसे प्रेम है। आपका गुण सुनाऊँगा। अपनी कला का कुछ चातुर्य दिखाइए।

ब्राह्मण—किसका वर्णन करूँ?

भोज—इन धान की कलमों का वर्णन करो।

ब्राह्मण—ये धान की कलमें पकने से झुक गई हैं। इनकी जड़ों में सूँघने से कमल की गन्ध आती है। प्रायः वायु से सिर हिलाती हुई कमलगन्ध की प्रशंसा कर रही हैं।

राजा तस्मै सर्वाभरणान्युत्तार्य ददौ ।

ततः कदाचित्कुम्भकारवधू राजगृहमेत्य द्वारपाल प्राह—'द्वारपाल, राजा द्रष्टव्यः'। स आह—'किं ते राज्ञा कार्यम्'। सा चाह—'न तेऽभिधास्यामि। नृपाग्र एव कथयामि।' स सभायामागत्य प्राह—'देव, कुम्भकारप्रिया काचिद्राज्ञो दर्शनाकांक्षिणी न वक्ति मत्पुरः कार्यम्। भवत्पुरतः कथयिष्यति।' राजा—'प्रवेशय।' सा चागत्य नमस्कृत्य वक्ति—

देव मृत्खननाद्दृष्टं निधानं वल्लभेन मे।
स पश्यन्नेव तत्रास्ते त्वां ज्ञापयितुमभ्यगाम् ॥१७५॥

राजेति। **Vocabulary :** खनन—खोदना, digging. निधान—निधि, a treasure. अभ्यगाम्—आई हूँ, I have come.

Prose Order : देव! मे वल्लभेन मृत्खननात् निधानम् दृष्टम्, स पश्यन् तत्र आस्ते। (अहं) त्वां ज्ञापयितुम् अभ्यगाम्।

व्याख्या—देव महाराज! मृत्खननात्—मृदः खननम् (ष० तत्पु०) तस्मात्, मृत्तिकां खनता मे मम वल्लभेन प्रियेण निधानं द्रव्यराशिः दृष्टं चक्षुर्विषयीकृतम्। स मद्वल्लभः पश्यन् निधिं रक्षन् तत्र एव निधिलब्धिस्थाने आस्ते वर्त्तते। अहं त्वां ज्ञापयितुं निवेदयितुम् अभ्यगाम् आगताऽस्मि।

राजा ने उसे सभी गहने उतार कर दिये।

तब कभी एक कुम्हार की बहू ने राजभवन में आकर द्वारपाल से कहा—द्वारपाल! राजा से मिलना है। उसने कहा—राजा से आपको क्या काम है? उसने कहा—मैं तुम्हें नहीं कहूँगी। राजा के सामने ही कहूँगी। वह सभा में आकर बोला—देव! एक कुम्हारिन आपके दर्शन की अभिलाषिणी है। मुझे कार्य नहीं बताती। आपके सामने ही बतायगी। राजा ने कहा—उसे लाओ। वह आई और नमस्कार करके बोली—

देव! मिट्टी खोदते हुए मेरे स्वामी ने धनराशि देखी है। वह वहीं उसकी देखरेख को ठहरे हैं। मैं आपको सूचित करने आई हूँ।

राजा च चमत्कृतो निधानकलशमानयामास। तद्द्वारमुद्घाट्य यावत्पश्यति राजा तावत्तदन्तर्वर्तिद्रव्यमणिप्रभामण्डलमालोक्य कुम्भकारं पृच्छति--'किमेतत्कुम्भकार!' स चाह--

राजंश्चन्द्रं समालोक्य त्वां तु भूतलमागतम्।
रत्नश्रेणिमिषान्मन्ये नक्षत्राण्यभ्युपागमन् ॥१७६॥

राजेति। **Vocabulary** : चमत्कृत–चकित, wonder-struck. निधान-कलश–धनपूर्ण घट, a treasure-jar. आनाययामास– caused it to be brought. उत्पाट्य–खोलकर, having opened. अन्तर्वर्ति– भीतर स्थित, lying inside. मणिप्रभामण्डल–मणियों की मण्डलाकार प्रभा, a circular lustre of gems. अभ्युपागमन्—आ पहुँचे हैं, have come to present themselves to you.

Prose Order : राजन्! भूतलम् आगतं त्वां तु चन्द्रं समालोक्य नक्षत्राणि रत्नश्रेणिमिषात् (त्वाम्) अभ्युपागमन् (इति) मन्ये।

व्याख्या-- राजन् भोज! भूतलं महीम् आगतं प्राप्तं त्वां तु समालोक्य दृष्ट्वा नक्षत्राणि ज्योतींषि रत्नश्रेणिमिषात् मणिश्रेणिव्याजेन त्वाम् अभ्यपागमन् प्राप्तानि।

राजा भी आश्चर्य से चकित हुए। धनराशि से परिपूर्ण उस कलश को मँगवाया। जब राजा ने उसका ढकना खोलकर देखा तब उसके भीतर के द्रव्य और मणियों की कान्ति को देखकर कुम्हार से पूछा–'कुम्हार! यह क्या?' कुम्हार बोला—

राजन्, मैं चन्द्र के धरातल पर आया हुआ देखकर मैं समझता हूँ कि रत्नराशि के रूप में नक्षत्र नीचे उतर आये हैं।

राजा कुम्भकारमुखाच्छ्लोकं लोकोत्तरमाकर्ण्य चमत्कृतस्तस्मै सर्वं ददौ।

ततः कदाचिद्राजा रात्रावेकाकी सर्वतो नगरचेष्टितं पश्यन्पौरगिरमाकर्णयंश्चचार। तदा क्वचिद्वैश्यगृहे वैश्यः स्वप्रियां प्राह--'प्रिये, राजा स्वल्पदानरतोऽप्युज्जयिनीनगराधिपतेर्विक्रमार्कस्य दानप्रतिष्ठां कांक्षते। सा किं भोजेन

प्राप्यते । कैश्चित्स्तोत्रपरायणैर्मयूरादिकविभिर्महिमानं प्रापितो भोजः । परं भोजो भोज एव । प्रिये, शृणु—

आबद्धकृत्रिमसटाजटिलांसभित्ति-
रारोपितो यदि पदं मृगवैरिणः श्वा ।
मत्तेभकुम्भतटपाटनलम्पटस्य
नादं करिष्यति कथं हरिणाधिपस्य ॥१७७॥

राजेति । **Vocabulary** : लोकोत्तर—अलौकिक, extraordinary. नगरचेष्टितम्—नगर की हलचल, city's manner of life. स्तुतिपरायण—सर्वदा स्तुति करनेवाला, one who is constantly at praise. महिमानं प्रापितः—ऊँचा चढ़ा दिया, elevated to greatness.

आबद्ध—पहिने हुए, clad in. कृत्रिम बनावटी, artificial. सटा—ग्रीवा के बाल, manes. जटिल, सटा हुआ thick. अंसभित्ति स्थूल कंधे, fat shoulders. आरोपित— चढ़ाया हुआ, caused to ascend. पद-स्थान, position. मृगवैरिण— सिंह, a lion. श्वा—कुत्ता, a dog. मत्त—मस्त, rutting. इभ—हाथी, elephant. कुम्भतट—vessel-like elevated back. पाटन—फोड़ना, splitting. लम्पट—लोभी, greedy. हरिणाधिप—हरिणों का स्वामी सिंह, a lion.

Prose Order : आबद्धकृत्रिमसटाजटिलांसभित्तिः श्वा यदि मृगवैरिणः पदम् आरोपितः मत्तेभकुम्भतटपाटनलम्पटस्य हरिणाधिपस्य नादं कथं करिष्यति ?

व्याख्या—आबद्धकृत्रिमसटाजटिलांसभित्तिः—आ समन्तात् बद्धा कृत्रिमा सटा, जटिले अंसभित्तिः च यस्य (बहु०) सः। अंसभित्तिः —अंसौ भित्तिरिव, स्थूलावंसावित्यर्थः । कृत्रिमसटाभारवाहिनीं स्थूलांसाकारवतीं सिंहत्वचं दधानः । श्वा सारमेयः । यदि केनापि जनेन मगवैरिणः सिंहस्य पदं प्रतिष्ठाम् आरोपितः गमितः स्यात् । तदाऽसौ मत्तेभ कुम्भतटपाटनलम्पटस्य मत्ताः

इभाः (कर्म०) मत्तेभाः मत्तहस्तिनः तेषां कुम्भाः (ष० तत्पु०) ताः-नीव (उपमितकर्म०), तेषां पाटनम् (ष० तत्पु०) तत्र लम्पटः (स० तत्पु०) तस्य। हरिणाधिपस्य सिंहस्य । नादं घोषम्। कथं करिष्यति न कथमपि कर्त्तुं समर्थ इति भावः ।

कुम्हार के मुख से अपूर्व श्लोक को सुनकर चकित होकर राजा ने उसे सब कुछ दे दिया। तब कभी राजा रात को अकेले चारों ओर नगर की हलचल देखता हुआ, पुरवासियों की बातें सुनता हुआ घूमने लगा। तब किसी वैश्य के घर में वैश्य अपनी पत्नी से कह रहा था कि राजा भोज अल्प दान देकर भी उज्जयिनी के स्वामी विक्रमादित्य की शोभा पाना चाहते हैं। वह भोज को कैसे मिल सकती है? राजा प्रशंसापरायण मयूर आदि कुछ कवियों ने भोज की महिमा को बढ़ाया है। किन्तु भोज भोज ही रहा। प्रिये, सुनो।

बनावटी बाल तथा कृत्रिम स्थूल कंधों की खाल पहनाकर यदि कुत्ते को सिंह के स्थान पर बैठा दिया जाय तो क्या वह मस्त हाथियों के मस्तकों के विदारणशील मृगराज सिंह के समान गर्ज सकेगा ?

राजा श्रुत्वा विचारितवान्—'असौ सत्यमेव वदति।' ततः पुनर्वदन्तं शृणोति—

आपन्न एव पात्रं देहीत्युच्चारणं न वैदुष्यम्।
उपपन्नमेव देयं त्यागस्ते विक्रमार्क किम वर्ण्यः ॥१७८॥

राजेति। **Vocabulary** : आपन्न—आपद्गत, a person in misfortune. पात्र—योग्य, deserving. उच्चारण—कथन, वैदुष्य—विद्वत्ता, wisdom. उपपन्न—योग्य, deserving. विक्रमार्क—विक्रमादित्य ।

Prose Order : आपन्न एव पात्रम्, देहि इत्युच्चरणं वैदुष्यं न, उपपन्नम् एव देयम्, विक्रमार्क ! ते त्यागः किमु वर्ण्यः ?

व्याख्या—आपन्नः आपद्गत एव पुरुषः पात्रं दानार्हः, अतस्तस्मै देहि द्रव्यं देयम् इत्युच्चारणम् इति कथनं वैदुष्यं पाण्डित्यं न प्रकटयति। उपपन्नम्

एव देयं युक्तियुक्तं योग्याय देयम् इत्येवं नियममनुसरन् भो विक्रमार्क ! ते तव त्यागः किमु कथं वर्ण्यते !

राजा ने सुनकर विचार किया—यह सत्य कहता है । तब बार-बार बोले गये पद्य को उसने सुना ।

'जब कोई योग्य व्यक्ति आपद्ग्रस्त हो तभी कहना कि इसे दो' बुद्धिमत्ता नहीं कहलाता । 'योग्यता के अनुसार (सभी को) ही देना चाहिए ।' विक्रमादित्य ! तुम्हारे त्याग का वर्णन कैसे हो ?

विक्रमार्क त्वया दत्तं श्रीमन्ग्रामशताष्टकम् ।
अर्थिने द्विजपुत्राय भोजे त्वन्महिमा कुतः ॥१७६॥

राजेति । **Vocabulary** : शताष्टक—एक सौ आठ, one hundred and eight.

Prose Order : श्रीमन् विक्रमार्क ! त्वया अर्थिने द्विजपुत्राय ग्रामशताष्टकं दत्तम् । भोजे त्वन्महिमा कुतः ?

व्याख्या—श्रीमन् विक्रमार्क विक्रमादित्य । त्वया । अर्थिने याचकाय । द्विजपुत्राय विप्रसुताय । ग्रामशताष्टकम्—ग्रामाणां शतम् (ष० तत्पु०) ग्रामशतम्, ग्रामशतम् अष्टकं चेति (द्वन्द्व) ग्रामशताष्टकम् । दत्तं वितीर्णम् । भोजे राजनि त्वन्महिमा त्वद्गौरवं कुतः, नैवास्तीति भावः ।

प्राप्नोति कुम्भकारोऽपि महिमान प्रजापतेः
यदि भोजेऽप्यवाप्नोति प्रतिष्ठां तव विक्रमः ॥१८०॥

प्राप्नोतीति । **Vocabulary** : प्रजापति—सृष्टि का रचयिता ब्रह्मा ।

Prose Order : विक्रम ! यदि भोजः अपि तव प्रतिष्ठाम् अवाप्नोति, कुम्भकारः अपि प्रजापतेः महिमानं प्राप्नोति ।

व्याख्या—विक्रम—विक्रमादित्य ! यदि भोजोऽपि तव प्रतिष्ठां पदम् अवाप्नोति तर्हि कुम्भकारोऽपि प्रजापतेर्ब्रह्मणो महिमानं प्रतिष्ठां प्राप्नोति प्राप्तुं क्षमः ।

यदि भोज भी तुम्हारे विक्रम की महिमा को पा जाय तो कुम्हार भी (घड़ा बनाने के कारण) प्रजापति ब्रह्मा की महिमा को पा जायगा ।

राजा—'लोके सर्वोऽपि जनः स्वगृहे निःशङ्कं सत्यं वदति । मया वान्येन वा सर्वथा विक्रमार्कप्रतिष्ठा न शक्या प्राप्तुम्' ।

ततः कदाचित्कश्चित्कविं राजद्वार समागत्याह—'राजा द्रष्टव्यः' इति । ततः प्रवेशितो राजान 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा तदाज्ञयोपविष्टः पठति—

कविषु वादिषु भोगिषु देहिषु
द्रविणवत्सु सतामुपकारिषु ।
धनिषु धन्विषु धर्मधनेष्वपि
क्षितितले नहि भोजसमो नृपः ॥१८१॥

राजेति । **Vocabulary** : वादिन्—वक्ता, orator. द्रविणवान्—धनी । धन्विन्—धनुषधारी, an archer.

Prose Order : कविषु वादिषु भोगिषु देहिषु द्रविणवत्सु सताम् उपकारिषु धनिषु धन्विषु धर्मधनेषु अपि क्षितितले भोजसमः नृपः नहि ।

व्याख्या—कविषु काव्यप्रणेतृषु, वादिषु, वक्तृषु, भोगिषु ऐश्वर्योपभोक्तृषु, देहिषु शरीरवत्सु, द्रविणवत्सु धनिषु सतां सज्जनानाम् उपकारिषु उपकर्त्तृषु, धनिषु धनवत्सु, धन्विषु धनुर्धरेषु, धर्मधनेषु धर्मात्मसु मध्ये क्षितितले धरातले भोजसमो भोजतुल्यो नृपो राजा नहि विद्यते नास्ति ।

राजा ने कहा—

संसार में सभी लोग अपने घर में निश्शंक होकर सत्य बोलते हैं । न मैं और न कोई अन्य व्यक्ति किसी प्रकार विक्रमादित्य की महिमा को पा सकता है ।

तब कभी कोई कवि राजद्वार को आकर बोला—मुझे राजा के दर्शन करने हैं । जब वह आज्ञा पाकर प्रविष्ट हुआ तब उसने राजा को आशीर्वाद दिया । राजा की आज्ञा पाकर बैठा और कहने लगा—

इस भूतल में कवि, वादी तथा भोगी पुरुषों में, सज्जनों का उपकार करनेवाले धनियों, धनुषधारियों तथा धार्मिकों में भी भोज के समान कोई कवि नहीं है ।

राजा तस्मै लक्षं प्रादात् । सर्वाभरणान्युत्तार्य तुरगं च तस्मै ददौ ।

ततः कदाचिद्राजा क्रीडोद्यानं प्रस्थितो मध्येमार्गं कामपि मलिनांशुवसनां तीक्ष्णकरतपनकरविदग्धमुखारविन्दां सुलोचनां लोचनाभ्यामालोक्य पप्रच्छ—

'का त्वं पुत्रि' इति ।

सा च तं श्रीभोजभूपालं मखश्रिया विदित्वा तुष्टा प्राह—

'नरेन्द्र, लुब्धकवधूः'

हर्षसंभृतो राजा तस्याः पटुप्रबन्धानुबन्धेनाह—'हस्ते किमेतत्'

सा चाह— 'पलम्'

राजाह—'क्षामं किं' ?

सा चाह—

'सहजं ब्रवीमि नृपते यद्यादराच्छ्रूयते ।'
गायन्ति त्वदरिप्रियाश्रुतटिनीतीरेषु सिद्धाङ्गना ।
गीतान्धा न तृणं चरन्ति हरिणास्तेनामिषं दुर्बलम् ॥१६२॥

राजेति । **Vocabulary** : क्रीडोद्यान—pleasure-grove. अंशुक—उत्तरीय, upper garment. तीक्ष्णकर—प्रचण्ड रश्मि, hot-rayed. तपन—सूर्य the sun. कर—किरण, rays. विदग्ध—विशेष रूप से दग्ध, scorched. लुब्धक—शिकारी, a hunter सम्भृत—पूर्ण, filled. पटु—निपुण, dexterous. बन्ध—composition. अनुबन्ध—अविच्छिन्नता, continuity. पल—मांस । क्षाम—कृश, thin. सहज—स्वाभाविक, natural. तटिनी—नदी, a river. सिद्धाङ्गना—the ladies of the siddhas. आमिष—मांस, flesh.

Prose Order : पुत्रि ! त्वं का ? नरेन्द्र ! अहं लुब्धकवधूः (अस्मि) एतत् हस्ते किम् ? पलम् (अस्ति) । क्षामं किम् ? नृपते । सहजं ब्रवीमि यदि आदरात् श्रूयते । त्वदरिप्रियाश्रुतटिनीतीरेषु सिद्धाङ्गना गीतं गायन्ति, हरिणाः तृणं न चरन्ति, तेन आमिषं दुर्लभम् ।

व्याख्या—पुत्रि ! इति स्नेहामन्त्रणे। त्वां का? स्वपरिचयं देहीति राज्ञः प्रश्नः । नरेन्द्र उत्तरमाह—अहं लुब्धकवधूः लुब्धकस्य व्याधस्य वधूः भार्या अस्मि । पुनश्च नृपस्य प्रश्नः । एतत् पुरतस्तव—हस्ते दृश्यमाणं किम् ? तदुत्तरं व्याधवधूराह—पलं मांसम् अस्ति । पुनश्च प्रश्नः—क्षामं कृशं किं कुतः ? तदुत्तरमाह—नृपते राजन् ! सहजं सत्यं ब्रवीमि वदामि यदि आदराद् एकाग्रधिया श्रूयते श्रुतिविषयीक्रियते । तदेवाह—त्वदरिप्रियाश्रुतटिनीतीरेषु—तव अरयः (ष० तत्पु०) त्वदरयः, त्वद्वैरीणां प्रिया (ष० तत्पु०) भार्याः तासाम् अश्रूणि (ष० तत्पु०) तैरुत्थितास्तटिन्यः (म० तृ० तत्पु०) तासां तीरं तेषु । सिद्धाङ्गना देवपत्नयः । गीतं गायन्ति । हरिणाः मृगाः । तृणं न चरन्ति भक्षन्ति तेन हेतुना आमिषं मांसं दुर्लभं दुष्प्राप्यम् ।

राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये । अपने शरीर से उतारकर सब गहने तथा एक घोड़ा उसे दिया ।

तब कभी राजा क्रीडोद्यान की ओर चला । मार्ग के बीच, मलिन दुपट्टा पहिने हुई, सूर्य की प्रचंड किरणों सें जिसका मुख-कमल विशेषतः जला-सा था, सुन्दर नेत्रयुक्त एक नारी को देखकर राजा ने पूछा—पुत्री, तुम कौन हो ? मुख की शोभा से उसे राजा भोज जानकर और प्रसन्न होकर बोली—नरेश ! मैं शिकारी की पत्नी हूँ ।

उसकी निपुण प्रबन्ध-रचना से प्रसन्न होकर राजा ने पूछा—हाथ में यह क्या है ?

उसने कहा—माँस ।

राजा ने कहा—थोड़ा क्यों है ?

उसने कहा—सत्य कहती हूँ, राजन् ! यदि तुम ध्यान से सुनोगे तो ।

तुम्हारे शत्रु-स्त्रियों की आँख-रूपी नदी के तटों पर सिद्धों की नारियाँ गान करती हैं, जिस गान से मुग्ध होकर हरिण घास नहीं खाते, जिससे उनका माँस पतला पड़ गया है ।

राजा तस्यै प्रत्यक्षरं लक्षंप्रादात् ।

ततो गृहमागत्य गवाक्ष उपविष्टः । तत्र चासीनं भोजं दृष्ट्वा राजवर्त्मनि स्थित्वा कश्चिदाह—देव, सकलमहीपालं, आकर्णय ।

इतश्चेतश्चाद्भिर्विघटिततटः सेतुरुदरे
धरित्री दुर्लङ्घ्या बहुलहिमपङ्को गिरिरयम् ।
इदानीं निर्वृत्ते करितुरगनीराजनविधौ
न जाने यातारस्तव च रिपवः केन च पथा ।।१८३।।

राजेति । **Vocabulary** : गवाक्ष—झरोखा, a latticed window. आसीन—उपविष्ट । अद्भिः—जल से । सेतुः—बाँध, bridge. उदर—मध्य, middle. धरित्री—पृथ्वी, the earth. दुर्लङ्घ्य, दुर्लङ्घनीय, not easily traversable. पङ्क—कीचड़, mire. निर्वृत्त, समाप्त होना, finished. नीराजनविधि—दीपादिपूजाविधान—the sacred and religious ceremony of lustration. यातारः—जायँगे, will go.

Prose Order : सेतुः अद्भिः इतश्च इतश्च उदरे विघटिततटः, धरित्री दुर्लङ्घ्या, अयं गिरिः बहुलहिमपङ्कः । इदानीं करितुरगनीराजनविधौ निर्वृत्तं तव रिपवः केन च पथा यातारः न जाने ।

व्याख्या—इतश्चेतश्च समन्तात् । उदरे मध्ये । विघटिततटः विघटिते भग्ने तटे यस्य स तथाभूतः । धरित्री पृथ्वी । दुर्लङ्घ्या अलङ्घनीया । अयं गिरिः सानुमान् । बहुलहिमपङ्क बहुलं हिमम् (कर्म०) बहुलहिमम्, तदेव पङ्को यस्य (बहु०) सः । इदानीम् अभियानसमये । करितुरगनीराजनविधौ- करिणः तुरगाश्चेति (द्वन्द्व) करितुरगम् (द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् इति समासे नपुंसकम् एकवद्भावश्च; करितुरगाणां नीराजनम् (ष० तत्पु०), दीप-प्रकाशादिनाऽभ्यर्चनम्, तस्य विधिः (ष० तत्पु०) तस्मिन् निर्वृत्ते परिसमाप्ते सति तव रिपवः शत्रवः केन च पथा मार्गेण यातारः गमिष्यन्ति इति न जाने ।

राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक लाख रुपये दिये । तब राजा घर में आकर झरोखे के सामने बैठ गया और वहाँ बैठे हुए भोज को देखकर राजमार्ग में खड़े होकर किसी ने कहा—समस्त पृथ्वी के पालक देव ! सुनिए ।

हाथियों तथा घोड़ों की सजावट का कार्य सम्पन्न होने पर इधर-उधर स्नान-जल फैल जाने से पुल का किनारा फूट गया है और उस पर से

चलना भी दुष्कर हो गया है। पर्वत की भूमि भी बर्फ अधिक पड़ने से दलदल-सी हो गई है। अब ना मालूम, तुम्हारे शत्रु किस मार्ग से जायेंगे ?

तुष्टो भोजो वर्त्मनि स्थितायैव तस्मै वंश्यान्पञ्च गजान्ददौ ।
कदाचिद्राजा मृगयारसपराधीनो हयमारुह्य प्रतस्थे ।
ततो नदीं समुत्तीर्णं शिरस्यारोपितेन्धनम् ।
वेषेण ब्राह्मणं ज्ञात्वा राजा प्रप्रच्छ सत्वरम् ॥१८४॥

तुष्टो भोज इति । **Vocabulary** : वंश्य—उत्तम वंश का, of noble breed. हय—अश्व, horse. आरोपित—रखे हुए, carrying. इन्धम्—लकड़ी, wood.

Prose Order : ततः नदीं समुत्तीर्णं शिरसि आरोपितेन्धनं ब्राह्मणं वेषेण ज्ञात्वा राजा सत्वरं पप्रच्छ ।

व्याख्या—नदीं समुत्तीर्णं नदीं समुत्तीर्य सम्प्राप्तं शिरसि उत्तमाङ्गे आरोपितेन्धनम् आरोपितानि इन्धनानि येन (बहु०) स आरोपितेन्धनस्तं तथाभूतं ब्राह्मणं विप्रं वेषेण परिधानेन ज्ञात्वा मत्वा तं सत्वरं शीघ्रं पप्रच्छ पृष्टवान् ।

सन्तुष्ट होकर भोज ने उसे मार्ग-मार्ग में खड़े-खड़े ही पाँच श्रेष्ठ हाथी दिये ।

एक बार राजा शिकार खेलने की इच्छा से घोड़े पर चढ़कर चल पड़ा। तब नदी में तैरते हुए, सिर पर ईंधन लाते हुए ब्राह्मण को वेष से पहचान कर राजा ने जल्दी से पूछा—

'कियन्मानं वजिलं'

स आह—

'जानुदघ्नं नराधिप ।'

चमत्कृतो राजाह—

'ईदृशी किमवस्था ते'

स आह—

'नहि सर्वे भवादृशाः' ॥१८५॥

कियन्मानमिति । **Vocabulary** : कियत्—कितना, how much, मान—मानयुक्त, गहरा, deep. जानुदघ्न—घुटनों तक गहरा, knee-deep.

Prose Order : विप्र ! जलं कियन्मानम् ? नराधिप ! जानुदघ्नम्—ते ईदृशी अवस्था किम् ? सर्वे भवादृशा नहि ।

व्याख्या—कियन्मानम्—कियद् गहनम् ? जानुदघ्नम्—जानुपर्यन्तं गहनम् ।

ब्राह्मण ! नदी में जल कितना गहरा है ?
उसने कहा—राजन् ! घुटनों तक ।
चकित होकर राजा ने कहा—तुम्हारी ऐसी अवस्था क्यों ?
ब्राह्मण ने कहा—सभी आप-जैसे नहीं हो सकते ।

राजा प्राह कुतूहलात—'विद्वन्, याचस्व कोशाधिकारिणम् । लक्षं दास्यति मद्वचसा ।' ततो विद्वान्काष्ठं भूमौ निक्षिप्य कोशाधिकारिणं गत्वा प्राह—'महाराजेन प्रेषितोऽहम् । लक्षं मे दीयताम् ।' ततः स हसन्नाह—'विप्र, भवन्मूर्त्तिर्लक्षं नार्हति ।' ततो विषादी स राजानमेत्याह—'स पुनर्हसति देव, नार्पयति ।' राजा कुतूहलादाह—'लक्षद्वयं प्रार्थय । दास्यति ।' पुनरागत्य विप्रः 'लक्षद्वयं देयमिति राज्ञोक्तम्' इत्याह । स पुनर्हसति । विप्रः पुनरपि भोजं प्राप्याह—'स पापिष्ठो मां हसति नार्पयति ।' ततः कौतूहली लीलानिधिर्महीं शासञ्श्रीभोज-राजः प्राह—'विप्र, लक्षत्रयं याचस्व । अवश्यं स दास्यति ।' स पुनरेत्य प्राह—'राजा मे लक्षत्रयं दापयति ।' स पुनर्हसति । ततः क्रुद्धो विप्रः पुनरेत्याह—'देव, स नार्पयत्येव ।

राजन्कनकधाराभिस्त्वयि सर्वत्र वर्षति ।
अभाग्यच्छत्रसंछन्ने मयि नायान्ति बिन्दवः ॥१८६॥

राजेति। **Vocabulary** : कोशाधिकारिन्, treasurer. लीलानिधि—full of jokes. कनकधारा—सुवर्णधारा, torrents of gold. छत्र—umbrella. संच्छन्न—ढका हुआ, covered.

Prose Order : राजन् ! कनकधाराभिः सर्वत्र वर्षति त्वयि अभाग्यच्छत्रसंच्छन्ने मयि विन्दवः नायान्ति ।

व्याख्या—कनकधाराभिः सुवर्णौघेन । सर्वत्र सर्वेषु स्थानेषु । वर्षति वृष्टिं कुर्वाणे । त्वयि । मयि च । अभाग्यच्छत्र संच्छन्ने—अभाग्यं हतभाग्यमेव छत्रं सुवर्णधारासंसर्गप्रतिरोधकं तेन संच्छन्ने संच्छादिते मयि विन्दवः सुवर्णधाराकणाः नायान्ति ।

राजा ने आश्चर्य से कहा—विद्वन् ! मेरी आज्ञा से एक लाख रुपये कोषाध्यक्ष से माँग लीजिए। वह आपको दे देगा। तब विद्वान् ने पृथ्वी पर लकड़ियों को रखकर कोषाध्यक्ष के पास जाकर उससे कहा—महाराज ने मुझे भेजा है । मुझे एक लाख रुपये दीजिए । तब उसने हँसकर कहा—आपकी आकृति लाख रुपये पाने के योग्य नहीं है। तब वह दुःखित होकर राजा के पास आकर बोला—देव ! वह तो हँसता है, देता नहीं । राजा ने चकित होकर कहा—दो लाख माँगो । वह देगा । फिर आकर ब्राह्मण ने कोषाध्यक्ष से कहा—राजा ने कहा है, दो लाख रुपये मुझे दो। कोषाध्यक्ष फिर हँसा। ब्राह्मण फिर भोज के पास आया और बोला—वह पापी कोषाध्यक्ष हँसता है, मुझे धन नहीं देता । तब कौतुक के भाण्डार पृथ्वी के शासक भोजराज ने चकित होकर कहा—ब्राह्मण ! तीन लाख माँगो, वह अवश्य देगा। ब्राह्मण ने फिर आकर कोषाध्यक्ष से कहा—मुझे तीन लाख दो; राजा ने कहा है । वह फिर हँसने लगा । तब क्रोध में आकर ब्राह्मण ने लौटकर राजा से कहा—देव ! वह नहीं देता ।

राजन् ! आप सुवर्ण-धाराओं की वर्षा सभी जगह कर रहे हो, किन्तु अभाग्य-रूपी छत्र से आच्छादित मुझपर वर्षा की बूँदें भी नहीं पड़तीं ॥

त्वयि वर्षति पर्जन्ये सर्वे पल्लविता द्रुमाः ।
अस्माकमर्कवृक्षाणां पूर्वपत्रेषु संशयः ॥१८७॥

त्वयीति । । **Vocabulary** : पल्लवित—पत्रयुक्त, rich with foliage. अर्कवृक्ष—आक के वृक्ष, Ark plant. संक्षय—नाश, decay.

Prose Order : पर्जन्ये त्वयि वर्षति सर्वे द्रुमाः पल्लविताः । अर्क-वृक्षाणाम् अस्माकं तु पूर्वपत्रेषु संक्षयः ।

व्याख्या—पर्जन्ये मेघे मेघरूपे इत्यर्थः । त्वयि वर्षति सर्वे द्रुमा वृक्षाः पल्लविताः पल्लवयुक्ताः जाताः । विरलपत्रवतामर्कवृक्षाणान्तु पूर्वपत्राण्यपि क्षीणानि ।

जब मेघ-स्वरूप आप वर्षा कर रहे हो, सभी वृक्षों पर पत्ते उग आये हैं, किन्तु हम-जैसे आक-वृक्षों के पहले पत्ते भी झड़ गये ।

एवमस्य परमेकमुद्यमं
निस्त्रपत्वमपरस्य वस्तुनः ।
नित्यमुष्णमहसा निरस्यते
नित्यमन्धतमसं प्रधावति ॥१८८॥

एवमिति । **Vocabulary** : परं—एकमात्र, invariable. उद्यम—effort. निस्त्रपत्वम्—निर्लज्जता, absence of the feeling of shame. उष्णमहस्—सूर्य, the hot-rayed sun. निरस्यते—भगाया जाता है, is driven out. अन्धतमस—the supreme darkness.

Prose Order : एवम् अस्य परम् एकम् उद्यमं (लोको वदति) अपरयस्य वस्तुनः (अन्धकारस्य) निस्त्रपत्वं च (लोको भाषते) । अन्धतमसम् (अन्धन्तमः) नित्यम् उष्णमहसा निरस्यते, नित्यं प्रधावति ।

व्याख्या—एवम् इत्थं वक्ष्यमाणम् अस्य सूर्यस्य परम् उत्कृष्टम् एकम् उद्यमम् उद्योगं लोको वदति । यदयं विवस्वान सततम् अन्धकारव्यपनयने प्रयत्न-शीलः । अन्धतमसम् (अन्धं तमः) नित्यं सदा उष्णमहसा सूर्यतेजसा निरस्यते विनाश्यते, नित्यं च प्रधावति, पुनरपि न लज्जते इति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार मनुष्य की सफलता का एकमात्र यही उपाय है कि वह किसी से भी लज्जा न करे । प्रतिदिन सूर्य के तेज से अंधकार तिरस्कृत होता है, किन्तु वह नित्य ही दौड़ा आता है । (अर्थात् तिरस्कृत होने पर भी उसे लज्जा नहीं आती ।)

ततो राजा प्राह—

कोधं मा कुरु मद्वाक्याद्गत्वा कोशाधिकारिणम्।
लक्षत्रयं गजेन्द्राश्च दश ग्राह्यास्त्वया द्विज ॥१८९॥

ततो राजेति। **Prose Order** : द्विज ! क्रोधं मा कुरु: कोशाधिकारिणं गत्वा मद्वाक्यात् लक्षत्रयं दश गजेन्द्राश्च त्वया ग्राह्याः ।

व्याख्या—कोशाधिकारिणं कोशाध्यक्षम् ।

तब राजा ने कहा—क्रोध मत करो, कोषाध्यक्ष के पास जाओ और मेरी ओर से उसे कहकर तीन लाख रुपये और दस हाथी ले लो ।

ततस्त्वङ्गरक्षकं प्रेषयति । ततः कोषाधिकारी धर्मपत्रे लिखति—

लक्षं लक्षं पुनर्लक्षं मत्ताश्च दश दन्तिनः ।
दत्ता भोजेन तुष्टेन जानुदघ्नप्रभाषणात् ॥१९०॥

ततः स्वाङ्गरक्षकमिति। **Vocabulary** : धर्मपत्र—दानपत्र, file of charities.

Prose Order : लक्षं लक्षं पुनर्लक्षं मत्ता दशं दन्तिनश्च श्रीभोजराजेन जानुदघ्नप्रभाषिणे दत्ताः ।

व्याख्या—जानुदघ्नप्रभाषिणे जानुदघ्नशब्दं प्रयुक्तवति ।

साथ में उसने अपने अंग-रक्षक को भेजा। तब कोषाध्यक्ष ने धर्मपत्र पर लिखा—

'जानुदघ्न' शब्द का प्रयोग करनेवाले ब्राह्मण को प्रसन्न होकर लाख, लाख और फिर लाख और दस मदमस्त हाथी दिये ।

ततः सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजनृपतौ द्वारपाल आगत्य प्राह—'राजन्, कोऽपि शुकदेवनामा कविर्दारिद्र्यविडम्बितो द्वारि वर्तते।' राजा बाणं प्राह—'पण्डितवर, सुकवे, तत्त्वं विजानासि ।' बाणः—'देव, शुकदेवपरिज्ञानसामर्थ्याभिज्ञः कालिदास एव । न्यायः।' राजा—'सुकवे, सखे कालिदास, किं विजानासि शुकदेवकविम् ?'

कालिदासः—'देव,

सुकविद्वितयं जाने निखिलेऽपि महीतले ।
भवभूतिः शुकश्चायं वाल्मीकिस्त्रितयोऽन्ययोः ॥१९१॥

तत इति । Prose Order : निखिले अपि महीतले सुकविद्वितयं मन्ये—भवभूतिः, अयं शुकः च, अनयोः त्रितयः वाल्मीकिः ।

व्याख्या—निखिले समस्ते अपि महीतले भूतले सुकविद्वितयं द्वावेव कवी अहं जाने । भवभूतिः—महावीरचरितमालतीमाधवोत्तररामचरित प्रणेता । अयं शुकश्च । अनयोर्द्वयोर्मध्ये वाल्मीकिश्च तृतीयः ।

एक बार जब राजा भोज सिंहासन पर बैठे थे, द्वारपाल ने आकर कहा—एक शुकदेव नाम का निर्धन कवि द्वार पर खड़ा है। राजा ने बाण से पूछा—कविश्रेष्ठ पण्डितवर ! क्या तुम शुकदेव को जानते हो ? बाण ने कहा—शुकदेव को जानने की सामर्थ्य कालिदास को ही है, अन्य किसी को नहीं।

राजा ने कालिदास से पूछा—कविश्रेष्ठ कालिदास ! क्या तुम शुकदेव कवि को जानते हो ?

कालिदास ने कहा—देव ! समस्त धरातल में मैं दो ही श्रेष्ठ कवियों को जानता हूँ—एक भवभूति को और दूसरा इस शुकदेव को और तीसरा इन दोनों के बीच वाल्मीकि को ।

ततो विद्वद्वृन्दवन्दिता सीता प्राह—

काकाः किं किं न कुर्वन्ति क्रोङ्कारं यत्र तत्र वा ।
शुक एव परं वक्ति नृपहस्तोपलालितः ॥१६२॥

तत इति । Vocabulary : क्रोङ्कारम्—क्रों-क्रों, शब्द, caw, caw sound. उपलालित—caressed or fondled.

Prose Order : काकाः यत्र तत्र वा किं किं क्रोङ्कारं न कुर्वन्ति ? नृपहस्तोपलालितः शुक एव परं वक्ति ।

व्याख्या—काका वायसाः यत्र तत्र वा क्रोङ्कारं कटुध्वनिं किं किं न कुर्वन्ति । नृपहस्तोपलालितः नृपस्य राज्ञः हस्ताभ्यां कराभ्याम् उपलालितः संवर्द्धितः शुक एव परं मधुरं वक्ति भाषते ।

तब विद्वानों से पूजित सीता ने कहा—कौए इधर-उधर कहीं भी कांव-कांव करते रहते हैं। राजा के हाथों से लालित-पोषित तोता ही सुन्दर शब्द मुख से निकालता है ।

ततो मयूरः प्राह—

अपृष्टस्तु नरः किञ्चिद्यो ब्रूते राजसंसदि ।
न केवलमसम्मानं लभते च विडम्बनाम् ।।१६३।।

ततो मयूर इति । Vocabulary : विडम्बना—निराशा, disappointment.

Prose Order : राजसंसदि अपृष्टस्तु यो नरः किञ्चिद् ब्रूते केवलम् असम्मानं न लभते विडम्बनां च लभते ।

व्याख्या—राजसंसदि राजसभायाम् । अपृष्टः अनुक्तः । यो नरः मानवः किञ्चिद् ब्रूते वदति । स केवलम् असम्मानम् अनादरम् न लभते न प्राप्नोति । विडम्बनाम् आशाभंगं चापि । लभते ।

तब मयूर ने कहा—

बिना पूछे ही जो मनुष्य राजसभा में कुछ कहता है, वह निरादर ही नहीं, अपितु कष्ट भी पाता है ।

देव, तथाप्युच्यते—

का सभा किं कविज्ञानं रसिकाः कवयश्च के ।
भोज किं नाम ते दानं शुकस्तुष्यति येन सः ।।१६४।।

देवेति । Prose Order : सभा का ? कविज्ञानं किम् ? रसिकाः कवयश्च के ? भोज ! किं नाम ते दानं येन सः शुकः तुष्यति ।

व्याख्या—न सभया, न कविज्ञानेन, न च रसिकैः कविभिः, न च दानेन अयं शुकः प्रसीदितुम् अर्हति ।

देव तोभी कुछ कहता हूँ—

भोज ! जिससे वह शुक प्रसन्न हो वह कैसी सभा हो ? कैसा कवित्व-ज्ञान हो, (सुननेवाले) कैसे कवि हों ? (पुरस्कार में) कैसा आपका दान हो ।

तथापि भवनद्वारमागतः शुकदेवः सभायामानेतव्य एव ।' तदा राजा विचारयति । शुकदेवसामर्थ्यं श्रुत्वा हर्षविषादयोः पात्रमासीत् । महाकविरवलोकित इति हर्षः । अस्मै सत्कविकोटिमुकुटमणये किं नाम देयमिति च विषादः ।

'भवतु । द्वारपाल, प्रवेशय।' तत आयान्तं शुकदेवं दृष्ट्वा राजा सिंहासनादुदतिष्ठत् । सर्वे पण्डितास्तं शुकदेवं प्रणम्य सविनयमुपवेशयन्ति । स च राजा तं सिंहासन उपवेश्य स्वयं तदाज्ञयोपविष्टः। ततः शुकदेवः प्राह—'देव, धारानाथ, श्रीविक्रमनरेन्द्रस्य या दानलक्ष्मीस्त्वामेव सेवते । देव, मालवेन्द्र एव धन्यः नान्ये भूभुजः यस्य ते कालिदासादयो महाकवयः सूत्रबद्धाः पक्षिण इव निवसन्ति।' ततः पठति—

प्रतापभीत्या भोजस्य तपनो मित्रतामगात् ।
औौर्वो वाडवतां धत्ते तडित्क्षणिकतां गता ।।१९५।।

तथापीति। **Vocabulary** : सूत्रनद्ध—सूत्र से बाँधे हुए, fastened with the thread.

तपन—सूर्य । मित्रता—मित्रसंज्ञा । अगात्—प्राप्त हुआ । और्व—the submarine fire. वाडवता–the form of a mare. तडित्—बिजली, the lightning. क्षणिकता— transience.

Prose Order : तपनः सूर्यः भोजस्य प्रतापभीत्या मित्रताम् अगात् । और्वः वाडवतां धत्ते । तडित् क्षणिकतां गता ।

व्याख्या—तपनः सूर्यः भोजस्य प्रतापभीत्या तेजोभयेन मित्रतां मैत्रीं मित्रसंज्ञाञ्च अगात् प्राप्तवान् । तेनैव भयेन और्वः समुद्राग्निः वाडवतां वडवाकृतिं धत्ते धारयति । तडित् विद्युच्च क्षणिकताम् अस्थिरतां गता प्राप्ता ।

तोभी शुकदेव द्वार पर आये हैं । उन्हें सभा में लाना ही होगा । तब राजा विचार करने लगे। शुकदेव की कवित्व-शक्ति सुनकर हर्ष और विषाद दोनों हुए । महाकवि के दर्शन हुए—इसलिए आनन्द हुआ। कवियों के शिरोमणि-स्वरूप इस कवि को क्या देना होगा ? इससे विषाद हुआ। अच्छा, द्वारपाल ! भेजिए ।

शुकदेव को आते हुए देखकर राजा सिंहासन से उठे । सभी पण्डितों ने शुकदेव को प्रणाम किया तथा विनयपूर्वक उसे बिठाया । राजा ने उसे सिंहासन पर बैठाया और स्वयं भी उसकी आज्ञा से बैठा । तब शुकदेव ने कहा—देव धारास्वामिन ! राजा विक्रमादित्य की दान-लक्ष्मी अब आपकी सेवा कर

रही है। देव मालव-नरेश ! आपही धन्य हो, अन्य राजा नहीं, जो आपके यहाँ कालिदास आदि जाल में बँधे हुए पक्षियों के सदृश रहते हैं। फिर कहा—

भोज के प्रताप के भय से सूर्य ने भी मैत्री (अथवा मित्रसंज्ञा) प्राप्त कर ली। समुद्र की अग्नि बड़वा बन गई और बिजली भी अचिरप्रभा हो गई।

राजा—'तिष्ठ सुकवे, नापरः श्लोकः पठनीयः।'

सुवर्णकलशं प्रादाद्दिव्यमाणिक्यसंभृतम्।
भोजः शुकाय सन्तुष्टो दन्तिनश्च चतुःशतम् ॥१९६॥

राजेति। **Vocabulary** : दन्तिन्—हाथी, elephant.

Prose Order : भोजः सन्तुष्टः (सन्) दिव्यमाणिक्यसम्भृतं सुवर्णकलशं दन्तिनां चतुश्शतं शुकाय प्रादात्।

व्याख्या—दिव्यमाणिक्यसम्भृतम्—दिव्यानि द्युतिमयानि माणिक्यानि रत्नानि (कर्म०) दिव्यमाणिक्यानि, तैः सम्भृतम् (तृ० तत्पु०) सुवर्णकलशं सुवर्णनिर्मितं कलशं (मध्यमपदलोपि कर्म०) हिरण्मयं घटम्, दन्तिनां गजानां च चतुश्शतं शुकाय कवये प्रादात् अर्पयत्।

राजा ने कहा—कविश्रेष्ठ ! दूसरा श्लोक न पढ़ना।

सन्तुष्ट होकर भोज ने सुन्दर मणियों से भरा हुआ सुवर्ण-कलश तथा चार सौ हाथी शुक को दिये।

इति पुण्यपत्रे लिखित्वा सर्वं दत्त्वा कोशाधिकारी शुकं प्रस्थापयामास। राजा स्वदेशं प्रति गतं शुकं ज्ञात्वा तुतोष। सा च परिषत्सन्तुष्टः।

अन्यदा वर्षाकाले वासुदेवो नाम कविः कश्चिदागत्य राजानं दृष्टवान्। राजाह—'सुकवे, पर्जन्यं पठ।' ततः कविराह—

नो चिन्तामणिभिर्न कल्पतरुभिर्नो कामधेन्वादिभि-
र्नो देवैश्च परोपकारनिरतैः स्थूलैर्न सूक्ष्मैरपि।
अम्भोदेहनिरन्तरं जलभरैस्तामुर्वरां सिञ्चता
धौरेयेण धुरं त्वयाद्य वहता मन्ये जगज्जीवति ॥१९७॥

इतीति। **Vocabulary** : परिषत्—सभा, assembly. चिन्तामणि—

a fabulous stone called चिन्तामणि । उर्वरा—उपजाऊ भूमि, a place fit for cultivation. धौरेय—भारवहनक्षम, capable of bearing it. धुर—yoke.

Prose Order : नो चिन्तामणिभि:, न कल्पतरुभि:, नो कामधेन्वादिभि:, परोपकारनिरतै: देवैश्च नो, न स्थूलै:, न सूक्ष्मैरपि (तत्त्वै:), (परं) जलभरै: निरन्तरं ताम् उर्वरां सिञ्चता अम्भोदेन, अद्य धुरं वहता धौरेयेण त्वया (च) जगत् जीवति (इति) मन्ये ।

व्याख्या—चिन्तामणिभि: अलौकिक प्रभावशालिभि: प्रस्तरशकलै:; कल्पतरुभि: कल्पवृक्षै: कामधेन्वादिभि: अभिलषितार्थपूरकै रुपकरणै: परोपकारनिरतै: परहितसम्पादनव्यग्रै: देवैश्च, स्थूलै: सूक्ष्मैर्वा तत्त्वै: इदं जगत् न जीवति, अपि तु जलभरै: सलिलधाराभि: निरन्तरं सततं ताम् उर्वरां कृषिजननयोग्यां भूमिं सिञ्चता आप्लावयता अम्भोदेन मेघेन तथा च अद्य साम्प्रतं धुरं पृथ्वीभारं वहता धारयता धौरेयेण भारोद्वहनक्षमाणामग्रेसरेण त्वया भोजेन जगत् जीवति इति मन्ये चिन्तयामि ।

इसे धर्मपत्र में लिखकर कोषाध्यक्ष ने शुक को सब कुछ देकर विदा किया । शुकदेव को अपने देश में गया सुनकर राजा को सन्तोष हुआ और वह सभा भी प्रसन्न हुई ।

एक बार वर्षा-ऋतु में एक वासुदेव नाम का कवि आकर राजा से मिला । राजा ने कहा कविश्रेष्ठ ! मेघ के बारे में कविता सुनाओ । तब कवि बोले—

पृथ्वी का भार उठाने को समर्थ आपने जब आज शासन की बागडोर हाथ में ली है तब यह संसार निरन्तर जल-प्रवाह से पृथ्वी को सींचते हुए मेघों से जीता है न कि चिन्तामणियों के प्रभाव से, न कल्पतरुओं से, न कामधेनु आदि से और न ही सदा परोपकार में लगे हुए बड़े-छोटे देवताओं के बल पर ।

राजा लक्षं ददौ ।

कदाचिद्राजानं निरन्तरं दीयमानमालोक्य मुख्यामात्यो वक्तुमशक्तो राज्ञः शयनभवनभित्तौ व्यक्तान्यक्षराणि लिखितवान्—

'आपदर्थं धनं रक्षेत्'

राजा शयनादुत्थितो गच्छन्भित्तौ तान्यक्षराणि वीक्ष्य स्वयं द्वितीयचरणं लिलेख—

'श्रीमतामापदः कुतः ।'

अपरद्युरमात्यो द्वितीयं चरणं लिखितं दृष्ट्वा स्वयं तृतीयं लिलेख—

'सा चेदपगता लक्ष्मीः'

परेद्यू राजा चतुर्थं चरणं लिखति—

'सञ्चितार्थो विनश्यति' ॥१६८॥

राजेति । **Vocabulary**: भित्ति—भीत, the wall.

Prose Order : आपदर्थे धनं रक्षेत् । श्रीमताम् आपदः कुतः ? सा लक्ष्मीः अपगता चेत् सञ्चितार्थः अपि नश्यति ।

व्याख्या—आपदर्थे विपत्प्रतीकाराय धनं रक्षेद् द्रव्यं संचिनुयात्—इति मन्त्रिणो मतिः । अस्योत्तरं भोज आह—श्रीमतां धनिनाम् आपदः विपत्तयः कुतः, नहि भवन्तीत्यर्थः । अत्र पुनर्मन्त्रिणो मतम्—सा लक्ष्मीः श्रीर्यदि अपगता स्यात् नश्येत्, अतो द्रव्यसञ्चयो विधेयः । अस्योत्तरं भोज आह—संचितार्थः संचितः पुञ्जितः अर्थः द्रव्यम् अपि नश्यति । अतः सञ्चयापेक्षया द्रव्यस्य वितरणमेव श्रेयः ।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्नाम ॥

राजा ने एक लाख रुपये दिये ।

एक बार राजा को निरन्तर दान करते हुए देखकर प्रधानमंत्री कुछ कह न सका तो भी राजा के शयन-भवन की भित्ति पर स्पष्ट अक्षरों में लिखा ।

विपत्ति के लिए धन की रक्षा करनी चाहिए ।

राजा शय्या से उठे । चलते समय भित्ति पर उस लेख को पढ़कर स्वयं दूसरा पाद लिखा—

a fabulous stone called चिन्तामणि । उर्वरा—उपजाऊ भूमि, a place fit for cultivation. धौरेय—भारवहनक्षम, capable of bearing it. धुर—yoke.

Prose Order : नो चिन्तामणिभिः, न कल्पतरुभिः, नो कामधेन्वादिभिः, परोपकारनिरतैः देवैश्च नो, न स्थूलैः, न सूक्ष्मैरपि (तत्त्वैः), (परं) जलभरैः निरन्तरं ताम् उर्वरां सिञ्चता अम्भोदेन, अद्य धुरं वहता धौरेयेण त्वया (च) जगत् जीवति (इति) मन्ये ।

व्याख्या—चिन्तामणिभिः अलौकिक प्रभावशालिभिः प्रस्तरशकलैः; कल्पतरुभिः कल्पवृक्षैः कामधेन्वादिभिः अभिलषितार्थपूरकैरुपकरणैः परोपकारनिरतैः परहितसम्पादनव्यग्रैः देवैश्च, स्थूलैः सूक्ष्मैर्वा तत्त्वैः इदं जगत् न जीवति, अपि तु जलभरैः सलिलधाराभिः निरन्तरं सततं ताम् उर्वरां कृषिजननयोग्यां भूमिं सिञ्चता आप्लावयता अम्भोदेन मेघेन तथा च अद्य साम्प्रतं धुरं पृथ्वीभारं वहता धारयता धौरेयेण भारोद्वहनक्षमाणामग्रेसरेण त्वया भोजेन जगत् जीवति इति मन्ये चिन्तयामि ।

इसे धर्मपत्र में लिखकर कोषाध्यक्ष ने शुक को सब कुछ देकर विदा किया । शुकदेव को अपने देश में गया सुनकर राजा को सन्तोष हुआ और वह सभा भी प्रसन्न हुई ।

एक बार वर्षा-ऋतु में एक वासुदेव नाम का कवि आकर राजा से मिला । राजा ने कहा कविश्रेष्ठ ! मेघ के बारे में कविता सुनाओ । तब कवि बोले—

पृथ्वी का भार उठाने को समर्थ आपने जब आज शासन की बागडोर हाथ में ली है तब यह संसार निरन्तर जल-प्रवाह से पृथ्वी को सींचते हुए मेघों से जीता है न कि चिन्तामणियों के प्रभाव से, न कल्पतरुओं से, न कामधेनु आदि से और न ही सदा परोपकार में लगे हुए बड़े-छोटे देवताओं के बल पर ।

राजा लक्षं ददौ ।

कदाचिद्राजानं निरन्तरं दीयमानमालोक्य मुख्यामात्यो वक्तुमशक्तो राज्ञः शयनभवनभित्तौ व्यक्तान्यक्षराणि लिखितवान्—

'आपदर्थं धनं रक्षेत्'

राजा शयनादुत्थितो गच्छन्भित्तौ तान्यक्षराणि वीक्ष्य स्वयं द्वितीयचरणं लिलेख—

'श्रीमतामापदः कुतः ।'

अपरद्युरमात्यो द्वितीयं चरणं लिखितं दृष्ट्वा स्वयं तृतीयं लिलेख—

'सा चेदपगता लक्ष्मीः'

परेद्यू राजा चतुर्थं चरणं लिखति—

'सञ्चितार्थो विनश्यति' ॥१६८॥

राजेति । **Vocabulary**: भित्ति—भीत, the wall.

Prose Order : आपदर्थे धनं रक्षेत् । श्रीमताम् आपदः कुतः ? सा लक्ष्मीः अपगता चेत् सञ्चितार्थः अपि नश्यति ।

व्याख्या—आपदर्थे विपत्प्रतीकाराय धनं रक्षेद् द्रव्यं संचिनुयात्—इति मन्त्रिणो मतिः । अस्योत्तरं भोज आह—श्रीमतां धनिनाम् आपदः विपत्तयः कुतः, नहि भवन्तीत्यर्थः । अत्र पुनर्मन्त्रिणो मतम्—सा लक्ष्मीः श्रीर्यदि अपगता स्यात् नश्येत्, अतो द्रव्यसञ्चयो विधेयः । अस्योत्तरं भोज आह—संचितार्थः संचितः पुञ्जितः अर्थः द्रव्यम् अपि नश्यति । अतः सञ्चयापेक्षया द्रव्यस्य वितरणमेव श्रेयः ।

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्नाम ॥

राजा ने एक लाख रुपये दिये ।

एक बार राजा को निरन्तर दान करते हुए देखकर प्रधानमंत्री कुछ कह न सका तो भी राजा के शयन-भवन की भित्ति पर स्पष्ट अक्षरों में लिखा ।

विपत्ति के लिए धन की रक्षा करनी चाहिए ।

राजा शय्या से उठे । चलते समय भित्ति पर उस लेख को पढ़कर स्वयं दूसरा पाद लिखा—

'धनियों को विपत्ति कहाँ से ?'

दूसरे दिन मंत्री ने दूसरा पाद लिखा देख स्वयं तीसरा पाद लिखा—

'वह लक्ष्मी यदि चली जाय तो'

दूसरे दिन राजा ने चौथा पाद लिखा—

'सञ्चित धन भी नष्ट हो जाता है ।'

ततो मुख्यामात्यो राज्ञः पादयोः पतति—'देव, क्षन्तव्योऽयं ममापराधः ।

अन्यदा धाराधीश्वरमपरि सौधभूमौ शयानं मत्वा कश्चिद्द्विज-चोरः खातपातपूर्वं राज्ञः कोशगृहं प्रविश्य बहूनि विविधरत्नादि वैदूर्यादीनि हृत्वा तानि तानि परलोकऋणानि मत्वा तत्रैव वैराग्यमापन्नो विचारयामास—

यद्व्यङ्गाः कुष्ठिनश्चान्धाः पङ्गवश्च दरिद्रिणः ।
पूर्वोपार्जितपापस्य फलमश्नन्ति देहिनः ॥१९९॥

ततो मुख्यामात्य इति । **Vocabulary**: खातपात—सुरंग, breaking into the wall. व्यङ्ग–विकलांग-युक्त, the deformed. कुष्ठिन्-कुष्ठ-रोग ग्रस्त, the leprous. पङ्गु—the lame.

Prose Order : देहिनः यद् व्यंगाः, कुष्ठिनश्च, अन्धाश्च, पङ्गवश्च दरिद्रिणः पूर्वोपार्जितपापस्य फलम् अश्नन्ति ।

व्याख्या—देहिनः शरीरिणः, यद् येन पापेन, व्यङ्गः विकलाङ्गाः, कुष्ठिनः कुष्ठरोगग्रस्ताः, अन्धाः नेत्ररहिताः, पङ्गवः विकृतचरणाः, दरिद्रिणः, दारिद्र्याभिभूताः भवन्ति तस्य तस्य पूर्वोपार्जितपापस्य पूर्वम् उपार्जितं सञ्चितं यत् पापं तस्य पूर्वजन्मसञ्चितपापस्य फलम् अश्नन्ति भुञ्जते ।

तब प्रधान मंत्री राजा के चरणों पर पड़ा । देव ! यह अपराध मैंने किया है । क्षमा कीजिए ।

एक बारधारा-नरेश को महल की छत पर सोया हुआ पाकर एक ब्राह्मण चोर सुरंग लगाकर, राजा के कोषगृह में प्रविष्ट होकर, वैदूर्य आदि नाना प्रकार के कई रत्नों को चुराकर उन्हें परलोक का ऋण समझकर वहीं वैराग्य को प्राप्त होकर सोचने लगा—

मनुष्य जो विकृत अंगवाले कुष्ठी, अन्धे, लँगड़े तथा निर्धन होते ह. वह पूर्व-जन्म के पापों का फल ही है ।

ततो राजा निद्राक्षये दिव्यशयनस्थितो विविधमणिकङ्कणालङ्कृतं दयितवर्गं दर्शनीयमालोक्य गजतुरंगरथपदातिसामग्रीं च चिन्तयन्राज्यसुखसन्तुष्टः प्रमोदभरादाह—

'चेतोहरा युवतयः सुहृदोऽनुकूलाः
सद्बान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः ।
वल्गन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरङ्गाः'

इति चरणत्रयं राज्ञोक्तम् । चतुर्थचरणं राज्ञो मुखान्न निःसरति । तदा चोरेण श्रुत्वा पूरितम्—

'सम्मीलने नयनयोर्नहि किंचिदस्ति' ॥२००॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : दिव्यशयन—सुन्दर शय्या, splendid bed. चेतोहर—मनोहर, attractive. प्रणयगर्भगिरः प्रियभाषी, sweet-tongued. वल्गन्ति—घूमते हैं, move about. निवह—समूह । सम्मीलन—बन्द करना, closing.

Prose Order : चेतोहराः युवतयः, अनुकूलाः सुहृदः, सद्बान्धवाः, प्रणयगर्भगिरः भृत्याः च, दन्तिनिवहाः तरलाः तुरङ्गाः वल्गन्ति; नयनयोः सम्मीलने किञ्चिद् नहि अस्ति ।

व्याख्या—चेतोहरा मनोहारिण्यः । युवतयः स्त्रियः । विद्यन्त इति शेषः । अनुकूला मनोऽनुवर्त्तिनः । सुहृदो मित्राणि सन्ति । सद्बान्धवाः शोभना बान्धवाः प्रणयगर्भगिरः प्रणयगर्भा गीर्येषां (बहु०) ते तथाभूताः मृदुभाषिणः । भृत्याः सेवकाः । वर्त्तन्ते । दन्तिनिवहाः गजव्रजाः । तरलाः चंचलाः । तुरङ्गा अश्वाः । वल्गन्ति इतस्ततो भ्रमन्ति । इति पद्यस्य पादत्रये राज्ञोक्ते चौरेण चतुर्थः पादः पूरितः । नयनयोः नेत्रयोः सम्मीलने तिरोधाने किञ्चिदपि नहि अस्ति नहि शिष्यते ।

जब राजा जगे, सुन्दर शय्या पर बैठे, नाना प्रकार के मणियों और कङ्कणों से भूषित अपनी सुन्दर रानियों को देखा तथा हाथी, घोड़े, रथ

पैदल, सम्पत्ति को ध्यान में लाये, तब राज्य-सुख से सन्तुष्ट होकर आनन्द के साथ बोले—

हृदयहरिणी युवतियाँ हैं। अनुकूल मित्र हैं। बंधुवर्ग भी शुभाकांक्षी हैं। कोमल स्वर से आलाप करनेवाले सेवक हैं। हाथियों के झुण्ड-के-झुण्ड चिग्घाड़ रहे हैं। घोड़े उछल-कूद कर रहे हैं। ये तीनों पाद राजा ने कहे। चौथा पाद राजा के मुख से नहीं निकला तब चोर ने (तीनों पाद) सुनकर पूर्त्ति कर दी—

'नेत्रों के बन्द होने पर कुछ भी नहीं रहता।'

ततो ग्रथितग्रन्थो राजा चोरं वीक्ष्य तस्मै वीरवलयमदात्। ततस्तस्करो वीरवलयमादाय ब्राह्मणगृहं गत्वाशयानं ब्राह्मणमुत्थाप्य तस्मै दत्त्वा प्राह— 'विप्र, एतद्राज्ञः पाणिवलयं बहुमूल्यम्। अल्पमूल्येन न विक्रेयम्। ततो ब्राह्मणः पण्यवीथ्यां तद्विक्रीय दिव्यभूषणानि पट्टदुकूलानि च जग्राह। ततो राजकीयाः केचनैनं चोरं मन्यमाना राज्ञो निवेदयन्ति। ततो राजनिकटे नीतः। राजा-पृच्छति—'विप्र, तववार्यं पटमपि नास्ति। अद्य प्रातरेव दिव्य कुण्डलाभरणपट्टकूलानि कुतः? विप्रः प्राह—

भेकैः कोटरशायिभिर्मृतमिव क्ष्मान्तर्गतकच्छपैः
पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठनाद्यस्मिन्मुहुर्मूर्च्छितम्।
तस्मिञ्शुष्कसरस्यकालजलदेनागत्य तच्चेष्टितं
यत्राकुम्भनिमग्नवन्यकरिणां यूथैः पयः पीयते ॥२०१॥

तत इति। **Vocabulary**: ग्रथित–रचित, composed. वीरवलय–वीरकङ्कण, heroic bracelet. पण्यवीथी—market. पट्टदुकूल—silken garbs. राजकीय–सिपाही, policeman. भेक—मेढक, frog. कोटर—hole. मृतमिव—मरे हुए के समान, dead-like. कच्छप—कछुआ, tortoise. क्ष्मा—पृथ्वी, the earth. पाठीन—मछली, the fish. पृथु—thick. पङ्कपीठ—कीचगारा, layers of mud. लुठन—लोटना, rolling. अकालजलद—असामयिक वर्षा, untimely cloud. आकुम्भ—सिर तक, over-head. यूथ—झुण्ड, herd.

Prose Order : यत्र शुष्कसरसि कोटरशायिभिः भेकैः मृतम् इव, कच्छपैः क्ष्मान्तर्गतम्, यस्मिन् पाठीनैः पृथुपङ्कपीठलुठनाद् मुहुर्मूच्छितम्, तस्मिन् शुष्कसरसि अकालजलदेन आगत्य तत् चेष्टितं (यत्) आकुम्भनिमग्नवन्य-करिणां यूथैः पयः पीयते ।

व्याख्या—यत्र यस्मिन् । शुष्कसरसि—शुष्कं सरः (कर्म०) तस्मिन्, निर्जले जलाशये । कोटरशायिभिः—कोटरे शयितुं, शीलमेषामिति ते कोटर-शायिनः, तैः । भेकैः मण्डूकैः । मृतमिव विपन्नमिव । कच्छपैः कूर्मैः क्ष्मान्तर्ग-तम्—क्ष्मायां पृथिव्याम् अन्तर्गतं लीनमिव । यस्मिन् पाठीनैः मत्स्यैः । पृथु-पङ्कपीठलुठनात् पृथुश्चासौ पङ्कः (कर्म०) पृथुपङ्कः स एव पीठः (कर्म०) तत्र लुठनात् परिवर्त्तनात् । मुहुर्मुहुः । मूच्छितम्—मोहावस्थां गतम् । तस्मिन्-शुष्कसरसि शुष्कजलाशये । अकालजलदेन असामयिकमेघेन । आगत्य उपस्थाय । तत् तथा । चेष्टितं वृष्टमित्यर्थः । यत् इत्यध्याहार्यम् । आकुम्भ-निमग्न-करिणाम्—आकुम्भम्—कुम्भमभिव्याप्य निमग्ना ये वन्याः करिणो गजास्ते-षाम् । यूथैः व्रजैः । पयः सलिलम् । पीयते ।

अपने पद्य की पूर्त्ति को सुन राजा ने चोर को देखा और उसे वीरकङ्कण दिया । वह चोर वीरङ्ककण को लेकर एक ब्राह्मण के घर जाकर, सोये हुए ब्राह्मण को जगाकर उसे वह वीरकङ्कण देकर बोला—ब्राह्मण ! यह राजा का करकङ्कण बहुमूल्य है । थोड़े मूल्य से इसे नहीं बेचना । तब ब्राह्मण ने उसे बाजार में बेचकर सुन्दर गहने तथा रेशमी दुपट्टे खरीदे । तब उसे राजा के समीप लाया गया । राजा ने पूछा—ब्राह्मण ! तुम्हारे पास तो पहनने योग्य वस्त्र भी नहीं थे । आज प्रातःकाल ही सुन्दर कुण्डल, गहने, रेशमी दुपट्टे कहाँ से आये ? ब्राह्मण ने कहा—

जहाँ मेंढक मृतकों की नाईं खुलार में पड़े थे, कछुए पृथ्वी के भीतर दबे पड़े थे और मछलियाँ कीचड़ में लोटती हुई कभी होश में आतीं, कभी मूच्छित होतीं । उस सूखे जलाशय में अकस्मात् बादल ने आकर ऐसी वर्षा की, जहाँ जङ्गली हाथियों के झुण्ड मस्तक तक डूबकर जल-पान कर रहे हैं ।

तुष्टो राजा तस्मै वीरवलयं चोरप्रदत्तं निश्चित्य स्वयं च लक्षं ददौ । अन्यदा

कोऽपि कवीश्वरो विष्णवाख्यो राजद्वारि समागत्य तैः प्रवेशितो राजानं दृष्ट्वा स्वस्तिपूर्वकं प्राह—

धाराधीश धरामहेन्द्रगनाकौतूहली य
वेधास्त्वद्गणने चकार खटिकाखण्डेन रेखां दिवि ।
सैवेयं त्रिदशापगा समभवत्त्वत्तुल्यभूमिधरा—
भावात्तु त्यजति स्म सोऽयमवनीपीठे तुषाराचलः ॥२०२॥

तुष्ट इति । **Vocabulary** : धाराधीश—धारानगरी के स्वामी, lord of Dhara. धरामहेन्द्र—पृथ्वी के राजा, the kings of the earth. कौतूहली—curious. वेधस्—ब्रह्मा । खटिका—खड़िया मिट्टी, chalk. त्रिदशापगा—गङ्गा । भूमिधर—पर्वत । अवनीपीठ—धरातल । तुषाराचल—हिमालय, snowy hill.

Prose Order : धाराधीश ! धरामहेन्द्रगणनाकौतूहली अयं वेधाः त्वद्गणने खटिकाखण्डेन यां रेखां दिवि चकार सैव इयं त्रिदशापगा समभवत्; त्वत्तुल्यभूमिधराभावात् तु त्यजति स्म, सोऽयम् अवनीपीठे तुषाराचलः ।

व्याख्या—धाराधीश—धारायाः अधीशः (ष० तत्पु०) धाराधीशः, तत्सम्बुद्धौ । धरामहेन्द्रगणनाकौतूहली—धरायां महेन्द्राः (स० तत्पु०) धरामहेन्द्राः, धरामहेन्द्राणां गणना (ष० तत्पु०) । धरामहेन्द्रगणना तपस्या कौतूहली (स० तत्पु०) । कौतूहली—कौतूहलम् अस्यास्तीति सः—कुतूहलवान् । वेधाः—ब्रह्मा । त्वद्गणने—तव गणनं (ष० तत्पु०) त्वद्गणनम्, तस्मिन् । खटिकाखण्डेन—खटिकायाः खण्डः (ष० तत्पु०) तेन, श्वेतमृदः शकलेन । यां रेखाम् । दिवि गगने । चकार कृतवान्, सैव इयं त्रिदशापगास्वर्गगङ्गा । समभवत् । त्वत्तुल्यभूमिधराभावात्—तव तुल्याः (ष० तत्पु०) त्वत्तुल्याः । त्वत्तुल्या भूमिधराः (कर्म०) त्वत्तुल्यभूमिधराः । त्वत्तुल्यभूमिधराणाम् अभावः (ष० तत्पु०), तस्मात् । त्यजति विसृजति स्म । सोऽयम् । अवनीपीठे धरणीतले । तुषाराचलः हिमाचलः ।

राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने जान लिया कि यह वीरकङ्कण उसे चोर ने दिया है । स्वयं भी उसे एक लाख रुपये दिये ।

एक बार विष्णु नाम के एक कवीश्वर राजद्वार पर आये। द्वारपालों ने उन्हें सभा में प्रविष्ट किया। राजा को आशीर्वाद देकर बोले—

धारा के स्वामिन्! पृथ्वी के महान् राजाओं की गणना में उत्सुक ब्रह्मा ने आपकी गणना में जो रेखा खड़िया मिट्टी के खण्ड से आकाश में खींची, वही यह आकाश-गङ्गा हो गई। तुम्हारे समान किसी राजा के न होने से ब्रह्मा ने वह खड़िया का खण्ड पृथ्वी पर फेंक दिया, वही यह हिमालय पर्वत है। **राजा लोकोत्तरं श्लोकमाकर्ण्य 'किं देयम्' इति व्यचिन्तयत्। तस्मिन्क्षणे तदीयकवित्वप्रतिद्वन्द्वमाकर्ण्य सोमनाथाख्यकवेर्मुखं विच्छायमभवत्। ततः स दौष्ट्याद्राजानं प्राह—'देव, असौ सुकविर्भवति। परमनेन न कदापि वीक्षितास्ति राजसभा। यतो दारिद्र्यवारिधिरयम्। अस्य च जीर्णमपि कौपीनं नास्ति। ततो राजा सोमनाथं प्राह—**

निरवद्यानि पद्यानि यद्यनाथस्य का क्षतिः।
भिक्षुणा कक्षनिक्षिप्तः किमिक्षुर्नीरसो भवेत् ॥२०३॥

राजेति। Vocabulary : लोकोत्तर—अलौकिक, extra-ordinary. अप्रतिद्वन्द्व—अनुपम, matchless. विच्छाय—शोभारहित, pale. दौष्ट्य—दुष्टता, malice. वारिधि—समुद्र, ocean. जीर्ण—फटा-पुराना, worn out. कौपीन—loin-cloth.

निरवद्य—निर्दोष, faultless. अनाथ—आश्रयहीन, indigent. क्षति–हानि, harm. कक्ष—काँख, arm-pit. निक्षिप्त—दाबा हुआ, held. इक्षु—ईख, sugarcane.

Prose Order : यदि अनाथस्य पद्यानि निरवद्यानि (तर्हि) क्षति का? भिक्षुणा कक्षनिक्षिप्तः इक्षुः किं नीरसः भवेत्?

व्याख्या—यदि चेत्। अनाथस्य आश्रयहीनस्य, अतएव निर्धनस्य। पद्यानि। निरवद्यानि दोषशून्यानि। तर्हि। क्षतिः हानिः का, नैवास्तीति भावः। भिक्षुणा याचकेन। कक्षे बाहुमूले। निक्षिप्तः धृतः। इक्षुः। किं नीरसः रसहीनः भवेत्।

इस अलौकिक पद्य को सुनकर राजा चिन्ता में पड़े कि इसे क्या देना चाहिए। उस समय उस सर्वोत्कृष्ट कविता को सुनकर सोमनाथ कवि का मुख मलिन हो गया। तब उसने दुष्टभाव से राजा से कहा--देव! वह अच्छा कवि है, किन्तु इसने कभी राजसभा नहीं देखी; क्योंकि यह निर्धनता का सागर है। इसके पास पुरानी कौपीन भी नहीं। तब राजा ने सोमनाथ से कहा--

यदि इस निर्धन के पद्य दोष-रहित हैं तो इसकी क्या हानि? क्या ईख भिखारी की काँख में दब जाने से रसहीन हो जाती है?

ततः सर्वेभ्यस्ताम्बूलं दत्त्वा राजा सभाया उदतिष्ठत्। ततः सर्वैरप्यन्योन्यमित्यभ्यधायि--'अद्य विष्णुकवेः कवित्वमाकर्ण्य सोमनाथेन सम्यग्दौष्ट्यमकारि।' ततः समुत्थिता विद्वत्परिषत्। ततो विष्णुकविरेकं पद्यं पत्रे लिखित्वा सोमनाथकविहस्ते दत्त्वा प्रणम्य गन्तुमारभत। 'अत्र सभायां त्वमेवचिरं नन्द।' ततो वाचयति सोमनाथकविः--

एतेषु हा तरुणमारुतधूयमान-
दावानलैः कवलितेषु महीरुहेषु।
अम्भो न चेज्जलद मुञ्चसि मा विमुञ्च
वज्रं पुनः क्षिपसि निर्दय कस्य हेतोः ॥२०४॥

ततः सर्वेभ्य इति। Vocabulary : ताम्बूलः—betel. अभ्यधायि—कहा, was said. दौष्ट्यम्—दुष्टता, wickedness. परिषत्—सभा, assembly.

तरुण—प्रबल, fresh. मारुत—वायु, wind. धूयमान—कम्पायमान, fanned. दावानल—वनाग्नि, conflagration. कवलित—ग्रसित, consumed. महीरुह—वृक्ष।

Prose Order : हा! तरुणमारुतधूयमानदावानलैः कवलितेषु एतेषु महीरुहेषु जलद! अम्भः न मुञ्चसि मा विमुञ्च, निर्दय! वज्रं पुनः कस्य हेतोः क्षिपसि?

व्याख्या--हा इति शोके । तरुणमारुतधूयमानदावानलैः—तरुणो मारुतः (विशेषणविशेष्य कर्म०)। तरुणमारुतः–प्रचण्डपवनः, तैः धूयमानः (त० तत्पु०) यो दावानलः (वि० कर्म०) तैः । कवलितेषु ग्रसितेषु । एतेषु समीपवर्तिषु, पुरतो दृश्यमानेषु वा । महीरुहेषु । जलद मेघ । अम्भः जलम् । न मुञ्चसि न त्यजसि । चेत् मा विमुञ्च न त्यज । निर्दय दयाहीन ! वज्रं पुनः कस्य हेतोः कस्मात् कारणात् क्षिपसि ?

तब सबको पान देकर राजा सभा से चल दिये । सभी ने परस्पर कहा-- आज विष्णु कवि की कविता सुनकर सोमनाथ ने बड़ी धूर्तता की । तब सभी विद्वान् चल दिये । तब विष्णु कवि एक पद्य पत्र पर लिखकर सोमनाथ कवि के हाथ में देकर प्रणाम करके जाने लगा और कहा कि इस सभा में तुम्हीं चिरकाल तक आनन्द से रहो । तब सोमनाथ ने लेख को पढ़ा ।

शोक ! कि तेज हवा से फैलती हुई दावाग्नि से ग्रसित वृक्षों पर, ओ मेघ ! यदि तम आज जल नहीं बरसाते तो मत बरसाओ; किन्तु ओ दयारहित ! तुम वज्र क्यों फेंकते हो ?

ततः सोमनाथकविर्निखिलमपि पट्टदुकूलवित्तहिरण्यमयीं तुरंगमादिसंपत्तिं कलत्रवस्त्रावशेषं दत्तवान् । ततो राजा मृगयारसप्रवृत्तो गच्छंस्तं विष्णुकविमालोक्य व्यचिन्तयत्--'मयास्मै भोजनमपि न प्रदत्तम् । मामनादृत्यायं संपत्तिपूर्णः स्वदेशं प्रतियास्यति । पृच्छामि । विष्णुकवे, कुतः संपत्तिः प्राप्ता।' कविराह--

सोमनाथेन राजेन्द्र देव त्वद्गुणभिक्षुणा ।
अद्य शोच्यतमे पूर्णं मयि कल्पद्रुमायितम् ।।२०५।।

ततः सोमनाथकविरिति । **Vocabulary** : हिरण्मयी—सुवर्णमयी । मृगया—शिकार, hunting. कल्पद्रुमायितम्—कल्पद्रुम के सदृश आचरण किया है, has behaved like a kalpavriksha.

Prose Order : देव, राजेन्द्र, त्वद्गुणभिक्षुणा सोमनाथेन शोच्यतमे मयि अद्य पूर्णं कल्पद्रुमायितम् ।

व्याख्या—राजेन्द्र! राज्ञां राजसु वा इन्द्रः, तत्सम्बुद्धौ । त्वद्गुणभिक्षुणा त्वद्गुणानां भिक्षुः (ष० तत्पु०) तेन । सोमनाथेन कविना । शोच्यतमे अतिशयेन दयनीये । मयि । अद्य । कल्पद्रुमायितम्—कल्पद्रुम इवाचरितम् ।

तब सोमनाथ कवि ने अपनी स्त्री तथा पहिने हुए वस्त्रों को छोड़कर रेशमी दुपट्टे, धन, सुवर्ण, अश्व आदि अपनी समस्त सम्पत्ति उसे दे दी । तब शिकार के लिए जाते समय राजा ने उस विष्णु कवि को देखकर सोचा—मैंने इसे भोजन भी नहीं दिया । मेरा अनादर करके यह कवि बड़ी धनराशि लिये अपने देश को जा रहा है । मैं इससे पूछता हूँ—विष्णु कवि! यह धनराशि तुझे कहाँ से मिली ?

कवि ने कहा—

देव राजेश! तुम्हारे गुणों के याचक सोमनाथ कवि ने मुझ दयनीय के प्रति कल्पवृक्ष के समान आचरण किया है ।

राजा पूर्वं सभायां श्रुतस्य श्लोकस्याक्षरलक्षं ददौ । सोमनाथेन च यावद्दत्तं तावदपि सोमनाथाय दत्तवान् । सोमनाथः प्राह—

किसलयानि कुतः कुसुमानि वा
क्व च फलानि तथा वनवीरुधाम् ।
अयमकारणकारुणिको यदा
न तरतीह पयांसि पयोधरः ॥२०६॥

राजेति । **Vocabulary** : वीरुध—पौधे, plants. अकारणकारुणिक—अकारण दयालु; Selflessly sympathetic. तरति—वर्षति—वर्षा करता है, rains.

Prose Order : यदा अयम् अकारणकारुणिकः पयोधरः इह पयांसि न तरति (तदा) वनवीरुधां किसलयानि कुतः ? कुसुमानि वा कुतः ? तथा फलनि क्व च ?

व्याख्या—यदा अयम् अकारणकारुणिकः—न कारणं यथा स्यात् तथा अकारणं निर्हेतुकम्, कारुणिकः दयालुः । पयोधरः मेघः । इह जगति । पयांसि

न तरति न वर्षति । तदा वनवीरुधां वनवृक्षाणां वनलतानां वा किसलयानि कोमलपत्राणि कुतः ? कुसुमानि पुष्पाणि वा कुतः ? फलानि क्व च ?

जो पद्य राजा ने पहले सभा में उससे सुना था, उसके लिए उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये और जितनी धनराशि सोमनाथ ने दी थी, उतनी सोमनाथ को भी दे दी । सोमनाथ ने कहा—

जब निष्कारण कृपालु मेघ इस जगत् में जल नहीं बरसावेगा तब वन के लता-वृक्षों पर पत्ते, फूल तथा फल कैसे उगेंगे ?

ततो विष्णुकविः सोमनाथदत्तेन राज्ञा दत्तेन च तुष्टवान् । तदा सीमन्तकवि प्राह—

वहति भुवनश्रेणीं शेषः फणाफलकस्थितां
कमठपतिना मध्येपृष्ठं सदा स च धार्यते ।
तमपि कुरुते क्रोडाधीनं पयोनिधिरादरा-
दहह महतां निःसीमानश्चरित्रविभूतयः ॥२०७॥

ततो विष्णुकविरिति । Vocabulary : फणाफलक—फैले हुए फण, expanded hood. कमठपति—कच्छपराज, lord of tortoises. मध्येपृष्ठ—पीठ पर, on the middle of back. क्रोड—गोद, lap. पयोनिधि—समुद्र, ocean. अहह—आश्चर्य ! निस्सीमन्—सीमा-रहित, boundless. चरित्रविभूति—अलौकिक शक्ति, superhuman power.

Prose Order : शेष : फणाफलकस्थितां भुवनश्रेणीं वहति । स च सदा कमठपतिना मध्येपृष्ठं धार्यते । पयोनिधिः तम् अपि आदरात् क्रोडाधीनं कुरुते । अहह ! महतां चरित्रविभूतयः निस्सीमानः ।

व्याख्या—शेषः भुजगराट् । फणाफलकस्थिताम्—फणा एव फलकम् (कर्म०) तत्र स्थिता (स० तत्पु०), स्वफणफलकनिहिताम् । भुवनश्रेणीम्—लोकपरम्पराम् । वहति-धारयति । स च शेषः । सदा नित्यम् । कमठपतिना—कच्छपेन्द्रेण । मध्येपृष्ठं स्वमध्योपरि । धार्यते उह्यते । पयोनिधिः सागरः ।

तमपि कच्छपेन्द्रमपि । आदरात् सम्मानपूर्वकम् । क्रोडाधीनं कुरुते स्वाङ्के वहति । अहह इति शोकः । महताम्—कुलीनानाम्, उत्कृष्टचरित्राणाञ्च । चरित्रविभूतयः—चरित्रगौरवम् । निस्सीमानाः—अनवधयः ।

विष्णु कवि सोमनाथ से तथा राजा से प्राप्त धनराशियों से प्रसन्न हुआ । तब सीमन्त कवि ने कहा—

अपने फणों के एक भाग पर शेषनाग समस्त ब्रह्माण्ड को धारण किये हैं । उन शेषजी को कच्छपपति ने अपनी पीठ पर धारण किया है । उन कच्छपपति को भी समुद्र ने आदरपूर्वक अपनी गोद में ले रखा है । ओह ! महापुरुषों के चरित्रों की चमत्कृतियों का कोई अन्त ही नहीं ।

कदाचित्सौधतले राजानमेत्य भृत्यः प्राह—'देव, अखिलेष्वपि कोशेषु यद्वित्त-जातमस्ति तत्सर्वं देवेन कविभ्यो दत्तम् । परन्तु कोशगृहे धनलेशोऽपि नास्ति । कोऽपि कविः प्रत्यहं द्वारि तिष्ठति । इतः परं कविर्विद्वान्वा कोऽपि राज्ञे न प्राप्य इति मुख्यामात्येन देवसंनिधौ विज्ञापनीयमित्युक्तम् ।' राजा कोशस्थं सर्वं दत्तमिति जानन्नपि प्राह—'अद्य द्वारस्थं कविं प्रवेशय ।' ततो विद्वानागत्य 'स्वस्ति' इति वदन्प्राह—

नभसि निरवलम्बे सीदता दीर्घकालं
त्वदभिमुखविसृष्टोत्तानचञ्चूपुटेन ।
जलधर जलधारा दूरतस्तावदास्तां
ध्वनिरपि मधुरस्ते न श्रुतश्चातकेन ॥२०८

कदाचिदिति । **Vocabulary** : वित्तजात—द्रव्यसमूह, the store of wealth. प्रत्यहम्—प्रतिदिन ।

नभस्—आकाश, sky. निरवलम्ब, निराश्रय, propless. सीदत्—दुःख पाते हुए, remaining dejected. दीर्घकालम्—चिरकाल से, for a long while. अभिमुख—सम्मुख, direction. विसृष्ट—फैलाया हुआ, spread out. उत्तान—उन्नत, raised up. चञ्चूपुट— the front of the bill. जलसार—जल की बूँदें, drops of water.

Prose Order : निरवलम्बे नभसि दीर्घकालं सीदता त्वदभिमुख-विसृष्टोत्तानचञ्चूपुटेन चातकेन, जलधर! जलसारः तावद् दूरतः आस्ताम्, ते मधुरः ध्वनिरपि न श्रुतः ।

व्याख्या—निरवलम्बे निराश्रये । नभसि गगने । दीर्घकालं चिरम् । सीदता कष्टमनुभवता । त्वदभिमुखविसृष्टोत्तानचञ्चूपुटेन—तव अभिमुखम् (ष० तत्पु०) त्वदभिमुखम् । त्वदभिमुखं विसृष्टः उत्तानः चञ्चूपुटः येन (बहु०) सः, तेन चातकेन पक्षिविशेषेण । जलधर—धरतीति धरः, जलस्य धरः (ष० तत्पु०) जलधरः, तत्सम्बुद्धौ, हे मेघ । जलसारः—वर्षणम् । तावद् । दूरतः दूरे । आस्ताम्—तिष्ठतु । ते तव मधुरः—कर्णमृदुः । ध्वनिरपि—स्वनोऽपि । न श्रुतः नाकर्णितः ।

एक बार महल की छत पर बैठे हुए राजा के पास एक सेवक ने कहा—देव! सभी कोषों का धन आपने कवियों को दे डाला। अब कोष में कुछ भी धन नहीं रहा। कोई कवि प्रतिदिन द्वार पर डटा रहता है। प्रधान मन्त्री कहा है कि राजा को सूचित किया जाय कि आज से कोई कवि अथ विद्वान राजा के पास नहीं पहुँचना चाहिए। जानकर भी कि कोष का सभी धन दान में दिया जा चुका है, राजा ने कहा—आज द्वार पर खड़े कवि को तो आन दो । तब विद्वान् ने आकर आशीर्वाद दिया और कहा—

हे मेघ! आधार-रहित गगन-तल में चिरकाल तक कष्ट पाते हुए तथा तुम्हारी ओर अपनी लम्बी चोंच को फैलाये हुए चातक ने तुम्हारी मधुर ध्वनि भी नहीं सुनी, जलकणों की तो बात ही क्या?

राजा तदाकर्ण्य 'धिग्जीवितं यद्विद्वांसः कवयश्च द्वारमागत्य सीदन्ति' इति । तस्मै विप्राय सर्वाण्याभरणान्युत्तार्य ददौ । ततो राजा कोशाधिकारिणमाहूयाह—'भाण्डारिक, मुञ्जराजस्य तथा मे पूर्वेषां च ये कोशाः सन्ति तेषां मध्ये रत्नपूर्णान् कलशानानय ।' ततः काश्मीरदेशान्मुचुकुन्दकविरागत्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा प्राह—

त्वद्यशोजलधौ भोज निमज्जनभयादिव ।
यैन्दुबिन्दुमिषतो धत्ते कुम्भद्वयं नभः ।।२०६।।

राजेति । **Vocabulary** : उत्तार्य—उतारकर, having put off. भाण्डारिक—कोषाध्यक्ष, treasurer.

निमज्जन—डूबना, sinking. बिन्दु—dot. कुम्भ—घड़ा, a pitcher.

Prose Order : भोज ! नभः त्वद्यशोजलधौ निमज्जनभयाद् इव सूर्येन्दुबिन्दुमिषतः कुम्भद्वयं धत्ते ।

व्याख्या—हे भोज ! नभः गगनम् । त्वद्यशोजलधौ—तव यशः (ष० तत्पु०) त्वद्यशः, त्वद्यश एव जलधिः (कर्म०) तस्मिन्, त्वत्कीर्त्तिरूपे समुद्रे निमज्जनभयात् निमज्जनस्य भयम् (ष० तत्पु०) तस्मात् । इवेत्युत्प्रेक्षा । सूर्येन्दुबिन्दुमिषतः—सूर्यचन्द्रव्याजेन कुम्भद्वयं घटद्वयम् । धत्ते धारयति ।

भोजयशः सर्वत्र प्रसृतमित्यनेन द्योत्यते ।

यह सुनकर राजा ने कहा—धिक्कार है जीवन को, जब विद्वान् और कवि द्वार पर आकर दुःख पाते हैं। उस ब्राह्मण को सभी गहने उतारकर दे दिये ! तब राजा ने कोषाध्यक्ष को बुलाकर कहा—

कोषाध्यक्ष ! राजा मुञ्ज के तथा मेरे पूर्वजों के जो कोष हैं, उनमें से रत्नों से भरे घड़ों को लाओ ।

काश्मीर देश से मुचुकुन्द कवि आये और आशीर्वाद देकर कहा—

भोज ! तुम्हारे यशरूपी समुद्र में मानों डूबने के भय से आकाश ने चन्द्र और सूर्य के बहाने दो घड़ों को ग्रहण किया है।

राजा तस्मै प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ। पुनः कविराह—

आसन्क्षीणानि यावन्ति चातकाश्रूणि तेऽम्बुद ।
तावन्तोऽपि त्वयोदार न मुक्ता जलबिन्दवः ।।२१०।।

राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । कवि ने फिर कहा—हे मेघ ! चातक ने जितने आँसू बहाये हैं, हे उदार ! तूने उनके बराबर भी जल की बूँदें नहीं बरसाईं ।

ततो राजा तस्मै शततुरंगानपि ददौ । ततो भाण्डारिको लिखति—

मुचुकुन्दाय कवये जात्यानश्वाञ्शतं ददौ ।
भोजः प्रदत्तलक्षोऽपि तेनासौ याचितः पुनः ॥२११॥

ततः स इति । **Vocabulary** : जात्य—उत्तम जाति के ।

Prose Order : प्रदत्तलक्षः अपि असौ भोजः तेन पुनः याचितः मुचुकुन्दाय कवये शतं जात्यान् अश्वान् ददौ ।

व्याख्या—प्रदत्तलक्षः—प्रदत्तं लक्षं येन (बहु०) सः तथाभूतः अपि भोजः तेन मुचुकुन्देन कविना पुनः याचितः प्रार्थितः मुचुकुन्दाय कवये शतं जात्यान् उत्कृष्टजातीन् अश्वान् ददौ अर्पयामास ।

ततो राजा सर्वानपि वेश्म प्रेषयित्वान्तर्गच्छति । ततो राज्ञश्चामरग्राहिणी प्राह—

राजन्मुञ्जकुलप्रदीप सकलक्ष्मापालचूडामणे
युक्तं संचरणं तवाद्भुतमणिच्छत्रेण रात्रावपि ।
मा भूत्त्वद्वदनावलोकनवशाद् व्रीडाविनम्रः शशी
मा भूच्चेयमरुन्धती भगवती दुःशीलताभाजनम् ॥२१२॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : वेश्म—गृह, abode. क्ष्मापाल—भूपति, monarch. चूडामणि—crest-jewel. संचरण—भ्रमण, walk. छत्र—umbrella. अरुन्धती—the wife of Vasistha in the form of a constellation in the sky. दुश्शीलता—दुश्चारित्र, bad disposition. भाजन—पात्र, object.

Prose Order : राजन् ! मुञ्जकुलप्रदीप ! सकलक्ष्मापालचूडामणे ! रात्रावपि अद्भुतमणिच्छत्रेण तव सञ्चरणं युक्तम् । त्वद्वदनावलोकनवशाद् शशी व्रीडाविनम्रः मा भूत् । इयं भगवती अरुन्धती च दुश्शीलताभाजनं मा भूत् ।

व्याख्या—मुञ्जकुलप्रदीप (ष० तत्पु०), तत्सम्बुद्धौ । सकलक्ष्मापाल-चूडामणे ! सकलानां क्ष्मापालानां मध्ये चूडामणिः शिरोरत्नम्, तत्सम्बुद्धौ । अदभुतमणिच्छत्रेण—मणिनिर्मितं छत्रम् (म० कर्म०) मणिच्छत्रम्; अद्भुतं

मणिच्छत्रम् अद्भुतमणिच्छत्रम् (कर्म०) तेन । रात्रावपि निश्यपि । तव सञ्चरणं गमनम् । युक्तम् उचितम् । त्वद्वदनावलोकनवशाद्—तव वदनं त्वद्वदनम् (ष० तत्पु०) त्वद्वदनस्य अवलोकनम् (ष० तत्पु०) त्वद्वदनावलोकनम् तस्य वशात्, त्वन्मुखदर्शनेन । शशी चन्द्रः । व्रीडाविनम्रः व्रीडया लज्जया विनम्रः नतः । मा भूत् न स्यात् । इयं भगवती अरुन्धती च । दुश्शीलता-भाजनम्—दुश्शीलतायाः भाजनं पात्रम् । मा भूत् न स्यात् ।

तब राजा सभी को घर भेजकर रनवास में गये । तब राजा की चमर-डुलैय्या दासी ने कहा—

मुञ्ज कुल के दीपक, समस्त राजाओं के शिरोमणि भोजराज ! अद्भुत रत्नों से जटित छत्र की छाया में रात को आपका घूमना उचित ही है, किन्तु आपके मुख को देखकर कहीं चन्द्रमा लज्जित न हो और वसिष्ठ-पत्नी भगवती अरुन्धती कहीं चरित्रहीन न हो जाय ।

राजा तस्मै प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

अन्यदाकुण्डिननगराद्गोपालो नाम कविरागत्य स्वस्तिपूर्वकं प्राह—

त्वच्चित्ते भोज निर्यातं द्वयं तृणकणायते ।
क्रोधे विरोधिनां सैन्यं प्रसादे कनकोच्चयः ॥२१३॥

राजेति । **Vocabulary** : निर्यात—उदित, arisen. तृणकणायते—तृण और कण के समान आचरण करती हैं, are reduced to a straw. कनकोच्चय—the help of gold.

Prose Order : भोज ! त्वच्चित्ते निर्यातं द्वयं तृणकणायते—क्रोधे विरोधिनां सैन्यम्, प्रसादे कनकोच्चयः ।

व्याख्या—हे भोज राजन् ! त्वच्चित्ते तव चित्ते मनसि । निर्यातम् उदितम् । द्वयं वक्ष्यमाणम् । तृणकणायते—तृणकणवदाचरति । क्रोधे समुदिते विरोधिनां शत्रूणां सैन्यं सेनासमूहः । तृणकणायते । प्रसादे समुदिते तु कनकोच्चयः कनकस्य सुवर्णस्य उच्चयः समूहः । तृणकणायते—तृणकणवदाचरति ।

राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये। एक बार कुंडिन-नगर से गोपाल कवि ने आकर आशीर्वाद के साथ कहा—

भोज! तुम्हारे मन में उदित दो वस्तुएँ तृण और कण के सदृश आचरण करती हैं—तुम्हारे क्रोधित होने पर शत्रु की सेना तृण के समान और तुम्हारे प्रसन्न होने पर मेरु-पर्वत कण के सदृश आचरण करता है।

राजा श्रुत्वापि तुष्टो न दास्यति। राजपुरुषैः सह चर्चां कुर्वाणस्तिष्ठति। ततः कविर्व्यचिन्तयत्—'किमु राज्ञा नाश्रावि'। ततः क्षणेन समुन्नतमेघमवलोक्य राजानं कविराह—

हे पाथोद यथोन्नतं हि भवता दिग्व्यावृता सर्वतो
मन्ये धीर तथा करिष्यसि खलु क्षीराब्धितुल्यं सरः।
किं त्वेष क्षमते नहि क्षणमपि ग्रीष्मोष्मणा व्याकुलः
पाठीनादिगणस्त्वदेकशरणस्तद्वर्ष तावत्कियत् ॥२१४॥

राजा श्रुत्वेति। Vocabulary: चर्चा—बातचीत, conversation. अश्रावि—सुना है, is heard. समुन्नत—rising.

पाथोद—मेघ, a cloud. व्यावृत—व्याप्त, encompassed. नहि क्षमते—सहन नहीं कर सकता, cannot endure. पाठीन—मछली, the fish. गण—समूह, the mass. त्वदेकशरण—solely resting on you. वर्ष—वर्षा करो, do rain.

Prose Order: हे पाथोद! यथा उन्नतं हि भवता सर्वतः दिक व्यावृता, धीर! मन्ये तथा सरः क्षीराब्धितुल्यं खलु करिष्यसि। किन्त एषः ग्रीष्मोष्मणा व्याकुलः त्वदेकशरणः पाठीनादिगणः नहि क्षमते तत् तावत कियत् वर्ष।

व्याख्या—हे पाथोद मेघ! यथा येन प्रकारेण। उन्नतं यथा स्यात् तथा। भवता। सर्वतः विश्वतः। दिक् दिशा। व्यावृता व्याप्ता। धीर विचक्षण! मन्ये सम्भावयामि। तथा तेनैव प्रकारेण। सरः जलाशयम्। क्षीराब्धितुल्य क्षीरसागरतुल्यम्। खलु निश्चितम्। करिष्यसि। किन्तु। एषः। ग्रीष्मोष्मणा ग्रीष्मर्तोरातपेन। व्याकुलः क्षुब्धः। त्वदेकशरणः त्वमेवैकं शरणम् आश्रयो

यस्य स तथाभूतः । पाठीनादिगणः मत्स्यादिसमूहः । नहि क्षमते आतपं सोढुं न पारयति । तत् तावत् कियद् अल्पं वर्ष सलिलं वितर येनातपो मन्दो भूत्वा सह्यः स्यात् ।

राजा ने सुना। प्रसन्न होकर भी कुछ नहीं दिया। सदस्यों के साथ वार्त्तालाप करता हुआ बैठा रहा। तब कवि ने सोचा—क्या राजा ने सुना नहीं? तब क्षण में राजा को खड़ा हुआ देख कवि ने कहा—

हे मेघ! जिस प्रकार उमड़कर आपने चारों ओर दिशाओं को घेर लिया है, वैसे तो हे धीर, मैं मानता हूँ कि निश्चित ही तुम जलाशय को क्षीर-सागर के सदृश बना दोगे। किन्तु केवल तुझपर ही आश्रित ये मच्छ आदि जीव धूपकाल की घाम से व्याकुल होकर क्षणभर भी कष्ट को सहन नहीं कर सकते। अतः कुछ तो अब बरसो ।

राजा कविहृदयं विज्ञाय 'गोपालकवे, दारिद्र्याग्निना नितान्तं दग्धोऽसि ।' इति वदन्षोडश मणीननर्घ्यान्षोडश दन्तीन्द्रांश्च ददौ ।

एकदा राजा धारानगरे विचरन्क्वचिच्छिवालये प्रसुप्त पुरुषद्वयमपश्यत्। तयोरेको विगतनिद्रो वक्ति—'अहो, ममास्तरासन्न एव कस्त्वं प्रसुप्तोऽसि? जागर्षि नो वा?' ततस्त्वपर आह—'विप्र, प्रणतोऽस्मि । अहमपि ब्राह्मण-पुत्रस्त्वामत्र प्रथमरात्रौ शयानं वीक्ष्य प्रदीप्ते च प्रदीपे कमण्डलूपवीतादि-भिर्ब्राह्मणं ज्ञात्वा भवदास्तरासन्न एवाहं प्रसुप्तः । इदानीं त्वद्गिरमाकर्ण्य प्रबुद्धोऽस्मि ।' प्रथमः प्राह—'वत्स, यदित्वं प्रणतोऽसि ततो दीर्घायुर्भव । वद कुत आगम्यते, किं ते नाम, अत्र च किं कार्यम्' द्वितीयः प्राह—'विप्र, भास्कर इति मे नाम। पश्चिमसमुद्रतीरे प्रभासतीर्थसमीपे वसतिर्मम । तत्र भोजस्य वितरणं बहुभिर्व्यावर्णितम् । ततो याचितुमहमागतः । त्वं मम वृद्धत्वात्पितृकल्पोऽसि । त्वमपि सुपरिचयं वद ।' स आह—'वत्स, शाकल्य इति मे नाम । मयैकशिलानगर्या आगम्यते भोजं प्रति द्रविणाशया । वत्स, त्वयानुक्तमपि दुःखं त्वयि ज्ञायते । कीदृशं तद्वद ।' ततो भास्करः प्राह—'तात, किं ब्रवीमि दुःखम्।

क्षुत्क्षामाः शिशवः शवा इव भृशं मन्दाशया बान्धवा
लिप्ता झर्झरघर्घरी जतुलवैर्नो मां तथा बाधते ।
गेहिन्या त्रुटितांशुकं घटयितुं कृत्वा सकाकु स्मित
कुप्यन्ती प्रतिवेश्मलोकगृहिणी सूचि यथा याचिता ॥२१५॥

राजेति । **Vocabulary** : अनर्घ्य—बहुमूल्य, precious. आस्तर–bed. आसन्न—समीप, close.

क्षुत्क्षाम—क्षुधा से क्षीणकाय, emaciated by hunger. शव—a corpse. मन्दाशय—उदासीन, indifferent. लिप्त—लेप से जोड़ा है, has been plastered. जर्जरघर्घरी—the broken jar. जतुलव—लाख का टुकड़ा, a piece of lac. बाधते—दुःख देती है, distresses. सकाकु—व्यंग्य से युक्त, with a satirical tone. प्रतिवेश्म–पड़ोसी, a neighbourer. लोकगृहिणी—wife. सूचि—needle.

Prose Order : क्षुत्क्षामाः शिशवः शवा इव । बान्धवाः भृशं मन्दाशयाः जतुलवैः लिप्ता जर्जरघर्घरी मां तथा न बाधते यथा त्रुटितांशुकं घटयितुं गेहिन्या सूचिं याचिता सकाकु स्मितं कृत्वा कुप्यन्ती प्रतिवेश्मलोकगृहिणी (बाधते) ।

व्याख्या—क्षुत्क्षामाः क्षुधा बुभुक्षया क्षामाः कृशाः । शिशवो बाला शवाः कङ्काला इव संवृत्ताः । बान्धवाः बन्धुजनाः भृशम् अत्यर्थम् । मन्दाशया उदासीनः सञ्जाताः । जतुलवैः लाक्षाखण्डैः । लिप्ता पूरिता । जर्जरघर्घरी छिद्रान्विता कलशी । मां तथा तेन प्रकारेण । न बाधते न दुनोति । यथा त्रुटिताशुकं खण्डितमंशुकम् । घटयितुं संयोजयितुम् । गेहिन्या गहिण्या मम भार्ययेति यावत् । सूचिं सीवनिकाम् । याचिता अभ्यर्थिता । सकाकु साभिप्रायम् । स्मितं कृत्वा ओष्ठान्तर्हसित्वा । कुप्यन्ती मलिनवदना । प्रतिवेश्मगृहिणी प्रतिवेशिनी । मां बाधते दुःखारोतीत्यध्याहार्यम् ।

कवि का अभिप्राय समझकर राजा ने कहा—गोपाल कवि ! तुम दरिद्रता की आग से पूरा जल गये हो । यह कहकर सोलह रत्न और सोलह उत्तम हाथी उसे दिये ।

एक बार धारा-नगरी में घूमते हुए राजा ने एक शिव-मंदिर में सोये हुए दो मनुष्यों को देखा—उनमें से एक ने जगकर कहा—ओह ! मेरे बिस्तर के निकट तू कौन है सोया अथवा जागता हुआ ? तब दूसरे ने कहा—ब्राह्मण ! नमस्कार। मैं भी ब्राह्मण का पुत्र हूँ। रात्रि के पहले प्रहर में तुझे सोया हुआ देखकर दीये के प्रकाश में कमंडलु तथा यज्ञोपवीत से आपको ब्राह्मण समझकर आपके बिस्तर के समीप ही सो रहा हूँ। अब तुम्हारा वचन सुनकर जगा हूँ। पहले ब्राह्मण ने कहा—वत्स ! तुमने प्रणाम किया है। तुम्हारी दीर्घ आयु हो। बताओ, कहाँ से आ रहे हो ? तुम्हारा नाम क्या है और यहाँ क्या काम है ? दूसरे ने कहा—मेरा नाम भास्कर है। पश्चिमी समुद्र के तट पर प्रभास तीर्थ के समीप मेरा निवास-स्थान है। वहाँ भोज की दान-प्रशंसा कई लोगों ने की। अतः याचना के लिए मैं आया हूँ। वृद्ध होने के कारण तुम मेरे पिता के तुल्य तुम भी अपना परिचय दो। उसने कहा—मेरा नाम शाकल्य है। मैं एकशिला-नगरी से भोज के पास धन की आशा से आया हूँ। वत्स ! यद्यपि तूने कुछ कहा नहीं तो भी मैं तुझे दुःखी समझता हूँ। तुझे क्या दुःख है यह मुझे बताओ। तब भास्कर ने कहा—तात ! मैं अपना दुःख क्या कहूँ ?

भूख से कृश होकर बच्चे मानों मुर्दा हो गये। बन्धुजन मेरी ओर से सर्वथा आशा को त्याग बैठे हैं। फूटे घड़े को लाख के टुकड़ों से जोड़ा है। यह बात मुझे उतना दुखित नहीं करती, जितना कि जब मेरी पत्नी फटे वस्त्रों को सीने के लिए पड़ोसिन से सुई माँगती है तो वह साभिप्राय मुस्कुराकर कुपित होती है।

राजा श्रुत्वा सर्वाभरणान्युत्तार्य तस्मै दत्त्वा प्राह—'भास्कर, सीदन्त्यतीव ते बालाः। झटिति देशं याहि।' ततः शाकल्यः प्राह—

अन्यद्धृता वसुमती दलितोऽरिवर्गः
क्रोडीकृता बलवता बलिराजलक्ष्मीः।
एकत्र जन्मनि कृतं यदनेन येन
जन्मत्रये तदकरोत्पुरुषः पुराणः ॥२१६॥

राजेति । **Vocabulary** : सीदन्ति—दुखी होंगे, must be in distress. झटिति—शीघ्र, immediately अत्युद्धृता—उद्धार किया, lifted up वसुमती—पृथ्वी, the earth. दलित—खण्डित, crushed. क्रोडीकृत—अङ्कीकृत, has taken possession of. पुराण—primeval.

Prose Order : वसुमती अत्युद्धृता, अरिवर्गः दलितः, बलवता बलिराजलक्ष्मीः क्रोडीकृता । अनेन यूना एकत्र जन्मनि यत् कृतं तत् पुराणः पुरुषः जन्मत्रये अकरोत् ।

व्याख्या—वसुमती पृथ्वी । अत्युद्धृता समुद्रमग्ना सती सलिलाद् उन्नमिता । अरिवर्गः शत्रुवर्गः । दलितः संहृतः । बलवता बलिना । बलिराजलक्ष्मीः बले राज्ञः लक्ष्मीः श्रीः । क्रोडीकृता अङ्कीकृता । अनेन यूना तारुण्यादिगुणसम्पन्नेन । एकत्र एकस्मिन् । जन्मनि । यत् । कृतं सम्पादितम् । तत् । पुराणः पुरुषः नारायणो हरिः । जन्मत्रये त्रिषु जन्मसु । अकरोत् व्यदधात् ।

भोजपक्षे—अत्युद्धृता दौर्गत्यादुन्नमिता । बलिराजलक्ष्मीः बलिनां राज्ञां लक्ष्मीः । शेषं समानम् ।

राजा ने सुना । सब गहने उतारकर उसे दे दिये और कहा—भास्कर, तुम्हारे बच्चे बड़े कष्ट में होंगे । शीघ्र अपने देश को पधारो । तब शाकल्य ने कहा—

बलवान् राजा भोज ने पृथ्वी का उद्धार किया, शत्रु-वर्ग को दलित किया, बलि की राजलक्ष्मी को अपने अधिकार में लिया । जो इस युवा पुरुष ने एक जन्म में किया, पुराण-पुरुष ने उसे तीन जन्मों में किया ।

ततो राजा शाकल्याय लक्षत्रयं दत्तवान् ।

अन्यदा राजा मृगयारसेन विचरंस्त पुरःसमागतहरिण्यां बाणेन विद्धायामपि वित्ताशया कोऽपि कविराह—

श्रीभोजे मृगयां गतेऽपि सहसा चापे समारोपिते-
ऽप्याकर्णान्तगतेऽपि मुष्टिगलिते बाणेऽङ्गलग्नेऽपि च ।

स्थानान्नैव पलायितं न चलित नोत्कम्पितं नोत्प्लुतं
मृग्या मद्वशगं करोति दयितं कामोऽयमित्याशया ॥२१७॥

ततो राजेति। **Vocabulary** : विद्ध-क्षत, wounded. आकर्णान्तगत—कानों तक खींचा हुआ, drawn as far as the ears. मुष्टिगलित—मुट्ठी से छोड़ा हुआ। उत्प्लुत—कूदा हुआ, leapt.

Prose Order : श्रीभोजे मृगयां गते अपि, सहसा चापे समारोपिते अपि, आकर्णान्तगते अपि, मुष्टिगलिते बाणे अङ्गलग्ने अपि, अयं कामः दयितं मद्वशगं करोति इत्याशया मृग्या स्थानात् नैव पलायितं, न चलितम्, न उत्कम्पितम्, न उत्प्लुतम्।

व्याख्या—श्रीभोजे राजनि। मृगयाम् आखेटकम्। गते अपि याते अपि। सहसा शीघ्रम् अविलम्बेन। चापे धनुषि। समारोपिते सज्जीकृते अपि। आकर्णान्तगते अपि कर्णान्तम् आकृष्टे अपि। मुष्टिगलिते हस्ताद् विसृष्ट। बाणे शरे। अङ्गलग्ने शरीरावयवगते अपि। अयं कामो मदनः। दयितं मत्प्रियम्। मद्वशगं मदधीनम्। करोति विधत्ते। इत्याशया इत्यभिप्रायेण। मृग्या हरिण्या। स्थानात् स्वाधिष्ठानभूमेः। नैव पलायितं न धावितम्। न चलितं नोदगतम्। न उत्कम्पितम् न उद्वेपितम्। न उत्प्लुतं न उत्कूर्दितम्।

अत्र भोजराजस्य शारीरिकसौन्दर्यं वर्णितम्।

तब राजा ने शाकल्य को तीन लाख रुपये दिये।

एक दिन राजा ने शिकार के लिए घूमते हुए सामने आई हुई एक हरिणी को बाण से बींधा। तब धन की आशा से एक कवि ने यह कविता कही—

राजा भोज के शिकार को जाने पर भी, धनुष पर बाण चढ़ाने पर भी, (उसे) कान तक खींचने पर भी, मुट्ठी से छोड़ने पर भी और अंग पर लगने पर भी हरिणी ने यही समझा कि यह कामदेव है, मेरे प्रिय को वश में लाना चाहता है, इसलिए न वह अपने स्थान से भागी, न चली, न काँपी और न कूदी।

राजा तस्मै लक्षत्रयं प्रयच्छति ।

अन्यदा सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजनृपतौ द्वारपाल आगत्याह—'देव, जाह्नवीतीरवासिनी काचन वृद्धब्राह्मणी विदुषी द्वारि तिष्ठति' । राजा—'प्रवेशय ।' तत आगच्छन्तीं राजा प्रणमति । सा तं 'चिरं जीव' इत्युक्त्वाह—

भोजप्रतापाग्निरपूर्व एष
जागर्त्ति भूभृत्कटकस्थलीषु ।
यस्मिन्प्रविष्टे रिपुपार्थिवानां
तृणानि रोहन्ति गृहाङ्गणेषु ॥२१८॥

राजेति । **Vocabulary** : जाह्नवी—गङ्गा, the Ganges. अपूर्व—singular. जार्गत्ति—जाग रही है, is burning. भूभृत्—(१) hill, (२) king. कटकस्थली—(१) सेवानिवेशस्थान, (२) पर्वतों पर समभूभाग ।

Prose Order : एषः अपूर्वः भोजप्रतापाग्निः भूभृत्कटकस्थलीषु जार्गति । यस्मिन् प्रविष्टे रिपुपार्थिवानां गृहाङ्गणेषु तृणानि रोहन्ति ।

व्याख्या—एषः प्रत्यक्षविषयीभूतः । अपूर्वः भोजप्रतापाग्निः भोजस्य प्रतापरूपः अग्निः । भूभृत्कटकस्थलीषु—भूभृतां कटकम् (ष० तत्पु०) तदेव स्थली (कर्म०) तासु सेनासन्निवेशस्थलेषु । जागर्त्ति उदितो वर्त्तते । यस्मिन् अग्नौ । प्रविष्टे प्रसृते सति । रिपुपार्थिवानां शत्रुनृपाणाम् । गृहाङ्गणेषु प्रासादाभ्यन्तरवर्तिषु क्षेत्रेषु । तृणानि रोहन्ति प्रादुर्भवन्ति ।

राजा ने उसे तीन लाख रुपये दिये—

एक बार जब राजा भोज सिंहासन पर बैठे थे, द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! गंगा के तट पर रहनेवाली एक शिक्षिता बूढ़ी ब्राह्मणी द्वार पर खड़ी है । राजा ने कहा—उसे यहाँ भेजो । जब वह आई तब राजा ने प्रणाम किया । उसने राजा को आशीर्वाद देकर कहा—

भोज की यह अपूर्व प्रतापाग्नि प्रतिपक्षी राजाओं की राजधानियों में जाग रही है, जिस अग्नि के प्रविष्ट होने पर शत्रुराजाओं के घरों के आँगन में तृण उगने लगते हैं । (अर्थात् वे घरों को छोड़कर भाग जाते हैं)

राजा तस्यै रत्नपूर्णं कलशं प्रयच्छति । ततो लिखति भाण्डारिकः—

भोजेन कलशो दत्तः सुवर्णमणिसंभृतः ।
प्रतापस्तुतितुष्टेन वृद्धायै राजसंसदि ॥२१६॥

राजेति। **Vocabulary** : सम्भृत:—भरा हुआ, full of. संसद्—सभा, assembly.

Prose Order : प्रतापस्तुतितुष्टेन भोजेन राजसंसदि सुवर्णमणिसम्भृतः कलशः वृद्धायै दत्तः ।

व्याख्या—प्रतापस्तुतिष्टेन प्रतापस्य स्वतेजसः स्तुतिः प्रशंसा तेन तुष्टः प्रसन्नः तेन । भोजेन भोजराजेन । राजसंसदि राजसभायाम् । सुवर्णमणिसम्भृतः सुवर्णं च मणयश्चेति सुवर्णमणयः (द्वन्द्व), सुवर्णमणिभिः सम्भृतः (त० तत्पु०) पूरितः कलशः वृद्धायै दत्तः पारितोषिकरूपेण वितीर्णः ।

तब राजा ने उसे रत्नों से भरा हुआ घड़ा दिया। तब कोशाध्यक्ष ने लिखा—

अपने प्रताप की स्तुति से प्रसन्न होकर राजा भोज ने राजसभा में वृद्धा स्त्री को सुवर्ण तथा मणियों से परिपूरित घड़ा दान में दिया।

अन्यदा दूरदेशादागतः कश्चिच्चोरो राजानं प्राह—'देव, सिंहलदेशे मया काचन चामुण्डालये राजकन्या दृष्टा । सा च मां दृष्ट्वा मालवदेशदेवस्य महिमानं बहुधा श्रुतं त्वमपि वदेति पप्रच्छ । मया च तस्या देवगुणा व्यावर्णिताः । सा चात्यन्ततोषाच्चन्दनतरोर्निरुपमं गर्भखण्डं दत्त्वा यथास्थानं प्रपद । देव गुणाभिवर्णनप्राप्तं तदेतद् गृहाण । एतत्प्रसृतपरिमलभरेण भृङ्गा भुजङ्गाश्च समायान्ति ।' राजा तद्गृहीत्वा तुष्टस्तस्मै लक्षं दत्तवान्। ततो दामोदरकविस्तन्मिषेण राजानं स्तौति—

श्रीमच्चन्दनवृक्ष सन्ति बहवस्ते शाखिनः कानने
येषां सौरभमात्रकं निवसति प्रायेण पुष्पश्रिया ।
प्रत्यङ्गं सुकृतेन तेन शुचिना ख्यातः प्रसिद्धात्मना
योऽसौ गन्धगुणस्त्वया प्रकटितः क्वासाविह प्रेक्ष्यते ॥२२०॥

अन्यदेति । **Vocabulary** : चामुण्डालय–देवीमंदिर, the temple of the goddess Chamunda. गर्भखण्ड—भीतर का टुकड़ा, a piece (of sandal wood) cut from the interior (of

the sandal tree).). प्रसूत—उत्पन्न, born. परिमल—सुगंध, fragrance. भृङ्ग—भ्रमर, bee.

पुष्पश्री—पुष्पलक्ष्मी, wealth of flowers. सुकृत—पुण्य, piety. शुचि—पवित्र, pure. प्रसिद्धात्मन्—well-known. गन्धगुण—quality of fragrance. प्रकटित—manifested. प्रेक्ष्यते—is beheld.

Prose Order : श्रीमच्चन्दनवृक्ष ते कानने बहवः शाखिनः सन्ति येषां सौरभमात्रकं प्रायेण पुष्पश्रिया निवसति । तेन प्रसिद्धात्मना शुचिना सुकृतेन प्रत्यङ्गं यः असौ गन्धगुणः त्वया प्रकटितः असो इह क्व प्रेक्ष्यते ।

व्याख्या—श्रीमान् ऐश्वर्यशालिन् ! चन्दनवृक्ष ते तव कानने वने बहवः अनेके शाखिनः वृक्षाः सन्ति वर्त्तन्ते येषां सौरभमात्रकं गन्धः केवलं पुष्पश्रिया कुसुमसम्पत्त्या प्रायेण बहुलतया निवसति नत्वन्येष्ववयवेषु । तेन प्रसिद्धात्मना प्रख्यातेन शुचिना पवित्रेण सुकृतेन पुण्यस्वरूपेण ख्यातः प्रसिद्धः यः असौ गन्धगुणः सौरभातिशयः त्वया प्रकटितः प्रख्यातः असौ इह क्व कुत्र प्रेक्ष्यते दृश्यतेन कुत्रापीत्यर्थः ।

अन्येषां राज्ञां यश एकदेशवर्ति भवतस्तु समस्तदेशविवर्ति इत्याशयः ।

एक बार एक दूर देश से आकर एक चोर ने राजा से कहा—देव ! सिंहल देश में देवी के मंदिर में मैंने एक राजकन्या को देखा है । वह मुझे देखकर पूछने लगी—"मालव देश के राजा की महिमा को मैंने कई लोगों से सुना है, तुम भी कहो ।" मैंने भी उसके सामने आपके गुणों का वर्णन किया । तब वह अत्यन्त सन्तुष्ट होकर चन्दन वृक्ष के बीच का एक अनुपम खंड मुझे देकर अपने स्थान को चली गई । देव ! आपके गुणों के वर्णन से प्राप्त चंदन-खंड को आप ग्रहण कीजिए । इसकी गंध के फैल जाने से भ्रमर और साँप आते हैं । राजा उसको लेकर संतुष्ट हुए और उसे एक लाख रुपये दिये । तब दामोदर कवि ने गंध के बहाने राजा की स्तुति की ।

श्रीमन् चन्दन वृक्ष ! वन में वे अनेक वृक्ष हैं, जिनकी पुष्पलक्ष्मी में

सुगंध रहती है, किन्तु आपके उस प्रसिद्ध पवित्र पुण्य से प्रत्येक अंग में जो यह गंधगुण प्रकट हुआ, वह इस चंदन-खण्ड में कहाँ दीखता है ।

राजा स्वस्तुतिं बुद्ध्वा लक्षं ददौ ।

ततो द्वारपाल आगत्य प्राह—'देव, काचित्सूत्रधारी स्त्री द्वारि वर्त्तते ।' राजा—'प्रवेशय ।' ततः सागत्य राजानं प्रणिपत्याह—

बलिः पातालनिलयोऽधः कृतश्चित्रमत्र किम् ।
अधः कृतो दिवस्थोऽपि चित्रं कल्पद्रुमस्त्वया ॥२२१॥

राजेति । **Vocabulary** : सूत्रधारी—an actress. निलय—वासस्थान । दिवस्थ—स्वर्गस्थित ।

Prose Order : बलिः पातालनिलयः अधःकृतः, अत्र चित्रं किम् ? चित्रम्, दिवस्थः अपि कल्पद्रुमः त्वया अधः कृतः ।

व्याख्या—बलिः तदाख्यो नृपतिः । पातालनिलयः—पाताले निलयो यस्य (बहु०) सः तथाभूतः, पातालवासी । अधःकृतः—अधोवसतिं कारितः । अत्र विषये । चित्रं किम्–किमाश्चर्यम् । त्वया भोजराजेन । दिवस्थः स्वर्गस्थितः । अपि । कल्पद्रुमः । अधः कृतः नीचैरानीतः । इति चित्रम् आश्चर्यम् ।

सर्वाशापूर्त्तिकरो भवान् कल्पवृक्ष इवेति ध्वन्यते ।

राजा ने अपनी प्रशंसा जानकर एक लाख रुपये दिये । तब द्वारपाल ने कहा—

देव ! एक नटी द्वार पर खड़ी है । राजा ने कहा—उसे यहाँ भेज दो । तब वह आई और राजा से प्रणाम करके बोली—

पाताल में रहनेवाले बलि को जो आपने नीचे कर दिया तो इसमें आश्चर्य ही क्या ? जब आपने स्वर्गस्थित कल्पद्रुम को भी नीचे कर दिया–इसमें आश्चर्य है ।

राजा तस्यै प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कदाचिन्मृगयापरिश्रान्तो राजा क्वचित्सहकारतरोरधस्तात्तिष्ठति स्म । तत्र मल्लिनाथाख्यः कविरागत्य प्राह—

शाखाशतशतवितताः सन्ति कियन्तो न कानने तरवः ।
परिमलभरमिलदलिकुलदलितदलाः शाखिनो विरलाः ॥२२२॥

राजा तस्यै इति । **Vocabulary** : परिश्रान्त—थका हुआ, tired. सहकार—आम, mango. अधस्तात्—नीचे, beneath.

वितत—फैले हुए, stretched. कानन—वन, forest. परिमल—सुगंध, fragrance. भर—अतिशय, अलिकुल—भ्रमरसमूह—the bees. दलित—वेष्टित, incircled. दल—पत्र, leaves.]

Prose Order : शाखाशतशतवितताः कियन्तः तरवः कानने न सन्ति । परिमलभरमिलदलिकुलदलितदलाः शाखिनः विरलाः ।

व्याख्या—शाखाशतशतवितताः—शाखानां शतं शतं शाखाशतम, तैः वितताः विस्तृताः, शाखाबाहुल्याद् प्रचुरतरं व्याप्ताः कियन्तः तरवः वृक्षाः कानने वने न सन्ति ? तादृशा बहवो वृक्षाः सन्तीति कवेरभिप्रायः । परिमलभरमिलदलिकुलदलितदलाः परिमलस्य गन्धस्य भरोऽतिशयः तेन कारणेन मिलद् समवस्थितं यद् अलिकुलं भ्रमरसमूहः तेन दलितानि वेष्टितानि दलानि पर्णानि येषां ते तथाभूताः शाखिनो वृक्षास्तु विरला नैक इति भावः ।

राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक लाख रुपये दिये । तब एक बार शिकार से थककर राजा किसी आम के झाड़ के नीचे बैठे थे । वहाँ मल्लिनाथ नाम के कवि ने आकर कहा—

विस्तृत शाखाओं वाले कितने ही वृक्ष जंगल में नहीं हैं क्या ? सुगंध के कारण जिनके पत्तों पर भ्रमर दल बैठा है, वे वक्ष विरले ही हैं । ततो राजा तस्मै हस्तवलयं ददौ ।

तत्रैवासीने राज्ञि कोऽपि विद्वानागत्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा प्राह— 'राजन्, काशीदेशमारभ्य तीर्थयात्रया परिभ्राम्यते । दक्षिणदेशवासिना मया ।' राजा—'भवादृशानां तीर्थवासिनां दर्शनात्कृतार्थोऽस्मि ।' स आह—'वयं मान्त्रिकाश्च ।' 'राजा—'विप्रेषु सर्वं संभाव्यते ।' राजा पुनः प्राह—'विप्र, मंत्रविद्यया यथा परलोके फलप्राप्तिः तथा किमिहलोकेऽप्यस्ति ।'

विप्रः—'राजन्, सरस्वतीचरणाराधनाद्विद्यावाप्तिर्विश्वविदिता। परं धनावाप्तिर्भाग्याधीना।

गुणाः खलु गुणा एव न गणा भूतिहेतवः।
धनसंचयकर्तृणि भाग्यानि पृथगेव हि ॥२२३॥

ततो राजेति। **Vocabulary**: हस्तवलय—करकङ्कण, bracelet. तीर्थ—a holy place. मंत्रविद्या—a mystic lore. विश्वविदित—well-known in the world. भूमिहेतु—एश्वर्यसाधन, the means of riches.

Prose Order: गुणाः खलु गुणा एव, गुणा भूतिहेतवः न, हि धनश्चयकर्तृणि भाग्यानि पृथक् एव।

व्याख्या—गुणाः खलु निश्चयेन गुणा एव। गुणाः भूतिलेतवः धनरूपैश्वर्यकारणानि न भवन्ति। हि यतः। धनसञ्चयकर्तृणि द्रव्यागमहेतूनि। भाग्यानि तु पृथगेव गुणेभ्यः सर्वथा भिन्नानि।

तब राजा ने उसे अपना कर-ककण दिया।

जब राजा वहीं बैठे थे, एक विद्वान् आये, आशीर्वाद देकर बोले—राजन्! मैं दक्षिण देश का वासी हूँ। काशी से चलकर तीर्थयात्रा करते-करते यहाँ आया हूँ। राजा ने कहा—आप-जैसे तीर्थयात्रियों के दर्शन से मैं कृतार्थ हुआ। मैं मंत्रशास्त्र को भी जानता हूँ। राजा ने कहा—ब्राह्मणों में सब कुछ सम्भव है। राजा कहते गये—ब्राह्मण! मंत्रविद्या से जैसा परलोक में फल मिलता है, वैसा क्या इस लोक में भी मिल सकता है? ब्राह्मण ने कहा—राजन्! सरस्वती की चरणशुश्रूषा से इस लोक में विद्या की प्राप्ति जगत्-प्रसिद्ध है, किन्तु धन की प्राप्ति दैव के अधीन है।

गुण तो गुण ही हैं। वे सम्पत्ति के कारण नहीं होते। धन को लानेवाले भाग्य सर्वथा भिन्न होते हैं।

देव, विद्यागुणा एव लोकानां प्रतिष्ठायै भवन्ति। न तु केवलं सम्पदः। देव, शृणु—

आत्मायत्ते गुणग्रामे नैर्गुण्यं वचनीयता ।
दैवायत्तेषु वित्तेषु पुंसां का नाम वाच्यता ॥२२४॥

देवेति । **Vocabulary** : प्रतिष्ठा—सम्मान, position. आयत्त—अधीन, under-control. ग्राम—समूह। नैर्गुण्य—गुणाभाव, absence of merits. वचनीयता—निन्दाविषय, scandal. वाच्यता—निन्दा, censure.

Prose Order : गुणग्रामे आत्मायत्ते नैर्गुण्यं वचनीयता । वित्तेषु दैवायत्तेषु पुंसां वाच्यता का नाम ?

व्याख्या—गुणग्रामे गुणराशौ । आत्मायत्ते आत्माधीने सति । नैर्गुण्यं गणाभावः । वचनीयता निन्दाहेतुः । जायते इति शेषः । वित्तेषु धनेषु दैवायत्तेषु भाग्याधीनेषु सत्सु पुंसां नराणाम् । वाच्यता निन्दा का नाम न कापीत्यभिप्रायः ।

देव ! प्रतिष्ठा के लिए विद्यागुण होते हैं न कि केवल संपत्ति । देव, सुनिए ।

गुणों का उपार्जन अपने अधीन है । उन्हें न अपनाने से निन्दा होती है । सम्पत्ति का होना दैव के अधीन है । सम्पत्ति के न होने से निन्दा नहीं होती । देव, मंत्राराधनेनाप्रतिहता शक्तिः स्यात् । देव, एवं कुतूहलं पश्य । मया यस्य शिरसि करो निधीयते स सरस्वतीप्रसादेनास्खलितविद्याप्रसारः स्यात्'। राजा प्राह—'सुमते, महती देवताशक्तिः ।' ततो राजा कामपि दासीमाकार्य विप्रं प्राह—द्विजवर, अस्या वेश्यायाः शिरसि करं निधेहि ।' विप्रस्तस्याः शिरसि करं निधाय तां प्राह—'देवि, यद्राजाज्ञापयति तद्वद ।' ततो दासी प्राह—'देव, अहमद्य समस्तवाङ्मयजातं हस्तामलकवत्पश्यामि । देव, आदिश किं वर्णयामि ।' ततो राजा पुरः खड्गः वीक्ष्य प्राह—खड्गमेव्यावर्णय, इति । दासी प्राह—

धाराधरस्त्वदसिरेष नरेन्द्र चित्रं
वर्षन्ति वैरिवनिताजनलोचनानि ।
कोशेन संततमसंगतिराहवेऽस्य
दारिद्र्यमभ्युदयति प्रतिपार्थिवानाम् ॥२२५॥

देवेति। **Vocabulary** : अप्रतिहता शक्तिः—अरोधशक्ति, unobstructed power. अस्खलित—अविच्छिन्न, undeviating. आकार्य—बुलाकर। जात—समूह, multitude. हस्तामलक—हाथ में स्थित आँवला, a myrobalan placed on the palm of hand.

धाराधर (१) तीक्ष्णधारा से युक्त, sharp-edged, (२) जलधारा से युक्त, holder of rain-water. वनिता—स्त्री, a lady. कोश—म्यान, (१) sheath; (२) खजाना, treasure. असंगति—संपर्क का अभाव। आहव—युद्ध। प्रतिपार्थिव—शत्रु राजा। अभ्युदयति—बढ़ाता है, raises.

Prose Order : नरेन्द्र ! एषः त्वदसिः धाराधरः, चित्रं वैरिवनिताजनलोचनानि वर्षन्ति। कोशेन संगतम्। अस्य आहवे असंगतिः। प्रतिपार्थिवानां दारिद्र्यम् अभ्युदयति।

व्याख्या—नरेन्द्र—नराणाम् इन्द्रः, तत्सम्बुद्धौ। एषः त्वदसिः तव असिः खड्गः। धाराधरः—तीक्ष्णधारया युक्तः, जलधारया युक्तो वा, अत्र धाराशब्दः श्लिष्टः। चित्रम् आश्चर्यम्। वैरिवनिताजनलोचनानि—वैरीणां वनिताः (ष० तत्पु०), ता एव जनः (कर्म०) तस्य लोचनम् (ष० तत्पु०) तानि। वर्षन्ति—अश्रुधारा वहन्ति। अस्य खड्गस्य। कोशेन चर्मावरकेण। संगतं संगः। वर्त्तते। आहवे युद्धे। अस्य। असंगतिः कोशेन सह संगाभावः। तथापि तत्राहवे प्रतिपार्थिवानां शत्रुभूपानाम्। दारिद्र्यं निधनताम् अभ्युदयति वर्धयति।

अत्रासङ्गतिर्नामालङ्कारः—कार्यकारणयोर्भिन्नदेशतायामसङ्गतिरिति तल्लक्षणात्।

देव ! मंत्रों की आराधना से अकुंठित शक्ति उत्पन्न हो जाती है। देव, इसका आश्चर्य इस प्रकार का है। मैं जिसके सिर पर हाथ रखूँगा, वह सरस्वती की कृपा से पूर्ण विद्या से सम्पन्न होगा। राजा ने कहा—पण्डित-श्रेष्ठ ! दैवी शक्ति अपरम्पार है। तब राजा ने एक दासी को बुलाया और ब्राह्मण से कहा—ब्राह्मणश्रेष्ठ ! इस वेश्या के सिर पर हाथ रखो। ब्राह्मण ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा—देवी ! जो राजा

का आदेश हो, उसे पूरा करो। तब दासी ने कहा—देव ! मैं आज सम्पूर्ण शास्त्रों को हाथ पर रखे हुए आँवले के समान देखती हूँ। देव ! आज्ञा दीजिए क्या वर्णन करूँ ? तब राजा ने सामने तलवार को देखकर कहा—मेरे खड्ग का वर्णन करो। दासी ने कहा—

नरेश ! विचित्र है यह तुम्हारा खड्ग, धारा से युक्त। शत्रुजनों की स्त्रियों की आँखें, इसे देखकर, आँसुओं की वर्षा करती हैं। म्यान से इसकी मैत्री है, किन्तु युद्ध-स्थल में नहीं। शत्रु-राजाओं की निर्धनता को बढ़ाता है यह। राजा तस्मै रत्नकलशाननर्घ्यान्पञ्च ददौ।

ततस्तस्मिन्क्षणे कुतश्चित्पञ्च कवयः समाजग्मुः। तानवलोक्यैव विच्छायमुखं राजानं दृष्ट्वा महेश्वरकविर्वृक्षमिषेणाह—

किं जातोऽसि चतुष्पथे घनतरच्छायोऽसि किं छायया
छन्नश्चेत्फलितोऽसि किं फलभरैः पूर्णोऽसि किं सन्नतः।
हे सद्वृक्ष सहस्व सम्प्रति चिरं शाखाशिखाकर्षण-
क्षोभामोट्टनभञ्जनानि जनतः स्वैरेव दुश्चेष्टितैः ॥२२६॥

राजा तस्यै इति। **Vocabulary**: अनर्घ्य—अमूल्य, precious. विच्छाय—मलिन, dejected.

चतुष्पथ—चौराहा, a cross-way. छन्न—आच्छादित, covered. सन्नत—झुका हुआ, bent. शिखाकर्षण—शिखाओं का खींचना, the pulling of the locks of hair. क्षोभ—हिलाना, shaking. आमोटन—मोड़ना, bending or crushing. भञ्जन—तोड़ना, breaking. दुश्चेष्टित—दुराचरण, misconduct.

Prose Order : चतुष्पथे किं जातः असि ? किं घनतरच्छायः असि ? छायया छन्नः चेत् किं फलितः असि ? फलभरैः पूर्णः किं सन्नतः असि ? हे सद्वृक्ष। सम्प्रति स्वैः एव दुश्चेष्टितैः जनतः शाखाशिखाकर्षणं क्षोभामोटन-भञ्जनानि चिरं सहस्व।

व्याख्या—चतुष्पथे—चतुर्णां पथां समाहारः चतुष्पथम्, तस्मिन् चत्वरे। किम्—किमर्थम्। जातः प्ररूढः। असि ? घनतरच्छायः—घनतरा छाया

यस्य (बहु०) सः। छायया छन्नः प्रगाढच्छायः चेद् यदि किं फलितः फलयुतः असि। फलभरैः बहुभिः फलैः पूर्णः व्याप्तः सन् किमर्थं सन्नतः अवनतः असि ? हे सद्वृक्ष शोभन वृक्ष ! सम्प्रति अधुना। स्वैः निजैः एव। दुश्चेष्टितैः दुराचरणैः। जनतः जनेभ्यः। शाखाशिखाकर्षणम्—शाखा एव शिखास्तासु कर्षणम्। शोभामोटनभञ्जनानि—क्षोभणं कम्पनम्, मोटनं वक्रीकरणम्, भञ्जनं विदारणम्, तानि चिरं दीर्घकालं यावत् सहस्व मर्षय।

राजा ने उसे अमूल्य रत्नों से भरे पाँच कलश दिये। तब उसी समय कहीं से पाँच कवि आये। उन्हें देखकर राजा का मुख कुछ मलिन हो गया। यह देखकर महेश्वर कवि ने वृक्ष के बहाने राजा को सम्बोधित किया।

हे शोभन वृक्ष ! चौराहे पर क्यों उगे तुम और क्यों हुए घनी छाया से सम्पन्न ? छाया से सम्पन्न होकर भी तुम फले क्यों ? उसपर भी फलों के भार से लदे क्यों ? अपनी ही बुरी आदतों के कारण अब लोगों से शाखाओं के खींचने, हिलाने, मोड़ने तथा तोड़ने आदि कष्टों को चिरकाल तक सहो।

ततो राजा तस्मै लक्षं ददौ। ततस्ते द्विजवराः पृथक्पृथगाशीर्वचनमुदीर्य यथाक्रमं राजाज्ञया कम्बल उपविश्य मङ्गलं चक्रुः। तत एकः पठति—

कूर्मः पातालगङ्गापयसि विहरतां तत्तटीरूढमुस्ता-
मादत्तामादिपोत्री शिथिलयतु फणामण्डलं कुण्डलीन्द्रः।
दिङ्मातङ्गा मृणालीकवलनकलनां कुर्वतां पर्वतेन्द्राः
सव स्वैरं चरन्तु त्वयि वहति विभो भोज देवीं धरित्रीम् ॥२२७॥

ततो राजेति। **Vocabulary** : उदीर्य—कहकर, having pronounced. कम्बल—blanket. कूर्म—tortoise. पातालगङ्गा—the nether regions. मुस्ता—musta grass. आदिपोत्री—वराहावतार, the boar incarnation of Vishnu. फणीन्द्र—शेष, the hooded lord of snakes. फणामण्डल—the hooded orb. दिङ्मातङ्ग—

दिग्गज, the elephants of the quarters. मृणाली—the lotus-stalk. स्वैरम्—स्वेच्छापूर्वक, at their own sweet will.

Prose Order : विभो भोज ! त्वयि देवीं धरित्रीं वहति कूर्मः पातालगङ्गापयसि विहरताम्, आदिपोत्री तत्तटीरूढ़मुस्ताम् आदत्ताम् । कुण्डलीन्द्रः फणामण्डलं शिथिलयतु । दिङ्मातङ्गाः मृणालीकवलनकलनां कुर्वताम् । सर्वे पर्वतेन्द्राः स्वैरं चरन्तु ।

व्याख्या—विभो प्रभो भोज ! त्वयि देवीं धरित्रीं पृथ्वीं वहति धारयति सति कूर्मः कच्छपः पातालगङ्गापयसि पालालगङ्गायाःपयसि जले । विहरतां क्रीडतु । आदिपोत्री वराहावतारो भगवान् । तत्तटीरूढमुस्ताम्—तस्याः तटी (ष० तत्पु०) तत्तटी, तस्यां रूढा (स० तत्पु०) या मुस्ता (कर्म०) ताम्, आदत्ताम् अश्नातु । कुण्डलीन्द्रः शेषः । फणामण्डलं फणाफलकम् । शिथिलयत शिथिलीकरोतु । दिङ्मातङ्गाः दिग्गजाः । मृणालीकवलनकलनाम् मृणाल्या कवलनं भक्षणम्, तस्य कलनाम् कुर्वताम् । मृणालीर्भक्षयन्त्विति भावः । सर्वे समस्ताः पर्वतेन्द्रा गिरयः । स्वैरं स्वेच्छापूर्वकम् च चरन्तु भ्रमन्तु ।

तब राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये । तब उन श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने अलग-अलग आशीर्वाद देकर राजा के आदेश से क्रमानुसार कंबल पर बैठकर मंगलाचार किया । एक ने कहा—

प्रभु भोज ! आपके भगवती पृथ्वी को धारण करते हुए सूर्य पाताल-गंगा के जल में विहार करें। वराह उसके तट पर उगे हुए मोथिया को खायें । शेषनाग अपने फणों को शिथिल करें। दिशाओं के हाथी नाल-सहित कमलों का आस्वादन करें । सभी पर्वत भी स्वेच्छानुसार विचरें ।

राजा चमत्कृतस्तस्मै शताश्वान्ददौ । ततो भाण्डारिको लिखति—

क्रीडोद्याने नरेन्द्रेण शतमश्वा मनोजवाः ।
प्रदत्ताः कामदेवाय सहकारतरोरधः ॥२२८॥

राजेति । **Vocabulary** : क्रीड़ोद्यान—the pleasure-garden. मनोजव–the swift-footed (lit. as swift as the mind). सहकारतरु—आम का वृक्ष, the mango tree.

Prose Order : क्रीडोद्याने सहकारतरोः अधः नरेन्द्रेण मनोजवाः शतम् अश्वाः कामदेवाय प्रदत्ताः ।

व्याख्या—क्रीडोद्याने—क्रीडार्थम् उद्यानं क्रीडोद्यानम् (च० तत्पु०), तस्मिन् । सहकारतरोः सहकारवृक्षस्य । अधः नीचैः । नरेन्द्रेण— राज्ञा । मनोजवाः मनोवेगाः । शतं शतसंख्याकाः । अश्वाः । कामदेवाय तन्नाम्ने-कवये । प्रदत्ताः ।

चकित होकर राजा ने उसे सौ घोड़े दिये । तब कोषाध्यक्ष ने लिखा—प्रमदवन में राजा ने आम के झाड़ के नीचे मन के सदृश शीघ्र गतिवाले सौ घोड़े कामदेव कवि को दिये ।

ततः कदाचिद्भोजो विचारयति स्म—"मत्सदृशो वदान्यः कोऽपि नास्ति' इति । तद्गर्वं विदित्वा मुख्यामात्यो विक्रमार्कस्य पुण्यपत्रं भोजाय प्रदर्शयामास । भोजस्तत्र पत्रे किंचित् प्रस्तावमपश्यत् । तथाहि—'विक्रमार्कः पिपासया प्राह—

> **स्वच्छं सज्जनचित्तवल्लघुतरं दीनार्तिवच्छीतलं**
> **पुत्रालिङ्गनवत्तथैव मधुरं तद्बाल्यसंजल्पवत् ।**
> **एलोशीरलवङ्गचन्दनलसत्कर्पूरकस्तूरिका-**
> **जातीपाटलिकेतकैः सुरभितं पानीयमानीयताम् ॥२२६॥**

ततः कदाचिदिति । **Vocabulary** : वदान्य—उदार, benevolent. पुण्यपत्र—दानपत्र, holy writ of gift. पिपासा—जलपान की इच्छा, thirst. स्वच्छ, pure or transparent. लघुतर—light. दीन—दयापात्र, pitiable. आर्त्ति—पीडा, pain. बाल्य—कुमारावस्था, childhood. संजल्प—वचन, prattle. एला—इलायची, cardamoms. उशीर—andro-pogon. लवङ्ग—लौंग, the clove. चन्दन,–the sandal. कर्पूर,-camphor. कस्तूरिका,–the musk. जाति—मालती, jasmine. पाटलि—पाटलिका, trumpet. केतक—ketak flower. सुरभित—सुगन्धित, fragrant.

Prose Order : सज्जनचित्तवत् स्वच्छं दीनार्त्तिवत् लघुतर पुत्रा-

लिङ्गनवत् शीतलं तथैव तद्बाल्यसंजल्पवत् मधुरम् एलोशीरलवङ्गचन्दनलसत्कर्पूर कस्तूरिकाजातिपाटलिकेतकैः सुरभितं पानीयम् आनीयताम् ।

व्याख्या—सज्जनचित्तवत्—सज्जनस्य चित्तं सज्जनचित्तं तद्वत् । स्वच्छं निर्मलम् । दीनार्त्तिवत्—दीनानाम् आर्त्तिः पीडा तद्वत् । लघुतरं महत्परिमाण-रहितम् । दीनस्य व्यथाया लघुतरं गण्यमानत्वात् । पुत्रालिङ्गनवत् सुताश्लेषवत् शीतलम् । तथैव तेनैव प्रकारेण । तद्बाल्यसंजल्पवत् तस्य पुत्रस्य बाल्ये बाल-काले यः संजल्पो भाषणं तद्वत् मधुरम् । एलेति–एला च उशीर च, लवङ्गाश्च, चन्दनञ्च तैः लसत् सुशोभितम् । कर्पूरञ्च, कस्तूरिका च, जातिश्च पाटलिश्च, केतकश्च तैः तन्नामभिः प्रसूनैः सुरभितं सुवासितम् । पानीयं सलिलम् । आनीयताम् ।

तब कभी भोज ने सोचा—मेरे सदृश कोई दानी नहीं है । भोज का गर्व जानकर उसके प्रधान मन्त्री ने उसे विक्रमादित्य का धर्म-पत्र दिखाया । भोज ने उस पत्र में एक प्रस्ताव देखा—वह यह था कि विक्रमादित्य ने जलपान की अभिलाषा से कहा—

सज्जन के मन के समान स्वच्छ, दीनजन की पीड़ा के सदृश लघुतर, पुत्र के आलिंगन की नाईं शीतल, शिशु के भाषण के समान मधुर, इलायची, खस, लौंग और चन्दन से शोभित; कर्पूर, कस्तूरी, मालती, पाटलि तथा केतकी से सुगन्धित जल लाओ ।

ततो मागधः प्राह—

वक्त्राम्भोजं सरस्वत्यधिवसति सदा शोण एवाधरस्ते
बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुञ्चन्त्यभीक्ष्णं
स्वच्छे चित्ते कुतोऽभूत्कथय नरपते तेऽम्बुपानाभिलाषः ।।२३०।।

ततो मागध इति । Vocabulary : वक्त्र—मुख, face. सरस्वती—the goddess of speech or the river Saraswati. शोण—रक्तवर्ण अथवा शोण नामक नद, red or the Sona river. काकुत्स्थ—रामचन्द्र । पटु—निपुण । दक्षिण समुद्र, the southern ocean. वाहिनी-

Prose Order : क्रीडोद्याने सहकारतरोः अधः नरेन्द्रेण मनोजवाः शतम् अश्वाः कामदेवाय प्रदत्ताः ।

व्याख्या—क्रीडोद्याने—क्रीडार्थम् उद्यानं क्रीडोद्यानम् (च० तत्पु०), तस्मिन् । सहकारतरोः सहकारवृक्षस्य । अधः नीचैः । नरेन्द्रेण— राज्ञा । मनोजवाः मनोवेगाः । शतं शतसंख्याकाः । अश्वाः । कामदेवाय तन्नाम्ने-कवये । प्रदत्ताः ।

चकित होकर राजा ने उसे सौ घोड़े दिये । तब कोषाध्यक्ष ने लिखा—प्रमदवन में राजा ने आम के झाड़ के नीचे मन के सदृश शीघ्र गतिवाले सौ घोड़े कामदेव कवि को दिये ।

ततः कदाचिद्भोजो विचारयति स्म—"मत्सदृशो वदान्यः कोऽपि नास्ति' इति । तद्गर्वं विदित्वा मुख्यामात्यो विक्रमार्कस्य पुण्यपत्रं भोजाय प्रदर्शयामास । भोजस्तत्र पत्रे किंचित् प्रस्तावमपश्यत् । तथाहि—'विक्रमार्कः पिपासया प्राह—

स्वच्छं सज्जनचित्तवल्लघुतरं दीनार्तिवच्छीतलं
पुत्रालिङ्गनवत्तथैव मधुरं तद्बाल्यसंजल्पवत् ।
एलोशीरलवङ्गचन्दनलसत्कर्पूरकस्तूरिका-
जातीपाटलिकेतकैः सुरभितं पानीयमानीयताम् ।।२२६।।

ततः कदाचिदिति । **Vocabulary** : वदान्य—उदार, benevolent. पुण्यपत्र—दानपत्र, holy writ of gift. पिपासा—जलपान की इच्छा, thirst. स्वच्छ, pure or transparent. लघुतर—light. दीन—दयापात्र, pitiable. आर्त्ति—पीडा, pain. बाल्य—कुमारावस्था, childhood. संजल्प—वचन, prattle. एला—इलायची, cardamoms. उशीर—andro-pogon. लवङ्ग—लौंग, the clove. चन्दन,-the sandal. कर्पूर,-camphor. कस्तूरिका,-the musk. जाति—मालती, jasmine. पाटलि—पाटलिका, trumpet. केतक—ketak flower. सुरभित—सुगन्धित, fragrant.

Prose Order : सज्जनचित्तवत् स्वच्छं दीनार्त्तिवत् लघुतर पुत्रा-

लिङ्गनवत् शीतलं तथैव तद्बाल्यसंजल्पवत् मधुरम् एलोशीरलवङ्गचन्दनलसत्कर्पूर कस्तूरिकाजातिपाटलिकेतकैः सुरभितं पानीयम् आनीयताम् ।

व्याख्या—सज्जनचित्तवत्—सज्जनस्य चित्तं सज्जनचित्तं तद्वत् । स्वच्छं निर्मलम् । दीनार्त्तिवत्—दीनानाम् आर्त्तिः पीडा तद्वत् । लघुतरं महत्परिमाण-रहितम् । दीनस्य व्यथाया लघुतरं गण्यमानत्वात् । पुत्रालिङ्गनवत् सुताश्लेषवत् शीतलम् । तथैव तेनैव प्रकारेण । तद्बाल्यसंजल्पवत् तस्य पुत्रस्य बाल्ये बाल-काले यः संजल्पो भाषणं तद्वत् मधुरम् । एलेति–एला च उशीर च, लवङ्गाश्च, चन्दनञ्च तैः लसत् सुशोभितम् । कर्पूरञ्च, कस्तूरिका च, जातिश्च पाटलिश्च, केतकश्च तैः तन्नामभिः प्रसूनैः सुरभितं सुवासितम् । पानीयं सलिलम् । आनीयताम् ।

तब कभी भोज ने सोचा—मेरे सदृश कोई दानी नहीं है । भोज का गर्व जानकर उसके प्रधान मन्त्री ने उसे विक्रमादित्य का धर्म-पत्र दिखाया । भोज ने उस पत्र में एक प्रस्ताव देखा—वह यह था कि विक्रमादित्य ने जलपान की अभिलाषा से कहा—

सज्जन के मन के समान स्वच्छ, दीनजन की पीड़ा के सदृश लघुतर, पुत्र के आलिंगन की नाईं शीतल, शिशु के भाषण के समान मधुर, इलायची, खस, लौंग और चन्दन से शोभित; कर्पूर, कस्तूरी, मालती, पाटलि तथा केतकी से सुगन्धित जल लाओ ।

ततो मागधः प्राह—

वक्त्राम्भोजं सरस्वत्यधिवसति सदा शोण एवाधरस्ते
बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः ।
वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुञ्चन्त्यभीक्ष्णं
स्वच्छे चित्ते कुतोऽभूत्कथय नरपते तेऽम्बुपानाभिलाषः ॥२३०॥

ततो मागध इति । Vocabulary : वक्त्र—मुख, face. सरस्वती—the goddess of speech or the river Saraswati. शोण—रक्तवर्ण अथवा शोण नामक नद, red or the Sona river. काकुत्स्थ—रामचन्द्र । पटु—निपुण । दक्षिण समुद्र, the southern ocean. वाहिनी-

सेना अथवा नदी, army or the river. पार्श्वं—proximity. अभीक्ष्ण—निरन्तर, ever. अम्बुपान—जलपान । अभिलाष—इच्छा ।

Prose Order : सरस्वती ते वक्त्राम्भोजं सदा अधिवसति । ते अधरः शोण एव । ते बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुः दक्षिणः समुद्रः । एताः वाहिन्यः कथम् अपि भवतः पार्श्वम् अभीक्ष्णं नैव मुञ्चन्ति । नरपते ! स्वच्छे चित्ते ते अम्बुपानाभिलाषः कुतः अभूत् कथय ।

व्याख्या—सरस्वती वाग्देवी । ते तव । वक्त्राम्भोजं मुखारविन्दम् । सदा—सर्वदा । अधिवसति निवसति । ते तव । अधरः शोणः रक्तवर्णः । बाहुः भुजः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुः—काकुत्स्थस्य रामचन्द्रस्य वीर्यं बलं तस्य स्मृतिः स्मरणं तस्य करणं विधानं तत्र पटुः निपुणः । दक्षिणः समुद्रः लंकोपवर्ती सागरः । एताः वाहिन्यः सेनाः । कथमपि केनापि प्रकारेण । भवतः पार्श्वं सान्निध्यम् । नैव मुञ्चन्ति नैव त्यजन्ति । नरपते राजन् ! स्वच्छे शुद्धे । चित्ते मनसि । अम्बुपानाभिलाषः जलपानेच्छा । कुतः किमर्थम् । अभूत् । कथय । जलपानेच्छावैयर्थ्यपक्षे—सरस्वती-नदी, शोणः—नदः, वाहिन्यः नद्यः । स्वच्छे—विमलजलमये ।

तब मागध ने कहा—

राजन् ! सरस्वती सदा तुम्हारे मुखकमल में निवास करती है । तुम्हारा होंठ शोण नद (रक्त समुद्र) के समान लाल है । तुम्हारी दाहिनी भुजा श्रीराम के पराक्रम की स्मृति दिलाने में चतुर समुद्र है । ये नदियाँ आपका साथ प्राणभर भी नहीं छोड़तीं । तुम्हारे चित्त के स्वच्छ रहते तुम्हें जलपान की [illegible] क्योंकर हुई ?

[illegible] प्राह । तथाहि—

हाटककोटयस्त्रिनवतिर्मुक्ताफलानां तुलाः
पञ्चाशन्मधुगन्धमत्तमधुपाः क्रोधोद्धताः सिन्धुराः ।
[illegible]नामयुतं प्रपञ्चचतुरं वाराङ्गनानां शतं
दत्तं पाण्ड्यनृपेण यौतकमिदं वैतालिकायार्प्यताम् ॥२३१॥

[illegible] विक्रमार्क इति । **Vocabulary** : हाटक—सुवर्ण, gold.

कोटि—a crore. मुक्ताफल—मोती, pearl. तुलाः—तोला । मधु—मद, ichor. मधुप—भ्रमर, bee. सिन्धुर—हाथी, elephant. अयुत—दस हजार, ten thousand. प्रपञ्च—कला, art. वाराङ्गना—वेश्या, a courtezan. यौतक—gift. अर्प्यताम्—दीजिए । वैतालिक—भाट, a bard.

Prose Order : हाटककोटयः अष्टौ, मुक्ताफलानां त्रिनवतिः तुलाः, मधुगन्धमत्तमधुपाः क्रोधोद्धताः सिन्धुराः पञ्चाशत् । अश्वानाम् अयुतम्, प्रपञ्चचतुरं वाराङ्गनानां शतम्, इदं यौतकं पाण्ड्यनृपेण दत्तम्, वैतालिकाय अर्प्यताम् ।

व्याख्या—हाटककोटयः—हाटकस्य सुवर्णस्य कोटयः, कोटिपरिमितं सुवर्णम् । मुक्ताफलानां मौक्तिकानाम् । त्रिनवतिः तुलाः । मधुगन्धमत्तमधुपाः—मधुनः गन्धः (ष० तत्पु०) मधुगन्धः, मधुगन्धेन मत्ता मधुपा भ्रमरा यत्र (बहु०) ते तथाभूताः । क्रोधोद्धताः—क्रोधेन उद्धताः (तृ० तत्पु०) । सिन्धुराः गजाः । अश्वानां वाजिनाम् अयुतं दश सहस्रम् । वाराङ्गनानां वेश्यानाम् । प्रपञ्चचतुरम् आडम्बरदक्षम् । शतम् । पाण्ड्यनृपेण पाण्ड्यभूपतिना । इदं यौतकम् उपायनम् । दत्तम् अर्पितम् । वैतालिकाय पूर्वोक्तपद्यभाषिणे । अर्प्यतां दीयताम् ।

तब विक्रमार्क ने कहा—

आठ करोड़ सुवर्ण, तिरानवे तोले मोती, मदमस्त पचास हाथी, जिनपर मदगंध से मस्त भ्रमर मँडरा रहे हैं, दस हजार घोड़े, हाव-भाव में निपुण सौ वेश्याएँ—पाण्ड्य राजा ने यह सम्भार भाट को दिया था, आप भी [illegible] रक्खे और [illegible]

ततः कदाचिद्धारानगरे रात्रौ विचरन्राजा कञ्चन दे[illegible] ब्राह्मणमित्थं पठन्तमवलोक्य स्थितः—

शीतेनाध्युषितस्य माघजलवच्चिन्तार्णवे मज्जतः
शान्ताग्नेः स्फुटिताधरस्य धमतः क्षुत्क्षामकु[illegible]
निद्रा क्वाप्यवमानितेव दयिता सन्त्यज्य दूरं गता
सत्पात्रप्रतिपादितेव कमला नो हीयते [illegible]

सेना अथवा नदी, army or the river. पार्श्व–proximity. अभीक्ष्ण–निरन्तर, ever. अम्बुपान—जलपान । अभिलाष—इच्छा ।

Prose Order : सरस्वती ते वक्त्राम्भोजं सदा अधिवसति । ते अधरः शोण एव । ते बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुः दक्षिणः समुद्रः । एताः वाहिन्यः कथम् अपि भवतः पार्श्वम् अभीक्ष्णं नैव मुञ्चन्ति । नरपते ! स्वच्छे चित्ते ते अम्बुपानाभिलाषः कुतः अभूत् कथय ।

व्याख्या—सरस्वती वाग्देवी । ते तव । वक्त्राम्भोजं मुखारविन्दम् । सदा–सर्वदा । अधिवसति निवसति । ते तव । अधरः शोणः रक्तवर्णः । बाहुः भुजः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुः—काकुत्स्थस्य रामचन्द्रस्य वीर्यं बलं तस्य स्मृतिः स्मरणं तस्य करणं विधानं तत्र पटुः निपुणः । दक्षिणः समुद्रः लंकोपवर्त्ती सागरः । एताः वाहिन्यः सेनाः । कथमपि केनापि प्रकारेण । भवतः पार्श्वं सान्निध्यम् । नैव मुञ्चन्ति नैव त्यजन्ति । नरपते राजन् ! स्वच्छे शुद्धे । चित्ते मनसि । अम्बुपानाभिलाषः जलपानेच्छा । कुतः किमर्थम् । अभूत् । कथय । –

जलपानेच्छावैयर्थ्यपक्षे—सरस्वती-नदी, शोणः—नदः, वाहिन्यः नद्यः । स्वच्छे—विमलजलमये ।

तब मागध ने कहा—

राजन् ! सरस्वती सदा तुम्हारे मुखकमल में निवास करती है । तुम्हारा होंठ शोण नद (रक्त समुद्र) के समान लाल है। तुम्हारी दाहिनी भुजा श्रीराम के पराक्रम की स्मृति दिलाने में चतुर समुद्र है। ये नदियाँ आपका साथ क्षणभर भी नहीं छोड़तीं। तुम्हारे चित्त के स्वच्छ रहते तुम्हें जलपान की अभिलाषा क्योंकर हुई ?

ततो विक्रमार्कः प्राह । तथाहि—

अष्टौ हाटककोटयस्त्रिनवतिर्मुक्ताफलानां तुलाः
पञ्चाशन्मधुगन्धमत्तमधुपाः क्रोधोद्धताः सिन्धुराः ।
अश्वानामयुतं प्रपञ्चचतुरं वाराङ्गनानां शतं
दत्तं पाण्ड्यनृपेण यौतकमिदं वैतालिकायाप्यताम् ॥२३१॥

ततो विक्रमार्क इति । Vocabulary : हाटक–सुवर्ण, gold.

कोटि—a crore. मुक्ताफल—मोती, pearl. तुलाः—तोला। मधु—मद, ichor. मधुप—भ्रमर, bee. सिन्धुर—हाथी, elephant. अयुत—दस हजार, ten thousand. प्रपञ्च—कला, art. वाराङ्गना—वेश्या, a courtezan. यौतक—gift. अर्प्यताम्—दीजिए। वैतालिक-भाट, a bard.

Prose Order : हाटककोटयः अष्टौ, मुक्ताफलानां त्रिनवतिः तुलाः, मधुगन्धमत्तमधुपाः क्रोधोद्धताः सिन्धुराः पञ्चाशत्। अश्वानाम अयुतम्, प्रपञ्चचतुरं वाराङ्गनानां शतम, इदं यौतक पाण्ड्यनृपण दत्तम्, वैतालिकाय अर्प्यताम्।

व्याख्या—हाटककोटयः—हाटकस्य सुवर्णस्य कोटयः, कोटिपरिमितं सुवर्णम्। मुक्ताफलानां मौक्तिकानाम्। त्रिनवतिः तुलाः। मधुगन्धमत्तमधुपाः—मधुनः गन्धः (ष० तत्पु०) मधुगन्धः, मधुगन्धेन मत्ता मधुपा भ्रमरा यत्र (बहु०) ते तथाभूताः। क्रोधोद्धताः—क्रोधेन उद्धताः (तृ० तत्पु०)। सिन्धुराः गजाः। अश्वानां वाजिनाम् अयुतं दश सहस्रम्। वाराङ्गनानां वेश्यानाम्। प्रपञ्चचतुरम आडम्बरदक्षम्। शतम्। पाण्ड्यनृपेण पाण्ड्यभूपतिनां। इदं यौतकम् उपायनम्। दत्तम् अर्पितम्। वैतालिकाय पूर्वोक्तपद्यभाषिणे। अर्प्यतां दीयताम्।

तब विक्रमार्क ने कहा—

आठ करोड़ सुवर्ण, तिरानवे तोले मोती, मदमस्त पचास हाथी, जिनपर मदगंध से मस्त भ्रमर मँडरा रहे हैं, दस हजार घोड़े, हाव-भाव में निपुण सौ वेश्याएँ—पाण्ड्य राजा ने यह सम्भार भाट को दिया था, आप भी दीजिए।

ततो भोजः प्रथमतः एवाद्भुतं विक्रमार्कचरित्रं दृष्ट्वा निजगर्वं तत्याज।

ततः कदाचिद्धारानगरे रात्रौ विचरन्राजा कञ्चन देवालये शीतार्तं ब्राह्मणमित्थं पठन्तमवलोक्य स्थितः—

शीतेनाध्युषितस्य माघजलवच्चिन्तार्णवे मज्जतः
शान्ताग्नेः स्फुटिताधरस्य धमतः क्षुत्क्षामकुक्षे र्मम।
निद्रा क्वाप्यवमानितेव दयिता सन्त्यज्य दूरं गता
सत्पात्र प्रतिपादितेव कमला नो हीयते शर्वरी ॥२३२॥

ततो भोज इति । **Vocabulary** : शीतालु—शीत से कम्पमान । अभ्युषित—व्याप्त, overpowered. मज्जतः—डूबते हुए, sinking. स्फुटित—फूटे हुए, rent. धमत्—प्रदीप्त, kindled. क्षुत्—क्षुधा, hunger. क्षाम—कृश, emaciated. कुक्षि—कोख, belly. अवमानित—offended. दयिता—beloved. सत्पात्र—योग्य व्यक्ति, deserving person. प्रतिपादित—समर्पित । कमला—लक्ष्मी, wealth. शर्वरी—रात्रि । न हीयते—क्षीण नहीं होते, does not diminish.

Prose Order : शीतेन अभ्युषितस्य माघजलवत् चिन्तार्णवे मज्जतः शान्ताग्नेः स्फुटिताधरस्य धमतः क्षुत्क्षामकुक्षेः मम निद्रा अवमानिता दयिता इव क्वापि सन्त्यज्य दूरं गता । सत्पात्रप्रतिपादिता कमला इव शर्वरी नो हीयते ।

व्याख्या—शीतेन अभ्युषितस्य शीतमनुभवतः । माघजलवत् माघमासे सलिलमिव । चिन्तार्णवे चिन्तासागरे । मज्जतः लीनस्य । शान्ताग्नेः शान्तः अग्निर्यस्य (बहु०) सः शान्ताग्निः, तस्य । स्फुटिताधरस्य—स्फुटितम् अधरं यस्य (बहु०) सः स्फुटिताधरः, तस्य । धमतः प्रज्वलितस्य उदराग्निनेति शेषः । क्षुत्क्षामकुक्षेः—क्षुधा क्षामा कृशा कुक्षिर्यस्य (बहु०) सः, तस्य । मम । निद्रा । अवमानिता अनादृता । दयिता प्रिया । इव । क्वापि कुत्रापि । सन्त्यज्य विसृज्य । दूरं गता दूरं याता । सत्पात्रप्रतिपादिता—सत्पात्रे योग्ये जने । प्रतिपादिता अर्पिता । कमला लक्ष्मीः । शर्वरी रात्रिः । नो नैव । हीयते व्यत्येति ।

तब भोज ने पूर्वकालीन विक्रमादित्य का अद्भुत चरित्र सुनकर अहंकार को त्याग दिया ।

अब एक बार धारानगरी में रात को राजा घूम रहे थे । तब एक मंदिर में शीत से आर्त्त एक ब्राह्मण को श्लोक पढ़ते हुए देखा । वे वहीं ठहर गये ।

माघ महीने के जल के सदृश शीत से व्याप्त, चिन्ता-सागर में स्नान करते हुए, शान्त अग्निवाले, काँपते हुए होंठवाले, अग्नि को उत्तेजित करते हुए, भूख से दुबले पेटवाले मुझ निर्धन की नींद अपमानित प्रिया के समान मुझे त्यागकर कहीं दूर चली गई । योग्य व्यक्ति को समर्पित धन के समान रात्रि

क्षीण नहीं होती ।

इति श्रुत्वा राजा प्रातस्तमाहूय पप्रच्छ—'विप्र, पूर्वेद्यू रात्रौ त्वया दारुणः शीतभारः कथं सोढः ?' विप्र आह—

रात्रौ जानुर्दिवा भानुः कृशानुः संध्ययोर्द्वयोः ।
एवं शीतं मया नीतं जानुभानुकृशानुभिः ॥२३३॥

इति श्रुत्वेति । **Vocabulary** : आहूय—बुलाकर, having sent for. पूर्वेद्युः—कल, yesterday. सोढः—सहन किया, endured. जानु—घुटना, knee. दिवा—दिन में, by day. भानुः—सूर्य । कृशानु—अग्नि, fire.

Prose Order : रात्रौ जानुः, दिवा भानुः, द्वयोः सन्ध्ययोः कृशानुः, एवं मया जानुभानुकृशानुभिः शीतं नीतम् ।

व्याख्या—रात्रौ निशि । जानुः जंघामध्यम् । दिवा दिवसे भानुः सूर्यः । द्वयोः सन्ध्ययोः प्रातः सायं च । कृशानुः वह्निः । एवम् अनेन प्रकारेण । मया । जानुभानुकृशानुभिः—जानुना, द्वयोर्जंघयोर्मध्ये शिरो निधाय । भानुना सूर्यातप-सेवनेन । कृशानुना वह्नितापेन । मया । शीतं नीतम्—शीतप्रतिक्रिया कृता ।

सुनकर राजा ने प्रातःकाल उसे बुलाकर पूछा—ब्राह्मण ! कल रात को तुमने घोर शीत कैसे सहा ?

रात में घुटनों के, दिन में सूर्य के और दोनों संध्याकालों में अग्नि के—इस प्रकार घुटनों के, सूर्य के तथा अग्नि के बल पर मैंने शीत बिताया ।

राजा तस्मै सुवर्णकलशत्रयं प्रादात् । ततः कवी राजानं स्तौति—

धारयित्वा त्वयात्मानं महात्यागधनायुषा ।
मोचिता बलिकर्णाद्याः स्वयशोगुप्तवर्ष्मणः ॥२३४॥

राजेति । **Vocabulary** : सुवर्णकलशत्रयम्—three pitchers of gold. प्रादात्—gave away. धारयित्वा—धरोहर रखकर, having put as security. वर्ष्मन्—शरीर, body.

Prose Order : महात्यागधनायुषा त्वया आत्मानं धारयित्वा बलिकर्णाद्याः स्वयशोगुप्तवर्ष्मणः मोचिताः ।

व्याख्या—महात्यागधनायुषा—महांश्चासौ त्यागः महात्यागः, महात्याग-एव धनम्, तद्रूपम् आयुर्यस्य स महात्यागधनायुः तेन तथा भूतेन त्वया । आत्मानं धारयित्वा पृथ्व्याम् अवतीर्य । स्वयशोगुप्तवर्ष्मणः—स्वयशसा गुप्तं यद् वर्ष्म शरीरं तस्मात् बलिकर्णाद्याः पूर्वे राजानः मोचिताः ।

राजा ने उसे सुवर्ण के भरे तीन कलश दिये । तब कवि ने राजा की स्तुति की। महात्यागी, धन और आयु से युक्त तुमने अपनी आत्मा को प्रतिभू रखकर बलि, कर्ण आदि को आच्छादित करनेवाले उनके अपने यश से मुक्त करवाया ।

राजा तस्मै लक्षं ददौ ।

एकदा क्रीडोद्यानपाले आगत्य कमिक्षुदण्डं राज्ञः पुरो मुमोच । तं राजा करे गृहीतवान् । ततो मयूरकविर्नितान्तं परिचयवशादात्मनि राज्ञा कृतामवज्ञां मनसि निधायेक्षमिषेणाह—

कान्तोऽसि नित्यमधुरोऽसि रसाकुलोऽसि
किं चासि पञ्चशरकार्मुकमद्वितीयम् ।
इक्षो तवास्ति सकलं परमेकमूनं
यत्सेवितो भजसि नीरसतां क्रमेण ॥२३५॥

राजेति । Vocabulary : इक्षुदण्ड—sugarcane. नितान्त—अत्यन्त । परिचय—familiarity. अवज्ञा—निरादर, contempt. निधाय—रखकर ।

कान्त—कमनीय, lovely. मधुर—sweet. रसाकुल—रस से भरा हुआ, full of juice. पञ्चशर—कामदेव, five-arrowed god of love. कामुक—धनुष, bow. अद्वितीय—असमान, matchless. ऊन—न्यूनता, shortage. नीरस—रसहीन, sapless.

Prose Order : इक्षो ! कान्तः असि, नितान्तमधुरः असि, रसाकुलः असि, किञ्च अद्वितीयं पञ्चशरकार्मुकम् असि । तव सकलम् अस्ति, परम् एकम् ऊनम्, यत्सेवितः क्रमेण नीरसतां भजसि ।

व्याख्या—इक्षो ! त्वं कान्तः कमनीयः असि वर्त्तसे । नितान्तमधुरः नितान्तं

मधुरः असि । किञ्च अपरम् । अद्वितीयम् अनुपमम् । पञ्चशरकार्मुकम् अनङ्गबाणः । असि । इक्षो! तव सकलम् अस्ति त्वयि सर्वे गुणा वर्त्तन्ते । परम् एकम् ऊनम् एको गुणो न्यूनो वर्त्तते । यत् सेवितः आस्वादितः त्वम् । क्रमेण क्रमशः । नीरसतां रसहीनताम् । भजसि गच्छसि ।

राजा ने भी उसे एक लाख रुपये दिये । एक बार प्रमदवन के माली ने आकर एक ईख का दंड राजा के सामने रखा । उसे राजा ने हाथ में ले लिया। तब मयूर कवि ने अतिपरिचय के कारण राजा द्वारा किये गये अपने अपमान को सोचकर ईख के बहाने कहा—

ईख! तुम सुन्दर हो, नित्य ही मधुर रहते हो, रस से भरे हो, कामदेव के अद्वितीय धनुष हो। ईख! तुझमें सभी गुण हैं, किन्तु एक बात की कमी है कि चूसे जाने पर क्रम से तुम रसहीन हो जाते हो ।

राजा कविहृदयं ज्ञात्वा मयूरं सम्मानितवान् ।

ततः कदाचिद्रात्रौ सौधोपरि क्रीडापरो राजा शशाङ्कमालोक्य आह—

यदेतच्चन्द्रान्तर्जलदलवलीलां वितनुते
तदाचष्टे लोकः शशक इति नो मां प्रति तथा ।

ततश्चाधोभूमौ सौधान्तःप्रविष्टः कश्चिच्चोर आह—

अहं त्विन्दुं मन्ये त्वदरिविरहाक्रान्ततरुणी-
कटाक्षोल्कापातव्रणकणकलङ्काङ्किततनुम् ॥२३६॥

राजेति । **Vocabulary** : सम्मानितवान्—आदर किया, respected सौध—महल, palace शशाङ्क—चन्द्रमा, the moon.

जलद—मेघ, cloud. लव—खण्ड, flake लीला—charm. वितनुते—करता है, spreads आचष्टे—कहता है। शशक—खरगोश, rabbit. आक्रान्त—दुखित, distressed. तरुणी—युवती, young woman. कटाक्ष—side-glance. उल्का—meteor. व्रण—wound. कण-कलङ्क—black scar. अङ्कित—चिह्नित, marked.

Prose Order : यद् एतत् चन्द्रान्तः जलदलवलीलां वितनुते तत् लोकः शशक इति आचष्टे, मां प्रति तथा नो । अहं तु त्वदरिविरहाक्रान्त-

तरुणीकटाक्षोल्कापातव्रणकणकलङ्काङ्कितततनुम् इन्दुं मन्ये ।

व्याख्या—यद् एतत् पुरतो विलोक्यमानम् । चन्द्रान्तः चन्द्रमध्ये । जलदलवलीलां जलं ददातीति जलदो मेघः तस्य लवः खण्डः तस्य लीलां शोभानुकरणं वितनुते करोति तत् लोको जनः शशक इति नाम्ना आचष्टे व्यपदिशति । मां प्रति तथा नो—अहं त्वेवं न मन्ये । अहन्तु । इन्दुं चन्द्रम् । त्वदरीति—तव अरयः त्वदरयः त्वच्छत्रवः, त्वच्छत्रूणां विरहेण वियोगेन मृत्युनेति यावत् आक्रान्ता व्यथिताः यास्तरुण्यो युवतयस्तासां कटाक्षाः वक्रेक्षितान्येव उल्कास्तासां पातः पतनं तेन जाता ये व्रणाः क्षतानि तेषां कणाः त एव कलङ्कास्तेनाङ्किता चिह्निता तनुश्शरीरं यस्य स तथाभूतस्तम् । इन्दुं चन्द्रम् । मन्ये अवधारयामि ।

राजा ने कवि का अभिप्राय समझकर मयूर का आदर किया ।

तब कभी रात को महल पर आनन्द मनाते हुए राजा ने चन्द्रमा को देखकर कहा—

यह जो चन्द्रमा के बीच में मेघ के खण्ड के समान दीखता है, लोग इसे खरगोश नाम से पुकारते हैं । मुझे तो ऐसा नहीं लगता ।

तब महल के नीचे अन्दर घुसे हुए किसी चोर ने कहा—

मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि पति-वियोग से दुखित तुम्हारे शत्रुओं की स्त्रियों ने वज्र-रूपी अपने कटाक्ष से जो चन्द्रमा को देखा तो उससे उत्पन्न घाव के मलिन चिह्नों से उसका शरीर कलंकित हो गया ।

राजा तच्छ्रुत्वा प्राह—'अहो महाभाग, कस्त्वमर्धरात्रे कोशगृहमध्ये तिष्ठसि इति । स आह—'देव, अभयं नो देहि' इति । राजा—'तथास्तु' इति । ततो राजानं स चोरः प्रणम्य स्ववृत्तान्तमकथयत् । तुष्टो राजा चोराय दश कोटीः सुवर्णस्योन्मत्तान्गजेन्द्रांश्च ददौ । ततः कोशाधिकारी धर्मपत्रे लिखति—

तस्मै चोराय प्रतिनिहतमृत्युप्रतिभिये
प्रभुः प्रीतः प्रादादुपरितनपादद्वयकृते ।
सुवर्णानां कोटीर्दश दशनकोटिक्षतगिरी—
न्गजेन्द्रानप्यष्टौ मदमुदितकूजन्मधुलिहः ॥२३७॥

राजेति । **Vocabulary** : महाभाग—भाग्यशाली, lucky one.

अर्धरात्र—आधी रात, dead of night. अभय—assurance of protection. प्रतिनिहत—विनष्ट, allayed. प्रतिभी—भय, fear. उपरितन—ऊपर के। पाद—foot. दशन—दाँत, tooth. कोटि—अग्रभाग, point. क्षत—चूर्णित, rent asunder. मधुलिह्—भ्रमर, bee.

Prose Order: ततः प्रीतः प्रभुः उपरितनपादद्वयकृते प्रतिनिहितमृत्युप्रतिभिये अस्मै चोराय सुवर्णानां दश कोटीः दशनकोटिक्षतगिरीन मदमुदितकूजन्मधुलिहः अष्टौ गजेन्द्रान् अपि प्रादात्।

व्याख्या—तत् तस्मात् कारणात्। प्रीतः प्रसन्नः। प्रभुः भोजराजः। उपरितनपादद्वयकृते—उपरितनम् उपरिभागे प्रदर्शितं पादद्वयं पद्यपादयुगलं तस्य कृते तदर्थे, उक्तपादद्वयरचनाहेतोः। प्रतिनिहतमृत्युप्रतिभिये प्रतिनिहता मृत्योः प्रतिभीर्यस्य (बहु०) दत्ताभयदानाय। अस्मै चोराय तस्कराय। सुवर्णानां हिरण्यमुद्राणाम्। दश कोटीः। दशनकोटिक्षतगिरीन् दशनानां कोटिभिरग्रभागैः क्षता विध्वस्ता गिरयो यैः (बहु०) तान्। मदमुदितकूजन्मधुलिहः मेदन मुदिताः कूजन्तो मधुलिहो यत्र तान् अष्टौ गजेन्द्रान् मत्तहस्तिनः प्रादात् समर्पितवान्।

राजा ने सुनकर कहा—ओह! कौन हो तुम महाभाग! जो आधी रात को कोषगृह में घूम रहे हो? उसने कहा—देव! मुझे अभयदान दीजिए। राजा ने कहा—हाँ। तब चोर ने राजा को प्रणाम किया और अपनी कहानी सुनाई।

प्रसन्न होकर राजा ने चोर को दस करोड़ सुवर्ण तथा मदमत्त आठ हाथी दिये। तब कोषाध्यक्ष ने धर्मपत्र पर लिखा—

प्रसन्न होकर और अभयदान देकर प्रभु ने इस चोर को ऊपर के दो पादों के निर्माण-हेतु दस करोड़ सुवर्ण और अपने दाँतों के अग्रभाग से पर्वतों को चूर्णित करनेवाले तथा मदपान से मस्त भ्रमरों से गुञ्जारित आठ हाथी दिये।

ततः कदाचिद्द्वारपाल आगत्य प्राह—देव, कौपीनावशेषो विद्वान्द्वारि वर्तते' इति। राजा—'प्रवेशय' इति। ततः प्रविष्टः स कविर्भोजमालोक्याद्य मे दारिद्र्यनाशो भविष्यतीति मत्वा तुष्टो हर्षाश्रूणि मुमोच। राजा तमालोक्य

आह—'कवे, किं रोदिषि' इति । ततः कविराह—'राजन्, आकर्णय मद्-गृहस्थितिम् ।

अये लाजा उच्चैः पथि वचनमाकर्ण्य गृहिणी
शिशोः कर्णौ यत्नात्सुपिहितवती दीनवदना ।
मयि क्षीणोपाये यदकृत दृशावश्रुबहुले
तदन्तः शल्यं मे त्वमसि पुनरुद्धर्तुमुचितः ॥२३८॥

ततः कदाचिदिति । **Vocabulary** : कौपीन—loin-cloth. हर्षाश्रु—आनन्द के आँसू, tears of joy. स्थिति—दशा, condition. लाजा—लाई, fried grain. गृहिणी—the mistress of the house. सुपिहितवती—अच्छी तरह ढक दिये, covered carefully. अकृत—किये । शल्य—बाण, dart. उद्धर्तुम—निकालने को, to extricate.

Prose Order : 'अये लाजाः' (इति) पथि उच्चैः वचनम् आकर्ण्य गृहिणी दीनवदना यत्नात् शिशोः कर्णौ सुपिहितवती । क्षीणोपाये मयि यद् अश्रुबहुले दृशौ अकृत तद् मे अन्तःशल्यम् उर्त्तुं त्वम् उचितः असि ।

व्याख्या—अये लाजा विक्रेया इत्येवं रथ्यासु विक्रेतुः उच्चैः स्वरं श्रुत्वा मम पत्नी दीनवदना सती गृहे द्रव्याभावाद् लाजाः क्रेतुमशक्ता सती यत्नात् सावहितं शिशोर्बालस्य कर्णौ श्रोत्रे सुपिहितवती निरुद्धवती । यथाऽयं बालो लाजाविक्रेतुस्स्वरं न शृणुयात्, श्रुत्वा च तारस्वरेण न क्रन्देत् । शिशोरर्थे लाजा-क्रयोपयुक्तद्रव्यराशिहीनं मां गणयित्वा यत्सा साश्रुनेत्राऽदृश्यत तन्मम महद् व्यथाकरं पीडाशरम् अन्तस्स्थलाद् उद्धर्तुम अपनेतुं त्वम् उचितो योग्योऽसि ।

तब कभी द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! कौपीन-मात्र धारण किये एक विद्वान् द्वार पर खड़ा है । राजा ने कहा—भीतर भेज दो । तब भीतर आकर कवि ने भोज को देखकर सोचा कि आज मेरी निर्धनता नष्ट हो जाएगी । इस प्रकार प्रसन्न होकर आनन्द के आँसू बहाने लगा । राजा ने उसे देखकर कहा—कवि ! तुम क्यों रो रहे हो ? तब कवि ने कहा—राजन् ! मेरे घर की परिस्थिति को सुनिए ।

मेरी पत्नी ने जब सड़क पर ऊँचे स्वर में सुना—'लो, खीलें लो' तो

उसका मुख फीका पड़ गया। उसने अपने शिशु के कानों को ठीक तरह ढक दिया। आँसू-भरी दृष्टि जो मुझ अकर्मण्य पर डाली, वह मेरे हृदय में शरपात-सी लगी। उसे (अर्थात् उस शरपात को) तुम निकाल सकते हो।

राजा 'शिव शिव कृष्ण कृष्ण' इत्युदीरयन् प्रत्यक्षरलक्षं दत्वा प्राह--'सुकवे त्वरितं गच्छ गेहम्। त्वद्गृहिणी खिन्ना भूत्' इति।

ततः कदाचिन्मृगयापरिश्रान्तो राजा कस्यचिन्महावृक्षस्य छायामाश्रित्य तिष्ठति स्म। तत्र शांभवदेवो नाम कविः कश्चिदागत्य राजानं वृक्षमिषेणाह—

आमोदैर्मरुतो मृगाः किसलयोल्लासैस्त्वचा तापसाः
पुष्पैः षट्चरणाः फलैः शकुनयो धर्मार्दिताश्छायया।
स्कन्धैर्गन्धगजास्त्वयैव विहिताः सर्वे कृतार्थास्तत--
स्त्वं विश्वोपकृतिक्षमोऽसि भवता भग्नापदोऽन्ये द्रुमाः ॥२३६॥

राजा शिव शिवेति। **Vocabulary** : उदीरयन्—कहता हुआ, saying. त्वरित—शीघ्र, immediately. खिन्न—distressed.

आमोद—सुगंध, fragrance. मरुत्—वायु, the wind. किसलय—कोमल पत्र, tender leaf. उल्लास—कम्पन, waving त्वच्—छाल, bark. षट्चरण—भ्रमर, bee. शकुनि—पक्षी, bird. घर्म—आतप, heat. अर्दित—पीड़ित, distressed. स्कन्ध—शाखा, a bough. गन्धगज—मदयुक्त हाथी।

Prose Order : आमोदैः मरुतः, किसलयोल्लासैः मृगाः, त्वचा तापसाः, पुष्पैः षट्चरणाः, फलैः शकुनयः, धर्मार्दिताः छायया, स्कन्धैः गन्धगजाः, त्वया एव सर्वे कृतार्थाः विहिताः, ततः त्वं विश्वोपकृतिक्षमः असि, भवता अन्ये द्रुमाः भग्नापदः (कृताः)।

व्याख्या—आमोदैः सुगन्धैः, । मरुतो वायवः। किसलयोल्लासैः किसलयानां कोमलपत्राणाम् उल्लासैः सहर्षोत्कम्पैः। मृगा हरिणाः। त्वचा निर्मितैः वल्कलैस्तापसाः तपस्विनः। पुष्पैः कुसुमैः। षट्चरणाः भ्रमराः। फलैः शकुनयः विहगाः। धर्मार्दिताः धर्मेण सूर्यातपेन अर्दिताः पीडिताः पथिकाः। छायया। स्कन्धैः वृक्षशाखाभिः। गन्धजा मदयुक्ता हस्तिनः। सर्वे पूर्वनिर्दिष्ट

वाय्वादयः । त्वयैव नान्येन वृक्षेण । कृतार्थाः पूरिताशयाः । विहिताः कृताः । ततः हेतोः । त्वम् । विश्वोपकृतिक्षमः—विश्वस्य जगतः, उपकृतिर्हितविधानम्, तस्मिन् क्षमः समर्थः । असि । भवता । अन्ये द्रुमाः अपरे वृक्षाः भग्नापदः हतापदः कृता इति शेषः ।

'शिव, शिव ! कृष्ण, कृष्ण !' कहकर राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये देकर कहा—

कविश्रेष्ठ ! शीघ्र घर को जाओ । तुम्हारी पत्नी दुखित होगी ।

एक बार राजा शिकार से थककर किसी महान् वृक्ष की छाया में विश्राम कर रहे थे । वहाँ शाम्भवदेव नाम के कवि ने आकर वृक्ष के बहाने राजा से कहा—

सुगंध से वायु को, कोमल पत्तों की शोभा से हरिणी को, छाल से तपस्वी जनों को, पुष्पों से भ्रमरी को, फलों से पक्षी-गण को, छाया से घाम-पीड़ित पथिकों को, शाखाओं से गंधीले हाथियों को तूने ही कृतार्थ किया है। इसलिए, तुम सबपर उपकार कर सकते हो । तुझसे अन्य वृक्षों के भी कष्ट मिट गये हैं ।

किं च ।

अविदितगुणापि सत्कविभणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम् ।
अनधिगतपरिमलापि च हरति दृशं मालतीमाला ॥२४०॥

अविदितेति । **Vocabulary** : अविदित—अज्ञात, unknown. भणिति–कथन, saying वमति–डालती है, pours. मधुधारा, रसमयी धारा, a honeyed stream. परिमल—सुगंध, smell. दृशं हरति—नेत्रों को वशीभूत करती है, rivets the eye.

Prose Order : अविदितगुणा अपि सत्कविभणितिः कर्णेषु मधुधारां वमति । अनधिगतपरिमला अपि मालतीमाला दृशं हरति च ।

व्याख्या—अविदितगुणा —न विदिता गुणा यस्य (बहु०) सा, अज्ञात-गुणाऽपि । सत्कविभणितिः संश्चासौ कविः (कर्म०) सत्कविः, सत्कवेर्भणितिः सत्कवेरुक्तिः । कर्णेषु श्रवणेषु । मधुधाराम् मधोर्द्राक्षारसस्य धारां स्यन्दम् । वमति

उद्गिरति । अनधिगतपरिमला—अनधिगतो नाधिगतो परिमलो गन्धो यस्याः तथाभूतापि । मालतीमाला मालतीपुष्पाणां माला । दृशं दृष्टिम् । हरति वशीकरोति ।

श्रेष्ठ कवि की कविता, गुणों के प्रकाश में न आने पर भी, कानों में मधुर रस सींचती है। सुगंध न आने पर भी मालती पुष्पों की माला नेत्रों को आकर्षित करती है।

तास्यां श्लोकाभ्यां चमत्कृतो राजा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

अन्यदा श्रीभोजः श्रीमहेश्वरं नन्तुं शिवालयमभ्यगात् । तदा कोऽपि ब्राह्मणो राजानं शिवसंनिधौ प्राह—'देव,

अर्धं दानववैरिणा गिरिजयाप्यर्धं शिवस्याहृतं
देवेत्थं जगतीतले पुरहराभावे समुन्मीलति ।
गङ्गा सागरमम्बरं शशिकला नागाधिपः क्ष्मातलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत्त्वां मां तु भिक्षाटनम् ॥२४२॥

साम्प्रतमिति । **Vocabulary** : दानववैरिन्—दैत्यशत्रु विष्णु, the enemy of the demons. गिरिजा—पार्वती । पुरहर—शिव । अम्बर—आकाश, sky. नागाधिप—शेष नाग । क्ष्मातल—पाताल, the nether region. सर्वज्ञत्व—omniscience. अधीश्वरत्व—स्वामित्व, supremacy. भिक्षाटनम्—भीख माँगना ।

Prose Order : शिवस्य अर्धं दानववैरिणा, अर्धं गिरिजयाऽपि आहृतम् । देव इत्थं जगतीतले पुरहराभावे समुन्मीलति गङ्गा सागरम् अगमत् शशिकला अम्बरम् (अगमत्) नागाधिपः क्ष्मातलम् (अगमत्), सर्वज्ञत्वम् अधीश्वरत्वं त्वाम् अगमत्, मां तु भिक्षाटनम् अगमत् ।

व्याख्या—शिवस्य हरस्य । अर्धं शरीरार्धभागः । दानववैरिणा दैत्यारिणा विष्णुना । आहृतं स्वशरीरार्धभागेन स्वीकृतम् । अर्धं च गिरिजयाऽपि पार्वत्याऽपि । आहृतं स्वशरीरार्धभागेनोरीकृतम् । देव ! इत्थम् अनेन प्रकारेण । जगतीतले भूतले । पुरहराभावे शिवाभावे । समुन्मीलति समुन्मिषति सति । गङ्गा जाह्नवी । सागरं समुद्रम् । अगमत् । शशिकला चन्द्रकला । अम्बरम्

आकाशम् । अगमत् । नागाधिपः नागानाम् अहीनाम् अधिपः स्वामी, शेषः । क्षमातलं भूतलम् । अगमत् । सर्वज्ञत्वम् । अधीश्वरत्वं स्वामित्वम् । त्वाम् अगमत् । मां तु । भिक्षाटनम्—भिक्षार्थं अटनम् । अगमत् ।

उन दोनों पद्यों से चकित होकर राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये ।

एक दिन राजा भोज महादेव को नमस्कार करने के लिए मंदिर को गये । तब किसी ब्राह्मण ने शिवमूर्त्ति के समीप राजा से कहा—देव ! महादेव का आधा शरीर दैत्यशत्रु विष्णु ने हर लिया, आधा पार्वती ने । इस प्रकार भूतल पर जब त्रिपुरासुर के विध्वंसक शिव का लोप होने लगा तब उनके शरीर पर स्थित गंगा समुद्र को चली गईं; चन्द्रकला आकाश को तथा शेषनाग पाताल को चल दिये । सर्वज्ञता तथा ऐश्वर्य आपको प्राप्त हुआ और मुझे भिखमंगी मिली ।

राजाक्षरलक्षं ददौ ।

ततः कदाचिद्द्वारपाल आगत्य प्राह—'देव, कोऽपि विद्वान्द्वारि तिष्ठति,' इति । राजा—'प्रवेशय' इति । ततः प्रविष्टो विद्वान्पठति—

क्षणमप्यनुगृह्णाति यं दृष्टिस्तेऽनुरागिणी ।
ईर्ष्ययेव त्यजत्याशु तं नरेन्द्र दरिद्रता ॥२४२॥

राजेति । Vocabulary : अनुगृह्णाति—अनुग्रह का पात्र बनाती है, favours. अनुरागिणी—प्रेमभरी, loving. ईर्ष्या—malice. आशु—शीघ्र, immediately. दरिद्रता—निर्धनता, poverty.

Prose Order : नरेन्द्र! ते अनुरागिणी दृष्टिः यं क्षणम् अपि अनुगृह्णाति तं दरिद्रता ईर्ष्यया इव आशु त्यजति ।

व्याख्या—नरेन्द्र नराणाम् इन्द्रः (ष० तत्पु०) नरेन्द्रः तत्सम्बुद्धौ । ते तव । अनुरागिणी अनुरागवती । दृष्टिः चक्षुः । यं जनम् । क्षणं क्षणमात्रमपि ते अनुगृह्णाति । दयते । दारिद्र्यम् । तं त्वत्कृपापात्रम् । ईर्ष्ययेव त्वत्कृपया सह असूययेव । आशु शीघ्रम् । त्यजति विसृजति ।

राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये ।

तब कभी द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! कोई विद्वान् द्वार पर खड़ा है। राजा ने कहा—भेज दो। तब आकर विद्वान् ने कहा—

आपकी अनुरागमयी कृपा-दृष्टि जिस पर भी पड़ती है, हे नरेन्द्र ! उसे दरिद्रता ईर्ष्या के समान शीघ्र त्याग देती है।

राजा लक्षं ददौ। पुनरपि पठति कविः—

केचिन्मूलाकुलाशाः कतिचिदपि पुनः स्कन्धसंबंधभाज-
श्छायां केचित्प्रपन्नाः प्रपदमपि परे पल्लवानुन्नयन्ति।
अन्ये पुष्पाणि पाणौ दधति तदपरे गंधमात्रस्य पात्रं
वाग्वल्ल्याः किं तु मूढाः फलमहह नहि द्रष्टुमप्युत्सहन्ते ॥२४३॥

राजा लक्षमिति। **Vocabulary** : मूल—root. कतिचित्—some. स्कन्ध—शाखा, bough. छाया—shade. प्रपन्न—sheltered. प्रपद—foreparts· पल्लव—कोमल पत्ता, tender leaf. उन्नयन्ति—pluck. वाग्वल्ली—वाग्लता, a creeper in the form of speech. अहह—शोक ! Alas.

Prose Order : केचित् मूलाकुलाशाः, पुनः कतिचिद् अपि स्कन्ध-सम्बन्धभाजः, केचित् छायां प्रपन्नाः, परे प्रपदम् अपि, (अन्ये) पल्लवान् उन्न-यन्ति। अन्ये पाणौ पुष्पाणि दधति। तदपरे गन्धमात्रस्य पात्रम्। किन्तु अहह मूढ़ाः वाग्वल्ल्याः फलं द्रष्टुमपि न उत्सहन्ते।

व्याख्या—केचित् जनाः मूलाकुलाशाः मूलाय मूलार्थम् आकुला आशा येषां ते तथाभूताः। सन्तीति शेषः। पुनः। कतिचिदपि स्कन्धसम्बन्धभाजः—स्कन्धैः शाखाभिः सह सम्बन्ध भजन्त इति ते तादृशाः। केचिद् अन्ये। छायाम्। प्रपन्ना आश्रिताः। परेऽन्ये। प्रपदम् अग्रभागं कामयन्त इति शेषः। अन्ये पल्लवान् पत्राणि। उन्नयन्ति चिन्वन्तीति भावः। अन्ये अपरे। पाणौ हस्ते। पुष्पाणि कुसुमानि। दधति धारयन्ति। तदपरे तदन्ये। गन्धमात्रस्य केवलं गन्धस्य। पात्रं भाजनम्। किन्तु परम्। अहहेति शोके। मूढा मूर्खाः। वाग्व-ल्ल्या वाग्लतायाः। फलम्। द्रष्टुं चक्षुर्विषयीकर्त्तुमपि। नोत्सहन्ते न पारयन्ति।

राजा ने एक लाख रुपये दिये। फिर कवि ने एक पद्य कहा—

कोई वाग्लता के मूल की आशा रखते हैं। कोई उसकी शाखाओं तक अपना संबंध जोड़ते हैं। कोई उसकी छाया में आश्रित हैं। कोई उसकी जड़ खोज निकालते हैं। कोई उसकी कोमल पत्तियों को बीनते हैं। कोई उसके फूलों को हाथ में लेते हैं और केवल उसकी गंध के ही ग्राहक हैं। आश्चर्य है कि मूर्ख लोग उसके फल देखने का उत्साह भी नहीं लाते।

एतदाकर्ण्य बाणः प्राह—

परिच्छिन्नः स्वादोऽमृतगुडमधुक्षौद्रपयसां
कदाचिच्चाभ्यासाद्भजति ननु वैरस्यमधिकम्।
प्रियाबिम्बोष्ठे वा रुचिरकविवाक्येऽप्यनवधि-
र्नवानन्दः कोऽपि स्फुरति तु रसोऽसौ निरुपमः ॥२४४॥

एतदाकर्ण्येति। **Vocabulary** : परिच्छिन्न—भिन्न तथा न्यून, variable and inferior. स्वाद—sweetness. अमृत--nectar. गुड़--sugar-lump. मधु—honey. क्षौद्र—अंगूरों का रस, wine. पयस्—दूध। अभ्यास—पुनरावृत्ति, constant application. वैरस्य—रसाभाव, lack of taste. बिम्बोष्ठ--बिम्बफल के समान होंठ, bimb-like lip. अनवधि--असीम, unbounded. स्फुरति—प्रकट होता है, appears निरुपमः--अनुपम, peerless.

Prose Order : अमृतगुडमधुक्षौद्रपयसां परिच्छिन्नः स्वादः ननु कदाचिद् अभ्यासाद् अधिकं वैरस्यं भजति। प्रियाबिम्बोष्ठे रुचिरकविवाक्येषु वा अनवधिः कोऽपि नवानन्दः स्फुरति। असौ रसः तु निरुपमः।

व्याख्या—अमृतगुडमधुक्षौद्रपयसाम्। अमृतञ्च गुडश्च मधुश्च क्षौद्रञ्च पयश्चेति अमृतगुडमधुक्षौद्रपयांसि (द्वन्द्व) तेषाम् स्वादः रसः। परिच्छिन्नः भिन्नः स्वल्पश्च। कदाचिद् अभ्यासात् पुनः पुनः प्रयोगात्। अधिकं बहु। वैरस्यं नीरसताम्। भजति याति। प्रियाबिम्बोष्ठे—प्रियाया बिम्बफलतुल्यो य ओष्ठस्तस्मिन्। रुचिरकविवाक्येषु --रुचिराणि कवीनां वाक्यानि तेषु। अनवधिर्निस्सीमः। कोप्यनिर्वचनीयः। नवानन्दः नवश्चासौ आनन्दः '(कर्म०)। स्फुरति प्रकाशते। असौ रसः। निरुपमः केनाप्यन्येन रसेन सहोपमातुं न शक्यते।

यह सुनकर बाण कवि ने कहा—

अमृत, गुड़, मधु, अंगूर तथा दूध का स्वाद कभी कम हो जाता है और कभी अभ्यास के कारण फीका प्रतीत होता है, किन्तु प्रिया के बिम्बफल सदृश होठों में तथा कवि की मधुर वाणी में जो असीम, अनुपम तथा अभूतपूर्व रस मिलता है, उसकी तुलना किसी अन्य रस से नहीं हो सकती।

तब राजा ने एक लाख रुपये दिये।

ततो राजा लक्षं दत्तवान्।

ततः कदाचित्सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजे द्वारपाल आगत्य प्राह—'देव, वाराणसीदेशादागतः कोऽपि भवभूतिर्नाम कविर्द्वारि तिष्ठति' इति। राजा प्राह—'प्रवेशय' इति। ततः प्रविष्टः सोऽपि सभामगात्। ततः सभ्याः सर्वे तदागमनेन तुष्टा अभवन्। राजा च भवभूतिं प्रेक्ष्य प्रणमतिस्म। स च 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा तदाज्ञयोपविष्टः। भवभूतिः प्राह—'देव',

नानीयन्ते मधुनि मधुपाः पारिजातप्रसूनै-
र्नाभ्यर्थ्यन्ते तुहिनरुचिनश्चन्द्रिकायां चकोरः।
अस्मद्वाङ्माधुरिमधुरमापद्य पूर्वावतारः।
सोल्लासाः स्युः स्वयमिह बुधा किं मुधाभ्यर्थनाभिः॥२४५॥

ततो राजेति। **Vocabulary**: मधु—रस, juice. मधुप—भ्रमर, bee. प्रसून—पुष्प, flower. अभ्यर्थ्यन्ते—are requested. तुहिनरुचिः चन्द्रमा, the snow-white moon. माधुरि—माधुर्य, sweetness. मधुर—मीठा (रस) relish. आपद्य—पाकर, having attained. पूर्वावतार—पूर्वागत, predecessors in arrival. सोल्लास—हर्षयुक्त।

Prose Order: मधुपाः पारिजातप्रसूनैः मधूनि न आनीयन्ते। चकोराः तुहिनरुचिना चन्द्रिकायां न अभ्यर्थ्यन्ते। पूर्वावतारा: बुधाः इह अस्माद्वाङ्माधुरिमधुरम् आपद्य स्वयं सोल्लासाः स्युः। मुधा अभ्यर्थनाभिः किम्?

व्याख्या—मधुपा भ्रमराः। पारिजातप्रसूनैः पारिजातपुष्पैः। मधूनि मधुपानार्थम्। न आनीयन्ते नाहूयन्ते। चकोराः। तुहिनरुचिना हिमशुभ्रेण

चन्द्रेण । चन्द्रिकायां ज्योत्स्नायाम् । न अभ्यर्थ्यन्ते न प्रार्थ्यन्ते । पुर्वावतारा: पूर्वागता: । बुधा विद्वांस: । इह राजसभायाम् अस्माद्वाङ्माधुरिमधुरम् अस्माकं वाचो माधुरिर्माधुर्यं तस्य मधुरं रस: तत् आपद्य आस्वाद्येति यावत् । स्वयम् । सोल्लासा: सहर्षा: न स्यु: । भवेयु: । मुधा व्यर्थम् । अभ्यर्थनाभि: प्रार्थनाभि: किम् ।

जब एक बार भोजराज सिंहासन पर बैठे थे, द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! भवभूति नाम का एक कवि काशी से आया है । द्वार पर खड़ा है । राजा ने कहा—भीतर भेज दो । तब वह सभा में आया । सभी सभिक उसके आने से प्रसन्न हुए । राजा ने भवभूति को देखकर प्रणाम किया । वह भी आशीर्वाद देकर उसके आदेश से बैठ गया । भवभूति ने कहा—देव !

कौन आह्वान करता है मधुमक्षिकाओं को पुष्परस पीने के लिए ? चन्द्रिकाप्रिय चकोर चाँदनी में कल्पवृक्ष के पुष्पों से प्राथित नहीं होते । पूर्वागत विद्वान् हमारे शब्दों की मधुरता का आनन्द पाकर स्वयं ही प्रफुल्ल हो जायेंगे, वृथा प्रार्थनासे क्या लाभ ?

नास्माकं शिबिका न कापि कटकाद्यालङ्क्रियासत्क्रिया
नोतुङ्गस्तुरगो न कश्चिदनुगो नैवाम्बरं सुन्दरम् ।
किन्तु क्ष्मातलवर्त्यशेषविदुषां साहित्यविद्याजुषां
चेतस्तोषकारी शिरोन्नतिकारी विद्यानवद्याऽस्ति नः ॥२४६॥

नास्माकमिति । **Vocabulary** : शिबिका—पालकी, planquin. कटक—कङ्कण, bracelet. अलङ्क्रिया—decoration. तुङ्ग—उच्च, tall. अनुग—सेवक, attendant. अनवद्य—निर्दोष, faultless.

Prose Order : अस्माकं शिबिका न, कापि कटकाद्यालङ्क्रिया, सत्क्रिया नो, तुङ्ग तुरग: न, कश्चिद् अनुग: न, सुन्दरम् अम्बरं नैव । किन्तु साहित्यविद्याजुषां क्ष्मातलवर्त्यशेषविदुषां चेतस्तोषकरी शिरोन्नतिकरी अनवद्या विद्या न: अस्ति ।

व्याख्या—अस्माकं शिबिका पर्यङ्किका न वर्त्तते । काऽपि कटकाद्यालङ्क्रिया कङ्कणादिभूषणम् अपि न । सत्क्रिया सम्मानमपि नैवास्ति । तुङ्ग:

उन्नताकृतिः । तुरगः अश्वोऽपि न वर्त्तते । कश्चिद् अनुगः अनुचरः न। सुन्दरं मनोहरम् । अम्बरम् आकाशः । नैव । किन्तु परम् । साहित्यविद्याजुषाम्—हितेन सह वर्त्तते इति सहितम्, सहितस्य भावः साहित्यम्, साहित्यस्य विद्या साहित्यविद्या, तां जुषन्त इति ते साहित्यविद्याजुषः तेषाम् । क्ष्मातलवर्त्य-शेषविदुषाम्—क्ष्मायाः पृथिव्यास्तलं क्ष्मातलम्, क्ष्मातलवर्त्तिनो येऽशेषा विद्वांसस्तेषाम् । चेतस्तोषकरी मनोविनोदयित्री। शिरोन्नतिकरी मानोन्नायिका । अनवद्या दोषरहिता । विद्या कला । अस्ति वर्त्तते ।

न हमारे पास पालकी है । न कङ्कण आदि अलंकार हैं। न सत्कार है । न ऊँचा घोड़ा है । न कोई सेवक है और न सुन्दर वस्त्र है, किन्तु पृथ्वी-भर के समस्त साहित्य-प्रिय विद्वानों के चित्त को प्रसन्न करनेवाली तथा सिर को उठानेवाली दोष-रहित विद्या हमारे पास है ।

इत्याकर्ण्य बाणपण्डितपुत्रः—प्राह—'आः पाप, धाराधीशसभायामहंकारं मा कृथाः ।

निश्वासोऽपि न निर्याति बाणे हृदयवर्त्मनि ।
किं पुनः प्रकटाटोपपदबद्धा सरस्वती ।।२४७।।

इत्याकर्ण्येति। Vocabulary: बाण—an arrow. निःश्वास—breath. हृदयवत्मन्—हृद्गत i. e. struck in the heart. प्रकट—obvious. आटोप—आडम्बर, bombastic. सरस्वती—speech.

Prose Order: हृदयवर्त्मनि बाणे निःश्वासः अपि न निर्याति । प्रकटाटोपपदबद्धा सरस्वती पुनः किम् ?

व्याख्या—बाणे शरे । हृदयवर्त्मनि हृद्गते सति। निःश्वासः उच्छ्वासः अपि। न निर्याति नोद्गच्छति। प्रकटाटोपपदबद्धा—प्रकट आटोपो येषां तानि प्रकटाटोपानि पदानि तैर्बद्धा ग्रंथिता । सरस्वती वाग् । पुनः किम् ।

यह सुनकर बाण पंडित के पुत्र ने कहा—

ओ पापी ! धारानरेश की सभा में अहंकार मत करो ।

जब बाण हृदय के भीतर घुसता है तब बाहर श्वास भी नहीं निकलता। सुस्पष्ट आडंबर-युक्त पदों से ग्रंथित कविता की तो बात ही क्या ?

ततो भवभूतिः पराभवमसहमानः प्राह—

हठादाकृष्टानां कतिपयपदानां रचयिता
जनः स्पर्धालुश्चेदहह कविना वश्यवचसा ।
भवेदद्य श्वो वा किमिह बहुना पापिनि कलौ
घटानां निर्मातुस्त्रिभुवनविधातुश्च कलहः ॥२४८॥

ततो भवभूतिरितिः : **Vocabulary** : हठ—persistent force. आकृष्ट–खींचा हुआ, joined together. स्पर्धालु, rival. अहह–alas! वश्यवचस्—वाणी को वशीभूत रखनेवाला, possessed of an abso-lute control over the speech. निर्मातृ—रचयिता, the maker. विधातृ—ब्रह्मा, the creator.

Prose Order : अहह ! हठात् आकृष्टानां कतिपयपदानां रचयिता जनः वश्यवचसा कविना स्पर्धालुः चेत् किं बहुना, इह पापिनि कलौ अद्य श्वः वा घटानां निर्मातुः त्रिभुवनविधातुश्च कलहः भवेत् ।

व्याख्या—अहहेति खेदे । हठात्, नतु स्वभावतः । आकृष्टानां संयोजिता-नाम् । कतिपयपदानाम् परिमितसंख्याकानां सुप्तिङन्तानां वर्णानाम् । रचयिता गुम्फयिता जनः । वश्यवचसा स्वाधीनवाग्व्यापारेण । कविना । स्पर्धालुरी-र्ष्यालुः । यदि । तदा । किं बहुना किमतिविस्तरेण । इहास्मिन् । पापिनि पापबहुले । कलौ कलियुगे । अद्य श्वो वा । घटानां निर्मातुः कुम्भकारस्य । त्रिभुवनविधातुश्च ब्रह्मणश्च । कलहो वाग्विवादः । भवेत् स्यात् ।

तब भवभूति अपमान को न सहनकर बोले—

शोक कि आयासपूर्वक कहीं से खींचकर प्रयुक्त कुछ शब्दों से कविता बनाने-वाला मनुष्य वशीभूत वाणीवाले कवि से ईर्ष्या करने चला है! तब तो इस पाप-प्रधान कलियुग में कभी-न-कभी घड़ों को बनानेवाला कुम्हार त्रिलोक के निर्माता ब्रह्मा से बराबरी के लिए कलह करने लगेगा। अधिक क्या कहूँ? पुनराह—

कालिदासकवेर्वाणी कदाचिन्मद्गिरा सह ।
कलयत्यद्य साम्यं चेद्भीता भीता पदे पदे ॥२४६॥

पनराहेति । **Vocabulary** : कलयति—प्राप्त करती है, attains.

Prose Order : कालिदासकवेः वाणी कदाचिद् मदगिरा सह अद्य चेत् साम्यं कलयति पदे भीता भीता ।

व्याख्या—कालिदासकवेः । वाणी गीः । कदाचित् केनापि प्रकारेण । मदगिरा मद्वाचा सह । अद्य साम्प्रतम् । चेद् यदि । साम्यं तुलनाम् । कलयति प्राप्तुं यतते । पदे पदे प्रतिपदम् । भीता बिभ्यती सती समतामधिगन्तुं चेष्टते ।

फिर बोला—

कवि कालिदास की वाणी चाहे कभी मेरी वाणी से समता रखती हो, सो आज तो वह भी पद-पद में भयभीत हो गई है ।

ततः कालिदासः प्राह—'सखे भवभूते, महाकविरसि । अत्र किमु वक्तव्यम् ।

एषा धारेन्द्रपरिषन्महापण्डितमण्डिता ।
आवयोरन्तरं वेत्ति राजा वा शिवसंनिभः ॥२५०॥

ततः कालिदास इति । **Vocabulary** : परिषत्—सभा, assembly. मण्डित—भूषित, adorned. अन्तर—difference. सन्निभ—तुल्य, resembling.

Prose Order : एषा महापण्डितमण्डिता धारेन्द्रपरिषद्, शिव-सन्निभः राजा वा आवयोः अन्तरं वेत्ति ।

व्याख्या—महापण्डितमण्डिता—महान्तश्च ते पण्डिता इति महापण्डिताः, तैर्मण्डिता सुशोभिता । एषा । धारेन्द्रपरिषद् भोजराजसभा । शिवसन्निभः, शिवतुल्यः । राजा नृपो वा । आवयोर्द्वयोः । अन्तरं भेदम् । वेत्ति जानाति ।

कालिदास ने कहा—मित्र भवभूति ! निस्सन्देह तुम महाकवि हो, इसमें कुछ कहने की बात नहीं है ।

यह राजा भोज की सभा प्रकांड पंडितों से विभूषित है । शिव के समान राजा भोज हम दोनों के अन्तर को पहचानते हैं ।

तच्छ्रुत्वा राजा प्राह—'युवाभ्यां रत्यन्तो वर्णनीयः इति । भवभूतिः—

मुक्ताभूषणमिन्दुबिम्बमजनि व्याकीर्णतारं नभः
स्मारं चापमपेतचापलमभूदिन्दीवरे मुद्रिते ।

व्यालीनं कलकण्ठमन्दरणितं मन्दानिलैर्मन्दितं
निष्पन्दस्तबका च चम्पकलता साभून्न जाने ततः ॥२५१॥

तच्छ्रुत्वेति । **Vocabulary** : रत्यन्त—मैथुन का अंत, the final instant in the love-sport.

मुक्ताभूषण—मोतियों के भूषण से युक्त, studded with the decoration of pearls. इन्दुबिम्ब—चन्द्रबिम्ब, the digit of the moon. व्याकीर्ण—बिखरे हुए, scattered. तारा—stars. नभस्—आकाश, the sky. स्मार—कामदेव का, of the cupid. उपेत—हीन, devoid of. चापल—चंचलता, unsteadiness. इन्दीवर—नील कमल, blue lotus. मुद्रित—closed. व्यालीनम—बन्द हो गया, stopped. मन्दरणित—low sound. कल—अव्यक्त, मधुर, sweet and indistinct. मन्दानिल—slow breeze. मन्दितम्—मंद हो गई, became lower. निष्पन्द—कम्पन-रहित, motionless. स्तबक—फलों का गुच्छा, bunch of flowers.

Prose Order : इन्दुबिम्बं मुक्ताभूषणम् अजनि; नभः व्याकीर्णतारम् अजनि; स्मारं चापम् अपेतचापलम् अभूत्; इन्दीवरे मुद्रिते; कलकण्ठमन्दरणितं व्यालीनम्; मन्दानिलैः मन्दितम्; सा चम्पकलता निष्पन्दस्तबका अभूत्; ततः न जाने ।

व्याख्या—इन्दुबिम्बं चन्द्रबिम्बम् । मुक्ताभूषणम् मौक्तिकालङ्करणोपेतम् । अजनि—अजायत । रत्यन्ते वदनोपरि समुल्लसतां श्रमजातानां स्वेदविन्दूनां मुक्ताफलैस्साम्यम्; वदनस्य च चन्द्रतुल्यत्वम् । नभो गगनम् । व्याकीर्णतारम्—व्याकीर्णाः विस्तृताः ताराः नक्षत्राणि यत्र तत् । कान्तापक्षे—व्याकीर्णे चञ्चले तारे कनीनिके यत्र तत् तथाभूतम् । स्मारम्—स्मरस्येदम् । अपेतचापलम्—अपेतं चापलं यस्य (बहु०) तत्, स्थिरमिति यावत् कान्तापक्षे—भ्रुवौ निश्चलतां गतौ । इन्दीवरे नीलकमले, नेत्रे इति यावत् । मद्रिते—निमीलिते । कलकण्ठमन्दरणितम्—कलम् अव्यक्तमधुरं यत्कण्ठस्य मन्दं रणितं तद् व्यालीनं तिरोहितम् । मन्दानिलैः—मन्दश्वासैः । मन्दितं मन्दीभूतम् ।

सा चम्पकलता कोमलाङ्गी कामिनी। निष्पन्दस्तबका स्पन्दरहित पुष्पगुच्छा। कान्तापक्षे—निश्चलस्तनावयवा। अभूत्। ततः परं किमभूदिति न जाने।

यह सुनकर राजा ने कहा—तुम दोनों रतिक्रीड़ा के अंत का वर्णन करो। भवभूति ने कहा—

चन्द्रबिम्ब (नायिका का मुख) शोभारहित (मुक्ताफल सदृश स्वेदबिन्दुओं से युक्त) हो गया। आकाश (आँख) में तारिकाएँ (पुतलियाँ) बिखर गईं। नीलकमल (नयन) बंद हो गये। अव्यक्त मधुरभाषी पक्षियों की (नायिका की अव्यक्त मधुर) मंद कंठ-ध्वनि विरत हो गई। मंद-मंद पवन तथा मंद-मंद श्वास बंद हो गया। चम्पकलता (चम्पकलता के समान युवती) के गुच्छों (स्तनों) का कम्पन विरत हो गया। फिर क्या हुआ मालूम नहीं।

ततः कालिदासः प्राह—

स्विन्नं मण्डलमैन्दवं विलुलितं स्रग्भारनद्धं तमः
प्रागेव प्रथमानकैतकशिखालीलायितं सुस्मितम्।
शान्तं कुण्डलताण्डवं कुवलयद्वन्द्वं तिरोमीलितं
वीतं विद्रुमसीत्कृतं नहि ततो जाने किमासीदिति ॥२५२॥

ततः कालिदास इति। **Vocabulary** : ऐन्दव—चन्द्रमा का, of the moon. मण्डल—orb. स्विन्नम्—पसीज गया, was wet with sweet. विलुलित—ढीला पड़ गया, loosened. स्रग्भार—माला का जाल, toils of wreath. नद्ध—बँधा हुआ, bound. तमस् अंधकार; कान्ता के पक्ष में—केशपाश। प्रथमान–उन्नत हो रहे, growing, कैतक-पुष्प का नाम, the name of the flower. शिखा–top. लीला—play, लीलायितम्–is playing. सुस्मित–सुन्दर मुस्कान, lovely smile. ताण्डव—नृत्य, dance or the movement. तिरोमीलित—बन्द हो गये, वीत—बन्द हो गया, stopped. विद्रुम—मूँगा, a coral; कामिनी पक्ष में अधर। सीत्कृत—मंद रव, the low tone.

Prose Order : ऐन्दवं मण्डलं स्विन्नम्; स्रग्भारनद्धं तमः विलुलितम्; सुस्मितं, प्रागेव प्रथमानकैतकशिखालीलायितम्; कुण्डलताण्डवं शान्तम्;

कुवलयद्वन्द्वं तिरोमीलितम्; विद्रुमसीत्कृतं वीतम्; ततो नहि जाने किम आसीत् इति ।

व्याख्या—ऐन्दवम्—इन्दोरिदम् । मण्डलं गोलकाकारं वपुः स्विन्नं मलिनं जातम् । कान्तापक्षे—मुखम् स्विन्नं स्वेदयुक्तं जातम् । स्रग्भारनद्धम्—स्रग्भारेण मालावितानेन नद्धं बद्धम् । तमोऽन्धकारः । विलुलितं नष्टम् । कान्तापक्षे केशपाशः स्रस्तः । सुस्मितं शोभनं स्मितम् । प्रागेव पूर्वमेव । प्रथमानकैतकशिखालीलायितम्—प्रथमानस्य उद्गच्छतः कैतकस्य कैतककुसुमस्य शिखाऽग्रभागस्तस्य या लीला विलसितं तद्वदाचरितम् । कुण्डलताण्डवम्—कुण्डलयोः कर्णभूषणयोस्ताण्डवं नृत्यम् । शान्तं विरतम् । कुवलयद्वन्द्वम्—कुवलययोर्नीललोचनयोर्द्वन्द्वं युगलम् । तिरोमीलितं मुद्रितम् । विद्रुमयोः—अधरोष्ठयोः, सीत्कृतं—सीत्काररणितम् । वीतम् अपेतम् । ततः तदूर्ध्वम् । किमासीत किमभूदिति नहि जाने नावगच्छामि ।

फिर कालिदास बोले—

चन्द्रमण्डल (मुख) पसीज गया । पुष्पभार से बद्ध अन्धकार (केश) खुल गया । मधुर स्मित ने पहले ही उगते हुए कैतक-पुष्प के अग्रभाग की लीला की । कुण्डलों का नृत्य शांत हो गया । दोनों नीलकमल (नेत्र) बंद हो गये । मूँगों (होठों) का सी-सी शब्द रुक गया । फिर क्या हुआ, मालूम नहीं ।

राजा कालिदासं प्राह—'सुकवे, भवभूतिना सह साम्यं तव न वक्तव्यम् ।' भवभूतिराह—'देव, किमिति वारयसि ।' राजा—'सर्वप्रकारेण कविरसि ।' ततो बाणः प्राह—'राजन्, भवभूतिः कविश्चेत्कालिदासः किं वक्तव्यः ।' राजा—'बाणकवे, कालिदासः कविर्न । किन्तु पार्वत्याः कश्चिदवनौ पुरुषावतार एव ।' ततो भवभूतिराह—"देव, किमत्र प्राशस्त्यं भाति ।' राजा प्राह—'भवभूते, किमु वक्तव्यं प्राशस्त्यं कालिदासश्लोके । यतः 'कैतकशिखालीलायितं सुस्मितम्' इति पठितम् ।' ततो भवभूतिराह—'देव, पक्षपातेन वदसि' इति । ततः कालिदासः प्राह—'देव अपरयातिर्माभूत् भुवनेश्वरीदेवतालयं गत्वा तत्संनिधौ तां पुरस्कृत्य घटे संशोधनीयं त्वया ।' ततो

भोजः सर्वकविवृन्दपरिवृतः सन्भुवनेश्वरीदेवालयं प्राप्य तत्र तत्संनिधौ भवभूतिहस्ते घटं दत्त्वा श्लोकद्वयं च तुल्यपत्रद्वये लिखित्वा तुलायां मुमोच । ततो भवभूतिभागे लघुत्वोद्भूतामीषदुन्नतिं ज्ञात्वा देवी भक्तपराधीना सदसि तत्परिभवो मा भूदिति स्वावतंसकह्लारमकरन्दं वामकरनखाग्रेण गृहीत्वा भवभूतिपत्रे चिक्षेप । ततः कालिदासः प्राह—

अहो मे सौभाग्यं मम च भवभूतेश्च भणितं
घटायामारोप्य प्रतिफलति तस्यां लघिमनि ।
गिरां देवी सद्यः श्रुतिकलितकह्लारकलिका-
मधूलीमाधुर्यं क्षिपति परिपूर्त्यै भगवती ॥२५३॥

राजेति । **Vocabulary** : अवनि—पृथ्वी, the earth. प्राशस्त्य—प्रशंसा, praise. पक्षपात—prejudice. अपख्याति—अपयश, defame. घट—तुलादिव्य, an ordeal by fire. लघुत्व—lightness in weight. अवतंस—कर्ण-भूषण, ear-ornament. कह्लार—water-lily. मकरन्द-रस, juice. सौभाग्य–good fortune. लघिमन्—lightness in weight. श्रुति—कर्ण, ear. कलिका—bud, मधूली—रस, juice. परिपूर्त्ति—completion.

Prose Order : अहो मे सौभाग्यम् ! मम च भवभूतेश्च भणितं घटायाम् आरोप्य तस्यां लघिमनि प्रतिफलति (सति) परिपूर्त्यै भगवती गिरां देवी सद्यः श्रुतिकलितकह्लारकलिकामधूलीमाधुर्यं क्षिपति ।

व्याख्या—अहो इति विस्मये । मे मम् । सौभाग्यं शोभनभाग्यवत्त्वम् । मम् कालिदासस्य भवभूतेश्च भणितं वचनम् । घटायां तुलायाम् । आरोप्य निधाय । तस्यां तुलायाम् भवभूतितुलाकोटौ । लघिमनि लघुत्वे । प्रतिफलित सञ्जाते । परिपूर्त्यै लघुत्वपरिपूरणाय । भगवती ऐश्वर्यादिगुणविशिष्टा । गिरां देवी वाग्देवी । सद्योऽविलम्बेन । श्रुतिकलितकह्लारकलिकामधूलीमाधुर्यम्—श्रुतौ श्रवणे कलितो धृतो यः कह्लारः कमलं तस्य या कलिका तस्या या मधूली रसस्तस्या माधुर्यं स्यन्दम् । क्षिपति निदधाति ।

राजा ने कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ ! आपकी तुलना भवभूति से नहीं करनी चाहिए। भवभूति ने पूछा—देव ! आप तुलना का निषेध क्योंकर करते हो ? राजा ने भवभूति से कहा—आप सभी प्रकार से कवि हो। तब बाण ने कहा—राजन् ! यदि भवभूति कवि है तो कालिदास को भी कवि कहिए। राजा ने कहा—बाण कवि ! कालिदास कवि नहीं है, किन्तु पृथ्वी पर पुरुष-रूप में पार्वती का अवतार है। तब भवभूति ने पूछा—देव ! कालिदास में क्या विशेषता है ? राजा ने कहा—भवभूति ! विशेषता का बखान क्या करें, किन्तु कालिदास के श्लोक में मधुर मुसकान की जो तुलना कैतकाग्र से की गई है, उसमें विशेषता है। तब भवभूति ने कहा—देव ! आपका कथन पक्षपातपूर्ण है। तब कालिदास ने कहा—देव! लोकनिन्दा न हो, अतः भुवनेश्वरी के मंदिर को जाकर वहाँ उनके सामने तराजू पर परीक्षा लीजिए। सब कवियों की सम्मति से भोज भुवनेश्वरी मंदिर को गया। वहाँ देवी के सामने भवभूति के हाथ में तराजू देकर और दोनों श्लोकों को बराबर वजन के पत्तों पर लिखकर तराजू पर रख दिया। तराजू के जिस भाग में भवभूति का पत्ता पड़ा था, तराजू हलकेपन से कुछ ऊपर उठने लगा। भक्त के वशीभूत देवी विचार करने लगी कि कहीं सभा में मेरे भक्त का अपमान न हो, इसलिए वे अपने कर्ण-कमल के पराग को बायें हाथ के नखाग्र से लेकर भवभूति के पत्ते पर गिराने लगीं। तब कालिदास ने कहा—

अहोभाग्य है मेरा कि जब मेरी और भवभूति की कविता को तराजू पर रखा गया और भवभूति की कविता हलकेपन से ऊपर को उठने लगी तब भगवती वाग्देवी ने एकदम अपने कर्ण-कमल के पराग को भवभूति के पत्ते पर गिरा दिया ताकि भूवभति की कविता वजन में पूरी उतरे।

ततः कालिदासपादयोः पति भवभूतिः । राजानं च विशेषज्ञं मनुते स्म । ततो राजा भवभूतिकवये शतं मत्तगजान्ददौ ।

अन्यदा राजा धारानगरे रात्रावेकाकी विचरन्कांचन स्वैरिणीं संकेतं गच्छन्तीं दृष्ट्वा पप्रच्छ—'देवि, का त्वम् । एकाकिनी मध्यरात्रौ क्व गच्छसि' इति । ततश्चतुरा स्वैरिणी सा तं रात्रौ विचरन्तं श्रीभोजं निश्चित्य प्राह—

त्वत्तोऽपि विषमो राजन्विषमेषुः क्षमापते ।
शासनं यस्य रुद्राद्या दासवन्मूर्ध्नि कुर्वते ।।२५४।।

तत इति । **Vocabulary** : विशेषज्ञ—expert. मनुते स्म—मानने लगा, acknowledged. स्वैरिणी—व्यभिचारिणी, unchaste. संकेत—the place of assignation.

विषम—क्रूर, cruel or dreadful. विषमेषु—कामदेव, पञ्चबाण, the cupid having an odd number of arrows.

Prose Order : राजन् ! क्षमापते ! विषमेषुः त्वत्तः अपि विषमः, यस्य शासनं रुद्राद्याः दासवत् मूर्ध्नि कुर्वते ।

व्याख्या—राजन् ! क्षमापते पृथ्वीपते ! विषमेषुः पञ्चशरत्वात् विषमबाणः कामः । त्वत्तोऽपि विषमः क्रूरः भयावहो वा, यस्य विषमेषोः शासनम् आज्ञाम् । रुद्राद्याः शिवादयो देवा अपि। दासवत् अनुचरसमम् । मूर्ध्नि कुर्वते शिरसोद्वहन्ति ।

तब भवभूति कालिदास के चरणों में गिरे और राजा को विशेषज्ञ समझने लगे । राजा ने भवभूति कवि को एक सौ मदमस्त हाथी दिये ।

एक बार धारा नगरी में रात को अकेले घूमते हुए राजा भोज किसी स्वैरिणी स्त्री को निर्धारित स्थान पर जाती हुई देखकर पूछने लगे—देवी ! तम कौन हो ? तुम अकेली आधी रात में कहाँ जा रही हो ? तब चतुर कुलटा ने सोचा कि रात में घूमनवाले ये भोजराज ही होंगे । यह निश्चित कर वह बोली—

राजन् पृथ्वीपाल ! आपसे प्रबल कामदेव हैं, जिनकी आज्ञा शिव आदि देवतागण दास के समान मस्तक पर धारण करते हैं ।

ततस्तुष्टो राजा दोर्दण्डादादायाङ्गदं वलयं च तस्यै दत्तवान् । सा च यथास्थानं प्राप ।

ततो वर्त्मनि गच्छन्क्वचिद्गृह एकाकिनीं रुदतीं नारीं दृष्ट्वा 'किमर्थमर्धरात्रौ रोदिति । किं दुःखमेतस्याः ।' इति विचारयितुमेकमङ्गरक्षकं प्राहिणोत् । ततोऽङ्गरक्षकः पुनरागत्य प्राह—'देव, मया पृष्टा यदाह तच्छृणु—

वृद्धो मत्पतिरेष मञ्चकगतः स्थूणावशेषं गृहं
कालोऽयं जलदागमः कुशलिनी वत्सस्य वार्त्तापि नो।
यत्नात्संचिततैलबिन्दु घटिका भग्नेति पर्याकुला
दृष्ट्वा गर्भभरालसां निजवधूं श्वश्रूश्चिरं रोदिति ॥२५५॥

ततस्तुष्ट इति। **Vocabulary** : दोर्दण्ड—भुजदण्ड, the mighty arm. अङ्गद—भुजबन्ध, bracelet. वलय—कङ्कण, armlet अङ्ग-रक्षक—body-guard. मञ्चक–bed स्थणास्तम्भ—pillar. जलदागम–वर्षागम, advent of rainy season. कुशलिनी—क्षेमकुशल की, referring to well being वार्त्ता—समाचार, news. सञ्चित—collected. घटिका—vessel. पर्याकुला—bewildered. अलस—थकी हुई, fatigued. श्वश्रू—सास, the mother-in-law.

Prose Order : एषः वृद्धः मत्पतिः मञ्चकगतः। गृहं स्थूणावशेषम्। अयं जलदागमः कालः। वत्सस्य कुशलिनी वार्त्ता अपि नो। यत्नात् सञ्चित-तैलविन्दुघटिका भग्ना इति पर्याकुला। श्वश्रूः निजवधूं गर्भभरालसां दृष्ट्वा चिरं रोदिति।

व्याख्या—एषः पुरोवर्त्ती। वृद्धः अपेतयौवनः। मत्पतिः मद्भर्त्ता। मञ्चक-गतः शय्यास्थितः। वर्तत इति शेषः। गृहं भवनम्। स्थूणावशेषं स्तम्भावशेषं वर्त्तते। अयं कालः ऋतुः जलदागमः वर्षारम्भः। वत्सस्य पुत्रस्य। कुशलिनी कुशलसूचिका। वार्त्ता अपि। नो नैव कर्णगोचरीभूता। यत्नाद् उद्योगेन। सञ्चिततैलविन्दुघटिका–सञ्चितस्य संयोजित य तैलस्य विन्दूनां कणानां घटिका घटी। भग्ना विदीर्णा। इति पर्याकुला किंकर्त्तव्यताविमूढा। श्वश्रूः। निजवधूं स्वपुत्रभार्याम्। गर्भभरालसां गर्भस्य भर उन्नमनम् उपचयो वा तेन अलसां क्लिष्टां व्यथितां वा। दृष्ट्वा विलोक्य। चिरं चिरकालं यावत्। रोदिति कन्दति।

तव प्रसन्न होकर राजा ने अपनी भुजाओं से भुजबन्ध और कङ्कण उतार-कर उसे दिये। वह भी अपने स्थान को पहुँची।

तब मार्ग में चलते-चलते एक घर में अकेली रोती हुई स्त्री को देखकर उसके दुःख का पता लगाने के लिए अपने अंग-रक्षक को भेजा। तब अंग-रक्षक ने पता लगाकर कहा—देव ! मेरे पूछने पर जो इसने कहा, सुनिए—

यह मेरा बूढ़ा पति खटिया पर पड़ा है। मकान के खम्भे ही खम्भे शेष रहे हैं। जलभरे बादलोंवाली वर्षा-ऋतु भी आ पहुँची है। बेटे का कोई कुशल-समाचार भी नहीं मिला। वह कलसिया भी फूट गई, जिसमें बड़े परिश्रम से तेल संचित किया था। गर्भ के भार से थकी-माँदी अपनी बहू को देख सास चिरकाल तक रो रही है।

ततः कृपावारिधिः क्षोणीपालस्तस्यै लक्षं ददौ।

अन्यदा कोङ्कणदेशवासी विप्रो राज्ञे 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा प्राह—

शुक्तिद्वयपुटे भोज यशोऽब्धौ तव रोदसी।
मन्ये तदुद्भवं मुक्ताफलं शीतांशुमण्डलम् ॥२५६॥

तत इति। **Vocabulary** : कृपावारिधिः—कृपासमुद्र, the ocean of mercy. क्षोणीपालः—पृथ्वीपाल : शुक्ति—सीप, oyster—shell. पुट—pocket. अब्धि—समुद्र, the ocean. रोदसी—द्यावापथिवी, the sky and the earth. शीतांशु—चन्द्रमा, the moon.

Prose Order : भोज ! तव यशोऽब्धौ रोदसी शुक्तिद्वयपुटे। तदुद्भवं शीतांशमण्डलं मुक्ताफलं मन्ये।

व्याख्या—भोज भोजराज ! तव यशोऽब्धौ यशस्समुद्रे। रोदसी द्यावापृथिव्यौ। शुक्तिद्वयपुटे शुक्तेर्द्वयं तस्य पुटे सञ्चरणखण्डे स्तः। तदुद्भवं तज्जातम् अर्णवोत्थम्। शीतांशुमण्डलम्—शीतांशोश्चन्द्रस्य मण्डलम्। मुक्ताफलं मौक्तिकसमूहम्। मन्येऽवधारयामि।

तब कृपा के समुद्र पृथ्वीपति भोज ने उसे एक लाख रुपये दिये।

एक बार कोंकणदेश-निवासी एक ब्राह्मण राजा को आशीर्वाद देकर बोला—भोज ! तुम्हारे यशरूपी समुद्र में आकाश और पृथ्वी-रूपी जो दो सीपियों का पुट है, उसमें उत्पन्न चन्द्रमा को मैं मोती समझता हूँ।

राजा तस्मै लक्षं ददौ।

अन्यदा काश्मीरदेशात्कोऽपि कौपीनावशेषो राजनिकटस्थकवीन्कनकमाणिक्यपट्टदुकूलालंकृतानवलोक्य राजानं प्राह—

नो पाणी वरकङ्कणक्वणयुतौ नो कर्णयोः कुण्डले
क्षुभ्यत्क्षीरधिदुग्धमुग्धमहसी नो वाससी भूषणम् ।
दन्तस्तम्भविकासिका न शिविका नाश्वोऽपि विश्वोन्नतो
राजन्राजसभासुभाषितकलाकौशल्यमेवास्ति नः ॥२५७॥

राजेति। **Vocabulary** : कौपीन—a loin-cloth. पाणि—हाथ, hand. वर—सुन्दर, fine. क्वण—शब्द, sound. क्षुभ्यत्—अशान्त, agitated. क्षीरधि—क्षीरसमुद्र, milky ocean. मुग्ध—attractive. महस्—शोभा, splendour. वासस्—वस्त्र, garbs. दन्त—गजदन्त, ivory. स्तम्भ—pillar. विकासिका—शोभायमान, resplendent. शिबिका—पालकी, palanquin. भाषित—वक्तृत्व, oration. कौशल्य—निपुणता, art.

Prose Order : पाणी वरकङ्कणक्वणयुतौ नो, कर्णयोः कुण्डले न, क्षुभ्यत्क्षीरधिदुग्धमुग्धमहसी वाससी भूषणं नो, दन्तस्तम्भविकासिका शिबिका न, विश्वोन्नतः अश्वः अपि न, राजन्! राजसभासु नः भाषितकलाकौशल्यम् एव अस्ति ।

व्याख्या—पाणी हस्तौ । वरकङ्कणक्वणयुतौ वरस्य शोभनस्य कंकणस्य वलयस्य क्वणेन शब्देन युतौ सम्पन्नौ। नो नैव स्तः । कर्णयोः श्रवणयोः कुण्डले भूषणे न स्तः । क्षुभ्यत्क्षीरधिदुग्धमुग्धमहसी क्षुभ्यन् अशान्तो यः क्षीरधिः क्षीरसागरः तस्य यद् दुग्धं फेनपटलमिति यावत्, तद्वद् मुग्धं चित्ताकर्षकं मह औज्ज्वल्यं येषां ते तथाभूते । वाससी वस्त्रे भूषणं भूषणस्वरूपे न स्तः । दन्तस्तम्भविकासिका दन्तानां स्तम्भैः विकासिका शोभावती । शिबिका पर्यङ्किका न । विश्वोन्नतः प्रांशुः । अश्वः अपि न । राजन् ! राजसभासु राजसदस्सु । नोऽस्माकम् । भाषितकलाकौशलम्—भाषितकलायाः वक्तृतायाः कौशल्यं चातुर्यम् । एवास्ति ।

एक बार कौपीन-मात्र वस्त्रधारी किसी कवि ने काश्मीर देश से आकर राजा के पास बैठे हुए तथा सुवर्ण, मणि और रेशमी दुपट्टों को धारण किये हुए विद्वानों को देखकर राजा से कहा—

हमारे हाथों में सुन्दर शब्दवाले कंकण नहीं हैं। कानों में कुण्डल नहीं हैं। क्षुब्ध क्षीर-सागर के दूध के समान श्वेत प्रकाशवाले वस्त्र नहीं हैं। न भूषण हैं। हाथी-दाँत के खम्भों से शोभायमान पालकी नहीं हैं। ऊँचा घोड़ा भी नहीं है। हे राजन्! राजसभाओं में वक्तृत्व-कला-कौशल ही हमारे पास है।

ततस्तस्मै राजा लक्षं ददौ।

अन्यदा राजा रात्रौ चन्द्रमण्डलं दृष्ट्वा तदन्तःस्थकलङ्कं वर्णयतिस्म—

अङ्कं केऽपि शशङ्किरे जलनिधेः पङ्कं परे मेनिरे
सारङ्गं कतिचिच्च संजगदिरे भूच्छायमैच्छन्परे।

इति राजा पूर्वार्धं लिखित्वा कालिदासहस्ते ददौ। ततः स तस्मिन्नेव क्षण उत्तरार्धं लिखति कविः—

इन्दौ यद्दलितेन्द्रनीलशकलश्यामं दरीदृश्यते
तत्सान्द्रं निशि पीतमन्धतमसं कुक्षिस्थमाचक्ष्महे ॥२५८॥

ततस्तस्मै इति। **Vocabulary** : तदन्तःस्थ—तदन्तर्वर्ति। अङ्क—चिह्न, the sport. शशङ्किरे—शंका की, doubted. पङ्क—कीचड़, mud. सारङ्ग—हरिण, fawn. संजगदिरे—कहा, said. भूच्छाय—पृथ्वी की छाया, the shadow of the earth. दलित—खंडित, rent. इन्द्रनील—sapphire. शकल—खंड, piece. श्याम—नील, blue. दरीदृश्यते—दीखता है, is beheld. सान्द्र—घन, intense. निशि—रात्रि में। अन्धतमस्—घोरान्धकार, intense darkness. कुक्षिस्थ—कोख में स्थित। आचक्ष्महे—कहते हैं, we call.

Prose Order : केऽपि अङ्क शशङ्किरे। परे जलनिधेः पङ्कं मेनिरे। कतिचिच्च सारङ्गं संजगदिरे। परे भूच्छायम् ऐच्छन्। इन्दौ यद् दलितेन्द्र-नीलशकलश्यामं दरीदृश्यते तन्निशि सान्द्रं पीतं कुक्षिस्थम् अन्धतमसं आचक्ष्महे।

व्याख्या—केऽपि केचित् जनाः । अङ्कं कलङ्कम् । शशङ्किरे अमन्यन्त । परे अन्ये । जलनिधेः समुद्रस्य । पङ्कम् । मेनिरे अचिन्तयन् । कतिचिच्च—केचिच्च । सारङ्गं मृगम् । संजगदिरे ऊचुः । परे अन्ये । भूच्छायां भुवः छायाम् ऐच्छन् । इन्दौ चन्द्रे । यद् । दलितेन्द्रनीलशकलश्यामम्—दलितः खण्डितो य इन्द्रनीलाख्यो मणिस्तस्य यच्छकलं खण्डस्तद्वत् श्यामं नीलवर्णम् । दरीदृश्यते दृष्टिपथमवतरति तन्निशि रात्रौ । सान्द्रं निबिडं यथा स्यात्तथा पीतम् । कुक्षिस्थं भुजान्तरालवर्ति । अन्धतमसं गाढान्धकारम् । आचक्ष्महे व्यपदिशामः ।

तब राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये । एक समय राजा रात्रि में चन्द्रमण्डल को देखकर उसमें स्थित कलङ्क का वर्णन करने लगे ।

किन्हीं विद्वानों ने चन्द्रमण्डल में कलंक के होने की शङ्का की । किन्हीं ने समुद्र का कीचड़ समझा । किन्हीं ने हरिण कहा । किन्हीं ने पृथ्वी की छाया मानी ।

इस प्रकार राजा ने पूर्वार्ध लिखकर कालिदास के हाथ में दिया । तब उसी क्षण कवि ने उत्तरार्ध लिख डाला ।

चन्द्रमा में खण्डित इन्द्रनील मणि के खण्ड के समान जो श्यामता दीखती है, उसके विषय में मेरा तो यह मत है कि चन्द्रमा ने रात्रि का जो घोर अन्धकार पीया, वही उसकी कोख में दीखता है ।

राजा प्रत्यक्षरलक्षमुत्तरार्धस्य दत्तवान् । ततो राजा कालिदासकवितापद्धतिं वीक्ष्य चमत्कृतः पुनराह—'सखे, अकलङ्कं चन्द्रमसं व्यावर्णय' इति । ततः कविः पठति—

लक्ष्मीक्रीडातडागो रतिधवलगृहं दर्पणो दिग्वधूनां
पुष्पं श्यामालतायास्त्रिभुवनजयिनो मन्मथस्यातपत्रम् ।
पिण्डीभूतं हरस्य स्मितममरधुनीपुण्डरीकं मृगाङ्को
ज्योत्स्नापीयूषवापी जनयति निकरस्तारकागोलकस्य ।।२५६।।

राजेति । Vocabulary : पद्धति-शैली, the style. व्यावर्णय–वर्णन करो, describe. क्रीडातडाग—pleasure-pond. धवलगृह—श्वेतभवन, the white house. मन्मथ—कामदेव, the cupid. आतपत्र–

छत्र, umbrella. पिण्डीभूत—पुंजित, compressed. अमरधुनी—गंगा, the Ganges. पुण्डरीक—श्वेत कमल, the white lotus. मगाङ्क—चन्द्रमा। ज्योत्स्ना—चन्द्रिका, the moonlight. पीयूष—अमृत, the nectar. वापी—the lake. निकर—सर्वस्व, treasure. तारकागोलक—आकाश, the sky.

Prose Order : लक्ष्मीक्रीडातडाग:, रतिधवलगृहम्, दिग्वधूनां दर्पण:, श्यामालताया: पुष्पम् त्रिभुवनजयिन: मन्मथस्य आतपत्रम्, हरस्य पिण्डीभूतं स्मितम्, अमरधुनीपुण्डरीकम्, तारकागोलकस्य निकर: मगाङ्क: ज्योत्स्नापीयूषवापीं जनयति ।

व्याख्या—लक्ष्मीक्रीडातडाग: लक्ष्म्या: श्रिय: जले क्रीडार्थं तडाग: सर: । रतिधवलगृहम् रते: कामपत्न्या धवलं श्वेतं गहम्; दिग्वधूनां दिशां दर्पण: मुकुर:; श्यामालताया: श्यामाख्याया लताया: पुष्पम्; त्रिभुवनजयिन: त्रयाणां भुवनानां जेतुर्जिष्णो: मन्मथस्य कामस्य; आतपत्रं छत्रम्; हरस्य शिवस्य; पिण्डीभूतं पिण्डि तं स्मितं मन्दहास:; अमरधुनी गङ्गा तस्या: पुण्डरीकं श्वेतकमलम्; तारकागोलकस्य गगनस्य निकर: मणि:; मृगाङ्कश्चन्द्र:, ज्योत्स्नापीयूषवापीं ज्योत्स्ना चन्द्रिका एव पीयूषस्य सुधाया वापी सर: ताम् जनयति उत्पादयति ।

राजा ने उत्तरार्ध के प्रति वर्ण पर एक-एक लाख रुपये दिये ।

तब राजा कालिदास की कविता-शैली को देख चमत्कृत होकर कहने लगे—मित्र! निष्कलंक चन्द्रमा का वर्णन करो । तब कवि ने कहा—

यह चन्द्रमा लक्ष्मीजी की कीड़ा के लिए जलाशय है । रति का श्वेतगृह है । दिग्रूपी बहुओं का दर्पण है । श्यामलता का फूल है । त्रिलोकी को जीतनेवाले कामदेव का छत्र है । शिव का पिंडित मंदहास है । आकाश-गंगा का कमल है । नक्षत्र-मण्डल का मणि यह चन्द्र चन्द्रिका-रूपी अमृत की बावड़ी को जन्म देता है ।

राजा पुन: प्रत्यक्षरंलक्षं ददौ ।

एकदा कश्चिद्दूरदेशादागतो वीणाकविराह—

तर्कव्याकरणाध्वनीनधिषणो नाहं न साहित्यवि-
ज्ञो जानामि विचित्रवाक्यरचनाचातुर्यमत्यद्भुतम् ।
देवी कापि विरिञ्चिवल्लभसुता पाणिस्थवीणाकल-
क्वाणाभिन्नरवं तथापि किमपि ब्रूते मुखस्था मम् ॥२६०॥

राजा पुनरिति । **Vocabulary** : तर्क—logic. व्याकरण—grammar. अध्वनीन—मार्गगामिनी । धिषणा—बुद्धि, wisdom. विरिञ्चि—ब्रह्मा । वल्लभसुता—प्रियकन्या । पाणिस्थ—हस्तगृहीत । कलक्वाण—अव्यक्त मधुर शब्द, sweet and indistinct sound.

Prose Order : अहं तर्कव्याकरणाध्वनीनधिषणः न, साहित्यवित् न, अत्यद्भुतं विचित्रकाव्यरचनाचातुर्यं न जानामि । तथापि मम मुखस्था कापि विरिञ्चिवल्लभसुता देवी पाणिस्थवीणाकलक्वाणाभिन्नरवं किमपि ब्रूते ।

व्याख्या—अहम् । तर्कव्याकरणाध्वनीनधिषणः—तर्कश्च व्याकरणञ्चेति तर्कव्याकरणे तत्र अध्वनि मार्गे भवा धिषणा बुद्धिर्यस्य स तथाभूतः । न, तर्कव्याकरणशास्त्रज्ञोऽहं नेति । साहित्यवित् साहित्यस्य काव्यादेर्वेत्ताऽपि नाहम् । अत्यद्भुतं विचित्रतमं विचित्रकाव्यरचनाचातुर्यम्—विचित्रस्य काव्यस्य या रचना निर्माणं तस्याश्चातुर्यं दक्षत्वं न जानामि । तथापि । मम । मुखस्था मुखे तिष्ठतीति सा । कापि अज्ञातपरिचया । विरिञ्चिवल्लभसुता विरिञ्चे-र्ब्रह्मणः वल्लभसुता प्रिया कन्या सरस्वती । पाणिस्थवीणाकलक्वाणाभिन्नरवम्—पाणौ तिष्ठतीति पाणिस्था करस्था या वीणा तस्याः कलेन अव्यक्तमधुरेण क्वाणेन अभिन्नो रवो यस्य तद् यथा स्यात्तथा किमपि ब्रूते वदति ।

राजा ने फिर प्रति वर्ण एक-एक लाख रुपये दिये ।

एक बार किसी दूर देश से आकर वीणा कवि ने कहा—

न्याय और व्याकरण के मार्ग पर मेरी बुद्धि नहीं चलती । न मैं साहित्य-शास्त्र का विज्ञ हूँ । विचित्र काव्य की अद्भुत रचना-कला का भी मुझे ज्ञान नहीं है । परन्तु ब्रह्मा की कोई प्रिय पुत्री मेरी जिह्वा पर बैठकर हस्तगत वीणा के अव्यक्त मधुर शब्द के सदृश कुछ कहती है ।

राजा तस्मै लक्षं ददौ । बाणस्तस्य सुललितप्रबन्धं श्रुत्वा प्राह—'देव,

मातङ्गीमिव माधुरीं ध्वनिविदो नैव स्पृशन्त्युत्तमां
व्युत्पत्तिं कुलकन्यकामिव रसोन्मत्ता न पश्यन्त्यमी।
कस्तूरीघनसारसौरभसुहृद् व्युत्पत्तिमाधुर्ययो-
र्योगः कर्णरसायनं सुकृतिनः कस्यापि संपद्यते ॥२६१॥

राजेति। **Vocabulary** : सुललित—graceful. प्रबन्ध—कविता a poem. मातङ्गी—चाण्डाली, a low-caste woman. माधुरी—musical chord. व्युत्पत्ति—poetical composition. कुलकन्या—उत्तम कुल की कन्या, a maiden of noble lineage. कस्तूरी—musk. घनसार—चन्दन, सौरभ—delightful to the ear. सुकृतिन्—one possessed of merit.

Prose Order : ध्वनिविदः उत्तमां माधुरीं मातङ्गीम् इव नैव स्पृशन्ति। अमी रसोन्मत्ताः व्युत्पत्तिं कुलकन्यकाम् इव न पश्यन्ति। कस्तूरीघनसारसौरभसुहृद् कर्णरसायनं व्युत्पत्तिमाधुर्ययोः योगः कस्य अपि सुकृतिनः सम्पद्यते।

व्याख्या—ध्वनिविदः—ध्वनि काव्यमर्म विदन्तीति ते काव्यरहस्याभिज्ञाः। उत्तमाम् उत्कृष्टाम्। माधुरीं सङ्गीतध्वनिम्। मातङ्गी चाण्डालदारिकाम् इव। न स्पृशन्ति। अमी। रसोन्मत्ताः सङ्गीतरसेन उन्मत्ताः। व्युत्पत्तिं साहित्यबोधम्। कुलकन्यकाम् उत्तमवंशजां दारिकाम् इव न पश्यन्ति नेच्छन्ति। कस्तूरीघनसारसौरभसुहृत् कस्तूरी च घनसारश्चेति कस्तूरीघनसारौ कस्तूरीचन्दने तयोः सौरभं सुगन्धः तस्य सुहृत् तत्समः। कर्णरसायनं कर्णयोः श्रवणयोः रसायनम् आनन्दप्रद इति यावत्। व्युत्पत्तिमाधुर्ययोः शास्त्रज्ञानसङ्गीत रसयोः। योगः साहचर्यम्। कस्यापि विरलस्यैव जनस्य। सम्पद्यते सञ्जायते।

राजा ने उसे एक लाख रुपये दिये। बाण कवि ने उसकी लालित्यपूर्ण रचना को सुनकर कहा—देव!

शब्द-ध्वनि के जानकार विद्वान् हथिनी के समान इसकी ध्वनि को नहीं छूते हैं। ये रसिक कवि भी कुलीन कन्या के सदृश इसकी उत्तम व्युत्पत्ति को

नहीं देखते हैं। कस्तूरी और कपूर के समान गन्धीला यह मधुरता और व्युत्पत्ति का कर्णामृत-रूपी योग किसी विरले पुण्यात्मा को ही प्राप्त होता है।

अन्यदा राजा सीतां प्रातः प्राह--'देवि, प्रभातं व्यावर्णय' इति। सीता प्राह--

विरलविरलाः स्थूलास्तारा: कलाविव सज्जना
मन इव मुनेः सर्वत्रैव प्रसन्नमभून्नभः।
अपसरति च ध्वान्तं चित्तात्सतामिव दुर्जनो
व्रजति च निशा क्षिप्रं लक्ष्मीनुरुद्यमिनामिव ॥२६२॥

अन्यदेति। **Vocabulary** : अन्यदा—once upon a time. विरलविरला:—few and far between स्थूल—big. प्रसन्न—स्वच्छ, clear. नभस्—आकाश, sky. अपसरति—नष्ट हो गया है, has vanished. ध्वान्त—अन्धकार, darkness. दुर्जन—a wicked person. निरुद्यमिन्—उद्यम-रहित, given to idleness.

Prose Order : स्थूला: तारा: कलौ सज्जना इव विरलविरला:। नभ: मुने: मन इव सर्वत्रैव प्रसन्नम् अभूत। ध्वान्तञ्च सतां चित्ताद् दुर्जन इव अपसरति। निशा च निरुद्यमिनां लक्ष्मी: इव क्षिप्रं व्रजति।

व्याख्या--स्थूला: विस्तीर्णोन्नताकारा:। तारा नक्षत्राणि। कलौ कलियुगे। सज्जना: भद्रपुरुषा: इव। विरलविरला: अत्यन्तं विरला:। नभो गगनम्। मुने: तपस्विन:। मनश्चित्तम् इव सर्वत्रैव प्रसन्नं स्वच्छम्। अभूत्। ध्वान्तं तमश्च। सतां सज्जनानाम्। चित्ताद् मनस:। दुर्जन: दुष्टो जन इव। अपसरति परावृजति। निशा च रात्रिश्च। निरुद्यमिनाम् उद्योगविहीनानाम्। लक्ष्मी: श्री:। इव। क्षिप्रम् अविलम्बेन। व्रजति व्यत्येति।

एक दिन राजा ने सीता से प्रातःकाल कहा—देवि! प्रभात का वर्णन करो। सीता ने कहा—

स्थूल तारे विरले ही दीखने लगे, जैसे कलियुग में सज्जन। आकाश सर्वत्र स्वच्छ हो गया, जैसे मुनि का मन। अन्धकार भाग गया, जैसे सज्जनों के मन से दुर्जन। रात्रि शीघ्र ही चली गई, जैसे उद्योग-रहित की लक्ष्मी।

राजा लक्षं दत्त्वा कालिदासं प्राह—'सखे सुकवे, त्वमपि प्रभातं व्यावर्णय' इति । कालिदासः—

अभूत्प्राची पिङ्गा रसपतिरिव प्राश्य कनकं
गतच्छायश्चन्द्रो बुधजन इव ग्राम्यसदसि ।
क्षणात्क्षीणास्तारा नृपतय इवानुद्यमपरा
न दीपा राजन्ते द्रविणरहितानामिव गुणाः ॥२६३॥

राजा लक्षमिति । **Vocabulary** : प्राची—पूर्व दिशा, the eastern direction. पिङ्ग—पीला, tawny. रसपति—पारा, the quicksilver. प्राश्य—संयुक्त होकर, becoming fused. कनक—सुवर्ण, gold. गतच्छाय—विच्छाय, lustreless. ग्राम्यसदस्—अशिक्षित जनों की सभा, the assembly of rustics. अनुद्यमपरा—उद्योग-रहित, averse to perseverance. न राजन्ते—प्रकाशमान नहीं होते, grow dim. विनय-रहित—immodest.

Prose Order : कनकं प्राश्य रसपतिः इव प्राची पिङ्गा । अभूत् । ग्राम्यसदसि बुधजन इव चन्द्रः गतच्छायः अभूत् । अनुद्यमपरा नृपतय इव क्षणात् ताराः क्षीणाः । विनयरहितानां गुणा इव दीपाः न राजन्ते ।

व्याख्या—प्राची पूर्वदिशा । पिङ्गा पिङ्गलवर्णा । अभूत् । यथा कनकं सुवर्णम् प्राश्य भक्षयित्वा कनकसंयोयोगेनेति यावत्, रसपतिः पारदः । पिङ्गलवर्णो भवति । ग्राम्यसदसि ग्राम्याणाम् अशिक्षितानां सदसि सभायाम् । बुधजन इव विद्वानिव । चन्द्रः शशिः । गतच्छायो विच्छायः । अभूत । अनुद्यमपरा उद्योगरहिताः । नृपतयः भूपतयः इव । तारा नक्षत्राणि । क्षणात् सद्य एव । क्षीणा निस्तेजस्काः अभवन् । विनयरहितानां विनयहीनानाम् । गुणा इव । दीपाः न राजन्ते न प्रकाशन्ते ।

राजा ने एक लाख रुपये देकर कालिदास से कहा—मित्र, कविश्रेष्ठ ! तुम भी प्रभात का वर्णन करो । कालिदास ने कहा—

जैसे सुवर्ण के योग से पारा पीला पड़ जाता है, पूर्वदिशा पीली हो गई । ग्रामजनों की सभा में विद्वान् के समान चन्द्रमा हतप्रतिभ हो गया । उद्योगहीन

राजाओं के समान क्षण में तारे नष्ट हो गये । विनयहीन जनों के गुणों के समान दीपक शोभा नहीं देते ।

राजा तस्मै प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

अन्यदा द्वारपाल आगत्य प्राह—'देव, कापि मालाकारपत्नी द्वारि तिष्ठति' इति । राजाह—'प्रवेशय' इति । ततः प्रवेशिता सा च नमस्कृत्य पठति—

समुन्नतघनस्तनस्तबकचुम्बितुम्बीफल-
क्वणन्मधुरवीणया विबुधलोकलोलभ्रुवा ।
त्वदीयमुपगीयते हरकिरीटकोटिस्फुर-
त्तुषारकरकन्दलीकिरणपूरगौरं यशः ।।२६४।।

राजेति । **Vocabulary :** मालाकार—माली, a gardener. समुन्नत— ऊपर को उठे हुए, elevated. स्तवक—गुच्छा, a bunch. तुम्बीफल—a gourd. विबुध—देवता, gods. विबुधलोक—स्वर्ग, heaven. लोलद्भ्रू—चंचल भौंहों से युक्त, possessed of quivering brows. किरीट—मुकुट, crest. कोटि—अग्रभाग, the tip. तुषारकर—the snow-beamed moon.

Prose Order: समुन्नतघनस्तनस्तबकचुम्बितुम्बीफलक्वणन्मधुरवीणया विबुधलोकलोलद्भ्रुवा हरकिरीटकोटिस्फुरत्तुषारकरकन्दलीकिरणपूरगौरं त्वदीयं यशः उपगीयते ।

व्याख्या—समुन्नतौ प्रवृद्धौ घनौ निबिडौ स्तनौ कुचौ तयोः स्तवकं कलिकां चुम्बितु स्प्रष्टुं शीलं यस्याः तथाभूता तुम्बीफलेन निर्मिता क्वणन्ती मधुरा वीणा यस्यास्तया । विबुधलोकलोलद्भ्रुवा—विबुधानां देवानां लोकः विबुधलोकः, विबुधलोकवासिनी या लोलदभ्रूः, देवाङ्गना तया । हरस्य किरीटः हरकिरीटः (ष० तत्पु०), हरकिरीटस्य कोटिः (ष० तत्पु०), तत्र स्फुरन् यः तुषारकरः चन्द्रः स एव कन्दली तस्याः किरणानां पूरः तद्वद् गौरम् । त्वदीयं तव । यशः कीर्तिः । गीयते गानविषयीक्रियते ।

राजा ने उसे प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । एक दिन द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! एक मालिन द्वार पर खड़ी है । राजा ने कहा—भीतर

भजो। तब उस मालिन को भीतर लाया गया। भीतर आकर प्रणाम करके उसने कहा—

राजन्! चंचल भौहोंवाली देवलोक की अप्सराएँ, जिनके उन्नत, कठोर तथा स्तबक रूपी स्तनों का मधुर स्वरवाली वीणा आलिङ्गन कर रही है, आपका यशोगान कर रही हैं, जो यश शिव के मुकुटाग्र पर शोभायमान चन्द्रमा की किरणों के समान श्वेत है।

राजा 'अहो महती पदपद्धतिः' इति तस्याः प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ।

अन्यदा रात्रौ राजा धारानगरे विचरन्कस्यचिद्गृहे कामपि कामिनीमुलूखलपरायणां ददर्श। राजा तां तरुणीं पूर्णचन्द्राननां सुकुमाराङ्गीं विलोक्य तत्करस्थं मुसलं प्राह—'हे मुसल, एतस्याः करपल्लवस्पर्शेनापि त्वयि किसलयं नासीत्। तर्हि सर्वथा काष्ठमेव त्वम्' इति। ततो राजा एकं चरणं पठति स्म—

'मुसल किसलयं ते तत्क्षणाद्यन्न जातम्'।

ततो राजा प्रातः सभायां समागतं कालिदासं वीक्ष्य 'मुसल किसलयं ते तत्क्षणाद्यन्न जातम्' इति पठित्वा 'सुकवे, त्वं चरणत्रयं पठ' इत्युवाच। ततः कालिदासः प्राह—

जगति विदितमेतत्काष्ठमेवासि नूनं
तदपि च किल सत्यं कानने वर्धितोऽसि।
नवकुवलयनेत्रापाणिसङ्गोत्सवेऽस्मि-
न्मुसल किसलयं ते तत्क्षणाद्यन्न जातम् ॥२६५॥

राजेति। **Vocabulary** : पदपद्धति—रचना, composition. उलूखल—mortar. तरुणी—युवती, a youthful woman. मुसल—gourd. काष्ठ—insensible wood. पाणिसङ्ग—करस्पर्श, the touch of hand.

Prose Order : मुसल! जगति एतद् विदितम्, नूनं काष्ठम् एव असि, तद् अपि च किल सत्यं कानने वर्धितः असि, यत् अस्मिन् नवकुवलयनेत्रापाणि सङ्गोत्सवे तत्क्षणात ते किसलयं न जातम।

व्याख्या—मुसल ! जगति लोके एतद् विदितं प्रसिद्धम् । नूनं निश्चितम् । काष्ठम् अचेतनत्वेन स्पर्शानुभवशून्य इत्यर्थः । एवेत्यवधारणे । असि । तदपि च किल सत्यम्—अत्रापीदं मिथ्यात्वेन न प्रतिफलति यत् त्वं कानने जडात्मनि वर्धितः वृद्धि नीतः असि । कथमिदमभ्युपगतम् इत्यत्राह—यत् अस्मिन् नवकुवलयनेत्रापाणिसङ्गोत्सवे नवश्चासौ कुवलयनेत्रायाः पाणेः सङ्गः तस्माज्जातः य उत्सवस्तस्मिन् कुवलयाक्षीहस्तस्पर्शोद्भूतहर्षातिशये तत्क्षणात् सद्य एव । ते तव किसलयं न जातम्—त्वं किसलययुक्तो नाभूः ।

राजा ने सोचा—अहो पद-रचना उत्कृष्ट है । इसलिए प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये ।

एक दिन रात को धारा-नगरी में घूमते हुए राजा ने एक युवती को देखा, जो मूसल से अन्न छाँट रही थी । राजा ने पूर्णचन्द्र के सदृश मुख से तथा कोमल अंगों से सुशोभित उस युवती को देखकर उसके हाथ में स्थित मूसल को संबोधित करते हुए कहा—

हे मूसल ! इस युवती के कोमल कर-स्पर्श से भी तुम अंकुरित नहीं हुए तब तो तुम काष्ठ ही रहे ।

तब राजा ने एक पद पढ़ा—

मूसल ! जो उस समय तुम अंकुरित नहीं हुए ।

तब राजा ने प्रातःकाल सभा में आये हुए कालिदास को देखकर पढ़ा—

मूसल ! जो उस समय तुम अंकुरित नहीं हुए ।

यह एक पाद पढ़कर राजा ने कालिदास से कहा—

कविश्रेष्ठ ! तुम तीन पाद बोलो । तब कालिदास बोले—

संसार में यह बात प्रसिद्ध है कि तुम काष्ठ हो और यह सही भी है । तुम वन में बढ़े हो जो तुम नवीन नील कमल के समान नयनोंवाली युवती के कर-स्पर्श के उत्सव पर, हे मूसल ! उस उमय अंकुरित नहीं हुए ।

ततो राजा चरणत्रयस्य प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

अन्यदा राजा दीर्घकालं जलकेलि विधाय परिश्रान्तस्तत्तीरस्थवटविटपिच्छायायां निषण्णः ? तत्र कश्चित्कविरागत्य प्राह—

छन्नं सैन्यरजोभरेण भवतः श्रीभोजदेव क्षमा-
रक्षादक्षिण दक्षिणक्षितिपतिः प्रेक्ष्यान्तरिक्षं क्षणात् ।
निःशङ्को निरपत्रयो निरनुगो निर्बान्धवो निःसुहृ-
न्निस्त्रीको निरपत्यको निरनुजो निर्हाटको निर्गतः ॥२६६॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : अन्यदा—एक बार, once upon a time. जलकेलि—जलक्रीडा, sporting in water. वट—Banyan tree. निषण्ण—स्थित, seated. छन्न—आच्छादित, covered. दक्षिणक्षितिपति—the king of southern quarters. प्रेक्ष्य—देखकर । निश्शङ्क—शंका-रहित, without hesitation. निरपत्रप—लज्जा-रहित, without shame. निरनुग—अनुचर-रहित, without servants. निरनुज—भ्रातृरहित, without brother. निर्हाटक—धनहीन, without wealth. हाटक gold.

Prose Order : क्षमारक्षादक्षिण श्रीभोजदेव ! भवतः सैन्यरजोभरेण क्षणात् छन्नम् अन्तरिक्ष प्रेक्ष्य दक्षिणक्षितिपतिः निश्शङ्कः निरपत्रपः निरनुगः निर्बान्धवः निस्सुहृत् निस्त्रीकः निरपत्यकः निरनुजः निर्हाटकः निर्गतः ।

व्याख्या—क्षमारक्षादक्षिण क्षमायाः पृथिव्या रक्षा पालनं तत्र दक्षिण निपुण ! श्रीभोजदेव ! भवतस्तव । सैन्यरजोभरेण सेना एव सैन्यं तदुत्थं यद्रजो धूलिस्तस्य भरोऽतिशयस्तेन । क्षणात् सद्यः । छन्नं तिरोहितम् । अन्तरिक्षं गगनम् । प्रेक्ष्य विलोक्य । दक्षिणक्षितिपतिः दक्षिणनरेशः । निश्शङ्कः शङ्काविहीनः । निरपत्रपः निर्लज्जः निरनुगः अनुचररहितः । निर्बान्धवः बन्धुजनरहितः । निस्सुहृत् मित्रशून्यः । निरपत्यकः पुत्रादिभिरननुगतः । निरनुजः भ्रातृरहितः । निर्हाटकः सुवर्णादिधनरहितः ।

तब राजा ने तीन पादों के लिए प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये ।

एक बार राजा चिरकाल जलक्रीड़ा करते-करते थक गया । तब वह जलाशय के तट पर वटवृक्ष की छाया में बैठ गया । वहाँ किसी कवि ने आकर कहा—

क्षमा और रक्षा में निपुण श्रीभोजदेव ! आपकी सेना की पादधूलि से व्याप्त आकाश को देखकर दक्षिणदेश का नरेश क्षण में ही शंका, लज्जा, सेवक, बान्धव, मित्र, पत्नी, सन्तान, अनुज तथा धन से रहित होकर भाग गया। किंच—

अकाण्डधृतमानसव्यवसितोत्सवैः सारसै-
रकाण्डपटुताण्डवैरपि शिखण्डिनां मण्डलैः ।
दिशः समवलोकिताः सरसनिर्भरप्रोल्लस-
द्भवत्पृथुवरूथिनीरजनिभूरजः श्यामलाः ॥२६७॥

किंचेति । **Vocabulary** : अकाण्ड—अकस्मात्, sudden. उत्सव—joy. सारस—crane. ताण्डव—नृत्य, dance शिखण्डिन्—मयूर, peacock. सरस वीररसयुक्त, full of heroic sentiment. निर्भर—अत्यन्त प्रोल्लसत्—brimming. पृथु—विशाल, huge. वरूथिनी—सेना, army. रजनि—रात्रि, night. भूरजस्—पृथ्वी की रेणु, the dust of the earh. श्यामल—श्यामवर्णयुक्त, dark.

Prose Order: अकाण्डधृतमानसव्यवसितोत्सवैः सारसैः, अकाण्ड-पटुताण्डवैः शिखण्डिनां मण्डलैः अपि सरसनिर्भरप्रोल्लसद्भवत्पृथुवरूथिनीरज-निभूरजःश्यामलाः दिशः समवलोकिताः ।

व्याख्या—अकांडधृतमानसव्यवसितोत्सवैः अकांडे अकाले धृतं गृहीतं यन्मानसस्य मानससरोवरस्य व्यवसितंनिश्चयस्तस्मादुत्पन्न उत्सवो येषां तैः तथाभूतैः सारसैः पक्षिविशेषैः । अकांडपटुतांडवैः अकांडे असमये कृतं पटु निपुणं तांडवं येस्तथाभूतैः शिखंडिनां मयूराणां मण्डलैः समहैः । सरसेति—रसेन सहितं सरसं तद् यथा स्यात्तथा निर्भरम् अत्यन्तञ्च प्रोल्लसन्ती प्रोत्तेजिता या भवतः पृथुवरूथिनी भूरिसेना सैव रजनिः रात्रिस्तस्या भुवो धरित्र्या-रजसा धूलिना श्यामला श्यामवर्णाः । दिशः । समवलोकिता दृष्टाः ।

और सारसों ने, जो कि अकारण मन में कुछ निश्चय कर उत्सव मनाने लगे थे तथा मयूरों ने, जो अनवसर सुन्दर नृत्य करने लगे थे, वीररस के

अतिशय सञ्चार से उत्तेजित आपकी विशाल सेनारूपी रात्रि की धूलि से श्यामवर्णवाली दिशाओं को देखा ।

ततो राजा लक्षद्वयं ददौ। तदानीमेव तस्य शाखायामेकं काकं रटन्तं प्रेक्ष्य कोकिलं चान्यशाखायां कूजन्तं वीक्ष्य देवजयनामा कविराह—

नो चारू चरणौ न चापि चतुरा चञ्चूर्न वाच्यं वचो
नो लीलाचतुरा गतिर्न च शुचिः पक्षग्रहोऽयं तव ।
क्रूरक्रेङ्कृतिनिर्भरां गिरमिह स्थाने वृथैवोद्गिर-
न्मूर्ख ध्वाङ्क्ष न लज्जसेऽप्यसदृशं पाण्डित्यमुन्नाटयन् ॥२६८॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : रटन्तम्—कर्कश स्वर से बोलते हुए, making a caw-caw sound—कूजन्तम्—मधुर स्वर से बोलती हुई, cooing.

चारु—सुन्दर, lovely. चञ्चु—चोंच, beak. वाच्य, appreciable. पक्षग्रह—पंख, feathers. क्रूर—कर्कश, of harsh tone. क्रेंकृति—केंङ्कार, caw-caw sound. निर्भर—भरी ई, consisting. उदगिरन् निकालते हुए, giving utterance to. ध्वाङ्क्ष—कौआ, a crow. उन्नाटयन्—अभिनय करता हुआ, displaying.

Prose Order : चारू चरणौ न, नचापि चतुरा चञ्चुः वाच्यं वचः न, चतुरा लीला न, चतुरा गतिः न, अयं तव शुचिः पक्षग्रहः नः, क्रूर, मूर्ख, ध्वाङ्क्ष इह स्थाने क्रेङ्कृतिनिर्भरां गिरं वृथैव उद्गिरन् असदृशं पाण्डित्यम् उन्नाटयन् न लज्जसे ।

व्याख्या—चारू मनोज्ञौ । चरणौ पादौ न स्तः। चतुरा निपुणा चञ्चुः नास्ति । वाच्यं वचनयोग्यम् । वचः वाणी । नास्ति । चतुरा मनोहारिणी । लीला विलासादिकम् । नास्ति । चतुरा आकर्षिणी । गतिर्गमनम् । नास्ति । अयं तव । पक्षग्रहः पक्षस्थितिः । शुचिः उज्ज्वला । नास्ति । क्रूर कर्कश स्वर। मूर्ख मूढ । ध्वाङ्क्ष वायस इह अत्र स्थाने शाखायाम् । क्रेङ्कृतिनिर्भराम् क्रेंङ्कारशब्दबहुलाम । गिरं वाचम । वृथैव व्यर्थमेव । उदगिरन भाषमाणः ।

[illegible] अनुचितम् । पाण्डित्यं वैदुष्यम् । उद्घाटयन् प्रकटयन् । न लज्जसे न जिह्रेषि ।

तब राजा ने दो लाख रुपये दिये । उसी समय उस वटवृक्ष की शाखा पर 'काँय-काँय' की रट लगाये हुए कौए को और दूसरी शाखा पर कूँ-कूँ करती हुई मैना को देखकर देवजय कवि ने कहा—

मूर्ख काक ! न तेरे सुन्दर चरण हैं, न रम्य चोंच है; न रमणीय वचन हैं; न हृदयग्राहिणी लीला है; न आकर्षक गति है; न पंख ही उज्ज्वल हैं । वथा ही 'काँय-काँय' की रट से अनुचित चतुरता दिखाते हुए तुझे लज्जा नहीं आती क्या ?

तत एनां देवजयकविना काकमिषेण विरचितां स्वगर्हणां मन्यमानस्तत्स्पर्धालुर्हरिशर्मा नाम कविः कोपेनेर्ष्यापवं प्राह—

तुल्यवर्णच्छदः कृष्णः कोकिलैः सह संगतः ।
केन व्याख्यायते काकः स्वयं यदि न भाषते ॥२६६॥

ततः एनामिति । **Vocabulary** : गर्हणा—निन्दा, reproach मन्यमान—मानता हुआ, thinking. स्पर्धालु—ईर्ष्यालु, jealous. छद- पंख, feather. व्याख्यायते—जाना जाता है, can be dist guished.

Prose Order : तुल्यवर्णच्छदैः कोकिलैः सह सङ्गतः कृष्णः केन व्याख्यायते यदि स्वयं न भाषते ।

व्याख्या—तुल्यवर्णच्छदैः तुल्यः समानो [illegible] तुल्य समानरूपाः, तुल्यवर्णाः छदाः पक्षाणि येषां ते तु[illegible] कोकिलैः । सह सङ्गतः सहोषितः । कृष्णः कृष्ण[illegible] केन जनेन । व्याख्यायते वर्णितुं शक्यते । यदि चेत् स्व[illegible]

कौए को सम्बोधित करते हुए देवजय कवि ने इस [illegible] निन्दा की है—ऐसा समझकर ईर्ष्यालु हरिशर्मा कवि ने क्रो[illegible] वचन कहा—

कोयलों के बीच उनके सदृश रूप और पंखों से युक्त [illegible] पहचान सकेगा यदि वह स्वयं बोलेगा नहीं ।

ततो राजा [illegible]
[illegible]लंकारादिदानेन च [illegible] ।

[illegible] दृष्ट्वा तं प्राह—
'भवादृशानां दर्शनं [illegible] । भवतां क्व स्थितिः । भोजनार्थं के वा प्रार्थ्यन्ते' इति । ततः स राजवचनमाकर्ण्य तपोनिधिराह—

क्षितिरुहां
फलं स्वेच्छा[illegible] प्रतिवनमखेदं [illegible] पुण्यसरिताम् ।
पयः [illegible]यी
[illegible]लित[illegible]
[illegible]तुस्पर्शा [illegible]रि कृपणाः ॥२७०॥

[illegible]व्यधात—करा दी, effected.
[illegible]तपो[illegible]स्वी, an ascetic.
[illegible]tune.
[illegible]xertion. क्षितिरुह—वृक्ष,
[illegible]कोमल, tender. कृपण—
[illegible]ver.

[illegible]वनम् अखेदं स्वेच्छालभ्यम्; पुण्य-
[illegible]भ्यम्): सुललितलतापल्लवमयी
[illegible] धनिनां द्वारि सन्तापं सहन्ते ।
[illegible]म् । प्रतिवनं वनेवने । अखेदं
[illegible]लभ्यं प्राप्यम् । पुण्यसरिताम्—
[illegible]तलं च मधुरं चेति तथाभूतम् ।
[illegible]लभ्यमिति शेषः । सुललित-
[illegible]कोमला या लतास्तासां पल्लवैः
[illegible] तथाभूता । शय्या शयनम् ।
[illegible]म् । द्वारि । सन्तापं पराभि-

असदृशम् अनुचितम्। पाण्डित्यं वैदुष्यम्। उन्नाटयन् प्रकटयन्। न लज्जसे न जिह्रेषि।

तब राजा ने दो लाख रुपये दिये। उसी समय उस वटवृक्ष की शाखा पर 'काँय-काँय' की रट लगाये हुए कौए को और दूसरी शाखा पर कूँ-कूँ करती हुई मैना को देखकर देवजय कवि ने कहा—

मूर्ख काक! न तेरे सुन्दर चरण हैं, न रम्य चोंच है; न रमणीय वचन हैं; न हृदयग्राहिणी लीला है; न आकर्षक गति है; न पंख ही उज्ज्वल हैं। वृथा ही 'काँय-काँय' की रट से अनुचित चतुरता दिखाते हुए तुझे लज्जा नहीं आती क्या?

तत एनां देवजयकविना काकमिषेण विरचितां स्वगर्हणां मन्यमानस्तत्स्पर्धालुर्हरिशर्मा नाम कविः कोपेनेर्ष्यापूर्वं प्राह—

तुल्यवर्णच्छदः कृष्णः कोकिलैः सह संगतः।
केन व्याख्यायते काकः स्वयं यदि न भाषते ॥२६६॥

ततः एनामिति। **Vocabulary** : गर्हणा—निन्दा, reproach. मन्यमान—मानता हुआ, thinking. स्पर्धालु—ईर्ष्यालु, jealous. छद—पंख, feather. व्याख्यायते—जाना जाता है, can be distinguished.

Prose Order : तुल्यवर्णच्छदैः कोकिलैः सह सङ्गतः कृष्णः काकः केन व्याख्यायते यदि स्वयं न भाषते।

व्याख्या—तुल्यवर्णच्छदैः तुल्यः समानो वर्णो रूपं येषां ते तुल्यवर्णाः समानरूपाः, तुल्यवर्णाः छदाः पक्षाणि येषां ते तुल्यवर्णच्छदाः तैः तथाभूतैः। कोकिलैः। सह सङ्गतः सहोषितः। कृष्णः कृष्णवर्णः। काकः वायसः। केन जनेन। व्याख्यायते वर्णितुं शक्यते। यदि चेत् स्वयं न भाषते ब्रवीति।

कौए को सम्बोधित करते हुए देवजय कवि ने इस कविता द्वारा मेरी ही निन्दा की है–ऐसा समझकर ईर्ष्यालु हरिशर्मा कवि ने क्रोध तथा ईर्ष्या से पूर्ण वचन कहा—

कोयलों के बीच उनके सदृश रूप और पंखों से युक्त कौए को कौन पहचान सकेगा यदि वह स्वयं बोलेगा नहीं।

ततो राजा तयोर्ह्वरिशर्मदेवजययोरन्योन्यवैरं ज्ञात्वा मिथआलिङ्गनादिवस्त्रालंकारादिदानेन च मित्रत्वं व्यधात् ।

अन्यदा राजा यानमारुह्य गच्छन्मवर्त्मनि कंचित्तपोनिधिं दृष्ट्वा तं प्राह—'भवादृशानां दर्शनं भाग्यायत्तम् । भवतां क्व स्थितिः । भोजनार्थं के वा प्रार्थ्यन्ते' इति । ततः स राजवचनमाकर्ण्य तपोनिधिराह—

फलं स्वेच्छालभ्यं प्रतिवनमखेदं क्षितिरुहां
पयः स्थाने स्थाने शिशिरमधुरं पुण्यसरिताम् ।
मृदुस्पर्शा शय्या सुललितलतापल्लवमयी
सहन्ते संतापं तदपि धनिनां द्वारि कृपणाः ॥२७०॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : व्यधात्—करा दी, effected. यान—रथ । वर्त्मन्—मार्ग, road. तपोनिधि—तपस्वी, an ascetic. भाग्यायत्त—भाग्याधीन, resting on good fortune.

अखेदम्—विना श्रम के, without exertion. क्षितिरुह—वृक्ष, tree. सरित्—नदी, a river. सुललित—कोमल, tender. कृपण—दीन, the poor.

Prose Order : क्षितिरुहां फलं प्रतिवनम् अखेदं स्वेच्छालभ्यम्; पुण्यसरितां शिशिरमधुरं पयः स्थान स्थाने (लभ्यम्): सुललितलतापल्लवमयी मृदुस्पर्शा शय्या (लभ्या) । तदपि कृपणाः धनिनां द्वारि सन्तापं सहन्ते ।

व्याख्या—क्षितिरुहा वृक्षाणाम् । फलम् । प्रतिवनं वनेवने । अखेदं परिश्रमं विना । स्वेच्छालभ्यम्—स्वेच्छया लभ्यं प्राप्यम् । पुण्यसरिताम्—पवित्रनदीनाम् । शिशिरमधुरम्—शिशिरं शीतलं च मधुरं चेति तथाभूतम् । पयः सलिलम् । स्थाने स्थाने प्रतिस्थानम् । लभ्यमिति शेषः । सुललितलतापल्लवमयी शोभनं यथा स्यात् तथा ललिता कोमला या लतास्तासां पल्लवैः कोमलपत्रैर्युता । मृदुस्पर्शा मृदुःस्पर्शो यस्याः सा तथाभूता । शय्या शयनम् । तदपि तथापि । कृपणा दीनाः । धनिनां धनवताम् । द्वारि । सन्तापं पराभिभवदुःखम् । सहन्ते उद्वहन्ति ।

तब राजा ने हरिशर्मा और देवजय का परस्पर वैमनस्य समझकर वस्त्र, भषण आदि देकर उनकी मैत्री करा दी। एक बार राजा रथ पर बैठकर जा रहा था कि मार्ग में किसी तपस्वी को देखकर बोला--'आप-जैसों के दर्शन भाग्याधीन हैं। आप कहाँ रहते हैं और भोजन कहाँ से करते हैं ? तब उस तपस्वी ने राजा की बात सुनकर कहा—

वन-वन में वृक्षों के फल अनायास ही स्वेच्छापूर्वक मिल जाते हैं। पवित्र नदियों का शीतल मधुर जल स्थान-स्थान पर प्राप्य है। सुन्दर लताओं के कोमल पत्तों की बनी शय्या भी कोमल है, तो भी कृपण लोग धनियों के द्वार पर पड़े दुःख का सहन करते हैं।

राजन्, वयं कमपि नाभ्यर्थयामः न गृह्णीमश्च' इति। राजा तुष्टो नमति।

तत उत्तरदेशादागत्य कश्चिद्राजानं 'स्वस्ति' इत्याह। तं च राजापृच्छति —'विद्वन्, कुत्र ते स्थितिः' इति। विद्वानाह—

यत्राम्बु निन्दत्यमृतमन्त्यजाश्च सुरेश्वरान्।
चिन्तामणिश्च पाषाणास्तत्र नो वसतिः प्रभो ॥२७१॥

राजन्ति। **Vocabulary** : अभ्यर्थयामः—माँगते हैं, we beg. अम्बु–जल, water. अन्त्यज—चाण्डाल, low-caste people. सुरेश्वर—देवस्वामी इन्द्र, the lord of gods, i. e. Indra. चिन्तामणि—a fabulous desire-fulfilling gem. वसति—निवासस्थान—an abode.

Prose Order : यत्र अम्बु अमृतं निन्दति, अन्त्जाः च सुरेश्वराः; पाषाणाः चिन्तामणिः च; प्रभो ! तत्र नः वसतिः।

व्याख्या—यत्र यस्मिन् देशे। अम्बु जलम्। अमृतम् पीयूषम्। निन्दति अतिशेते इति भावः। अन्त्यजाः चाण्डालाः च। सुरेश्वराः इन्द्रतुल्याः। पाषाणाः शिलाः। चिन्तामणिः चिन्तामणय इव मनीषिततृप्तिकरा इत्यर्थः। प्रभो स्वामिन् ! नोऽस्माकम्। तत्र तस्मिन् देशे वसतिर्वासोऽस्तीति शेषः।

राजन्! हम किसी से किसी वस्तु के लिए प्रर्थना नहीं करते और न कुछ लते हैं। प्रसन्न होकर राजा ने प्रणाम किया। तब उत्तर देश से आकर

किसी ने राजा को आशीर्वाद दिया । उससे राजा ने पूछा—विद्वन् ! तुम कहाँ रहते हो ? विद्वान् ने कहा—

जहाँ जल अमृत को नीचा दिखाता है और जहाँ के नीच जातिवाले लोग भी इन्द्र की समता करते हैं । जहाँ पत्थर चिन्तामणि को भी लजाते हैं, प्रभो ! वही मेरा आवास-स्थान है ।

तदा राजा लक्षं दत्त्वा प्राह—'काशीदेशे का विशेषवार्त्ता' इति । स आह—'देव, इदानीं काचिदद्भुतवार्त्ता तत्र लोकमुखेन श्रुता—'देवा दुःखेन दीनाः' इति । राजा—'देवानां कुतो दुःखं विद्वन् ।' स चाह—

निवासः क्वाद्य नो दत्तो भोजेन कनकाचलः ।
इति व्यग्रधियो देवा भोज वार्तेति नूतना ॥२७२॥

तदा राजेति । **Vocabulary** : विशेषवार्त्ता, special news. कनकाचल—सुवर्णपर्वत सुमेरु, the mountain of gold i.e. Sumeru. व्यग्रधी—व्याकुल बुद्धिवाला, perturbed in mind.

Prose Order : अद्य भोजेन नः निवासः कनकाचलः क्व दत्तः इति देवा व्यग्रधियः । भोज ! इति वार्त्ता नूतना ।

व्याख्या—अद्य भोजेन राज्ञा । नोऽस्माकम् । निवासो निवासस्थानम् । कनकाचलः सुवर्णगिरिः सुमेरुः क्व कुत्र, कस्मै ब्राह्मणाय याचकाय वा, दत्तः वितीर्णः । इत्येवम् । व्यग्रधियः व्याकुलमनाः देवाः सन्ति : इतीयम् । नूतना नवा । वार्त्ता वृत्तान्तः ।

तब राजा ने उसे एक लाख रुपये देकर कहा—काशी की हलचल का कुछ बखान करो । उसने कहा—देव ! अब एक अद्भुत बात वहाँ मनुष्यों से सुनी है कि देवता दुःख से व्याकुल हैं । राजा ने पूछा—विद्वन् ! देवताओं को कहाँ से दुःख हुआ है ? उसने कहा—

भोज ने सुमेरु पर्वत दान कर दिया तो अब हम कहाँ जाकर रहेंगे इस प्रकार भोजराज ! देवगण व्याकुल हो रहे हैं । यह नई बात है ।

ततो राजा कुतूहलोक्त्या तुष्टः संस्तस्मै पुनर्लक्षं ददौ ।

ततो द्वारपालः प्राह--देव, श्रीशैलादागतः कश्चिद्विद्वान्ब्रह्मचर्यनिष्ठो द्वारि वर्तते' इति। राजा—'प्रवेशय' इत्याह। तत आगत्य ब्रह्मचारी 'चिरं जीव' इति वदति। राजा तं पृच्छति-'ब्रह्मन्, बाल्य एव कलिकालाननुरूपं किं नाम व्रतं ते? अन्वहमुपवासेन कृशोऽसि। कस्यचिद् ब्राह्मणस्य कन्यां तुभ्यं दापयिष्यामि, त्वं चेद्गृहस्थधर्ममङ्गीकरिष्यसि' इति। ब्रह्मचारी प्राह-- 'देव, त्वमीश्वरः। त्वया किमसाध्यम्।

सारङ्गा सुहृदो गृहं गिरिगुहा शांतिः प्रिया गेहिनी
वृत्तिर्वन्यलताफलैर्निवसनं श्रेष्ठं तरूणां त्वचः।
त्वद्ध्यानामृतपूरमग्नमनसां येषामियं निर्वृत्ति--
स्तेषामिन्दुकलावतंसयमिनां मोक्षेऽपि नो न स्पृहा ॥२७३॥

ततो राजेति। **Vocabulary** : कुतूहल—आश्चर्य, wonder. श्रीशैल-श्रीपर्वत, shri's mountain. ब्रह्मचर्यनिष्ठ-Vowed to live a celibate life. अननुरूप--अननुकूल, not in consonance with. अन्वहम् - प्रतिदिन, every day. दापयिष्यामि—दिला दूँगा।

सारङ्ग—हरिण, fawn. सुहृद्—मित्र। गेहिनी—गृहिणी, mistress. वृत्ति-आजीविका, sustenance. निवसन-वस्त्र, garb. त्वच्-छाल, bark. पूर—बाढ़, flood. निर्वृत्ति—सन्तोष, contentment. इन्दुकलावतंस— चन्द्रमा को धारण करनेवाले शिव, the moon-crested god Shiva. मोक्ष—emancipation from birth

Prose Order : सारङ्गाः सुहृदः, गिरिगुहा गृहम्, प्रिया गेहिनी शांतिः, वल्लिलताफलैः वृत्तिः, तरूणां त्वचः श्रेष्ठं निवसनम्, त्वद्ध्यानामृतपूर-मग्न-मनसां येषाम् इयं निर्वृत्तिः इन्दुकलावतंसयमिनां तेषां नः मोक्षे अपि स्पृहा नो।

व्याख्या—सारङ्गा हरिणाः। सुहृदः मित्राणि। गिरिगुहा—गिरीणां पर्वतानां गुहाः गह्वराणि। गृहम् आवासस्थानम्। प्रिया गेहिनी प्रियगृहिणी शान्तिः। वल्लिलताफलैः—वल्लयः, लताः, फलानि च वल्लिलताफलानि तैः। वृत्तिः उदरपूरणम्। तरूणां वृक्षाणाम्। त्वचः। श्रेष्ठं निवसनम् उत्तमं वस्त्रम्।

त्वद्ध्यानामृतपूरमग्नमनसाम्—तव ध्यानं त्वद्ध्यानम्, तदेव अमृतपूरः पीयूषसरः तस्मिन् मग्नं मनो हृदयं येषाम् । तेषाम् । इयं पूर्वोक्तप्रकारा। निर्वृत्तिः सन्तोषसुखम् । इन्दुकलावतंसयमिनाम् इन्दोश्चन्द्रस्य कला इन्दुकला सा अवतंसः कर्णभूषणं यस्य स इन्दुकलावतंसः शिवः तस्मिन् यमः नियमो येषाम् । तेषां नोऽस्माकम् । मोक्षेऽपि मुक्तावपि । स्पृहा इच्छा । नो नैवास्ति ।

तब राजा न इस कौतुकपूर्ण उक्ति से प्रसन्न होकर उसे फिर एक लाख रुपय दिये। तब द्वारपाल ने आकर कहा—देव ! श्रीशैल से आकर एक विद्वान् ब्रह्मचारी द्वार पर खड़ा है। राजा ने कहा—उसे भीतर भेजो। तब ब्रह्मचारी ने आकर आशीर्वाद दिया। राजा ने उससे पूछा—ब्रह्मन् ! बाल्यावस्था में ही कौन-सा तुमने कलियुग के प्रतिकूल व्रत-पालन किया है, जो तुम प्रतिदिन उपवास से दुर्बल हो रहे हो । यदि तुम गृहस्थ-धर्म का पालन करना चाहो तो किसी ब्राह्मण की कन्या से तुम्हारा विवाह करा दें । ब्रह्मचारी ने कहा—देव ! आप स्वामी हैं । आपके लिए क्या असाध्य है । किन्तु ।

मग हमारे मित्र हैं । पर्वत की गुफा हमारा घर है । शांति हमारी प्रिया स्त्री है । अग्नि, लता और फल के द्वारा हमारी आजीविका चलती है । वक्ष की त्वचाएँ हमारे उत्तम वस्त्र हैं। आपके ध्यान-रूपी अमृत-सागर में मग्न मनवाले जिन प्राणियों को यह परमानन्द प्राप्त है, शशिमौलि शिव का व्रत-नियम-पालन करनेवाले हमारे-जैसे उन व्यक्तियों को मोक्ष में भी अभिलाषा नहीं होती।

राजोत्थाय पादयोः पतति । प्राह च—'ब्रह्मन, मया किं कर्त्तव्यम्' इति । स आह—'देव, वयं काशीं जिगमिषवः । तत एवं विधेहि । ये त्वत्सदने पण्डितवरास्तान्सर्वानपि सपत्नीकान्काशीं प्रति प्रेषय । ततोऽहं गोष्ठीतृप्तः काशीं गमिष्यामि' इति । राजा तथा चक्रे । ततः सर्वे पण्डितवरास्तदाज्ञया प्रस्थिताः । कालिदास एको न गच्छति स्म । तदा राजा कालिदासं प्राह—'सुकवे, त्वं कुतो न गतोऽसि' इति । ततः कालिदासो राजानं प्राह—'देव, सर्वज्ञोऽसि ।

ते यान्ति तीर्थेषु बुधा ये शंभोर्दूरवर्तिनः ।
यस्य गौरीश्वरश्चित्ते तीर्थं भोज परं हि सः ॥२७४॥

राजेति । **Vocabulary** : जिगमिषवः—जाने की इच्छावाले, desirous of going. विधेहि—कीजिए । गोष्ठी—वार्तालाप । गौरीश्वर—शिव ।

Prose Order : ये बुधाः शम्भोः दूरवर्तिनः ते तीर्थेषु यान्ति । भोज ! यस्य हि चित्ते गौरीश्वरः स परं तीर्थम् ।

व्याख्या—ये बुधा विद्वांसः । शम्भोः शिवस्य । दूरवर्तिनः विप्रकृष्टवासिनः तदाराधनविमुखा इत्यर्थः । ते तीर्थेषु शिवदर्शनाय । यान्ति गच्छन्ति । भोज ! यस्य विदुषः । चित्ते मनसि । गौरीश्वरः पार्वतीपतिः । सः । परं परमम् । तीर्थम् पवित्रस्थानम्, तत्र मनस्येव शिवदर्शनादिति भावः ।

राजा उठकर चरणों में पड़े और बोले—ब्रह्मन् ! कहिए, मैं क्या करूँ ? उसने कहा—देव ! काशी जाने को मन चाहता है । आप एक काम कीजिए । आपके यहाँ जो श्रेष्ठ विद्वान् हैं उन सबको पत्नी-सहित काशी भेजिए । मैं उनके साथ काशी को जाऊँगा । सभी श्रेष्ठ पण्डित राजा की आज्ञा से काशी को चल पड़े, केवल कालिदास नहीं गये । तब राजा ने कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ ! तुम क्यों नहीं गये ? कालिदास ने उत्तर दिया—देव ! आप तो सर्वज्ञ हैं ।

जो विद्वान् शिव से दूर रहते हैं, वे तीर्थों को जाते हैं । जिनके मन में शिव विराजमान हैं, वे स्वयं ही उत्तम तीर्थ हैं ।

ततो विद्वत्सु काशीं गतेषु राजा कदाचित्सभायां कालिदासं पृच्छति स्म—'कालिदास, अद्य किमपि श्रुतं किं त्वया' इति । स आह—

मेरौ मन्दरकन्दरासु हिमवत्सानौ महेन्द्राचले
कैलासस्य शिलातलेषु मलयप्राग्भारभागेष्वपि ।
सह्याद्रावपि तेषु तेषु बहुशो भोज श्रुतं ते मया
लोकालोकविचारचारणगणैरुद्गीयमानं यशः ॥२७५॥

ततो विद्वत्स्विवति । **Vocabulary** : मेरु—a mountain. मन्दर—पवत । कन्दरा—गुहा, a cave. हिमवत्—हिमालय । सानु—शिखर, a peak. महेन्द्राचल—महेन्द्रपर्वत । प्राग्भारभाग—the peak. सह्याद्रि—सह्य पवत । बहुश:—अनेक बार । लोकालोक—पर्वत । चारण—bard, भाट । उद्गीयमान—being sung.

Prose Order: भोज ! मेरौ मन्दरकन्दरासु हिमवत्सानौ महेन्द्राचले कैलासस्य शिलातलेषु मलयप्राग्भारभागेषु अपि सह्याद्रौ अपि तेषु तेषु मया लोकालोकविचारचारणगणैः उद्गीयमानं ते यशः बहुशः श्रुतम् ।

व्याख्या—भोज भोजराज ! मेरौ पर्वते । मन्दरकन्दरासु मन्दरस्य तदाख्यस्य पर्वतस्य । कन्दरासु गुहासु । हिमवत्सानौ हिमवतः हिमालयस्य सानौ शिखरे । महेन्द्राचले महेन्द्रपर्वते । कैलासस्य तदाख्यस्य गिरेः । शिलातलेषु शिलासु । मलयप्राग्भारभागेषु—मलयः मलयाचलः तस्य प्राग्भारः शिखरं तस्य भागः प्रदेशः तेषु । सह्याद्रौ सह्यपर्वते । तेषु तेषु स्थानेषु । लोकालोकविचारचारणगणैः—लोकालोकः तदाख्यः पर्वतः तत्र विचारो विचरणं येषां ते तथाभूता ये चारणानां गणास्तैः । उद्गीयमानं वीणावाद्यकलया मधुरस्वरकण्ठेनोदीर्यमाणम् । ते तव । यशः कीर्त्तिः । बहुशोऽनेकवारम् । मया । श्रुतं श्रुतिपथं नीतम् ।

जब विद्वान् काशी को चल दिये, तब एक दिन पत्नी के साथ बैठे हुए राजा ने कालिदास से पूछा—कालिदास ! क्या आज तुमने कुछ सुना है ? कालिदास ने कहा—

भोज ! मैंने मेरुपर्वत पर, मन्दराचल की गुफाओं में, हिमालय के शिखर पर, महेन्द्रगिरि पर, कैलास की शिलाओं पर, मलयाचल के पूर्ववर्त्ती भागों पर, सह्याद्रि में भी तथा लोकालोक पर्वत पर सञ्चरणशील भाटों के मुख से तुम्हारा यशगान सुना है ।

ततश्चमत्कृतो राजा प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कदाचिद्राजा विद्वद्वृन्दं निर्गतं कालिदासं चानवरतवेश्यालम्पटं ज्ञात्वा व्यचिन्तयत्—'अहह, बाणमयूरप्रभृतयो मदीयामाज्ञां व्यदधुः । अयं च वेश्या-

लम्पटतया ममाज्ञां नाद्रियते । किं कुर्मः' इति । ततो राजा सावज्ञं कालिदासमपश्यत् । तत आत्मनि राज्ञोऽवज्ञां ज्ञात्वा कालिदासो बल्लालदेशं गत्वा तद्देशाधिनाथं प्राप्य प्राह—'देव, मालवेन्द्रस्य भोजस्यावज्ञया त्वद्देशं प्राप्तोऽहं कालिदासनामा कविः' इति । ततो राजा तमासन उपवेश्य प्राह—'सुकवे, भोजसभाया इहागतैः पण्डितैः समुदितः शतशस्ते महिमा । सुकवे, त्वां सरस्वतीं वदन्ति । ततः किमपि पठ', इति । ततः कालिदास आह—

बल्लालक्षोणिपाल त्वदहितनगरे सञ्चरन्ती किराती
कीर्णान्यादाय रत्नान्युरुतरखदिराङ्गारशङ्काकुलाङ्गी ।
क्षिप्त्वा श्रीखण्डखण्डं तदुपरि मुकुलीभूतनेत्रा धमन्ती
श्वासामोदानुयातैर्मधुकरनिकरैर्धूमशङ्कां बिभर्ति ॥२७६॥

तत इति । **Vocabulary** : लम्पट—आसक्त, entirely devoted. अवज्ञा—निरादर, ill-treatment. समुदित—वर्णित, described. अहित—शत्रु, foe. सञ्चरन्ती—घूमती हुई, roaming. किराती—भीलनी । कीर्ण—बिखरे हुए, scattered. उरुतर—बड़े । खदिर—खैर नाम की लकड़ी, acacia wood. अङ्गार—charcoal. श्रीखण्ड—चन्दन, sandal wood. धमन्ती—श्वासित करती हुई, blowing. आमोद—सुगन्ध, fragrance. अनुपात—झकोर । निकर—समूह ।

Prose Order : बल्लालक्षोणीपाल त्वदहितनगरे सञ्चरन्ती किराती कीर्णानि रत्नानि आदाय उरुतरखदिराङ्गारशङ्काकुलाङ्गी तदुपरि श्रीखण्डखण्डं क्षिप्त्वा मुकुलीभूतनेत्रा श्वासामोदानुपातैः धमन्ती मधुकरनिकरैः धूमशङ्कां बिभर्ति ।

व्याख्या—बल्लालक्षोणीपाल बल्लालभूपते ! त्वदहितनगरे त्वच्छत्रुपुरे । सञ्चरन्ती भ्रमन्ती । किराती किरातयोषित् । कीर्णानि इतस्ततो विस्तीर्णानि । रत्नानि मणीन् । आदाय गृहीत्वा । उरुतरखदिराङ्गारशङ्काकुलाङ्गी उरुतरो महान् यः खदिरस्य अङ्गारस्तस्य शङ्कया भ्रमेण आकुलानि अङ्गानि यस्याः सा । तदुपरि कीर्णेषु रत्नेषु । श्रीखण्डखण्डं श्रीखण्डस्य चन्दनस्य खण्डं लवम् । क्षिप्त्वा विकीर्य । मुकुलीभूतनेत्रा निमीलितलोचना । श्वासामो-

दानुपातैः श्वासानाम् आमोदः गन्धः तस्य अनुपातैः उद्गारैः धमन्ती फूत्कुर्वाणा । मधुकरनिकरैः भ्रमरसमूहैः । धूमशङ्कां धूमाभासम्। बिर्भात तनोति।

तब चमत्कृत होकर राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । फिर कभी राजा सोचने लगे कि विद्वान् तो चले गये हैं और कालिदास सदा वेश्या से लिपटे हुए हैं । शोक की बात है कि बाण, मयूर आदि तो मेरी आज्ञा मानते थे, किन्तु वेश्या के वशीभूत होकर कालिदास मेरी आज्ञा का पालन नहीं करता । क्या किया जाय ? तब राजा ने अवज्ञापूर्वक कालिदास को देखा । तब राजा द्वारा अपना अपमान समझकर कालिदास बल्लाल देश को गया । बल्लाल देश के राजा के समीप पहुँचकर बोला—देव ! मालव-नरेश भोज से अपमानित होकर मैं आपके देश को आया हूँ । मेरा नाम कालिदास है । राजा ने उसे आसन पर बिठाकर कहा—कविश्रेष्ठ! भोज की सभा से यहाँ आये हुए पण्डितों ने कई बार तुम्हारी प्रशंसा की है। कविश्रेष्ठ! तुझे सरस्वती का अवतार कहते हैं सो तुम कोई कविता सुनाओ। तब कालिदास ने कहा—

बल्लाल-नरेश ! आपके शत्रुओं के नगर में घूमती हुई भीलनी बिखरे हुए रत्नों को लेकर उन्हें खैर लकड़ी के बड़े अंगार समझकर भय से व्याकुल होकर उनपर चन्दन के खंड को फेंककर आँखों को मीच जब श्वास लेने लगी तब श्वास की सुगन्ध से जो भ्रमर आकर्षित हुए, उन्हें अग्नि से उत्थित धुआँ समझने लगी ।

ततस्तस्मै प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ ।

ततः कदाचिद्बल्लालराजा कालिदासं पप्रच्छ—'सुकवे, एकशिलानगरीं व्यावर्णय' इति । ततः कविराह—

अपाङ्गपातैरपदेशपूर्वै-
रेणीदृशामेकशिलानगर्याम् ।
वीथीषु वीथीषु विनापराधं
पदे पदे शृङ्खलिता युवानः ॥२७७॥

ततस्तस्मै इति । **Vocabulary** : अपाङ्गपात—कटाक्षपात, the side-glance. अपदेशपूर्व—अर्थपूर्ण, significant. एणीदृश—मृगनयनी, the fawn-eyed lady. वीथी—गली, street. शृङ्खलित—साँकलों में बँधा हुआ, held by iron-fetter.

Prose Order : एकशिलानगर्याम् युवानः एणीदृशाम् अपदेशपूर्वः अपाङ्गपातैः वीथीषु पदे पदे अपराधं विना शृङ्खलिताः ।

व्याख्या—एकशिलानगर्याम् —एकशिला चासौ नगरी एकशिलानगरी तस्याम् । युवानः यौवनावस्थिताः पुरुषाः, तरुणाः ।

एणीदृशां मृगलोचनानाम् । अपदेशपूर्वैः अभिप्रायगर्भितैः । अपाङ्गपातैः कटाक्षनिरीक्षणैः । वीथीषु रथ्यासु । पदे पदे प्रतिपदम् । अपराधं विना अपराधमन्तरेण । शृङ्खलिताः सन्दानिताः ।

तब राजा ने उसे एक-एक लाख रुपये दिये। तब कभी बल्लाल देश के राजा ने कालिदास से पूछा—कविश्रेष्ठ! एकशिलानगरी का वर्णन करो। तब कवि ने कहा—

मृगनयनी स्त्रियों के उपेक्षागर्भित कटाक्षों से जिस एकशिला नगरी में युवक गलियों में पद-पद पर अपराध के बिना ही साँकलों में बँध गये।

पुनश्च प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ । पुनश्च पठति कविः—

अम्भोजपत्रायतलोचनाना-
मम्भोधिदीर्घास्विह दीर्घिकासु ।
समागतानां कुटिलैरपाङ्गै-
रनङ्गबाणैः प्रहता युवानः ॥२७८॥

पुनश्चेति । **Vocabulary** : आयत—दीर्घ, long. अम्भोधि—समुद्र, ocean. दीर्घिका—वापी, a pond. कुटिल—मुड़े हुए, cast sideways. अनङ्ग—काम, the bodiless god of love.

Prose Order : इह अम्भोधिदीर्घासु दीर्घिकासु समागतानाम् अम्भोजपत्रायतलोचनानां कुटिलैः अपाङ्गैः अनङ्गबाणैः युवानः प्रहताः ।

व्याख्या—इह अत्र । अम्भोधिदीर्घासु—अम्भोधिः सागरः तद्वद् दीर्घासु विशालासु । दीर्घिकासु—वापीषु । समागतानां प्राप्तानाम् । अम्भोजपत्रायत-लोचनानाम्—अम्भोजस्य सरोजस्य पत्राणि अम्भोजपत्राणि कमलपत्राणि तद्वद् आयते दीर्घे लोचने नेत्रे यासां तासाम् । कुटिलैः वक्रैः । अपाङ्गैः नेत्रान्त-निरीक्षणैः । अनङ्गबाणैः कामशरैः । युवानः यौवनपदमारूढाः कामिजनाः प्रहृतास्ताडिताः ।

फिर भी प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । कवि ने फिर पढ़ा—

इस एकशिला नगरी में समुद्र के समान बावड़ियों में आई हुई तथा कमल-पत्र के समान विराजमान विशाल नेत्रोंवाली स्त्रियों के कुटिल कटाक्ष-रूपी कामबाणों से युवक आहत होते हैं ।

पुनश्च बल्लालनृपः प्रत्यक्षरं लक्षं ददौ । एवं तत्रैव स्थितः कालिदासः ।

अत्रान्तरे धारानगर्यां भोजं प्राप्य द्वारपालः प्राह—'देव, गुर्जरदेशान्माघनामा पण्डितवर आगत्य नगराद्बहिरास्ते । तेन च स्वपत्नी राजद्वारि प्रेषिता ।' राजा—'तां प्रवेशय' इत्याह । ततो माघपत्नी प्रवेशिता । सा राजहस्ते पत्रं प्रायच्छत् राजा । तदादाय वाचयति—

कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजषण्डं
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः ।
उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं
हतविधिलसितानां ही विचित्रो विपाकः ॥२७६॥

पुनश्चेति । Vocabulary : कुमुद—the night-lotus. अपश्रि—शोभा-रहित, devoid of lustre. श्रीमत्—full of glory. अम्भोजषण्ड—the group of day-lotuses. मुद—हर्ष, pleasure. उलूकः—the owl. चक्रवाक—चकवा, the ruddy goose. अहिमरश्मि—सूर्य, the hot-rayed sun. शीतांशु—चन्द्रमा, the cool-rayed moon. हत—दुष्ट, the wicked. विधि—दैव, भाग्य । लसित—नचाये हुए, made playthings of. ही—आश्चर्य-बोधक अव्यय । विचित्र—mysterious. विपाक—परिणाम, the result.

Prose Order : कुमुदवनम् अपश्रि, अम्भोजषण्डं श्रीमत्, उलूकः मुदं त्यजति, चक्रवाकः प्रीतिमान् । अहिमरश्मिः उदयं याति । शीतांशुः अस्तं याति । ही हतविधिलसितानां विपाकः विचित्रः ।

व्याख्या—कुमुदवनम्—कुमुदानां वनम् । अपश्रि अपगतशोभं जातम् । अम्भोजषण्डं कमलसमूहः । श्रीमत् शोभायुतं सम्पन्नम् । उलूकः कौशिकः । मुदं हर्षम् । त्यजति जहाति । चक्रवाकः रथाङ्गः । प्रीतिमान् प्रीतियुक्तः । अहिमरश्मिः सूर्यः । उदयं याति उदेति । शीतांशुः चन्द्रः । अस्तं याति अस्तमेति । हीत्याश्चर्ये । हतविधिलसितानाम्—हतो दुष्टो यो विधिर्दैवम्, तेन लसिताः नर्तिताः तेषाम् । विपाकः परिणामः, फलम् । विचित्रः अद्भुतः ।

फिर बल्लाल-देश के राजा ने प्रतिवर्ण एक-एक लाख रुपये दिये । इस प्रकार कालिदास वहीं रहने लगे ।

इस बीच में धारा नगरी में भोज के पास आकर द्वारपाल ने कहा—देव ! गुर्जर (गुजरात) देश से पण्डितश्रेष्ठ माघकवि आकर नगर के बाहर विराजमान हैं । उन्होंने अपनी पत्नी को भेजा है। वह द्वार पर खड़ी है। राजा ने कहा—उसे भीतर भेजो । तब माघ की स्त्री को भीतर लाया गया। उसने राजा के हाथ में पत्र दिया । राजा ने उसे लेकर पढ़ा—

कुमुद शोभाविहीन हो गये । कमलों में शोभा आ गई । उल्लुओं का आनन्द विलुप्त हो गया । चक्रवाक प्रसन्न हो गये । सूर्य उदित और चन्द्रमा अस्त हुए । दुष्ट दैव से ग्रस्त प्राणियों का कर्मफल विचित्र ही है।

इति । राजा तदद्भुतं प्रभातवर्णनमाकर्ण्य लक्षत्रयं दत्वा माघपत्नीमाह—'मातः, इदं भोजनाय दीयते । प्रातरहं माघपण्डितमागत्य नमस्कृत्य पूर्णमनोरथं करिष्यामि' इति । ततः सा तदादाय गच्छन्ती याचकानां मुखात्स्वभर्तुः शारदचन्द्रकिरणगौरान्गुणाञ्श्रुत्वा तेभ्य एव धनमखिलं भोजदत्तं दत्तवती । माघपण्डितं स्वभर्तारमासाद्य प्राह—'नाथ, राज्ञा भोजेनाहं बहुमानिता । धनं सर्वं याचकेभ्यस्त्वद्गुणानाकर्ण्य दत्तवती ।' माघः प्राह—'देवि, साधु कृतम् । परमेते याचकाः समायान्ति किल । तेभ्यः किं देयम्' इति ततो माघपण्डितं वस्त्रावशेषं ज्ञात्वा कोऽप्यर्थी प्राह—

आश्वास्य पर्वतकुलं तपनोष्णतप्त-
मुद्दामदावविधुराणि च काननानि ।
नानानदीनदशतानि च पूरयित्वा
रिक्तोऽसि यज्जलद सैव तवोत्तमश्रीः ॥२८०॥

इति राजेति । **Vocabulary** : शारद—शरद् ऋतु के, autumnal. आश्वास्य—धैर्य बँधाकर, having cheered up. पर्वतकुल—the ranges of the mountain. तपन—सूर्य, the sun. उद्दाम—प्रचण्ड, fiery. दाव—वनाग्नि, conflagration. विधुर—जले हुए, consumed. कानन—forest. रिक्त—शून्य, empty. जलद—मेघ । उत्तमश्री—उत्तम शोभा, glorious excellence.

Prose Order : जलद ! तपनोष्मतप्तं पर्वतकुलम् आश्वास्य, उद्दामदावविधुराणि काननानि च आश्वास्य, नानानदीनदशतानि च पूरयित्वा यत् रिक्तः असि तव सैव उत्तमश्रीः ।

व्याख्या—तपनोष्णतप्तम्—तपनः सूर्यः तस्य उष्मणा आतपेन तप्तम् । पर्वतकुलं गिरिसमूहम् । आश्वास्य सान्त्वयित्वा । उद्दामदावविधुराणि—उद्दामः उत्कटः यो दावो दावानलस्तेन विधुराणि दग्धानि । काननानि वनानि च । आश्वास्य जलवितरणेन पुनर्नवीकृत्य । नानानदीनदशतानि नाना बह्व्यः नद्यः नदाश्च तेषां शतं तानि । पूरयित्वा जलेनापूर्य । यत् । त्वम् । रिक्तः जलशून्यः जातोऽसि । तव । सैव । उत्तमश्रीः श्लाघ्या शोभा नान्येत्यर्थः।

राजा ने पत्रांकित प्रभातवर्णन को सुनकर माघ की पत्नी को तीन लाख रुपये देकर कहा—'माता ! ये रुपये आपको भोजन के लिए दिये हैं, प्रातःकाल में स्वयं माघपण्डित के सामने उपस्थित होकर प्रणामपूर्वक उन्हें कृतकृत्य करूँगा ।'

तब वह धन लेकर चली । जब मार्ग में उसने याचकों के मुख से अपने पति के शरद्-ऋतु के चन्द्रमा की किरणों के समान निर्मल गुणों को सुना तब उन्हें भोज से प्राप्त समस्त धन अर्पण किया । अपने पति पण्डित माघ के पास पहुँचकर कहने लगी—स्वामिन् ! राजा भोज ने मेरा बड़ा सम्मान

किया था, किन्तु याचकों के मुख से आपके गुणों को सुनकर मैंने समग्र धन याचकों को अर्पण कर दिया है। माघ ने कहा—देवी ! तुमने ठीक ही किया है, किन्तु ये जो अन्य याचक आ रहे हैं, उन्हें क्या दिया जाय ?

'माघ पण्डित के पास वस्त्र ही शेष रहे हैं'—ऐसा जानकर एक याचक ने कहा—

सूर्य के तीव्र आतप से तप्त पर्वतों को तथा उत्कट दावानल से दग्ध वनों को शान्त करके, अनेक नदी-नालों को जल से भरकर हे मेघ, जो तुम जलशून्य हुए उसी से तुम्हारी शोभा बढ़ी है।

इत्येतदाकर्ण्य माघः स्वपत्नीमाह—'देवि,

अर्था न सन्ति न च मुञ्चति मां दुराशा
त्यागे रतिं वहति दुर्ललितं मनो मे ।
याच्ञा च लाघवकरी स्ववधे च पापं
प्राणाः स्वयं व्रजत किं परिदेवनेन ॥२८१॥

इत्येतदिति । **Vocabulary** : दुराशा—the wretched hope. दुर्ललित—हठी, the wayward. याच्ञा—begging. लाघवकरी—गौरव को नष्ट करनेवाली, leading to disgrace. स्ववध—आत्महत्या, suicide. परिदेवन—विलाप, lamentation.

Prose Order : अर्थाः न सन्ति, मां दुराशा न च मुञ्चति, मे दुर्ललितं मनः त्यागे रतिं वहति । याच्ञा च लाघवकरी, स्ववधे च पापम्, प्राणाः स्वयं व्रजत परिदेवनेन किम् ।

व्याख्या—अर्थाः धनानि । न सन्ति न विद्यन्ते । दुराशा दुःखासिका । मां न मुञ्चति न त्यजति । मे मम । दुर्ललितं साग्रहम् । मनः चित्तम् । त्यागे दाने । रतिं वहति रमते । याच्ञा भैक्षम् । लाघवकरी लघुत्वापादकम् । स्ववधे आत्महत्यायाम् । पापम् । प्राणाः जीवितम् । स्वयम् आत्मनैव । व्रजत गच्छत । परिदेवनेन विलापेन । किं प्रयोजनम् ।

यह सुनकर माघ ने अपनी स्त्री से कहा—देवी !

धन नहीं है, तभी तो दुष्ट आशा चिपकी है। हठीला मन त्याग में रुचि रखता है। याचना से मान-प्रतिष्ठा चली जाती है। आत्महत्या पाप है। प्राण-पखेरू स्वयं ही उड़ जायँ तो अच्छा होगा। विलाप से कुछ लाभ नहीं।

दारिद्र्यानलसंतापः शान्तः संतोषवारिणा ॥
याचकाशाविघातान्तर्दाहः केनोपशाम्यति ॥२८२॥

दारिद्र्येति । **Vocabulary** : विघात—भंग, break. अन्तर्दाह—आन्तरिक दाह, the heart's burning. उपशाम्यति—शान्त होता है, is allayed.

Prose Order : दारिद्र्यानलसन्तापः सन्तोषवारिणा शान्तः । याचकाशाविघातान्तर्दाहः केन उपशाम्यति ?

व्याख्या—दारिद्र्यानलसन्तापः दरिद्रस्य भावः दारिद्र्यम्, दारिद्र्यमेव अनलोऽग्निः तस्य सन्तापः उष्मा । सन्तोषवारिणा सन्तोषजलेन । शान्तः शमं नीतः । परम् । याचकाशाविघातान्तर्दाहः—याचकानाम् आशा याचकाशा तस्या विघातो भङ्गस्तेन योऽन्तर्दाहोऽन्तर्ज्वलनम् । सः । केनोपायेन । उपशाम्यति शान्तिं गच्छति ।

निर्धनता की अग्नि का सन्ताप सन्तोष-जल से शांत हो जाता है, किन्तु याचकों की आशा पूर्ण न होने से उत्पन्न मानसिक सन्ताप कैसे शांत हो सकता है ?

इति । ततस्तदा माघपण्डितस्य तामवस्थां विलोक्य सर्वे याचका यथास्थानं जग्मुः । एवं तेषु याचकेषु यथायथं गच्छत्सु माघः प्राह—

व्रजत व्रजत प्राणा अर्थिभिर्व्यर्थतां गतैः ।
पश्चादपि च गन्तव्यं क्व सोऽर्थः पुनरीदृशः ॥२८३॥

ततस्तदेति । **Vocabulary** : अवस्था—condition. अर्थ—प्रयोजन, use.

Prose Order : अर्थिभिः व्यर्थतां गतैः प्राणा व्रजत । पश्चाद् अपि च गन्तव्यम्, पुनरीदृशः सोऽर्थः क्व ?

व्याख्या—अर्थिभिर्याचकैः । व्यर्थतां गतैः निराशैः निवृत्तैः । प्राणा जीवितम् । व्रजत गच्छत । जीवितेन तु पश्चादपि गन्तव्यमेव । पुनरीदृशः एवं—विधः । सोऽर्थः याचकागमनरूपः । क्व, न क्वापीति भावः । याचकास्तु न पुनः पुनरागच्छन्ति ।

फिर माघ पण्डित की वह दशा देख सभी याचक अपने-अपने घर चल दिये । इस प्रकार जब वे याचक अपने-अपने घरों को चले गये, तब माघ ने कहा—

जब याचक हताश होकर चले गये तब प्राणों से क्या लाभ ? प्राण तो पीछे भी जायेंगे ही, किन्तु याचक तो बार-बार नहीं आते ।

इति विलपन्माघपण्डितः परलोकमगात् । ततो माघपत्नी स्वामिनि परलोकं गते सति प्राह—

सेवन्ते स्म गृहं यस्य दासवद्भूभुजः सदा ।
स स्वभार्यासहायोऽयं म्रियते माघपण्डितः ॥२८४॥

इति विलपन्निति । **Vocabulary** : भूभुज्—राजा, king.

Prose Order : यस्य गृहं सदा भूभुजः दासवद् सेवन्तेस्म सः अयम् स्वभार्यासहायः माघपण्डितः म्रियते ।

व्याख्या—यस्य गृहं भवनम् । सदा नित्यम् । भूभुजो राजानः । दासवद् अनुचरवत् । सेवन्तेस्म । सोऽयम् । स्वभार्यासहायः स्वपत्नीसहायः । माघ-पण्डितः । म्रियते पञ्चत्वं गच्छति ।

इस प्रकार विलाप करते हुए पण्डित माघ स्वर्गलोक को सिधारे । जब पति परलोकवासी हुए तब माघ की पत्नी ने कहा—

जिसके घर को राजा दास के समान सेवन करते थे, अपनी भार्या के सहायभूत वही पण्डित माघ मृत्यु को प्राप्त हुए ।

ततो राजा माघं विपन्नं ज्ञात्वा निजनगराद्विप्रशतावृतो मौनी रात्रावेव तत्रागात् । ततो माघपत्नी राजानं वीक्ष्य प्राह—'राजन्, यतः पण्डितवरस्त्वद्देशं प्राप्तः परलोकमगात्, ततोऽस्य कृत्यशेषं सम्यगाराधनीयं भवता' इति । ततो राजा माघं विपन्नं नर्मदातीरं नीत्वा यथोक्तेन विधिना संस्कारमकरोत् । तत्र च

माघपत्नी वह्नौ प्रविष्टा । तयोश्च पुत्रवत्सर्वं चक्रे भोजः । ततो माघे दिवं गते राजा शोकाकुलो विशेषेण कालिदासवियोगेन च पण्डितानां प्रवासेन कृशोऽभूद्दिने दिने बहुलपक्षशशीव। ततोऽमात्यैर्मिलित्वा चिन्तितम्—'बल्लाल-देशे कालिदासो वसति । तस्मिन्नागते राजा सुखी भविष्यति' इति । इयं विचार्यामात्यैः पत्रे किमपि लिखित्वा तत्पत्रं चैकस्यामात्यस्य हस्ते दत्वा प्रेषितम् । स कालक्रमेण कालिदासमासाद्य 'राज्ञोऽमात्यैः प्रेषितोऽस्मि' इति नत्वा तत्पत्रं दत्तवान् । ततस्तत्कालिदासो वाचयति—

न भवति स भवति चिरं भवति चिरं चेत्फले विसंवादी ।
कोपः सत्पुरुषाणां तुल्यः स्नेहेन नीचानाम् ॥२८५॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : विपन्न–मृत, dead. मौनी—silent. कृत्य-शेष—अन्तिम संस्कार, the obsequies. बहुलपक्ष—कृष्णपक्ष, the dark fortnight. विसंवादी–अनुकूल न रहनेवाला, that which does not accord well, or does not fall in agreement.

Prose Order : न भवति, चिरं न भवति, चिरं चेद् भवति फले विसंवादी । सत्पुरुषाणां कोपः नीचानां स्नेहेन तुल्यः ।

व्याख्या—सत्पुरुषाणां सज्जनानाम् । कोपः क्रोधः । न भवति न जायते । यदि भवति चिरं न तिष्ठति । चिरं तिष्ठति चेत् फलेन विसंवदति । नीचानां नीचप्रकृतीनां पुरुषाणाम् । स्नेहेन अनुरागेण । तुल्यः समः ।

तब राजा माघ की मृत्यु का समाचार पाकर अपने नगर से अनेक ब्राह्मणों को साथ लिये रात्रि में वहाँ आया । तब माघ की स्त्री ने राजा को देखकर कहा—राजन् । जबकि ब्राह्मणश्रेष्ठ माघ आपके देश में आकर मृत्यु को प्राप्त हुआ तब आप इसकी अन्त्येष्टि-क्रिया शास्त्रोचित विधि से कीजिए । तब राजा माघ के मृत शरीर को नर्मदा के तट पर ले गये और उचित विधि से उनका दाह-संस्कार किया । माघ की पत्नी चिता में सती हुई । भोज ने उन दोनों की अन्त्येष्टि-क्रिया पुत्र के समान की। जब माघ स्वर्ग को सिधारे, तब राजा शोक से व्याकुल हुए और विशेष रूप से कालि-दास के वियोग से तथा पण्डितों के दूर होने से प्रतिदिन कृष्णपक्ष के चन्द्रमा

के सदृश दुर्बल होने लगे । तब मंत्रियों ने मिलकर विचार किया कि कालिदास बल्लाल देश में रहता है । उसके आने पर राजा सुखी होंगे । ऐसा विचार कर मंत्रियों ने पत्र पर कुछ लिखा और उस पत्र को एक मंत्री के हाथ देकर भेज दिया । कुछ समय के अनन्तर वह कालिदास के पास पहुँचा और प्रणाम किया । फिर पत्र देकर बोला कि राजा के मंत्रियों ने मुझे भेजा है । तब उस पत्र को कालिदास ने पढ़ा ।

सज्जनों को क्रोध नहीं आता । यदि हो भी तो वह बहुत देर तक नहीं रहता । यदि बहुत देर तक रहे भी तो वह फलीभूत नहीं होता । वह दुर्जन के प्रेम के समान होता है ।

सहकारे चिरं स्थित्वा सलीलं बालकोकिल ।
तं हित्वाद्यान्यवृक्षेषु विचरन्न विलज्जसे ॥२८६॥

सहकारेति । Vocabulary : सहकार—आम का वृक्ष, a mango-tree. सलीलम्–gracefully. हित्वा–त्याग कर, having deserted.

Prose Order : बालकोकिल ! सलीलं चिरं सहकारे स्थित्वा तं हित्वा अद्य अन्यवृक्षेषु विचरन् विलज्जसे ।

व्याख्या—बालकोकिल नववयस्क कोकिल । सलीलं लीलापूर्वकम् । चिरं चिरकालम् । सहकारे आम्रवृक्षे । स्थित्वा उपविश्य । तं सहकारम् । हित्वा । परित्यज्य । अद्य । अन्यवृक्षेषु सहकारेतरेषु । द्रुमेषु । विचरन् भ्रमन् । न विलज्जसे न जिह्रेषि ।

बाल-कोकिल ! तू आनन्द के साथ आम के झाड़ पर चिरकाल तक रहा । आज उसे त्याग अन्य वृक्षों पर बैठते हुए तुझे लज्जा नहीं आती क्यों ?

कलकण्ठ यथा शोभा सहकारे भवद्गिरः ।
खदिरे वा पलाशे वा किं तथा स्याद्विचारय ॥२८७॥

कलकण्ठेति । Vocabulary : कलकण्ठ—सुन्दरकण्ठवाली, sweet-throated. खदिर—खैर का वृक्ष, acacia tree.

Prose Order : कलकण्ठ ! यथा भवद्गिरः सहकारे शोभा तथा खदिरे वा पलाशे वा किं स्यात् विचारय ।

व्याख्या—कलकण्ठ—अव्यक्तमधुरभाषिन् । यथा येन प्रकारेण । भवद्-गिरः भवत्स्वरस्य ! सहकारे आम्रवृक्षे । शोभा माधुर्यम् । कर्णगोचरीभवति। तथा खदिरे खदिरवृक्षे । पलाशे पलाशवृक्षे वा । किं स्याद् भवितुमर्हति । विचारय अवधारय ।

अव्यक्त मधुर-स्वर-सम्पन्न ऐ कोयल ! विचार कर तो देख ! आपका स्वर जैसी शोभा आम के वृक्ष पर पा सकता है, वैसी शोभा खैर या आक के झाड़ पर पा सकता है क्या ?

इति। ततः कालिदासः प्रभाते तं भूपालमापृच्छ्य मालवदेशमागत्य राज्ञःक्रीडोद्याने तस्थौ । ततो राजा च तत्रागतं ज्ञात्वा स्वयं गत्वा महता परिवारेण तमानीय सम्मानितवान् । ततः क्रमेण विद्वन्मण्डले च समायाते सा भोजपरिषत्प्रागिव रेजे ।

ततः सिंहासनमलंकुर्वाणं भोजं द्वारपाल आगत्य प्रणम्याह—'देव, कोऽपि विद्वाञ्जालन्धरदेशादागत्य द्वार्यास्ते' इति । राजा—'प्रवेशय' इत्याह । स च विद्वानागत्य सभायां तथाविधं राजानं जगन्मान्यान्कालिदासादीन्कविपुङ्गवान्वीक्ष्य बद्धजिह्व इवाजायत । सभायां किमपि तस्य मुखान्न निःसरति । तदा राज्ञोक्तम्—'विद्वन्, किमपि पठ' इति । स आह—

आरनालगलदाहशङ्कया
मन्मुखादपगत सरस्वती ।
तेन वैरिकमलाकचग्रह-
व्यग्रहस्त न कवित्वमस्ति मे ॥२८८॥

ततः कालिदास इति । **Vocabulary** : आपृच्छ्य—taking leave of. क्रीडोद्यान—Pleasure-garden. तस्थौ–ठहरा, stood. परिवार—साथी, attendants. बद्धजिह्व—मूक, dumb.

आरनाल—sour gruel of the boiled rice. गलदाह—

burning in the throat. कमला--लक्ष्मी, glory कचग्रह--केशों से पकड़ना, seizure by hair. व्यग्र--व्यस्त, busy.

Prose Order : आरनालगलदाहशङ्कया सरस्वती मन्मुखाद् अपगता। वैरिकमलाकचग्रहव्यग्रहस्त तेन मे कवित्वं न अस्ति।

व्याख्या--आरनालगलदाहशङ्कया--आरनालेन पक्वतण्डुलपिच्छिकया सम्भावितो यो गलदाहः कण्ठदाहस्तस्य या शङ्का तया। सरस्वती वाग्देवी। मन्मुखा मदीयाननात् अपगता निस्सृता। वैरिकमलाकचग्रहव्यग्रहस्त--वैरिणः शत्रोः या कमला लक्ष्मीः तस्याः कचग्रहः केशाकर्षणं तस्मिन् व्यग्रो व्यस्तो हस्तो यस्य स तत्सम्बुद्धौ। तेन मन्मुखात्सरस्वत्यपसरणेन। मे मम। कवित्वं काव्यरचनासामर्थ्यम्। नास्ति न विद्यते।

तब कालिदास प्रातःकाल ही बल्लाल राजा से अनुमति लेकर मालव-देश में आकर राजा भोज के बगीचे में ठहरे।

कालिदास को वहाँ आया जानकर राजा स्वयं परिवार-सहित वहाँ जाकर उसे लाये और सम्मान किया। कुछ समय के पश्चात् जब सभा में पण्डित (काशी से) लौट आये तब राजा भोज की सभा पहले के समान शोभित होने लगी।

एक बार राजा भोज सिंहासन पर बैठे थे। द्वारपाल ने प्रणाम किया और कहा--देव ! एक विद्वान् जालंधर देश से आकर द्वार पर खड़ा है। राजा ने कहा--उसे भीतर भेजो। वह विद्वान् सभा में आकर विद्वान् राजा को तथा जगन्मान्य कालिदास आदि श्रेष्ठ कवियों को देखकर इस प्रकार खड़ा रहा, मानों उसकी जिह्वा बँध गई हो। सभा में उसके मुख से कुछ भी नहीं निकला। तब राजा ने कहा--विद्वन् ! कुछ कहिए। वह बोला--

विषाग्नि द्वारा दग्ध होने की शङ्का से सरस्वती मेरे मुख से चली गई। शत्रुओं की राजलक्ष्मी के केश-ग्रहण में व्यग्रहस्त भोजराज ! अतएव मुझमें कविता-शक्ति नहीं रही।

राजा तस्मै महिषीशतं ददौ।

अन्यदा राजा कौतकाकुलः सीतां प्राह—'देवि, सुरतं पठ' इति ।
सीता प्राह—

सुरताय नमस्तस्मै जगदानन्दहेतवे ।
आनुषङ्गि फलं यस्य भोजराज भवादृशाम् ॥२८६॥

राजेति । **Vocabulary** : सुरत—love-sport. आनुषङ्गि—स्वाभाविक, natural.

Prose Order : जगदानन्दहेतवे तस्मै सुरताय नमः । भोजराज ! यस्य भवादृशः आनुषङ्गि फलम् ।

व्याख्या—जगदानन्दहेतवे—जगतः आनन्दः जगदानन्दः, तस्य हेतुः कारणं तस्मै । सुरताय रत्युत्सवाय । नमः प्रणतिः । अस्तु । भोजराज ! यस्य सुरतस्य ! भवादृशः भवत्समो महापुरुषः । आनुषङ्गि स्वाभाविकम् । फलम् ।

राजा ने उसे सौ भैंसें दीं ।

एक दिन राजा ने चकित होकर सीता से कहा—देवी ! रति-क्रीड़ा पर कविता सुनाइए । सीता ने कहा—

भोजराज ! संसारानन्द के कारणभूत रतोत्सव को प्रणाम हो, आप-जैसों से सङ्गम जिसका स्वाभाविक फल है ।

ततस्तुष्टो राजा तस्यै हारं ददौ ।

ततो राजा चामरग्राहिणीं वेश्यामवलोक्य कालिदासं प्राह—'सुकवे, वेश्यामेनां वर्णय' इति । तामवलोक्य कालिदासः प्राह—

कचभारात्कुचभारः कुचभाराद्भीतिमेतिकचभारः ।
कचकुचभाराज्जघनं कोऽयं चन्द्रानने चमत्कारः ॥२९०॥

ततस्तुष्ट इति । **Vocabulary** : चामरग्राहिणी—chawrie-carrier. कचभार—केशभार, bulk of hair. कुचभार—heaviness of the breasts. जघन—hip.

Prose Order : कचभारात् कुचभारः भीतिम् एति । कुचभरात्

कचभारः भीतिम् एति । कचकुचभारात् जघनं भीतिम् एति । चन्द्रानने ! अयं चमत्कारः कः ?

व्याख्या—कचभारात् केशभारात् । कुचभारः स्तनभारः । भीतिं भयम् । एति आपद्यते । कुचभारात् स्तनभाराच्च । कचभारः केशभारः । भीतिं भयम् । एति प्राप्नोति । कचकुचभारात्—कचकुचयोः केशस्तनयोः भारात् । जघनं कटिस्थलम् । भीतिम् एति । चन्द्रानने—चन्द्रमुखि ! अयं चमत्कारः विस्मयः किम्—किं हेतुकः ।

तब प्रसन्न होकर राजा ने उसे एक हार दिया । फिर राजा ने चमर-ढुलैय्या वेश्या को देखकर कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ ! इस वेश्या का वर्णन करो । उसे देखकर कालिदास ने कहा—

चन्द्रमुखी ! यह कौन-सा चमत्कार है कि तुम्हारे केशभार से तुम्हारा स्तन-भार भय को प्राप्त हो रहा है और तुम्हारे स्तन-भार से तुम्हारा केशभार डर रहा है । केशभार और स्तन-भार से तुम्हारी जाँघें भयभीत हो रही हैं ।

भोजस्तुष्टः सन्स्वयमपि पठति—

वदनात्पदयुगलीयं वचनादधरश्च दन्तपङ्क्तिश्च ।
कचतः कुचयुगलीयं लोचनयुगलं च मध्यतस्त्रसति ॥२९१॥

वदनादिति । **Vocabulary** : पदयुगली—दोनों पाँव, the two feet. वचन—speech. अधर—होंठ । दन्तपङ्क्ति—the row of teeth. कच—केश, hair. कुचयुगली—दोनों स्तन, the two breasts, मध्य—कटिभाग, waist.

Prose Order : वदनात् इयं पदयुगली, वचनात् अधरः च दन्तपङ्क्तिः च, कचतः इयं कुचयुगली, मध्यतः च लोचनयुगलं त्रसति ।

व्याख्या—वदनात् मुखात् । इदं पदयुगली इदं पदद्वयम् । वचनाद् गिरः । अधरः दन्तच्छदः । दन्तपङ्क्तिः दशनश्रेणिः । कचतः केशेभ्यः । कुचयुगली स्तनद्वयी । मध्यतः कटिप्रदेशात् । लोचनयुगलं नेत्रद्वयम् । त्रसति बिभेति ।

भोज ने प्रसन्न होकर अपनी कविता सुनाई ।

इस मख से ये दोनों चरण डरते हैं और वाणी से होंठ तथा सभी दाँत । केशों से दोनों स्तन और कटिभाग से दोनों नत्र डरते हैं ।

अन्यदा भोजो राजा धारानगर एकाकी विचरन्कस्यचिद्विप्रवरस्य गृहं गत्वा तत्र काञ्चन पतिव्रतां स्वाङ्के शयानं भर्तारमुद्वहन्तीमपश्यत् । ततस्तस्याः शिशुः सुप्तोत्थितो ज्वालायाः समीपमगच्छत् । इयं च पतिधर्मपरायणा स्वपतिं नोत्थापयामास । ततः शिशुं च वह्नौ पतन्तं नागृह्णात् । राजा चाश्चर्यमालोक्यातिष्ठत् । ततः सा पतिधर्मपरायणा वैश्वानरं प्रार्थयत्—'यज्ञेश्वर ! त्वं सर्वकर्मसाक्षी सर्वधर्मान्जानासि । मां पतिधर्मपराधीनां शिशु शिशुमगृह्णन्तीं च जानासि । ततो मदीयशिशुमनुगृह्य त्वं मा दह' इति । ततः शिशुर्यज्ञेश्वरं प्रविश्य तं च हस्तेन गृहीत्वार्धघटिकापर्यन्तं तत्रैवातिष्ठत् । ततो नारोदीत्प्रसन्नमुखश्चशिशुः । सा च ध्यानारूढातिष्ठत् । ततो यदृच्छया समुत्थिते भर्तरि सा झटिति शिशुं जग्राह । तं च परं धर्ममालोक्य विस्मयाविष्टो नृपतिराह—'अहो, मम समं भाग्यं कस्यास्ति, यदीदृश्यः पुण्यस्त्रियोऽपि मन्नगरे वसन्ति' इति । ततः प्रातः सभायामागत्य सिंहासन उपविष्टो राजा कालिदासं प्राह—'सुकवे, महदाश्चर्यं मया पूर्वेद्यू रात्रौ दृष्टमस्ति' इत्युक्त्वा राजा पठति—'हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः' इति । कालिदासस्ततश्चरणत्रयं झटिति पठति—

सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके
न बोधयामास पतिं पतिव्रता ।
तदाभवत्तत्पतिभक्तिगौरवा-
द्धुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥२६२॥

अन्यदेति । **Vocabulary** : वैश्वानर—अग्नि, fire. यज्ञेश्वर—lord of sacrifice. पङ्क—घोल ।

Prose Order : पतिव्रता पावके पतन्तं सुतं प्रसमीक्ष्य पतिं न बोधयामास । तदा तत्पतिभक्तिगौरवात् हुताशनः चन्दनपङ्कशीतलः अभवत् ।

व्याख्या—पतिव्रता पतिभक्तिपरायणा काचित् साध्वी । पावके वह्नौ । पतन्तं प्रविशन्तम् । सुतं पुत्रम् । प्रसमीक्ष्य विलोक्य । पतिं भर्त्तारम् ।

न बोधयामास नोत्थापयामास । तदा तत्काले । तत्पतिभक्तिगौरवात् तस्याः पत्युः भर्त्तुः सम्बन्धिनी भक्तिस्सेवा तस्याः गौरवम् महत्ता तस्मात्, स्वभर्त्रनुरागबलात् । हुताशनोऽग्निः । चन्दनपङ्कशीतलः चन्दनपङ्कवत् शीतलः शीतलप्रकृतिः अभवत् ।

एक बार राजा भोज ने धारा-नगरी में अकेले घूमते-घूमते किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण के घर को जाकर देखा कि एक पतिव्रता स्त्री सोये हुए अपने पति के सिर को गोद में लिये बैठी है । उसका बालक जो अभी सोकर उठा था, अग्नि की ओर सरक रहा था । पतिधर्म को विचार कर उसने अपने पति को नहीं जगाया और अग्नि में गिरते हुए बालक को भी नहीं पकड़ा । राजा इस आश्चर्यजनक घटना को देखकर रुक गया । तब उस पतिव्रता स्त्री ने अग्नि से प्रार्थना की––यज्ञेश्वर अग्निदेव ! तुम सभी कर्मों के साक्षी हो । सभी धर्मों को जानते हो और यह भी जानते हो कि मैं पतिधर्म के पराधीन होकर बालक को पकड़ नहीं रही । अतः मेरे बालक पर कृपा करो और इसे जलाओ नहीं । तब बालक यज्ञेश्वर आग में चला गया और उसे हाथ में लेकर बारह मिनट तक वहीं रहा । फिर वह रोया और फिर वह प्रसन्न दीखने लगा । वह ध्यान में लीन हो गई । जब अकस्मात् पति की नींद खुली तब माता ने शीघ्र ही पुत्र को उठा लिया । पातिव्रत्य-धर्म के प्रभाव को देख चकित होकर राजा ने कहा––मुझ जैसा भाग्यवान् कौन है, जिसके नगर में ऐसी पुण्यात्मा नारियाँ निवास करती हैं । तब प्रातःकाल सभा में आकर सिंहासन पर बैठकर राजा ने कालिदास से कहा––कविश्रेष्ठ ! गत रात्रि को मैंने महान् आश्चर्य देखा है । यह कहकर राजा ने कविता पढ़ सुनाई ।

अग्नि चन्दन के घोल के समान शीतल पड़ गई । तब कालिदास ने शेष तीन चरण शीघ्र ही पढ़ दिये ।

पुत्र को आग में गिरते देखकर पतिव्रता नारी ने अपने पति को नहीं जगाया । तब उसकी स्वामिभक्ति के कारण उसके प्रति बहुमान से अग्नि चन्दन के घोल के समान शीतल पड़ गई ।

राजा च स्वाभिप्रायमालोक्य विस्मितस्तमालिङ्ग्य पादयोः पतति स्म ।

एकदा ग्रीष्मकाले राजान्तःपुरे विचरन्घर्मतापतप्त आलिङ्गनादिकमकुर्वं-स्ताभिः सह सरससंलापाद्युपचारमनुभूय तत्रैव सुप्तः । ततः प्रातरुत्थाय राजा सभां प्रविष्टः कुतूहलात्पठति—

मरुदागमवार्त्तयापि शून्ये
समये जाग्रति संप्रवृद्ध एव ।

भवभूतिराह—

उरगी शिशवे बुभुक्षवे स्वा-
मदिशत्फूत्कृतिमाननानिलेन ।
मरुदागमवार्तयापि शून्ये
समये जाग्रति संप्रवृद्ध एव ।।२९३।।

राजेति । **Vocabulary** : उपचार—दाक्षिण्य, customary fromality. मरुत्–वायु, the wind. जाग्रत्—watchful, संप्रवृद्ध–advanced. उरगी–सर्पिणी, the famale snake. बुभुक्षु—hungry. आनन–मुख, mouth. अनिल–वायु, breath.

Prose Order : मरुदागमवार्त्तया अपि शून्ये जाग्रति समये सम्प्रवृद्धे एव उरगी बुभुक्षवे शिशवे आननानिलेन स्वां फूत्कृतिम् अदिशत् ।

व्याख्या—मरुदागमवार्त्तया मरुत आगमः मरुदागमः तस्य वार्त्ता मरुदागमवार्त्ता तया शून्ये रहिते । जाग्रति अवधानविषयीभूते । समये काले सम्प्रवृद्धे सरति सति । उरगी व्याली । बुभुक्षवे क्षुधिताय । शिशवे स्वापत्याय । आननानिलेन मुखवायुना । स्वां फूत्कृतिम् ! अदिशत् ददौ इत्यर्थः ।

'सर्पाः पिबन्ति पवनम्' इत्युक्ते पवनाभावात् क्षुधितः शिशुर्मा विपद्येतेति सर्पिणी तस्मै स्वमुखानिलं प्रयच्छति ।

राजा अपना अभिप्राय पाकर चकित हुए। उसे गले लगाया । फिर उसके चरणों पर गिरे । एक बार ग्रीष्मऋतु में राजा अन्तःपुर में घूमते हुए सूर्य की धूप के ताप से तप्त होकर आलिङ्गन आदि से विमुख होकर उनके साथ रसीली बातचीत के सुख का अनुभव कर वहीं सो गये। फिर प्रातःकाल वे उठे, सभा में आये और विस्मय से कहने लगे—

"जहाँ वायु चलने की बात भी नहीं रही ऐसा जब समय जगते-जगते बीतने लगा ।"

भवभूति ने कहा—

तब सर्पिणी ने अपने भखे शिशु को मुख की वायु से फुँकार दी।

राजा प्राह—'भवभूते, लोकोक्तिरसम्यगुक्तेति । ततोऽपाङ्गेन राजा कालिदासं पश्यति । ततः स आह—

अबलासु विलासिनोऽन्वभूव-
न्नयनैरेव नवोपगूहनानि ।
मरुदागमवार्त्तयापि शून्ये
समये जाग्रति संप्रवृद्ध एव ॥२६४॥

राजा प्राहेति । **Vocabulary** : लोकोक्ति—कहावत, proverb. अपाङ्ग—corner of the eye. विलासिन्—gallant lover. अन्वभूवन्—experienced. उपगूहन—आलिङ्गन, embrace.

Prose Order : मरुदागमवार्त्तया अपि शून्ये जाग्रति समय सम्प्रवृद्धे एव विलासिनः नयनैः एव नवोपगुहनानि अन्वभूवन् ।

व्याख्या—मरुदागमवार्त्तया—मरुत आगमः मरुदागमः तस्य वार्त्ता मरुदागमवार्त्ता तया शून्ये रहिते । जाग्रति अवधानविषयीभूते । समये काले । सम्प्रवृद्धे सरति सति । विलासिनः युवानः । नयनैः नेत्रैः एव । नवोपगहनानि नवालिङ्गनानि । अन्वभूवन् अनुभूतवन्तः ।

राजा ने कहा—भवभूति! यह लोकोक्ति ठीक कही । तब तिर्यग् दृष्टि से राजा ने कालिदास को देखा। तब कालिदास बोले—

तब विलासी पुरुषों ने नेत्रों द्वारा ही नारी-आलिङ्गन के नवीन सुख प्राप्त किये ।

तदा राजा स्वाभिप्रायं ज्ञात्वा तुष्टः कालिदासं विशेषेण सम्मानितवान् ।

अन्यदा मृगयापरवशो राजात्यन्तमार्तः कस्यचित्सरोवरस्य तीरे निबिडच्छायस्य जम्बूवृक्षस्य मूलमुपाविशत् । तत्र शयाने राज्ञि जम्बोरुपरि बहुभिः कपिभिर्जम्बूफलानि सर्वाण्यपि चालितानि । तानि सशब्दं पतितानि पश्यन्घटिका-

मात्रं स्थित्वा श्रमं परिहृत्य उत्थाय तुरङ्गमवरमारुह्य गतः । ततः सभायां राजा पूर्वानुभूतकपिचलितफलपतनरवमनुकुर्वन्समस्यामाह—'गुलुगुग्गुलुगुग्गुलु' तत आह कालिदासः—

जम्बूफलानि पक्वानि पतन्ति विमले जले ।
कपिकम्पितशाखाभ्यो गुलुगुग्गुलुगुग्गुलु ॥२९५॥

तदा राजेति । **Vocabulary** : मृगयापरवश—बहुत शिकार खेलता हुआ, excessively indulging in hunting. आर्त्त—पीड़ित, distressed. निबिड—घन, thick. जम्बूफल—a fruit of जम्बू tree.

Prose Order : पक्वानि जम्बूफलानि कपिकम्पितशाखाभ्यः विमले जले पतन्ति । गुलुगुग्गुलुगुग्गुलु (शब्दं कुर्वन्ति) ।

व्याख्या—पक्वानि परिपाकं गतानि जम्बूफलानि जम्बूवृक्षस्य फलानि कपिकम्पितशाखाभ्यः कपिभिः शाखामृगैः कम्पिता या शाखास्ताभ्यः विमले निर्मले जले पतन्ति तेन च 'गुलुगुग्गुलुगुग्गुलु' इति शब्दो जायते ।

तब राजा अपना अभिप्राय जानकर प्रसन्न हुए । कालिदास का विशेष सम्मान किया ।

एक बार शिकार खेलते-खेलते राजा बहुत थक गया । किसी तालाब के किनारे घनी छायावाले जामुन के पेड़ के नीचे बैठ गया । जब वह वहाँ लेटा तब जामुन के ऊपर चढ़कर बहुत बन्दरों ने जामुन के फल हिला दिये । वे शब्द करते गिर पड़े । उन्हें देख एक घड़ी-भर वहाँ ठहरकर श्रम को दूर कर उठा, अश्व पर सवार होकर चल पड़ा । फिर सभा में राजा ने बन्दरों के द्वारा शाखा संचालित करने पर फलों के गिरने का जो शब्द सुना था, उसका अनुकरण करते हुए समस्या कही—"गुलु गुग्गुलु गुग्गुलु।" तब कालिदास ने कहा—

बन्दरों से कम्पायमान शाखाओं के पके हुए जामुन के फल जब स्वच्छ जल में गिरते हैं तब गुलु गुग्गुलु गुग्गुलु शब्द होता है ।

राजा तुष्ट आह—'सुकवे, अदृष्टमपि परहृदयं कथं जानासि ? साक्षाच्छारदासि' इति मुहुर्मुहुः पादयोः पतति स्म ।

एकदा धारानगरे प्रच्छन्नवेषो विचरन्कस्यचिद्वृद्धब्राह्मणस्य गृहं राजा मध्याह्नसमये गच्छंस्तत्र तिष्ठति स्म । तदा वृद्धविप्रो वैश्वदेवं कृत्वा काकबलिं गृह्णन्गृहान्निर्गत्य भूमौ जलशुद्धायां निक्षिप्य काकमाह्वयति स्म । तत्र हस्तविस्फालनेन हाहेतिशब्देन च काकाः समायाताः । तत्र कश्चित्काकस्तारं रारटीति स्म । तच्छ्रुत्वा तत्पत्नी तरुणी भीतेव हस्तं निजोरसि निधाय 'अये मातः' इति चक्रन्द । ततो ब्राह्मणः प्राह—'प्रिये साधुशीले, किमर्थं बिभेषि' इति । सा प्राह—'नाथ, मादृशीनां पतिव्रतास्त्रीणां क्रूरध्वनिश्रवणं न सह्यम् ।' 'साधुशीले, तथा भवेदेव' इति विप्र आह । ततो राजा तच्चरितं सर्वं दृष्ट्वा व्यचिन्तयत्—'अहो, इयं तरुणी दुःशीला नूनम् । यतो निर्व्याजं बिभेति । स्वपातिव्रत्यं स्वयमेव कीर्त्तयति च । नूनमियं निर्भीका सती अत्यन्तं दारुणं कर्म रात्रौ करोत्येव । एवं निश्चित्य राजा तत्रैव रात्रावन्तर्हित एवातिष्ठत् । अथ निशीथे भर्त्तरि सुप्ते सा मांसपेटिका वेश्याकरेण वाहयित्वा नर्मदातीरमगच्छत् । राजाप्यात्मानं गोपयित्वानुगच्छति स्म । ततः सा नर्मदां प्राप्य तत्र समागतानां ग्राहाणां मांसं दत्वा नदीं तीर्त्वा परतीरस्थेन शूलाग्रारोपितेन स्वमनोरमेण सह रमते स्म । तच्चरित्रं दृष्ट्वा राजा गृहं समागत्य प्रातः सभायां कालिदासमालोक्य प्राह—'सुकवे, शृण—

'दिवा काकरुताद्भीता'

ततः कालिदास आह—

'रात्रौ तरति नर्मदाम्' ।

ततस्तुष्टो राजा पुनः प्राह—

'तत्र सन्ति जले ग्राहाः'

ततः कविराह —

'मर्मज्ञा सैव सुन्दरी' ॥२९६॥

राजेति । **Vocabulary** : शारदा—सरस्वती, the goddess of learning. मुहुर्मुहुः—पुनः पुनः, बार-बार । प्रच्छन्न—गुप्त, disguised. विस्फालन—फैलना, stretch. तारम्—उच्च स्वर

से, loudly. रारटीति स्म—काय-काय शब्द कर रहा था, was crying. तरुणी—युवती, of youthful age. सव्याजम्—कपट से, with pretension. निशीथ—रात्रि, the night. पेटिका—पेटी, basket. शूल—शूली, the stake. रुत—शब्द, sound. ग्राह—मगर, shark. मर्मज्ञ—रहस्य की ज्ञात्री ।

Prose Order : दिवा काकरुतात् भीता, रात्रौ नर्मदां तरति। तत्र जले ग्राहाः सन्ति । सैव सुन्दरी मर्मज्ञा ।

व्याख्या—दिवा दिवससमये । काकरुतात् वायसरवात् । भीता भय-युक्ता । रात्रौ निशि । नर्मदां नदीम् । तरति । तत्र जले सलिले । ग्राहाः नक्राः सन्ति । सैव । सुन्दरी कामिनी । मर्मज्ञा रहस्यवित् ।

राजा ने प्रसन्न होकर कहा—कविश्रेष्ठ! बिना देखे दूसरे के हृदय का भाव कैसे जान लेते हो? तुम साक्षात् सरस्वती हो। ऐसा कहकर बार-बार चरणों में पड़ने लगा ।

एक बार भेष बदलकर धारा-नगरी में घूमता हुआ किसी बूढ़े ब्राह्मण के घर पर मध्याह्न के समय जाकर बैठ गया । तब वृद्ध ब्राह्मण ने वैश्वदेव-क्रिया समाप्त की । कौए के लिए बलि लेकर घर से निकला । पृथ्वी पर जल छिड़का। वहाँ बलि को रखकर कौए को बुलाने लगा । वहाँ पंजे फैलाये हुए, हाहा शब्द करते हुए कौए आ गये। उनमें से एक कौआ ऊँचे स्वर से रट लगा रहा था।

यह सुनकर उसकी युवती स्त्री भयभीत-सी होकर अपने हृदय पर हाथ रखकर "हे मातः" इस प्रकार चिल्लाने लगी। तब ब्राह्मण ने कहा—विशुद्ध चरित्र-सम्पन्न प्रिये! तुम क्योंकर भय मानती हो? उसने कहा—स्वामिन्, मुझ-जैसी पतिव्रता स्त्रियों से कर्कश ध्वनि का श्रवण सह्य नहीं है। तब ब्राह्मण ने कहा—विशुद्धचरित्र-सम्पन्न प्रिये! ऐसा ही होगा। तब राजा ने उसका समस्त चरित्र देखकर सोचा—अहो! यह युवती निश्चित ही दुरा-चारिणी है; क्योंकि यह अकारण ही डर रही है, अपने पातिव्रत्य-धर्म का स्वयं ही कीर्त्तन कर रही है। निस्सन्देह ही यह निडर होकर रात्रि में अत्यन्त दारुण

काम करती होगी। इस प्रकार सोचकर राजा वहीं रात्रि में छिप रहा। अर्धरात्रि के समय जब उसका पति सो गया, तब वह वेश्या के द्वारा मांस की पिटारी उठवा नर्मदा के तट पर गई। राजा भी अपने को प्रकट न कर उसके पीछे चल पड़ा। तब उसने नर्मदा के किनारे पहुँचकर वहाँ पर आये हुए मगरों को मांस देकर नदी को पार कर उस तट पर शूली पर आरोपित अपने प्रिय के साथ रमण किया। उसका चरित्र देखकर राजा घर को लौटे और प्रातःकाल कालिदास को देखकर कहने लगे—कविश्रेष्ठ, सुनिए—

दिन में कौए के शब्द से डरी।

तब कालिदास ने कहा—

रात्रि में नर्मदा के पार गई।

तब प्रसन्न होकर राजा ने कहा—

वहाँ जल में मगर हैं।

तब कवि ने कहा—

वह (उनसे बचने का) उपाय जानती है।

ततो राजा कालिदासस्य पादयोः पतति।

एकदा धारानगरे विचरन्वेश्यावीथ्यां राजा कन्दुकलीलातत्परां तद्भ्रमणवेगेन पादयोः पतितावतंसां काञ्चन सुन्दरीं दृष्ट्वा सभायामाह—'कन्दुकं वर्णयन्तु कवयः' इति। तदा भवभूतिराह—

विदितं ननु कन्दुक ते हृदयं
प्रमदाधरसङ्गमलुब्ध इव।
वनिताकरतामरसाभिहतः
पतितः पतितः पुनरुत्पतसि ॥२९७॥

ततो राजेति। **Vocabulary** : वीथी—गली, street. कन्दुक—गेंद, a ball. अवतंस—कर्णभूषण, ear-ornament. प्रमदा—युवती, a lady. कर—हाथ, hand. तामरस—रक्त पुष्प, a red flower. अभिहत—ताडित, struck.

Prose Order : कन्दुक ! ते हृदयं ननु विदितम् । प्रमदाधरसङ्गमलुब्धः इव वनिताकरतामरसाभिहतः पतितः पतितः पुनः उत्पतसि ।

व्याख्या—कन्दुक ! ते तव । हृदयम् । ननु निश्चितम् । विदितं ज्ञातम् । प्रमदाधरसङ्गमलुब्धः—प्रमदया अधरः प्रमदाधरः, प्रमदाधरस्य यः सङ्गमः प्रमदाधरसङ्गमः, तस्मै लुब्धः तदर्थी इव । वनिताकरतामरसाभिहतः वनितायाः करः वनिताकरः, स एव तामरसः रक्तकमलं तेन अभिहतस्ताडितः सन् पतितः पतितः पुनः पुनः उत्पतसि वनिताधरचुम्बनाय प्रयतसे ।

तब राजा कालिदास के चरणों पर गिर पड़े ।

एक बार धारा-नगरी में घूमते हुए राजा ने वेश्या की कुलिया में एक युवती को देखा, जो गेंद के खेल में व्यस्त थी और उछलते हुए गेंद की टक्कर से जिसके कर्णाभूषण उसके चरणों पर पड़े थे। सभा में आकर राजा ने कहा—कविवृन्द ! आप गेंद का वर्णन करो । तब भवभूति ने कहा—

ऐ गेंद ! मैंने तुम्हारे मनोगत आशय को जान लिया है, जो तुम स्त्रियों के अधर-सम्पर्क के लिए लालायित के समान स्त्रियों के लाल कर-कमलों से ताड़ित होकर गिर-गिरकर फिर उठते हो ।

ततो राजेति । व्याख्या—

ततो वररुचि प्राह—

एकोऽपि त्रय इव भाति कन्दुकोऽयं
कान्तायाः करतलरागरक्तरक्तः ।
भूमौ तच्चरणनखांशुगौरगौरः
स्वस्थः सन्नयनमरीचिनीलनीलः ॥२९८॥

ततो वररुचिरिति । Vocabulary : करतल—हथेली, palm. राग—लालिमा, redness. नखांशु—नख की किरणें, the rays of the nail.

Prose Order : कान्तायाः करतलरागरक्तरक्तः भूमौ तच्चरण-

नखांशुगौरगौरः खस्थः सन् नयनमरीचिनीलनीलः एकः अपि अयं कन्दुकः त्रय इव भाति ।

व्याख्या—कान्तायाः कामिन्याः करतलस्य हस्ततलस्य यो रागो रक्तिमा तेन रक्तरक्तः_ नितान्तं रञ्जितः कामिनीहस्ततलालक्तकरसेन रक्तवर्णं प्राप्तः । भूमौ पृथिव्यां तच्चरणनखांशुगौरगौरः तच्चरणस्य नखांशुभिः नख किरणैः गौरगौरः श्वेतवर्णं प्राप्तः । खस्थः गगनस्थः सन् नयनमरीचिनील-नीलः नयनयोर्नेत्रयोर्मरीचिभिः किरणैः नीलनीलः नीलवर्णं प्राप्तः । एवम् एकोऽपि अयं कन्दुकः । त्रय इव त्रिधा । भाति राजते ।

तब वररुचि ने कहा—

यह एक ही गेंद तीन प्रकार से प्रतीत होता है—(१) स्त्रियों के हाथों की रक्तता से रक्त, (२) पृथ्वी पर उनके चरणों के नखों की किरणों से गौरवर्ण और (३) आकाश में उछलने पर उनके नयनों की कान्ति से अत्यन्त नील ।

ततः कालिदास आह—

पयोधराकारधरो हि कन्दुकः
करेण रोषादभिहन्यते मुहुः ।
इतीव नेत्राकृति भीतमुत्पलं
स्त्रियः प्रसादाय पपात पादयोः ॥२९९॥

ततः कालिदास इति । Vocabulary : पयोधर—स्तन, breasts. आकार—आकृति, shape. अभिहन्यते—ताडित किया जाता है, is struck. उत्पल—कमल, lotus.

Prose Order : पयोधराकारधरः कन्दुकः रोषात् करणे मुहुः अभिहन्यते । इतीव नेत्राकृतिभीतम् उत्पलं स्त्रियाः प्रसादाय पादयोः पपात ।

व्याख्या— पयोधराकार धरः—धरतीति धरः, पयोधराकारस्य धरः पयोधराकारधरः । कन्दुकः । रोषात् क्रोधात् । करेण हस्तेन । मुहुः पुनः पुनः अभिहन्यते ताड्यते । इतीव एवम् । नेत्राकृतिभीतम् नेत्रयोर्नयनयोः

आकृतिराकारस्तेन भीतम् उत्पलं कमलम् । स्त्रियाः नार्याः प्रसादाय प्रसन्नतायै ।

तब कालिदास ने कहा—

यह गेंद उसके स्तनों की समता रखता है, इसलिए बार-बार क्रोधवश इसे हाथों से पीटा जाता है । उसके नेत्रों की समता रखने के हेतु (दण्ड-प्राप्ति के भय से) भीत कमल-स्वरूप गेंद उसकी प्रसन्नता पाने के लिए उसके चरणों पर गिर पड़ा ।

तदा राजा तुष्टस्त्रयाणामक्षरलक्षं ददौ । विशेषेण च कालिदासमदृष्टावतंस-कुसुमपतनबोद्धारं सम्मानितवान् ।

ततः कदाचिच्चित्रकर्मावलोकनतत्परो राजा चित्रलिखितं महाशेषं दृष्ट्वा 'सम्यग्लिखितम्' इत्यवदत् । तदा कश्चिच्छिवशर्मा नाम कविः शेषमिषेण राजानं स्तौति—

अनेके फणिनः सन्ति भेकभक्षणतत्पराः ।
एक एव हि शेषोऽयं धरणीधरणक्षमः ॥३००॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : अवतंस—कर्ण-भूषण, ear-ornament. बोद्धृ—ज्ञातृ, the knower. सम्मानितवान्—आदर किया, honoured him. चित्रकर्म—चित्रकारी, paintings. चित्रलिखित–painted. मिष—pretext. फणिन्—फणयुक्त सर्प, the hooded snake. भेक—मण्डूक, frog. धरणि—पृथ्वी, the earth.

Prose Order : भेकभक्षणतत्पराः फणिनः अनेके सन्ति । अयम् एक एव शेषः धरणिधरणक्षमः ।

व्याख्या—भेकभक्षणतत्पराः भेकस्य मण्डूकस्य भक्षणं निगलनं तत्पराः तल्लग्नाः । फणिनः सर्पाः । अनेके बहवः । सन्ति वर्त्तन्ते । किन्तु ते पृथ्वी-भारोद्वहनक्षमा नैव वर्त्तन्ते । अयम् एकः शेष एव । धरणिधरणक्षमः पृथ्वी-भारोद्वहनयोग्यो वर्त्तते ।

तब प्रसन्न होकर राजा ने तीनों को प्रत्येक वर्ण पर लाख-लाख रुपये दिये । और कालिदास को विशेष रूप से सम्मानित किया; क्योंकि उसने कर्ण-भूषण के पादपतन की बात विना देखे जान ली थी । तब कभी चित्रकार्य

के अवलोकन पर राजा ने शेषनाग के चित्र को देखकर कहा—"अच्छा लिख है।" तब शिवशर्मा नामक एक कवि ने शेषनाग की स्तुति के बहाने राजा की स्तुति की।

मेढकों के भक्षक तो अनेक सर्प हैं, किन्तु पृथ्वी उठाने को समर्थ अकेले शेषनाग ही हैं।

तदानीं राजा तदभिप्रायं ज्ञात्वा तस्मै लक्षं ददौ।

कदाचिद्धेमन्तकाले समागते ज्वलन्ती हसन्ती संसेवयन्राजा कालिदासं प्राह—'सुकवे, हसन्तीं वर्णय' इति। ततः सुकविराह—

कविमतिरिव बहुलोहा सुघटितचक्रा प्रभातवेलेव।
हरमूर्त्तिरिव हसन्ती भाति विधूमानलोपेता ॥३०१॥

तदानीमिति। Vocabulary : हेमन्तकाल—शीत ऋतु, cold season. हसन्ती—अंगीठी, fire-place.

बहुलोहा—बहुल+ऊहा, अनेक तर्क-वितर्कों से युक्त, full of deep deliberation; or बहुलोहा, बहुत लोह से घटित, made of iron-mass. सुघटित-चक्रा—सुनिर्मित चक्र-युक्त, (१) सूर्य के रथचक्र, (२) अंगीठी के पहिये; possessed of full-shaped wheels of the sun's chariot or supported by props in the shape of wheels. हरमूर्त्ति—शिव की आकृति, the body of Shiva. भाति—सुशोभित होती है, shines. विधूमानलोपेता—विधु+उमा+अनल+उपेता, चन्द्रमा, पार्वती, तथा नेत्रज्वाला से युक्त अथवा वि+धूम+अनल+उपेता, धूम-रहित अग्नि से युक्त, full of smokeless fire.

Prose Order: बहुलोहा कविमतिः इव, सुघटितचक्रा प्रभातवेला इव, विधूमानलोपेता हरमूर्त्तिः इव हसन्ती भाति।

व्याख्या—बहुलोहा–बहुलो महान् ऊहो वितर्को यस्याः सा तथाभूता। कविमतिः कविप्रतिभेव। बहुलोहा—बहुलोहो यस्याः सा तथाभूता हसन्ती। सुघटितचक्रा सुघटिते सुनिर्मिते चक्रे यस्याः सा। प्रभातवेलापक्षे सूर्यरथचक्राणां सुघटितत्वम्; हसन्तीपक्षे आधारचक्राणामभिप्रायः। प्रभातवेला प्रभातसमय

इव । विधूमानलोपेता—विधुना चन्द्रेण उमया पार्वत्या, अनलेन वह्निना उपेता युक्ता । हरमूर्त्तिः शिवाकृतिः । इव । विधूमानलोपेता—विगतो धूमो यस्मादिति स विधूमः, विधूमो धूमरहितो योऽनलोऽग्निस्तेन उपेता युता हसन्ती। भाति विराजते ।

तब राजा ने उसके अभिप्राय को जानकर उसे एक लाख रुपये दिये। एक बार जब हेमन्त-ऋतु थी, जलती हुई आग की अंगीठी का सेवन करते हुए राजा ने कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ ! अंगीठी का वर्णन करो । तब कविश्रेष्ठ बोले—

लोहपुञ्ज से निर्मित यह अंगीठी अनेक ऊहापोहों से युक्त कवि की प्रतिभा के सदृश है । सुन्दर चक्राकृति-सम्पन्न यह अंगीठी चक्राकार भँवर युक्त प्रभातकालीन समुद्रवेला के समान है । धूम-रहित अग्नि से युक्त यह अंगीठी चन्द्रमा, पार्वती और (तृतीय नेत्र की) अग्नि से युक्त शिवमूर्त्ति के समान दीख रही है ।

राजाक्षरलक्षं ददौ ।

एकदा भोजराजोऽन्तर्गृहे भोगार्हास्तुल्यगुणाश्चतस्रो निजाङ्गना अपश्यत् । तासु च कुन्तलेश्वरपुत्र्यां पद्मावत्यामृतुस्नानम्, अङ्गराजस्य पुत्र्यां चन्द्रमुख्यां क्रमप्राप्तिम्, कमलानाम्न्यां च द्यूतपणजयलब्धप्राप्तिम्, अग्रमहिष्यां च लीलादेव्यां दूतीप्रेषणमुखेनाह्वानं च, एवं चतुरो गुणान्दृष्ट्वा तेषु गुणेषु न्यूनाधिकभावं राजाप्यचिन्तयत् । तत्र सर्वत्र दाक्षिण्यनिधि राजराजः श्रीभोजस्तुल्यभावेन द्वित्रिघटिकापर्यन्तं विचिन्त्य विशेषानवधारणेन निद्रां गतः । प्रातश्चोत्थाय कृताह्निकः सभामगात् । तत्र च सिंहासनमलंकुर्वाणः श्रीभोजः सकलविद्वत्कविमण्डलमण्डनं कालिदासमालोक्य 'सुकवे, इमां त्र्यक्षरोनतुरीयचरणां समस्यां शृणु ।' इत्युक्त्वा पठति—'अप्रतिपत्तिमूढमनसा द्वित्राः स्थिता नाडिकाः ।' इति पठित्वा राजा कालिदासमाह—'सुकवे, एतत्समस्यापूरणं कुरु' इति । ततः कालिदासस्तस्य हृदयं करतलामलकवत्प्रपश्यंस्त्र्यक्षराधिकचरणत्रयविशिष्टां तां समस्यां पठति—देव,

स्नाता तिष्ठति कुन्तलेश्वरसुता वारोऽङ्गराजस्वसु-
र्द्यूते रात्रिरियं जिता कमलया देवी प्रसाद्याधुना।
इत्यन्तःपुरसुन्दरीजनगुणे न्यूनाधिकं ध्यायता
देवेनाप्रतिपत्तिमूढमनसा द्वित्राः स्थिता नाडिकाः ॥३०२॥

राजेति। **Vocabulary** : अन्तर्गृह—अन्तःपुर, harem. घटिका—घटी, 24 minutes. न्यूनाधिकभाव—गुण-दोष-विचार, the difference. अनवधारण—अनिश्चय, indecision. आह्निक—दैनिक क्रिया-कलाप। ऊन—कम, less. तुरीय—चतुर्थ, fourth. चरण—पाद, foot. समस्या, a verse to be completed. अप्रतिपत्ति—अज्ञान, indecision. मूढ—विवेकाविवेकशून्य, confused. नाडिका—घटिका, 24 minutes. आमलक, आँवला, fruit of myrobalan.

Prose Order : कुन्तलेश्वरसुता स्नाता तिष्ठति, अंगराजस्वसुः वारः। कमलया इयं रात्रिः द्यूते जिता। अधुना देवी प्रसाद्या। इति अन्तःपुरसुन्दरीजनगुणे न्यूनाधिकं ध्यायता अप्रतिपत्तिमूढमनसा देवेन द्वित्राः नाडिकाः स्थिताः।

व्याख्या—कुन्तलेश्वरसुता—कुन्तलानाम् ईश्वरः कुन्तलेश्वरस्तस्य सुता पुत्री। स्नाता रजोनिवृत्त्यनन्तरं कृतशुद्धिस्नाना वर्त्तते। अङ्गराजस्वसुः अङ्गानां राजा अङ्गराजः, तस्य स्वसा भगिनी तस्याः। वारः क्रमः। अस्तीति शेषः। कमलया लक्ष्म्या। इयं रात्रिः निशा। द्यूते। जिता। अधुना साम्प्रतम्। देवी प्रसाद्या प्रसादविषयीकरणीया। तदेतासां चतसृणां कतरा प्रथमं सेव्येति विचारे। अन्तःपुरसुन्दरीजनगुणे अन्तःपुरस्य अन्तःप्रासादस्य यो नारीजनस्तस्य गुणे न्यूनाधिकविचारं कुर्वता देवेन श्रीभोजराजेन, भवतेत्यर्थः। अप्रतिपत्तिः अज्ञानं तत्र मूढं सम्मोहावृतं मनो यस्य तेन, अनिश्चितधिया सता। द्वित्राः कतिचित्। नाडिकाः स्थिताः, घटिका व्यतीताः।

राजा ने प्रत्येक वर्ण पर लाख रुपये दिये।

एक बार राजा भोज ने अन्तःपुर में भोगयोग्य तथा सदृश गुण-सम्पन्न अपनी चार रानियों को देखा। उनमें कुन्तलराज की पुत्री पद्मावती ऋतुस्नान कर

चुकी थी। क्रमानुसार अङ्गराज की पुत्री चन्द्रमुखी की बारी थी। कमला ने जुए में सम्भोग-क्षण जीता था। अग्रमहिषी लीला देवी ने दूती भेजकर बुलाया था। इस प्रकार चारों आकर्षणों को देखकर उनमें न्यूनाधिक भाव की परीक्षा करने लगे। दाक्षिण्य के निधानभूत राजाधिराज श्रीभोज ने दो-तीन घड़ियों तक विचार कर उनमें समता पाई और गुणों की न्यूनाधिकता का निश्चय न कर सके। और तब वे सो गये। प्रातःकाल उठकर दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर सभा में आये और वहाँ सिंहासन पर बैठ राजा भोज ने समस्त कवि-समाज के शिरोमणि कालिदास को देखकर कहा—कविश्रेष्ठ! तीन वर्ण न्यून चतुर्थ चरण की इस समस्या को सुनो। यह कह राजा ने समस्या सुनाई—

विवेक-रहित तथा किंकर्त्तव्यताविमूढ़ मन से (राजा ने) दो-तीन घड़ी वैसे ही बिता दी।

यह सुनकर राजा ने कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ! इस समस्या की पूर्त्ति करो। तब कालिदास ने राजा के हृदय को हाथ पर रखे हुए आँवले के समान देखकर तीन अक्षर अधिक तीन चरणों से उस समस्या की पूर्त्ति की।

देव! कुन्तलराज की कुमारी ने ऋतुस्नान किया है। अङ्गराज की बहिन की बारी है। कमला ने इस रात्रि को जुए में जीता है। अग्रमहिषी को भी प्रसन्न करना है। इस प्रकार अन्तःपुर की रानियों के गुणों में न्यूनाधिकता का विचार करते हुए राजा भोज ने विवेक-रहित तथा किंकर्त्तव्यताविमूढ़ मन से दो-तीन घड़ी वैसे ही बिता दी।

तदा राजा स्वहृदयमेव ज्ञातवतः कालिदासस्य पादयोः पतति स्म। कवि-मण्डलं च चमत्कृतमजायत।

एकदा राजा धारानगरे विचरन्क्वचित्पूर्णकुम्भं धृत्वा समायान्तीं पूर्ण-चन्द्राननां कांचिद् दृष्ट्वा तत्कुम्भजले शब्दं च कञ्चन श्रुत्वा 'नूनमेवमेव तस्याः कण्ठग्रहेऽयं घटो रतिकूजितमिव कूजति' इति मन्यमानः सभायां कालि-दासं प्राह—'कूजितं रतिकूजितम्' इति कविराह—

विदग्धे सुमुखे रक्ते नितम्बोपरि संस्थिते।
कामिन्याश्लिष्टसुगले कूजितं रतिकूजितम् ॥३०३॥

तदा राजेति । **Vocabulary** : कण्ठग्रह—आलिंगन, embrace. रतिकूजित–रतिशब्द, sound at the time of saxual intercourse.

(१) विदग्ध—चतुर, skilful. सुमुख, सुन्दर मुख, pretty-faced. रक्त, अनुराग-युक्त, devoted. नितम्ब—कटिभाग, hip. आश्लिष्ट—आलिंगित, embraced. सुगल—सुन्दरकण्ठ, beautiful neck.

(२) अथवा—विदग्ध विशेषरूप से दग्ध, अर्थात् परिपक्व, well-backed. सुमुख—सुन्दर मुख-युक्त, of well-made neck. रक्त–लाल वर्ण का, red. नितम्बोपरि—कमर के ऊपर के भाग पर; on the side over the hip. संस्थित—रखा हुआ, placed.

Prose Order : विदग्धे सुमुखे रक्ते नितम्बोपरि संस्थिते कामिन्या आश्लिष्टसुगले कूजितं रतिकूजितम् ।

व्याख्या—विदग्धे निपुणे, रतिक्रियाकोविदे । सुमुखे सुन्दरमुखयुते । रक्ते अनुरक्ते । नितम्बोपरि संस्थिते कटिमध्यमारूढे । कामिन्या युवत्या आश्लिष्टः आलिङ्गितः सुगलः शोभनः कण्ठो यस्यास्तस्मिन् तथाभूते सति । सुरतशब्दः कूजितं विलक्षणम् अनन्यसाधारणं वैचित्र्यं प्रकटयति ।

घटपक्षे—विदग्धे विशेषेण दग्धे, अग्निना परिपाकं प्रापिते । सुमुखे शोभनाग्रभागे । रक्ते रक्तवर्णे । नितम्बोपरि नितम्बस्य मध्यभागस्य उपरि। संस्थिते निहिते । कामिन्या युवत्या आश्लिष्ट आलिङ्गितः सुगलः शोभनः कण्ठो यस्य तस्मिन् । कूजितं घटान्तर्वर्तिजलशब्दः रतिकूजितं रतिकालीन शब्द इवाभाति ।

घटपक्षे—विशेषेण दग्धे वह्निना परिपाकं प्रापिते सुकण्ठ रक्तवर्णे युवत्या मध्यभागोपरि निहिते घटे यद्घटान्तर्वर्तिजलशब्दो जायते स मैथुनजन्यशब्दसम आभाति ।

तब राजा अपने हृदय के अभिप्राय को जाननेवाले कालिदास के चरणों में गिर पड़े और कवि-समाज चकित हो गया ।

एक बार राजा ने धारानगरी में घूमते हुए एक जगह जलपूर्ण कुम्भ को उठाकर आती हुई तथा पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाली किसी महिला को देखा। उसके कुम्भ-जल में होनेवाले किसी शब्द को सुनकर निश्चय किया कि निस्सन्देह इस नारी के आलिङ्गन से यह कुम्भ रति-शब्द के समान शब्द कर रहा है। सभा में आकर वे कालिदास से कहने लगे—

यह शब्द रति-शब्द के समान हो रहा है।

कवि ने कहा—

अच्छी तरह पके हुए, सुन्दर मुखवाले, लालवर्ण जलकुम्भ को जब कमर पर स्त्री ने रखा और जब कण्ठ से आलिङ्गन किया तब वह रति-कूजित के समान कूजन करने गया।

तदा तुष्टो राजा प्रत्यक्षरलक्षं ददौ, ननाम च।

एकदा नर्मदायां महाह्रदे जालकैरेकः शिलाखण्ड ईषद्भ्रंशिताक्षरः कश्चिद्दृष्टः। तैश्च परिचिन्तितम्—'इदमत्र लिखितमिव किंचिद्भाति। नूनमिदं राजनिकटं नेयम्' इति बुद्ध्या भोजसदसि समानीतम्। तदाकर्ण्य भोजः प्राह—'पूर्वं भगवता हनूमता श्रीमद्रामायणं कृतम्। तदत्र ह्रदे प्रक्षेपितमिति श्रुतमस्ति। ततः किमिदं लिखितमित्यवश्यं विचार्यमिति लिपिज्ञानं कार्यम्।' जतुपरीक्षयाक्षराणि परिज्ञाय पठति। तत्र चरणद्वयमानुपूर्व्याल्लब्धम्—

'अयि खलु विषमः पुराकृतानां
भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः।'

ततो भोजः प्राह—'एतस्य पूर्वार्धं कथ्यताम्' इति। तदा भवभूतिराह—

क्व नु कुलमकलङ्कमायताक्ष्याः
क्व नु रजनीचरसंगमापवादः।
अयि खलु विषमः पुराकृतानां
भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः ॥३०४॥

तदा तुष्ट इति। **Vocabulary** : जालक— a fisherman. शिलाखण्ड—प्रस्तरखण्ड, a piece of stone. भ्रंशित—क्षत, damaged. नूतन—आधुनिक, modern. जतु—लाख, lac.

विषम—unpleasant. पुराकृत—पूर्वजन्म में किये हुए, done in previous life. जन्तु—जीव, the living beings. विपाक—फल, the result. अकलङ्क—कलङ्क-रहित, spotless. आयताक्षी—दीर्घाक्षी, long-eyed one. रजनि—रात्रि । रजनिचर—राक्षस । संगम—अनैतिक मिलन, immoral union. अपवाद—scandal.

Prose Order: अपि पुराकृतानां कर्मणां जन्तुषु विपाकः विषमः हि खलु भवति । आयताक्ष्याः अकलङ्कं कुलं क्व नु । रजनिचरसङ्गमापवादः क्व नु ।

व्याख्या—अपीति—विस्मये । पुराकृतानां—पूर्वजन्मन्याचरितानाम् । कर्मणाम् । जन्तुषु प्राणिषु । विपाकः परिणामः । विषमः कटुर्भवति । आयताक्ष्याः आयते दीर्घे अक्षिणी लोचने यस्याः सा आयताक्षी दीर्घाक्षी, तस्या जानक्याः । अकलङ्कं कलङ्कमुक्तम् उज्ज्वलम् । कुलं वंशः क्व । रजनिचरसङ्गमापवादः—रजनिचरो राक्षसो रावणः, तेन सह यो सङ्गमः गृहवासरूपः, तेन जनितो योऽपवादः सः क्व नु ?

(दूसरा अर्थ अश्लील होने के कारण नहीं दिया गया।)

तब प्रसन्न होकर राजा ने प्रतिवर्ण लाख रुपये दिये और प्रणाम किया।

एक बार नर्मदा के महान् जलाशय में धीवरों ने एक शिला-खण्ड देखा, जिसके कुछ अक्षर टूटे हुए थे और उन्होंने सोचा—यहाँ कुछ लिखा हुआ-सा प्रतीत होता है । निश्चित ही इस शिलाखण्ड को राजा के निकट ले जाना चाहिए । इस विचार से वे राजा भोज की सभा में उसे उठा लाये । यह सुनकर भोज ने कहा—पहले भगवान् हनुमान ने जिस रामायण का निर्माण किया था, उसे इस जलाशय में अर्वाचीनों ने डाल दिया है–ऐसा हमने सुना है । तो यह क्या लिखा है, इसका अवश्य विचार करना चाहिए, लिपिज्ञान करना चाहिए । लाख की परीक्षा से वर्णों की पहचान कर पढ़ा तो दो चरण अनुक्रम से मिले ।

पूर्वजन्म में किये हुए बुरे कर्मों का कैसा कटुफल जीवों को प्राप्त होता है ।

तब भोज ने कहा—इसका पूर्वार्ध कहो। तब भवभूति बोले—

विशाललोचनवती (सीता) का कहाँ तो कलंक-रहित कुल और कहाँ निशाचर (रावण) के घर रहने से लोक-निन्दा !

ततो भोजस्तत्र ध्वनिदोषं मन्वानस्तदेव पूर्वार्धमन्यथा पठति स्म—

क्व जनकतनया क्व रामजाया
क्व च दशकन्धरमन्दिरे निवासः ।
अयि खलु विषमः पुराकृतानां
भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः ॥३०५॥

ततो भोज इति। Vocabulary : दशकन्धर—दशग्रीव, रावण। मन्दिर—महल, palace.

Prose Order : जनकतनया क्व, रामजाया क्व, दशकन्धरमन्दिरे निवासः च क्व। अयि पुराकृतानां कर्मणां जन्तुषु विषमः विपाकः हि खलु भवति।

व्याख्या—जनकतनया जानकी क्व, रामजाया रामपत्नी क्व, इत्युभयं सीतागौरवपक्षे। रावणमन्दिरे दशमुखगृहे तस्या वासः इति दोषनिरूपणपक्षे। अयीति सम्बोधने। पुराकृतानां पूर्वजन्मन्याचरितानां दुष्कर्मणामेवायं प्रभाव इति भावः।

तब भोज ने इस श्लोक में ध्वनि-दोष समझकर उसी पूर्वार्ध को दूसरे प्रकार से पढ़ा।

कहाँ जनक की पुत्री और राम की पत्नी सीता और कहाँ दशग्रीव रावण के घर में उसका वास! पूर्वजन्म में किये हुए बुरे कर्मों का कैसा कटुफल जीवों को प्राप्त होता है।

ततो भोजः कालिदासं प्राह—'सुकवे, त्वमपि कविहृदयं पठ' इति। स आह—

शिवशिरसि शिरांसि यानि रेजुः
शिव शिव तानि लुठन्ति गृध्रपादे ।
अयि खलु विषमः पुराकृतानां
भवति हि जन्तुषु कर्मणां विपाकः ॥३०६॥

ततो भोज इति। **Vocabulary** : रेजुः—सुशोभित हुए, shone. लुठन्ति—लुढकते हैं, roll. गृध्र—गीध, vulture.

Prose Order : यानि शिरांसि शिवशिरसि रेजुः शिवशिव तानि गृध्रपादैः लुठन्ति । शेषं समानम्।

व्याख्या—यानि शिरांसि रावणस्य मस्तकानि । शिवशिरसि शिवस्य शिरसि । रेजुः शुशुभिरे । तानि रावणशिरसि रामशरैश्छिन्तानि । गृध्रपादैः गृध्राणां पादेषु । लुठन्ति चरन्ति। शेषम् प्राग्वत् ।

तब भोज ने कालिदास से कहा—कविवर,तुम भी कवि ने जैसा लिखा होगा, वह सुनाओ। कालिदास बोले—

रावण के जो सिर महादेव के सिर पर विराजमान होते थे, शिव, शिव, वे अब गीधों के चरणों में लोटते हैं । पूर्वजन्मों में किये हुए बुरे कर्मों का कैसा कटुफल जीवों को प्राप्त होता है!

ततस्तस्य शिलाखण्डस्य पूर्वपुटे जतुशोधनेन कालिदासपठितं तमेव दृष्टवा राजा भृशं तुतोष ।

कदाचिद्भोजेन विलासार्थं नूतनगृहान्तरं निर्मितम् तत्र गृहान्तरे गृहप्रवेशात्पूर्वमेकः कश्चिद्ब्रह्मराक्षसः प्रविष्टः । स च रात्रौ तत्र ये वसन्ति तान्भक्षयति । ततो मान्त्रिकान्समाहूय तदुच्चाटनाय राजा यतते स्म । स चागच्छन्नेव मान्त्रिकानेव भक्षयति । किं च स्वयं कवित्वादिकं पूर्वाभ्यस्तमेव पठंस्तिष्ठति । एवं स्थिते तत्रैव रक्षसि राजा 'कथमस्य निवृत्तिः' इति व्यचिन्तयत् । तदा कालिदासः प्राह—'देव, नूनमयं राक्षसः सकलशास्त्रप्रवीणः सुकविश्च भाति । अतस्तमेव तोषयित्वा कार्यं साधयामि । मान्त्रिकास्तिष्ठन्तु मम मन्त्रं पश्य' इत्युक्त्वा स्वयं तत्र रात्रौ गत्वा शेते स्म । प्रथमयामे ब्रह्मराक्षसः समागतः । स चापूर्वं पुरुषं दृष्टवा प्रतियाममेकैकां समस्यां पाणिनिसूत्रमेव पठति । येनोत्तरं तद्धृदयगतं नोक्तम्, अयं न ब्राह्मणः, अतो हन्तव्यः' इति निश्चित्य हन्ति । तदानीमपि पूर्ववदयमपूर्वः पुरुषः । अतो मया समस्या पठनीया । न चेद्वक्ति सदृशमुत्तरं तस्यास्तदा हन्तव्य इति बुद्ध्या पठति—

'सर्वस्य द्वे'

इति । तदा कालिदासः प्राह—

'सुमतिकुमती संपदापत्तिहेतू'

इति । ततः सः गतः । पुनरपि द्वितीययामे समागत्य पठति—

'वृद्धो यूना'

इति । तदा कविराह—

'सह परिचयात्त्यज्यते कामिनीभिः' ।

इति । तृतीययामे स राक्षसः पुनः समागत्य पठति—

'एको गोत्रे'

इति । ततः कविराह—

'प्रभवति पुमान्यः कुटुम्बं विभर्त्ति'

इति । ततश्चतुर्थयाम आगत्य स राक्षसः पठति—

'स्त्री पुंवच्च'

इति । ततः कविराह—

'प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम्' ॥३०७॥

ततस्तस्येति । **Vocabulary** : विलासार्थम्—for enjoyment. मान्त्रिक—मन्त्रशास्त्रनिपुण, well-versed in mystic lore. समाहूय—बुलाकर, having called for. उच्चाटन—निकालना, getting out. पूर्वाभ्यस्त—पहले अभ्यास किये हुए, previously learnt. याम—प्रहर, part. हृदयङ्गम—हृदय के अनुकूल, satisfactory. अपूर्वः—नया, a stranger. सुमति—शोभन विचार, good counsel. कुमति—बुरा विचार, bad counsel. सम्पत्—सम्पत्ति, prosperity. आपत्ति—आपद्, misfortune. गेह—गृह ।

Prose Order : द्वे-सुमतिकुमती सर्वस्य सम्पदापत्तिहेतू । वृद्धः यूना सह परिचयात् कामिनीभिः परित्यज्यते । गोत्रे एकः सः पुमान् भवति यः कुटुम्बं बिभर्त्ति । यदा स्त्री च पुंवत् प्रभवति तदा तद् गेहं हि विनष्टम् ।

व्याख्या—द्वे उभे सुमतिकुमती सुबुद्धिकुबुद्धी सर्वस्य जनस्य सम्पदापत्तिहेतू सम्पद्विपदोः कारणभूते । वृद्धः जरां गतः पुरुषः यूना । यौवनस्थेन पुरुषेण

सह परिचयात् सङ्गमप्राप्त्या कामिनीभिः युवतीभिः त्यज्यते परिहीयते । गोत्रे कुले । एक एव । पुमान् पुरुषः भवति पुरुषसंज्ञां लब्धुं क्षमः । यः कुटुम्ब स्वाश्रितबन्धून् । बिभर्त्ति परिपालयति । यदा । स्त्री नारी । पुंवत् पुरुषसमम् । प्रभवति स्वमहत्त्वमुदर्शयति । तद् गेहं गृहम् । विनष्टम् अनुशासनहीनतया सुखाय न कल्पते ।

तब उस शिला-खण्ड के पूर्वपुट का लाक्षा-चित्र लेकर राजा ने जब कालिदास-पठित पूर्वार्ध को देखा तब वह बहुत प्रसन्न हुआ ।

एक बार भोज ने विनोद के लिए एक नया महल बनवाया । उस महल में गृहप्रवेश से पहले एक ब्रह्मराक्षस प्रविष्ट हो गया । रात्रि में जो वहाँ रहते, उन्हें वह खा जाता । तब मन्त्रशास्त्रियों को बुलाकर राजा ने उसे भगाने के लिए यत्न किया । जाना तो दूर रहा, किन्तु वह मन्त्रशास्त्रियों को ही खा जाता था और स्वयं पूर्व-अभ्यास के अनुसार कविता आदि का पाठ करता हुआ वहाँ रहने लगा । जब राक्षस इस प्रकार वहीं चिपका रहा तब राजा ने सोचा 'इसे किस प्रकार हटाया जाय ?' तब कालिदास ने कहा— देव ! निश्चित ही यह राक्षस सभी शास्त्रों में निपुण तथा उत्तम कवि भी है। इसलिए इसे प्रसन्न करके कार्य सम्पन्न करूँगा । मन्त्रशास्त्रियों को जाने दीजिए, मेरे मन्त्र को देखिए । यह कहकर कालिदास स्वयं रात्रि में जाकर वहाँ सो रहे । पहले पहर में ब्रह्मराक्षस आया । नये मनुष्य को देखकर वह पाणिनि-सूत्रों के रूप में प्रतिप्रहर एक-एक समस्या कहता था । उसके मन के अनुसार जिसने उत्तर नहीं दिया, उसे वह समझ लेता था कि "यह ब्राह्मण नहीं है, अतएव यह हनन-योग्य है" और उसे वह मार डालता था । तब भी उसने सोचा कि जैसे पहले लोग यहाँ आते रहे, वैसे ही यह एक नया व्यक्ति आया है; अतएव मैं वही समस्या पढ़ूँ। यदि इसका ठीक उत्तर नहीं देता है तो इसे मार देना होगा । यह सोच उसने समस्या पढ़ी—

सबकी दो वस्तुएँ—

तब कालिदास ने कहा—

बुद्धि और कुबुद्धि सम्पत्ति और आपत्ति के कारण हैं।

तब वह ब्रह्मराक्षस चला गया।

फिर दूसरे पहर में आकर बोला—

वृद्ध पुरुष युवा पुरुषों के

तब कालिदास ने कहा—

सहवास से स्त्रियों द्वारा त्याग दिया जाता है।

तीसरे पहर में वह राक्षस फिर आया। उसने फिर पढ़ा—

गोत्र में एक

तब कालिदास ने कहा—

वही पुरुष है, जो कुटुम्ब का पालन-पोषण करता है।

तब चौथे पहर में आकर उस राक्षस ने पढ़ा—

स्त्री पुरुष के समान

तब कालिदास बोले—

जब प्रभुत्व रखने लगती है तब उस घर का नाश होने लगता है।

इति। ततः स राक्षसो यामचतुष्टयेऽपि स्वाभिप्रायमेव ज्ञात्वा तुष्टः प्रभातसमये समागत्य तमाश्लिष्य प्राह—'सुमते, तुष्टोऽस्मि। किं तवाभीष्टम्' इति। कालिदासः प्राह—'भगवन्, एतद्गृहं विहायान्यत्र गन्तव्यम्' इति। सोऽपि 'तथा' इति गतः। अनन्तरं तुष्टो भोजः कविं बहु मानितवान्।

एकदा सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजे सकलभूपालशिरोमणौ द्वारपाल आगत्य प्राह—'देव, दक्षिणदेशात्कोऽपि मल्लिनाथनामा कविः कौपीनावशेषो द्वारि वर्त्तते।' राजा—'प्रवेशय' इत्याह। ततः विरागत्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा तदाज्ञया चोपविष्टः पठति—

नागो भाति मदेन खं जलधरैः पूर्णेन्दुना शर्वरी
शीलेन प्रमदा जवेन तुरगो नित्योत्सवैर्मन्दिरम्।
वाणी व्याकरणेन हंसमिथुनैर्नद्यः सभा पण्डितैः
सत्पुत्रेण कुलं त्वया वसुमती लोकत्रयं भानुना ॥३०८॥

ततस्स इति । **Vocabulary** : चतुष्टय—चार, four. आश्लिष्य—आलिंगन करके, having embraced. नाग—हाथी, elephant. मद—rut. शर्वरी—रात्रि, night. शील—सुस्वभाव, good conduct. प्रमदा-नारी, a woman. जव—वेग, speed. मिथुन—युगल, a pair. वसुमती—पृथ्वी, the earth.

Prose Order : नागो मदेन भाति, खं जलधरैः, शर्वरी पूर्णेन्दुना (भाति), प्रमदा शीलेन (भाति), तुरगो जवेन (भाति), मन्दिरं नित्योत्सवैः (भाति), वाणी व्याकरणेन (भाति), नद्यः हंसमिथुनैः (भान्ति), सभा पण्डितैः (भाति), सत्पुत्रेण कुलं (भाति), त्वया वसुमती (भाति), भानुना लोकत्रयं (भाति) ।

व्याख्या—नागो गजः । मदेन कपोलयोः स्रुतेन स्यन्देन । भाति शोभते । खं गगनम् । जलधरैः मेघैः । भाति । शर्वरी रात्रिः । पूर्णेन्दुना पूर्णेन चन्द्रमसा । भाति । प्रमदा स्त्री । शीलेन शोभनेन स्वभावेन । भाति । तुरगः अश्वः । जवेन वेगेन । भाति । मन्दिरं देवगृहम् । नित्योत्सवैः प्रतिदिनं विहितैः उत्सवैः । भाति । वाणी गीः । व्याकरणेन शब्दशास्त्रेण । भाति । नद्यः वाहिन्यः । हंसमिथुनैः हंसयुगलैः । भान्ति । सभा परिषत् । पण्डितैः विद्वद्भिः (भाति) । सत्पुत्रेण शोभनगुणैरुपलक्षितेन सुतेन कुलं वंशः भाति । त्वया भोजराजेन । वसुमती पृथ्वी । भाति । भानुना सूर्येण । लोकत्रयं भाति त्रयो लोकाः भान्ति ।

जब चारों पहरों में राक्षस को अपना मनोगत कवि के द्वारा विदित हुआ, तब वह प्रसन्न हुआ ! प्रभात में वह आया और कवि से मिलकर बोला—मेधाविन् ! मैं तुझपर प्रसन्न हूँ, तुझे क्या चाहिए ? कालिदास ने कहा—भगवन् ! आप इस घर को त्यागकर कहीं दूसरी जगह चले जाइए । "हाँ" कहकर वह भी चल दिया । फिर भोज कालिदास से सन्तुष्ट ए और कवि का बहुत सम्मान किया ।

एक बार जब समस्त राजाओं के शिरोमणि भोजराज सिंहासन पर विराजमान थे, द्वारपाल ने आकर कहा—स्वामिन् ! दक्षिण देश से मल्लिनाथ

नाम का कवि केवल कौपीन पहने हुए द्वार पर खड़ा है । राजा ने कहा—भेज दो । तब कवि ने आकर आशीर्वाद दिया । राजा की आज्ञा पाकर बैठ गया और पढ़ने लगा ।

हाथी मद से, आकाश बादलों से, रात्रि पूर्ण चन्द्र से, स्त्री शील से, अश्व वेग से, मंदिर प्रतिदिन के उत्सवों से, वाणी व्याकरण से, नदियाँ हंस के जोड़ों से, सभा पण्डितों से, कुल सुपूत से, तीनों लोक सूर्य से और पृथ्वी आपसे सुहाती है ।

ततो राजा प्राह—'विद्वन्' तवोद्देश्यं किम्, इति । ततः कविराह—

अम्बा कुप्यति न मया न स्नुषया सापि नाम्बया न मया ।
अहमपि न तया न तया वद राजन् कस्य दोषोऽयम् ॥३०६॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : स्नुषा—पुत्रवधू, daughter-in-law.

Prose Order : अम्बा कुप्यति, मया न, स्नुषया न, सा अपि अम्बया न, मया न । अहम् अपि तया न, तया न । राजन् ! वद अयं कस्य दोषः ?

व्याख्या—अम्बा माता कुप्यति क्रुद्ध्यति । मया सह न कुप्यति, स्नुषया, पुत्रवध्वा सह न कुप्यति । सा अपि स्नुषा अपि । अम्बया जनन्या न कुप्यति, मया न कुप्यति । अहम् अपि तया जनन्या न कुप्यामि, स्नुषया न कुप्यामि । राजन् ! वद कथय । अयं कस्य दोषः ?

तब राजा ने कहा—आपका अभिप्राय क्या है ? तब कवि बोले—

माता क्रोध करती है, किन्तु मुझसे और बहू से नहीं । बहू भी क्रोध करती है, किन्तु वह मुझसे और माता से नहीं । मैं भी क्रोध करता हूँ, किन्तु न माता से और न बहू से । राजन्, बताओ यह किसका दोष है ?

इति राजा च दारिद्र्यदोषं ज्ञात्वा कविं पूर्णमनोरथं चक्रे ।

एकदा द्वारपाल आगत्य राजानं प्राह—'देव, कविशेखरो नाम महाकविर्द्वारि वर्त्तते । राजा—'प्रवेशय' इत्याह । ततः कविरागत्य 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा पठति—

राजन्दौवारिकादेव प्राप्तवानस्मि वारणम् ।
मदवारणमिच्छामि त्वत्तोऽहं जगतीपते ॥३१०॥

राजेति । **Vocabulary** : दारिद्र्यदोष—दरिद्रता का दोष, the fault of poverty. दौवारिक–द्वारपाल, door-keeper. (१) वारण–हाथी, the elephant.; (२) प्रवेशनिषेध, refusal of admission. जगतीपति—जगद्रक्षक, the protector of the world.

Prose Order : राजन् ! दौवारिकात् एव वारणं प्राप्तवान् अस्मि । जगतीपते ! अहं त्वत्तः मदवारणम् इच्छामि ।

व्याख्या—राजन् ! नृपते ! दौवारिकात् द्वारपालात् । एव । वारणं प्रवेशनिषेधम्, हस्तिनम् इति श्लेषः । प्राप्तवान् अस्मि । जगतीपते लोकपालक ! अहम् । त्वत्तः त्वत् मदवारण मत्तहस्तिनम् इच्छामि याचे ।

दरिद्रता को कारण समझकर राजा ने कवि का मनोरथ पूर्ण किया । एक बार द्वारपाल आकर राजा से कहने लग—देव ! कविशेखर नाम का महाकवि द्वार पर विराजमान है । राजा ने कहा—भेजो । फिर कवि ने आकर आशीर्वाद दिया और पढ़ा—

राजन् ! द्वारपाल से ही मुझे वारण अर्थात् अन्दर आने का निषेध मिल गया है । पृथ्वीनाथ ! अब आपसे मदवारण अर्थात् मस्त हाथी चाहता हूँ ।

तदा प्राङ्मुखस्तिष्ठन्राजातिसंतुष्टस्तं प्राग्देशं सर्वं कवये दत्तं मत्वा दक्षिणाभिमुखोऽभूत् । ततः कविश्चिन्तयति—'किमिदम् । राजा मुखं परावृत्य मां न पश्यति' इति । ततो दक्षिणदेशे समागत्याभिमुखः कविः पठति—

अपूर्वेयं धनुर्विद्या भवता शिक्षिता कथम् ।
मार्गणौघः समायाति गुणो याति दिगन्तरम् ॥३११॥

तदेति । **Vocabulary** : प्राङ्मुख—पूर्व दिशा को मुख किये, with his face directed to the east. परावृत्य—मुँह फेरकर, having averted the face. अपूर्वा—नवीन, strange. धनुर्विद्या, the

science of archery. मार्गणौघ—बाण-समूह, the mass of arrows. गुण-प्रत्यंचा, the bow-string. दिगन्तर—आकाश, the sky.

Prose Order : इयम् अपूर्वा धनुर्विद्या भवता कथं शिक्षिता ? मार्गणौघः समायाति, गुणः दिगन्तरं याति ।

व्याख्या—इयम् । अपूर्वा अभिनवा । धनुर्विद्या धनुषः विद्या । भवता त्वया । कथं शिक्षिता केन प्रकारेणाभ्यस्ता । मार्गणौघः मार्गणानां शराणाम् ओघः समूहः समायाति समागच्छति । गुणः ज्या । दिगन्तरं गगनम् । याति । इति विचित्रम् । सामान्यतः शरा निर्यान्ति, ज्या उरस्तलं स्पृशति । अत्र त्वन्यथा । परिहारपक्षे मार्गणानां याचकानाम् ओघस्त्वां समागच्छति, गुणः कीर्त्तिश्च सर्वत्र प्रसरति ।

तब पूर्व की ओर मुख किये राजा ने अत्यन्त प्रसन्न होकर मन से समस्त पूर्व देश कवि को देकर दक्षिण की ओर मुख कर लिया । तब कवि सोचने लगे—क्योंकर राजा ने मेरी ओर से मुँह फेर लिया है और मुझे नहीं देखते हैं । फिर दक्षिण दिशा को आकर राजा के सामने खड़े होकर कवि ने पढ़ा ।

यह नवीन धनुष-विद्या आपने कहाँ से सीखी है—जबकि बाणों का समूह आता है और प्रत्यंचा आकाश को चल देती है ? (दूसरा अर्थ—भिखारी आते हैं और आपकी कीर्त्ति दिशाओं में फैल जाती है।)

ततो राजा दक्षिणदेशमपि मनसा कवये दत्त्वा स्वयं प्रत्यङ्मुखोऽभूत् । कविस्तत्रागत्य प्राह—

सर्वज्ञ इति लोकोऽयं भवन्तं भाषते मृषा ।
पदमेकं न जानीषे वक्तुं नास्तीति याचके ॥३१२॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : प्रत्यङ्—पश्चिम, west. सर्वज्ञ, omniscient. मृषा—झूठ, a lie.

Prose Order : अयं लोकः सर्वज्ञः इति भवन्तं मृषा भाषते याचके 'नास्ति' इति एकं पदं वक्तुं न जानीषे ।

व्याख्या—अयं लोकः अयं जनः । सर्वज्ञः सर्वं जानातीति सः, सर्ववित् । इति विशेषणेन भवन्तं त्वां मृषा मिथ्या भाषते कथयति । भवान् सर्वज्ञो नैवेत्याशयेनाह—याचके अर्थिनि 'नास्ति' इति एकं पदं शब्दं वक्तुं कथयितुं न जानीषे ।

तब राजा ने मन में दक्षिण देश भी कवि को दे दिया और अपना मुँह पश्चिम की ओर कर लिया । पश्चिम में आकर कवि ने कहा—

लोग आपको मिथ्या ही सर्वज्ञ कहते हैं; क्योंकि याचक के प्रति आप एक 'नहीं' पद कहना नहीं जानते ।

ततो राजा तमपि देशं कवेर्दत्तं मत्वोदङ्.मुखोऽभूत् । कविस्तत्राप्यागत्य प्राह—

सर्वदा सर्वदोऽसीति मिथ्या त्वं कथ्यसे बुधैः ।
नारयो लेभिरे पृष्ठं न वक्षः परयोषितः ॥३१३॥

ततो राजति । Vocabulary : उदङ्.मुख—उत्तर की ओर मुख किये हुए, with his face directed to the north. सर्वद—सब वस्तुओं का दाता, the giver of each and everything. पृष्ठ—पीठ, back. वक्षस्—छाती, breast.

Prose Order : सर्वदा सर्वदः असि इति त्वं बुधैः मिथ्या कथ्यसे । अरयः (तव) पृष्ठं न लेभिरे । परयोषितः वक्षः न (लेभिरे) ।

व्याख्या—सर्वदा नित्यम् । सर्वदः सर्वाणि वस्तूनि ददातीति (उपपद-तत्पु०) सर्वदः । असि । इति । त्वम् । बुधैः विद्वद्भिः । मिथ्या अनृतमेव । कथ्यसे । अरयः शत्रवः । तव । पृष्ठं पृष्ठभागम् । न लेभिरे न प्राप्तवन्तः । इत्यतस्तव 'सर्वद' इति व्यपदेशोऽनुचितः । परयोषितः परस्त्रियः । तव । वक्ष उरः । न लेभिरे ।

तब राजा ने वह देश भी मनसे कवि को दे दिया और अपना मुँह उत्तर की ओर फेर लिया । कवि ने उत्तर की ओर भी आकर कहा—

सदा सभी वस्तुओं के आप दाता हैं, इस प्रकार विद्वान् आपके विषय में मिथ्या ही कहते हैं । क्योंकि शत्रुओं ने कभी आपकी पीठ नहीं पाई और परस्त्रियों ने आपके वक्षःस्थल को कभी नहीं पाया ।

ततो राजा स्वां भूमिं कविदत्तां मत्वोत्तिष्ठति स्म । कविश्च तदभिप्रायम-ज्ञात्वा पुनराह—

राजन्कनकधाराभिस्त्वयि सर्वत्र वर्षति ।
अभाग्यच्छत्रसंच्छन्ने मयि नायान्ति बिन्दवः ॥३१४॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : कनकधारा—सुवर्णधारा, torrents of gold. छत्र—umbrella. संच्छन्न—ढका हुआ, covered.

Prose Order: राजन् ! कनकधाराभिः सर्वत्र वर्षति त्वयि अभाग्यच्छत्रसंच्छन्ने मयि बिन्दवः न आयान्ति ।

व्याख्या—कनकधाराभिः सुवर्णौघेन । सर्वत्र सर्वेषु स्थानेषु । वर्षति वृष्टिं कुर्वाणे । त्वयि मयि च अभाग्यच्छत्रसंच्छन्ने—अभाग्यं हतभाग्यमेव छत्रं सुवर्णधारासंसर्गप्रतिरोधकं तेन संच्छन्ने संच्छादिते मयि बिन्दवः सुवर्ण-धाराकणाः । नायान्ति नागच्छन्ति ।

तब राजा मन से कवि को अपनी समस्त भूमि देकर वहाँ से चलने लगे । कवि ने राजा के अभिप्राय को नहीं समझा और कहा—

राजन् ! आपके द्वारा सुवर्ण की धाराओं से सभी जगह वर्षा होने पर भी अभाग्य-रूपी छत्र से आच्छादित मुझपर बूँद भी नहीं पड़ती ।

तदा राजा चान्तःपुरं गत्वा लीलादेवीं प्राह—'देवि, सर्वं राज्यं कवये दत्तम् । ततस्तपोवनं मया सहागच्छ' इति । अस्मिन्नवसरे विद्वान्द्वारि निर्गतः । बुद्धि-सागरेण बुद्धवामात्येन पृष्टः—'विद्वन्, राज्ञा किं दत्तम्' इति । स आह—'न किमपि' इति । तदामात्यः—प्राह 'तत्रोक्तं श्लोकं पठ । ततः कविः श्लोकचतुष्टयं पठति । अमात्यस्ततः प्राह—'सुकवे, तव कोटिद्रव्यं दीयते परं राज्ञा यदत्र तव दत्तं भवति तत्पुनर्विक्रीयताम्' इति, कविस्तथा करोति । ततः कोटिद्रव्यं दत्त्वा कविं प्रेषयित्वामात्यो राजनिकटमागत्य तिष्ठति स्म । तदा राजा च तमाह—'बुद्धिसागर, राज्यमिदं सर्वं दत्तं कवये । पत्नीभिः सह तपोवनं गच्छामि । तत्र तपोवने तवापेक्षा यदि मया सहागच्छ' इति । ततोऽमात्यः प्राह—'देव, तेन कविना कोटिद्रव्यमूल्येन राज्यमिदं विक्रीतम् ।

कोटिद्रव्यं च विदुषे दत्तम् । अतो राज्यं भवदीयमेव । भुङ्क्ष्व' इति । तदा राजा च बुद्धिसागरं विशेषेण सम्मानितवान् ।

अन्यदा राजा मृगयारसेनाटवीमटंल्ललाटंतपे तपने द्यूनदेहः पिपासापर्याकुलस्तुरगमारुह्योदकार्थी निकटतटभुवमटंस्तदलब्ध्वा परिश्रान्तः कस्यचिन्महातरोरधस्तादुपविष्टः । तत्र काचिद्गोपकन्या सुकुमारमनोज्ञसर्वाङ्गा यदृच्छया धारानगरं प्रति तक्रं विक्रीतुकामा तक्रभाण्डं चोद्वहन्ती समागच्छति । तामागच्छन्तीं दृष्ट्वा राजा पिपासावशादेतद्भाण्डस्थं पेयं चेत्पिबामीति बुद्ध्यापृच्छत्—'तरुणि, किमावहसि' इति । सा च तन्मुखश्रिया भोजं मत्वा तत्पिपासां च ज्ञात्वा तन्मुखावलोकनवशाच्छन्दोरूपेणाह—

हिमकुन्दशशिप्रभशङ्खनिभं
परिपक्वकपित्थसुगन्धरसम् ।
युवतीकरपल्लवनिर्मथितं
पिब हे नृपराज रुजापहरम् ॥३५॥

तदो राजेति । **Vocabulary** : ललाटन्तप—मस्तक को जलानेवाला, one who used to burn the forehead. तपन—सूर्य, the sun. द्यूनदेह—जिसका शरीर थक गया था, fatigued in body. पिपासा—प्यास, thirst. गोपकन्या—a milk-maid. मनोज्ञ–मनोहर, attractive. यदृच्छा—अकस्मात्, accident. तक्र—छाछ, milk-butter. छन्दोरूप—पद्य, verse. कुन्द—jasmine. निभ—तुल्य, similar. परिपक्व—पके हुए, ripe. कपित्थ—wood-apple. निर्मथित—मथा हुआ, churned. रुजापहर—रोगापहरक, that which drives away diseases.

Prose Order : हे नृपराज ! हिमकुन्दशशिप्रभशङ्खनिभं परिपक्वकपित्थसुगन्धरसं युवतीकरपल्लवनिर्मथितं रुजापहरं पिब ।

व्याख्या—हे नृपराज भूपेन्द्र, हिमकुन्दशशिप्रभशङ्खनिभं हिमं च कुन्दश्च शशी च ते हिमकुन्दशशिनः तेषां प्रभेव प्रभायस्य तम्, शङ्खेन निभं च तत् । परिपक्वकपित्थसुगन्धरसम्—परिपक्वः परिपाकं गतो यः कपित्थः फलविशेषः तस्य शोभनगन्ध इव सुगन्धो रसो यस्य तत् । युवतिकरपल्लवनिर्मथितम्—

युवत्याः करौ पल्लवाविव ताभ्यां निर्मथितं विलोडितम् रुजापहरम्—रोगापहारकम् । तक्रम् । पिब ।

तब राजा अन्तःपुर में जाकर लीलादेवी से कहने लगे—देवि ! मैंने सम्पूर्ण राज्य कवि को दे दिया है । इसलिए मेरे साथ तपोवन को चलो । इस बीच में वह विद्वान् जब राजद्वार से बाहर निकला तब प्रधानमंत्री बुद्धिसागर ने उससे पूछा—विद्वन् ! राजा ने क्या दिया है? वह बोला—कुछ भी नहीं दिया । तब मंत्री ने कहा—सभा में जो श्लोक तुमने पढ़े, उन्हें सुनाओ; तब कवि ने चार श्लोक पढ़े । तब मंत्री ने कहा—कविश्रेष्ठ ! मैं तुम्हें एक करोड़ रुपये देता हूँ यदि तुम राजा से दिये गये पारितोषिक को बेच दो । कवि ने मान लिया । तब एक करोड़ रुपये देकर कवि को विदा किया । फिर बुद्धिसागर राजा के पास गये । राजा ने उनसे कहा—बुद्धिसागर ! यह सब राज्य कवि को दे दिया है । रानियों के साथ तपोवन को जा रहा हूँ । यदि तपोवन में आना चाहो तो मेरे साथ चलो । तब मंत्री ने कहा—राजन् ! उस कवि ने एक करोड़ रुपये लेकर राज्य बेच दिया है और मैंने एक करोड़ रुपये उस विद्वान् को दे दिये हैं । इस प्रकार यह राज्य आपका ही है । इसे भोगिए । तब राजा ने बुद्धिसागर का विशेष सम्मान किया ।

एक समय राजा शिकार में मस्त होकर जंगल में घूम रहे थे । सूर्य सिर पर आ गया था । शरीर थक गया था । प्यास से व्याकुल हो गये थे । घोड़े पर चढ़कर जल की खोज में समीपवर्त्ती तटभूमि को न पाकर थके हुए किसी विशाल वृक्ष के नीचे बैठ गये । वहाँ एक कोमलाङ्गी और सुन्दर गोप-बालिका अकस्मात् धारा-नगरी में छाछ बेचने के लिए छाछ के घड़े लिये हुई आई । उसे आती हुई देख राजा ने प्यास के कारण "यदि इस बरतन में पीने योग्य कोई वस्तु हुई तो पान करूँगा" यह सोचकर उससे पूछा—तरुणि ! क्या लिये हो ? मुख की कान्ति से उसे भोज समझकर और उसे प्यासा जानकर उसके मुख-कमल को निहारने के लिए पद्य में बोली—

नृपराज ! हिम, कुन्दकुसुम, चन्द्रबिम्ब और शंख के सदृश यह पदार्थ श्वेतवर्ण का है। पके हुए कैथ के समान सुगंधित रस से युक्त है; युवती के कर-कमलों से मथा हुआ है, रोगनाशक है, इसे पियो।

इति। राजा तच्च तक्रं पीत्वा तुष्टस्तां प्राह—'सुभ्रूः, किं तवाभीष्टम्' इति। सा च किंचिदाविष्कृतयौवना मदपरवशमोहाकुलनयना प्राह—'देव, मां कन्यामेवावेहि।' सा पुनराह—

इन्दुं कैरविणीव कोकपटलीवाम्भोजिनीवल्लभं
मेघं चातकमण्डलीव मधुपश्रणीव पुष्पव्रजम्।
माकन्दं पिकसुन्दरीव रमणीवात्मेश्वरं प्रोषितं
चेतोवृत्तिरियं सदा नृपवर त्वां द्रष्टुमुत्कण्ठते ॥३१६॥

राजति। Vocabulary: आविष्कृत—प्रकटीभूत, manifested. यौवन—youth. परवश—पराधीन, under the influence of. मदपरवश—मद के अधीन, drunk by love. मोहाकुलनयन, with eyes filled with infatuation. अवेहि—जानीहि, you may know.

इन्दु—चन्द्रमा। कैरविणी—कुमुदिनी, the night-lotus. कोक—चक्रवाक, the geese. पटली—समूह, an assemblage. अम्भोजिनी-वल्लभ—सूर्य, the sun, the lord of the lotuses. मण्डली—a group. मधुप—भ्रमर, a bee. श्रेणी—पंक्ति, a row. पुष्पव्रज—पुष्प-समूह, the multitude of flowers. माकन्द–a mango. पिकसुन्दरी—कोयल, a cuckoo. प्रोषित—विदेशस्थित, who has gone abroad.

Prose Order: नृपवर ! कैरविणी इन्दुम् इव, कोकपटली अम्भोजिनी वल्लभम् इव, चातकमण्डली मेघम् इव, मधुपश्रेणी पुष्पव्रजम् इव, पिक-सुन्दरी माकन्दम् इव, रमणी प्रोषितम् आत्मेश्वरम् इव, इयं चेतोवृत्तिः सदा त्वां द्रष्टुम् उत्कण्ठते।

व्याख्या—नृपवर नृपेषु नृपाणां वा वरः, निर्धारणे सप्तमी षष्ठी वा। कैरविणी कुमदिनी। इन्दु चन्द्रम् इव। कोकपटली—चक्रवाकमण्डली।

अम्भोजिनीवल्लभं सूर्यम् । चातकमण्डली—चातकसमूहः । मेघं पयोधरम् । मधुपश्रणी—भ्रमरपंक्तिः । पुष्पव्रजम्—कुसुमसमूहम् । पिकसुन्दरी—कोकिला। माकन्दं सहकारम् । प्रोषितं विदेशस्थितम् । आत्मेश्वरं पतिम् । रमणी—पत्नी । इयम् । चेतोवृत्तिः मम् मनः । त्वां द्रष्टुं त्वामवलोकयितुम् उत्कण्ठते कामयते ।

राजा उस छाछ को पीकर प्रसन्न हुए और उससे कहने लगे—सुभ्रू ! तुम क्या चाहती हो ? वह कन्या जिसका यौवन अभी कुछ प्रस्फुटित हुआ था, जिसके नेत्र मोह से आकुल हो रहे थे, मद के वश में आकर बोली—देव ! मझे कन्या ही समझिए । फिर उसने कहा—

नृपराज ! जैसे कुमुदिनी चन्द्रमा को, चकवा-चकवी सूर्य को, चातक मेघों को, भ्रमर फूलों को तथा कोयल पुष्परस को और नारी चिरकाल से विदेश को गये हुए अपने पति को देखना चाहती है, वैसे ही मेरा मन आपको देखने की इच्छा करता है ।

राजा चमत्कृतः प्राह—'सुकुमारि, त्वां लीलादेव्या अनुमत्या स्वीकुर्मः ।' इति धारानगरं नीत्वा तां तथैव स्वीकृतवान् ।

कदाचिद्राजाभिषेके मदनशरपीडिताया मदिराक्ष्याः करतलगलितो हेमकलशः सोपानपङ्क्तिषु रटन्नेव । ततो राजा सभायामागत्य कालिदासं प्राह—'सुकवे, एनां समस्यां पूरय—'टटंटटंटंटटटंटटंटम् ।' तदा कालिदासः प्राह—

राजाभिषेके मदविह्वलाया
हस्ताच्च्युतो हेमघटो युवत्याः ।
सोपानमार्गे प्रकरोति शब्दं
टटंटटंटंटटटटटंटम् ॥३१७॥

राजा चमत्कृत इति । **Vocabulary** : मदन—काम, the cupid. मदिराक्षी—मस्त आँखों से युक्त, of lovely eyes. हेमकलश—सुवर्ण-कलश, a golden jar. सोपान—stairs. रटन्—शब्द करता हुआ,

making a noise. अभिषेक—consecration ceremony. विह्वल—व्याकुल, stupefied.

Prose Order : राजाभिषेके मदविह्वलाया युवत्या हस्ताद् हेमघटः च्युतः सोपानमार्गेषु टटं टटंटं टटटं टटंटं शब्दं करोति ।

व्याख्या—राजाभिषेके—राज्ञःअभिषेकः (ष० तत्पु०) राजाभिषेकः, तस्मिन् । मदविह्वलाया मदमत्तायाः । युवत्या यौवनमारुढायाः स्त्रियाः । हस्तात् करात् । हेमघटः सुवर्णकुम्भः । च्युतः भ्रष्टः । सोपानमार्गेषु सोपान-वर्त्मनि । टटं टटंटम् इत्यादिकं शब्दम् । करोति जनयति ।

राजा भी चकित होकर बोले—तुझे लीलादेवी की अनुमति से स्वीकार करेंगे । इस प्रकार उसे धारानगरी में ले जाकर राजा ने स्वीकार किया ।

कभी राजा के अभिषेक-काल में काम के बाणों से पीड़ित और मदमस्त नेत्रवाली युवती के हाथ से सुवर्ण का घड़ा सीढ़ियों पर शब्द करता हुआ गिर पड़ा । तब राजा ने सभा में आकर कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ ! इस समस्या की पूर्त्ति करो—टटं टटंटं टटटं टटं टम् । तब कालिदास ने कहा—

"कभी राजा के अभिषेक काल में" आदि ।

तदा राजा स्वाभिप्रायं ज्ञात्वाक्षरलक्षं ददौ ।

अन्यदा सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजे कश्चिच्चोर आरक्षकै राजनिकटं नीतः । राजा तं दृष्ट्वा 'कोऽयम्' इत्यपृच्छत् । तदा रक्षकः प्राह—'देव, अनेन कुम्भिल्लकेन कस्मिंश्चिद्वेश्यागृहे घातपातमार्गेण द्रव्याण्यपहृतानि' इति तदा राजा प्राह—'अयं दण्डनीयः' इति । ततो भुक्कुण्डो नाम चोरः प्राह—

भट्टिर्नष्टो भारवीयोऽपि नष्टो
भिक्षुर्नष्टो भीमसेनोऽपि नष्टः ।
भुक्कुण्डोऽहं भूपतिस्त्वं हि राज-
न्भब्भापङ्क्तावन्तकः संनिविष्टः ॥३१८॥

तदा राजेति । **Vocabulary** : आरक्षक—सिपाही । कुम्भीलक—चोर, a thief. घातपात—सेन्ध, breaking into house. भब्भा-

पंक्ति—भकार से आरम्भ होनेवाले शब्दों की पंक्ति, the 'Bha' series. कालधर्म—समयधर्म, the law of the time, i. e. death.

Prose Order : राजन् । भट्टिः नष्टः, अपि च भारविः नष्टः भिक्षुः नष्टः, भीमसेनः अपि नष्टः, अहं भुक्कुण्डः, त्वं हि भूपतिः । भब्भापंक्तौ कालधर्मः प्रविष्टः ।

व्याख्या—हे राजन् नृप ! भट्टिः तदाख्यः कविः । अपि च भारविः तन्नामा कविः । भिक्षुः गौतमबुद्धः, भीमसेनः पाण्डवः, एते सर्वे अपि नष्टाः । अहं भुक्कुण्डः, त्वं भूपतिश्च इत्यावां द्वावपि विनाशं गन्तारौ । भब्भापंक्तौ भकारवर्णारब्धशब्देषु । कालधर्मः मृत्युरिति यावत् । प्रविष्टः ।

तब राजा ने अपना अभिप्राय जानकर प्रत्येक अक्षर पर एक-एक लाख रुपये दिये ।

एक समय जब राजा भोज सिंहासन पर बैठे थे तब सिपाही एक चोर को राजा के पास लाये । राजा ने उसे देखकर पूछा—देव ! इस चोर ने किसी वेश्या के घर में सेंध लगाकर धन चुरा लिया है । तब राजा ने कहा—इसे दण्ड देना चाहिए । तब भुक्कुण्ड नामक चोर ने कहा—

भट्टि विनाश को प्राप्त हुए, भारवि भी नष्ट हुए, भिक्षु और भीमसेन भी चल बसे । मैं भुक्कुण्ड हूँ और आप भूपति हैं । भकारादि नामों में मृत्यु को अवसर मिला है ।

तदा राजा प्राह—'भो भुक्कुण्ड, गच्छ गच्छ यथेच्छं विहर ।'

कदाचिद्भोजो मृगयापर्याकुलो वने विचरन्विश्रमाविष्टहृदयः कंचित्तटाकमासाद्य स्थितवान्श्रमात्प्रसुप्तः । ततोऽपरपयोनिधिकुहरं गते भास्करे

तत्रैवारोचत निशा तस्य राज्ञः सुखप्रदा ।
चञ्चच्चन्द्रकरानन्दसंदोहपरिकन्दला ॥३१६॥

तदा राजेति । **Vocabulary** : मृगया—शिकार, hunting—विश्रम—विश्रांति, rest. तटाक—सरोवर, a lake. आसाद्य—प्राप्त होकर, having reached. अपर—पश्चिमी, western. पयोनिधि—समुद्र, the ocean. कुहर—बिल, the cavity. भास्कर—सूर्य, the sun.

अरोचत—सुशोभित हुई, shone. सुखप्रदा—सुखदायिनी, delightful. चञ्चत्—कम्पनशील, tremulous. सन्दोह—समूह, a mass. परिकन्दल, emitting.

Prose Order : तत्रैव तस्य राज्ञः चञ्चच्चन्द्रकरानन्दसन्दोहपरिकन्दला निशा सुखप्रदा अरोचत ।

व्याख्या—तत्रैव सरस्तीरे । तस्य राज्ञो भोजस्य । चञ्चदिति—चञ्चद् यश्चन्द्रः शशी तस्य ये करा रश्मयस्तैर्य आनन्दो हर्षस्तस्य यः सन्दोहो निष्यन्दसमूहस्तेन परिकन्दलाऽङ्कुरवती । निशा रात्रिः । सुखप्रदा सुखदायिनी सती । अरोचत अशोभत ।

तब राजा ने कहा—भुक्कुण्ड जाओ, इच्छानुसार भ्रमण करो ।

कभी भोज शिकार के पीछे वन में घूमते-घूमते थककर विश्राम करने की इच्छा से सरोवर को जा पहुँचे । वहाँ बैठते ही श्रम के कारण सो गये । जब सूर्य पश्चिम समुद्र की गुफा में प्रविष्ट हुए तब

वहीं चन्द्रमा की किरणों से प्रकाशमान तथा आनन्दरस से आप्लावित रात्रि राजा के सुख का कारण बनी ।

ततः प्रत्यूषसमये नगरीं प्रति प्रस्थितो राजा चरमगिरिनितम्बलम्बमानशशाङ्कबिम्बमवलोक्य सकुतूहलः सभामागत्य सदा समीपस्थान्कवीन्द्रान्निरीक्ष्य समस्यामेकामवदत्—'चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे'। तदा प्राह भवभूतिः—

'अरुणकिरणजालैरन्तरिक्षे गतर्क्षे'

ततो दण्डी आह—

'चलति शिशिरवाते मन्दमन्दं प्रभाते ।'

ततः कालिदासः प्राह—

'युवतिजनकदम्बे नाथमुक्तौष्ठबिम्बे
चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे' ॥३२०॥

ततः प्रत्यूषसमय इति । Vocabulary : प्रत्यूष—प्रभात, dawn. चरमगिरि—अस्ताचल, the western ocean. नितम्ब—मध्यभाग, the lap. शशाङ्कबिम्ब—the orb of the moon. सकुतूहल—

विस्मित, curious. ऋक्ष—नक्षत्र, the constellation. कदम्ब—समह, the multitude. ओष्ठबिम्ब—the lips.

Prose Order : अन्तरिक्षे अरुणकिरणजालैः गतर्क्षे, प्रभाते शिशिर-वाते मन्दमन्दं चलति, युवतिजनकदम्बे नाथमुक्तोष्ठबिम्बे चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे ।

व्याख्या—अन्तरिक्षे गगने । अरुणकिरणजालैः अरुणानां रक्तवर्णानां किरणानां मयूखानां जालैः समूहैः । गतर्क्षे लुप्तनक्षत्रे । प्रभाते प्रातः । शिशिर वाते शीतलपवने । मन्दमन्दम् अनतिवेगेन । चलति वाति सति । युवतिजन-कदम्बे—नवागतयौवनानां स्त्रीणां समूहे नाथमुक्तोष्ठबिम्बे नाथैः स्वस्वा-मिभिमुक्तं परित्यक्तम् ओष्ठबिम्बं दन्तच्छदा यस्येति तथाभूते । चरमगिरि-नितम्बे अस्ताचलमध्ये । चन्द्रबिम्बं शशिमण्डलम् ललम्बे अस्तमगात् ।

तब प्रातःकाल राजा नगरी में आया । अस्ताचल के मध्यभाग पर लटकते हुए चन्द्रबिम्ब को देखकर कुतूहल से सभा में आकर सदा आसन्नवर्त्ती कवियों को निहारकर एक समस्या कही—

चन्द्रबिम्ब पश्चिमपर्वत की कटि पर लटकने लगा ।

तब भवभूति ने कहा—

सूय की किरणों से जब आकाश के तारे विलुप्त हो गये ।

तब दण्डी ने कहा—

जब प्रभात-काल में मन्द-मन्द शीतल हवा चलने लगी ।

तब कालिदास ने कहा—

जब पतियों ने अपनी रमणियों का ओष्ठचुम्बन बन्द कर दिया तब चन्द्रबिम्ब पश्चिमपर्वत की कटि पर लटकने लगा ।

ततो राजा सर्वानपि सम्मानितवान् । तत्र कालिदासं विशेषतः पूजितवान् ।

अथ कदाचिद्भोजो नगराद्बहिर्निर्गतो नूतनेन तटाकाम्भसा बाल्यसाधित-कपालशोधनादि चकार । तन्मूलेन कश्चन् शफरशावः कपालं प्रविष्टो विकट-करोटिकानिकटवटितो विनिर्गतः । ततो राजा स्वपुरीमवाप । तदारभ्य राज्ञः

कपाल वेदना जाता । ततस्तत्रत्यैर्भिषग्वरैः सम्यग्विचिकित्सितापि न शान्ता । एवमहर्निशं नितरामस्वस्थे राजन्यमानुषविदितेन महारोगेण—

क्षामं क्षाममभूद्वपुर्गतसुखं हेमन्तकालेऽब्जव-
द्वक्त्रं निर्गतकान्ति राहुवदनाक्रान्ताब्जबिम्बोपमम् ।
चेतः कार्यपदेषु तस्य विमुखं क्लीवस्य नारीष्विव'
व्याधिः पूर्णतरो बभूव विपिने शुष्के शिखावानिव ॥३२१॥

ततो राजेति । **Vocabulary** : सम्मानितवान्—सम्मान दिया, honoured. विशेषतः—विशेष रूप से, specially. साधित—अभ्यस्त, practised. कपालशोधन—purification of the skull. शफरशाव—मत्स्यशिशु, the young one of a fish. विकट— hideous. करोटिका— cavity. भिषक्—चिकित्सक, a physician.

क्षामक्षाम—अतिकृश, extremely thin. अब्ज—कमल, a lotus. वक्त्र—मुख, a face. कार्यपद—affairs of the state. विपिन—वन, a forest. शिखावान्—अग्नि, a fire.

Prose Order :—हेमन्तकाले अब्जवत् वपुः क्षामक्षामं गतसुखम् अभूत् । राहुवदनाक्रान्तेदुन्बिम्बोपमं वक्त्रं निर्गतकान्ति अभूत् । क्लीबस्य नारीषु इव तस्य चेतः कार्यपदेषु विमुखम् अभूत् । शुष्के विपिने शिखावान् इव व्याधिः पूणतरः बभूव ।

व्याख्या—हेमन्तकाले हेमन्तर्तौ । अब्जवत् कमलवत् । वपुः शरीरम् । क्षामक्षामम् अतिकृशम् । अभूत् । राहुवदनाक्रान्तेन्दुबिम्बोपमम्—राहोर्वदनं मुखं तेनाक्रान्तो य इन्दुश्चन्द्रस्तस्य यद् बिम्बं तदुपमं तत्सदृशम् वक्त्रं मुखम् । निगतकान्ति कान्तिरहितम् । अभूत् । क्लीबस्य नपुंसकस्य । नारीषु स्त्रीषु इव । तस्य भोजराजस्य । चेतः मनः कार्यपदेषु राज्यकार्येषु । विमुखं पराङ्मुखम् । अभूत् । शुष्के । विपिनेऽरण्ये । शिखावान् अग्निः । इव । व्याधिः रोगः । पूणतरः समृद्धतरः । बभूव ।

तब राजा ने सभी का सम्मान किया और उनमें कालिदास का विशेष आदर किया ।

फिर कभी राजा भोज नगर से बाहर गये और नये सरोवर के जल से बाल्यकाल में शिक्षित विधि के अनुसार सिर धोया। नाक के मार्ग से एक छोटी मछली सिर में प्रविष्ट होकर सूक्ष्म शिरोरन्ध्र में घुस गई। राजा अपनी नगरी में आ गये। उसी दिन से लेकर राजा के कपाल में पीड़ा होने लगी। वहाँ के कुशल वैद्यों ने भलीभांति चिकित्सा भी की तो वह शान्त न हुई। इस प्रकार दिन-रात लगातार राजा के अस्वस्थ रहने पर उस महाव्याधि से, जिसे किसी मनुष्य ने नहीं जाना; राजा का शरीर हेमन्त काल में कमल के समान अत्यन्त कृश होता गया। सुख का अनुभव करने की शक्ति न रही। राहु से ग्रसित चन्द्रबिम्ब के समान उसका मुख शोभा-विहीन हो गया। स्त्रियों से विमुख नपुंसक के समान उसका मन कार्य-विमुख हो गया। शुष्क वन में अग्नि के समान उसके शरीर में व्याधि ने पूर्ण रूप धारण किया।

एवमतीते संवत्सरेऽपि काले न केनापि निवारितस्तद्गदः। ततः श्रीभोजो नानाविधसमानौषधग्रसनरोगदुःखितमनाः समीपस्थं शोकसागरनिमग्नं बुद्धिसागरं कथमपि संयुताक्षरमुवाच वाचम्—'बुद्धिसागर, इतः परमस्मद्विषये न कोऽपि भिषग्वरो वसतिमातनोतु। वाग्भटादिभेषजकोशान्निखिलान्स्रोतसि निरस्यागच्छ। मम देवसमागमसमयः समागतः' इति। तच्छ्रुत्वा सर्वेऽपि पौरजनाः कवयश्चावरोधसमाजाश्च विगलदस्रासारनयना बभूवुः।

ततः कदाचिद्देवसभायां पुरंदरः सकलमुनिवृन्दमध्यस्थं वीणामुनिमाह—'मुने, इदानीं भूलोके का नाम वार्त्ता' इति। ततो नारदः प्राह—'सुरनाथ, न किमप्याश्चर्यम्। किन्तु धारानगरवासी श्रीभोजभूपालो रोगपीडितो नितरामस्वस्थो वर्त्तते। स तस्य रोगः केनापि न निवारितः। तदनेन भोजनृपालेन भिषग्वरा अपि स्वदेशान्निष्कासिताः। वैद्यशास्त्रमप्यनृतमिति निरस्तम्' इति। एतदाकर्ण्य पुरुहूतः समीपस्थौ नासत्याविदमाह—'भो स्ववैद्यौ, कथमनृतं धन्वन्तरीयं शास्त्रम्।' तदा तावाहतुः—'अमरेश देव, न व्यलीकमिदं शास्त्रम्। किंत्वमरविदितेन रोगेण बाध्यतेऽसौ भोजः' इति। इन्द्रः—'कोऽसाववार्यो रोगः। किं भवतोर्विदितः। ततस्तावूचतुः—'देव, कपालशोधनं कृतं भोजेन,

तदा प्रविष्टः पाठीनः । तन्मूलोऽयं रोगः' । इति । तदेन्द्रः स्मयमानमुखः प्राह—'तदिदानीमेव युवाभ्यां गन्तव्यम् । न चेदितः परं भूलोके भिषक्शास्त्रस्यासिद्धिर्भवेत् । स खलु सरस्वतीविलासस्य निकेतनं शास्त्राणामुद्धर्ता च' इति । ततः सुरेन्द्रादेशेन तावुभावपि धृतद्विजन्मवेषौ धारानगरं प्राप्य द्वारस्थं प्राहतुः—'द्वारस्थ, आवां भिषजौ काशीदेशादागतौ । श्रीभोजाय विज्ञापय ; तेनानतमित्यङ्गीकृतं वैद्यशास्त्रमिति श्रुत्वा तत्प्रतिष्ठापनाय तद्रोगनिवारणाय च, इति । ततो द्वारस्थः प्राह—'भो विप्रौ, न कोऽपि भिषक्प्रवरः प्रवेष्टव्य' ति । राज्ञोक्तम् । राजा त केवलमस्वस्थः । नायमवसरो विज्ञापनस्य' इति । तस्मिन्क्षणे कार्यवशाद्बहिर्निर्गतो बुद्धिसागरस्तौ दृष्ट्वा 'कौ भवन्तौ' इत्यपृच्छत् । ततस्तौ यथागतमूचतुः । ततो बुद्धिसागरेण तौ राज्ञः समीपं नीतौ । ततो राजाताववलोक्य मुखश्रियाऽमानुषाविति बुद्ध्वा 'आभ्यां शक्यतेऽयं रोगो निवारयितुम्' इति निश्चित्य तौ बहु मानितवान् । ततस्तावूचतुः—'राजन्, न भेतव्यम् । रोगो निर्गतः । किंतु कुत्रचिदेकान्ते त्वया भवितव्यम्' इति । ततो राज्ञापि तथा कृतम् । ततस्तावपि राजानं मोहचूर्णेन मोहयित्वा शिरःकपालमादाय तत्करोटिकापुटे स्थितं शफरकुलं गृहीत्वा कस्मिंश्चिद्भाजने निक्षिप्य संधानकरण्या कपालं यथावदारचय्य संजीविन्या च तं जीवयित्वा तस्मै तद्दर्शयताम् । तदा तद् दृष्ट्वा राजा विस्मितः 'किमेतत्' इति तौ पृष्टवान् । तदा तावूचतुः—'राजन्, त्वया बाल्यादारभ्य परिचितकपालशोधनतः संप्राप्तमिदम्' इति । ततो राजा तावश्विनौ मत्वा तच्छोधनार्थमपृच्छत्—'किमस्माकं पथ्यम्' इति । ततस्तावूचतुः—

'अशीतेनाम्भसा स्नानं पयःपानं वराः स्त्रियः ।
एतद्वो मानुषाः पथ्यम्'—

इति । तत्रान्तरे राजा मध्ये 'मानुषाः' इति सम्बोधनं श्रुत्वा 'वयं चेन्मानुषाः, कौ युवाम्' इति तयोर्हस्तौ झटिति स्वहस्ताभ्यामग्रहीत् । ततस्तत्क्षण एव तावन्तर्धत्तां ब्रुवन्तावेव 'कालिदासेन पूरणीयं तुरीयचरणम्' इति । ततो राजा विस्मितः सर्वानाहूय तद्वृत्तमब्रवीत् । तच्छ्रुत्वा सर्वेऽपि चमत्कृता विस्मिताश्च बभूवुः । ततः कालिदासेन तुरीयचरणं पूरितम्—

'स्निग्धमुष्णं च भोजनम् ॥३२२॥

एवमतीत इति । **Vocabulary** : गद—रोग, disease. सम्मिताक्षरम्—परिमित शब्दों में, in measured accents. वसति—निवास, an abode. आतनोतु—करे । देवसमागमसमय—the hour of death. अवरोध—अन्तःपुर, harem. विगलत्—बहती हुई, flowing. अस्र—आँसू । वीणामुनि—नारद । सुरनाथ—इन्द्र । पुरुहूत—Indra. स्ववैद्य—स्वर्ग के वैद्य, heavenly physicians. नासत्य—अश्विनीकुमार । धन्वन्तरीय—धन्वन्तरि का । अमरेश—देवेन्द्र । पाठीन—मत्स्य, a kind of fish. स्मयमान—हँसता हुआ, smiling. निकेतन—गृह, an abode. उद्धर्त्ता—उद्धार करनेवाला, an upholder. द्विजन्मन—ब्राह्मण । प्राहतुः—बोले ।प्रतिष्ठापन—प्रमाणित करना, to prove. अस्वस्थ—रुग्ण, unwell. अवसर—opportunity. मोहचूर्ण—मूर्च्छित करने का चूर्ण, a stupefying powder. मोहयित्वा—मूर्च्छित करके, making him unconscious. सन्धानकरणी—जोड़ने का शस्त्र, re-uniting appliance. सञ्जीविनी—revivifying herb. पथ्य—हितकर, salutary.

अशीत—गर्म, hot. पयःपान—दुग्धपान । अन्तर्धत्ताम्—अन्तर्धान हो गये, disappeared तुरीय—चतुर्थ, the fourth. चरण—पाद, foot. स्निग्ध—चिकना, oily.

Prose Order : अशीतेन अम्भसा स्नानं पयःपानं वराः स्त्रियः, मानुषाः एतद् वः पथ्यम् स्निग्धम्, उष्णं भोजनं च (वः पथ्यम्) ।

व्याख्या—अशीतेन उष्णेन अम्भसा जलेन स्नानम्, पयःपानम् उदकपानम्, वराः स्त्रियः शोभना नार्यः, मानुषा हे मनुष्याः! वो युष्माकम् । एतत् पथ्यं हितकरम् । स्निग्धं स्नेहयुक्तम्, उष्णम् अशीतम्, च वः पथ्यम् ।

इस प्रकार एक वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी किसी ने उसके रोग का प्रतिकार नहीं किया । तब श्रीभोज ने विविध प्रकार की समान गुण-युक्त ओषधियों के सेवन से दुखित होकर शोक-रूपी समुद्र में निमग्न समीपस्थित बुद्धिसागर से बड़ी कठिनाई से कहा—बुद्धिसागर! अब कोई वैद्य हमारी नगरी

में न रहे । वाग्भट आदि समस्त वैद्यक ग्रन्थों को नदी में प्रवाहित करके आओ । मेरी मृत्यु का समय आ पहुँचा है । यह सुनकर सभी पुरवासी, कवि तथा अन्तःपुर की रानियाँ रोने लगीं ।

एक समय देवसभा में इन्द्र ने समस्त मुनियों के मध्य में स्थित वीणाधारी नारद मुनि से कहा—मुनिवर! अब भूलोक में क्या बात हो रही है? नारद ने कहा—देवेन्द्र! कोई आश्चर्य की बात नहीं हो रही है, किन्तु धारानगरवासी श्रीभोजराज रोग से पीड़ित होकर अस्वस्थ हैं । उनका रोग किसी से भी दूर नहीं हो सका है । इसलिए उन्होंने वैद्यों को भी अपने देश से निकाल दिया है । वैद्यकशास्त्र भी झूठा है, इसलिए उसका भी बहिष्कार कर दिया है । यह सुनकर निकटस्थित अश्विनीकुमारों से इन्द्र ने इस प्रकार कहा—हे स्वर्गीय वैद्यगण! क्या वैद्यकशास्त्र झूठा है? तब उन्होंने कहा—देवराज! यह शास्त्र झूठा नहीं है, किन्तु भोजराज जिस रोग से पीड़ित हैं, उसे हम देवता लोग जानते हैं । इन्द्र ने पूछा—वह कौन-सा रोग है, जिसे हटाया नहीं जा सकता? क्या आप उसे जानते हैं? तब उन्होंने कहा—देव! भोज ने अपने सिर की खोपड़ी को धोया था। उस समय मछली कपाल में घुस गई । उसी कारण यह रोग है। तब इन्द्र ने हँसकर कहा—आप दोनों अभी जाइए, नहीं तो भूलोक में वैद्यकशास्त्र की प्रामाणिकता नहीं रहेगी । वह राजा विद्यालयों का तथा शास्त्रों का उद्धारक है । तब इन्द्र की आज्ञा से वे दोनों ब्राह्मण का वेष धारण करके धारानगरी में पहुँचकर द्वारपाल से कहने लगे—द्वारपाल, हम दोनों वैद्य हैं, काशी से आये हैं । श्रीभोज से निवेदन करो । हमने सुना है कि उसने वैद्यकशास्त्र को झूठा माना है। हम वैद्यकशास्त्र की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए तथा उसके रोग को हटाने के लिए आये हैं । तब द्वारपाल ने कहा—ब्राह्मणो! राजा ने कहा है कि किसी भी वैद्य को अन्दर मत आने दो । राजा अधिक अस्वस्थ हैं । यह निवेदन का अवसर नहीं है । उसी क्षण बुद्धिसागर कार्यवश बाहर आया । उन दोनों को देखकर पूछा—आप कौन हैं? तब उन्होंने पहले की तरह उत्तर दिया। तब बुद्धिसागर उन्हें राजा के समीप ले गये ।

तब राजा ने उन्हें देखा ; उनके मुखमण्डल की कान्ति से निश्चय किया कि ये देवता हैं । रोग को हटाने में समर्थ होंगे । फिर उनका बहुत सम्मान किया । तब उन्होंने कहा--राजन्! डरो मत । रोग अब दूर हुआ । किन्तु किसी एकान्त स्थान में चलिए । तब राजा ने भी उनकी बात मानी । तब वे राजा को मोह-चूर्ण से मूर्च्छित करके सिर के कपाल को अलग करके उसके सूक्ष्म रन्ध्र में स्थित मछली को निकालकर किसी बरतन में रखकर जोड़ने के मन्त्र से कपाल को पूर्ववत् लगाकर संजीवनी विद्या से होश में लाये । और उसे वह मछली दिखाई । उसे देखकर राजा चकित हुए और पूछने लगे--यह क्या है ? तब उन्होंने कहा--राजन् ! तुमने बचपन में कपाल की सफाई करना सीखा था, उसी से यह हुआ है । तब राजा ने उन्हें अश्विनीकुमार जाना और अपने विचारों की पुष्टि के लिए उन्हें पूछा--हमारे स्वास्थ्य के लिये कौन-सी बातें हितकर हैं ?

वे बोले--

गर्म जल से स्नान, दुग्धपान, सुन्दरी युवतियों का उपभोग, मनुष्यो! ये आपके लिए हितकर हैं । तब राजा ने इस उक्ति के मध्य में 'मनुष्यो!' ऐसा सम्बोधन सुनकर "यदि हम मनुष्य हैं तो आप कौन हैं" कहते हुए उनके हाथों को शीघ्र ही अपने हाथों से पकड़ लिया। 'कालिदास चतुर्थ पाद की पूर्त्ति करेंगे' ऐसा कहकर वे दोनों अन्तर्धान हो गये।

तब चकित होकर राजा ने सभी को बुलाकर उस वृत्त से विदित किया। उसे सुनकर सभी आश्चर्य-चकित हुए ।

तब कालिदास ने चौथा पाद इस प्रकार पूर्ण किया । चिकना और गर्म भोजन भी स्वास्थ्य के लिए हितकर है ।

इति । ततो भोजोऽपि कालिदासं लीलामानुषं मत्वा परं सम्मानितवान् ।

अथ भोजनृपालः प्रतिदिनं सञ्जातबलकान्तिर्ववृधे धाराधीशः कृष्णेतरपक्षे चन्द्र इव । ततः कदाचित्सिंहासनमलंकुर्वाणे श्रीभोजे कालिदास-भवभूति-दण्डि-बाण-मयूर-वररुचि-प्रभृतिकवितिलककुलालंकृतायां सभायां द्वारपाल

एत्याह—'देव, कश्चित्कविर्द्वारि तिष्ठति तेनेयं प्रेषिता गाथा सनाथा चीटिका देवसभायां निक्षिप्यताम्' इति तां दर्शयति । राजा गृहीत्वा तां वाचयति—

काचिद्बाला रमणवसतिं प्रेषयन्ती करण्डं
दासीहस्तात्सभयमलिखद् व्यालमस्योपरिस्थम् ।
गौरीकान्तं पवनतनयं चम्पकं चात्र भावं
पृच्छत्यार्यो निपुणतिलको मल्लिनाथः कवीन्द्रः ॥३२३॥

ततो भोजोऽपीति । **Vocabulary** : लीलामानुष—अवतार, God incarnate. ववृधे—बढ़ने लगे, grew. कृष्णेतरपक्ष—शुक्लपक्ष, the bright half of the month. एत्य—आकर, having come. गाथा—a verse. सनाथ—युक्त, containing. चीटिका—चिट्ठी, a letter. देवसभा—राजसभा । रमण—पति, a husband. करण्ड—पेटी, a basket. व्याल—साँप, a poisonous snake. गौरीकान्त—शिव, the husband of Parvati. पवनतनय—हनुमान । चम्पक—a flower. भाव—अर्थ, the significance. निपुणतिलक—निपुणों के शिरोमणि ।

Prose Order : काचिद् बाला दासीहस्ताद् रमणवसतिं करण्डं प्रेषयन्ती सभयं व्यालम् अलिखत् । अस्योपरिस्थं गौरीकान्तं पवनतनयं चम्पकञ्च अलिखत् । अत्र निपुणतिलकः आर्यः कवीन्द्रः मल्लिनाथः भावं पृच्छति ।

व्याख्या—काचिद् बाला नवोढा स्त्री । दासीहस्ताद् दासीकरात् । रमणवसतिं स्वपतिवासस्थानम् । करण्डं पुष्पभाजनम् । प्रेषयन्ती । सभयं भयेन सह । व्यालं सर्पम् । अलिखत् । अस्य व्यालस्य । उपरिस्थम् उपरिभागे । गौरीकान्तं पार्वतीपतिं शिवम् । अलिखत् । तस्योपरि । पवनतनयं हनुमन्तम् । अलिखत् । तदुपरि चम्पकं तदाख्यं पुष्पं च (अलिखत्) । अत्र एवंरूपेऽर्थे । निपुणतिलकः निपुणेषु तिलकः तिलकभूतः शिरोमणिः । आर्यः श्रेष्ठः । कवीन्द्रः कवीनां मुख्यतमः । मल्लिनाथः कविः । भावम् अभिप्रायम् । पृच्छति ।

तब भोज ने कालिदास को मानुषावतार समझकर अत्यन्त सम्मानित किया। तब धारानरेश भोजराज का बल और सौन्दर्य शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान बढ़ने लगा। एक बार जब भोज सिंहासन पर बैठे थे और सभा कालिदास, भवभूति, दण्डी, बाण, मयूर, वररुचि आदि प्रधान कवियों से शोभायमान हो रही थी, तब द्वारपाल ने आकर कहा—देव! एक कवि द्वार देश पर विराजमान है। उसने यह पद्य और साथ में यह पत्र भेजा है और कहा है कि राजसभा में इसे पढ़ा जाय। ऐसा कहकर उसने वह पत्र दर्शाया। राजा ने उसे लेकर पढ़ा।

किसी युवती ने प्रवासी पति के पास दासी के हाथ एक पिटारी भेजते हुए भय के साथ उसपर सर्प का चित्र अंकित किया, फिर शिव को, फिर वायुपुत्र हनुमान को, फिर चम्पक-पुष्प को चित्रित किया। विद्वानों में शिरोमणि कवीन्द्र पूज्य मल्लिनाथ इसका अभिप्राय जानना चाहते हैं।*

तच्छ्रुत्वा सर्वापि विद्वत्परिषच्चमत्कृता। ततः कालिदासः प्राह—'राजन्, मल्लिनाथः शीघ्रमाकारयितव्यः' इति। ततो राजादेशाद्द्वारपालेन स प्रवेशितः कवी राजानं 'स्वस्ति' इत्युक्त्वा तदाज्ञयोपविष्टः। ततो राजा प्राह तं कवीन्द्रम—'विद्वन्मल्लिनाथकवे, साधु रचिता गाथा।' तदा कालिदासः प्राह—किमुच्यते साध्विति? देशान्तरगतकान्तायाश्चारित्र्यवर्णनेन श्लाघनीयोऽसि विशिष्य तत्द्भावप्रतिभटवर्णनेन।' तदा भवभूतिः प्राह—'विशिष्यत इयं गाथा पंक्तिकण्ठोद्यानवैरिणो वातात्मजस्य वर्णनात्' इति। ततः प्रीतेन राज्ञा

---

*पिटारी में पुष्प रखे थे। वायु गन्ध को चुरा न ले, इसलिए सर्प को अंकित किया; क्योंकि साँप वायु को खा लेते हैं। फिर शिव का चित्र बनाया; क्योंकि शिव ने कामदेव को भस्म किया था, यदि कामदेव पुष्पों को बाण बनाने के काम में लेना चाहेंगे तो शिव के भय से न ले सकेंगे। यदि सूर्य पुष्पों को सुखाना चाहेंगे तो वे हनुमान जी के भय से सुखा नहीं सकेंगे; क्योंकि हनुमान जी ने सूर्य को निगल लिया था; इसलिए सूर्य हनुमान जी से डरते हैं। चम्पक के पुष्प पर भ्रमर नहीं आता, अतएव भ्रमर के निवारणार्थ चम्पक को अंकित किया।

तस्मै दत्तं सुवर्णानां लक्षम् । पञ्च गजाश्च दश तुरगाश्च दत्ताः । ततः प्रीतो विद्वान्स्तौति राजानम्—

देव भोज तव दानजलौघैः
सेऽयमद्य रजनीति विशङ्के ।
अन्यथा तदुदितेषु शिलागो-
भूरुहेषु कथमीदशदानम् ॥३२४॥

तच्छ्रुत्वेति । **Vocabulary** : आकारयितव्य—बुलाना चाहिए, should be called in. प्रतिभट—विरुद्धार्थी, contra-relative. पंक्तिकण्ठ—दशकण्ठ, रावण । वातात्मज—हनुमान । ओघ—समूह । रजनी—रात्रि, the night. विशङ्क— I believe. उदित—उत्पन्न, born of. शिला—सुवर्णशिला । भूरुह—वृक्ष आदि ।

Prose Order : देव भोज! अद्य तव दानजलौघैः सेयं रजनी इति विशङ्के । तदुदितेषु शिलागोभूरुहेषु ईदृशदानम् अन्यथा कथम् !

व्याख्या—हे देव भोज! अद्य अधुना । तव ते । दानजलौघैः दानजलसमूहैः । सा इयम् । रजनी रात्रिः । इतीत्थम् । अहम् । विशङ्के मन्ये । तदुदितेषु तस्मात् उदितेषु उत्पन्नेषु । दानजन्येष्वित्यर्थः । शिलागोभूरुहेषु सुवर्णशिलाश्च गावश्च, भूरुहा उद्यानानि उर्वरा वसुमती च, तदेतस्मिन् वस्तु जाते दानतोऽस्माभिर्लब्धे सति ईदृशदानं शिलागोभूरुहाख्यम् । अन्यथा कथं वैयर्थ्यं नापतति ।

यह सुनकर समस्त विद्वानों की सभा चकित हुई । तब कालिदास ने कहा—राजन्! मल्लिनाथ को शीघ्र बुलवाइए । तब राजा की आज्ञा से द्वारपाल कवि को सभा में लाया । राजा को आशीर्वाद देकर कवि राजा की आज्ञा से बैठ गया । तब राजा ने कविराज से कहा—विद्वन् कवि मल्लिनाथ! तुमने अच्छा पद्य बनाया है । तब कालिदास बोले—क्या आपने कहा—यह कविता अच्छी है? उस रमणी के चरित्र-चित्रण से, जिसका पति परदेश को गया है, आप प्रशंसा के योग्य हैं, विशेष रूप से भाव तथा उनके प्रतिभावों के वर्णन से । तब भवभूति ने कहा—दशग्रीव रावण के उद्यान के

उन्मूलक वायुपुत्र हनुमान जी के वर्णन से इस पद्य में विशेषता आ गई है। तब प्रसन्न होकर राजा ने उस कवि को एक लाख सुवर्ण की मोहरें, पाँच हाथी और दस घोड़े दिये। तब प्रसन्न होकर विद्वान् ने राजा की स्तुति की–

भोजदेव! आपके दानरूपी जल-प्रवाह से आज (दिन में भी) रात्रि की शंका हो रही है, किन्तु दान के निमित्त रखी हुई (सुवर्ण की चमकीली) शिलाएँ, (श्वेतवर्ण की) गाय और जल से उत्पन्न (छायादार) वृक्ष रात्रि की शंका नहीं होने देते, ऐसी आपके दान की महिमा है

ततो लोकोत्तरं श्लोकं श्रुत्वा राजा पुनरपि तस्मै लक्षत्रयं ददौ। ततो लिखति स्म भाण्डारिको धर्मपत्रे—

प्रीतः श्रीभोजभूपः सदसि विरहिणो गूढनर्मोक्तिपद्यं
श्रुत्वा हेम्नां च लक्षं दश वरतुरगान्पञ्च नागानयच्छत्।
पश्चात्तत्रैव सोऽयं वितरणगुणसद्वर्णनात्प्रीतचेता
लक्षं लक्षं च लक्षं पुनरपि च ददौ मल्लिनाथाय तस्मै ॥३२५॥

ततो लोकोत्तरमिति। Vocabulary : लोकोत्तर—अलौकिक, extra-ordinary. भाण्डारिक—कोषाध्यक्ष, a treasurer. धर्मपत्र—the holy book of charities.

सदस्—सभा, assembly. गूढ—रहस्यपूर्ण, significant. नर्म—नर्मयुक्त, delightful. हेमन्—सुवर्ण, gold.

Prose Order : श्रीभोजभूपः सदसि विरहिणीगूढनर्मोक्तिपद्यं श्रुत्वा प्रीतः हेम्नां लक्षं दश तुरगान् पञ्चनागान् अयच्छत्। पश्चात् सोऽयं तत्रैव वितरणगुणसद्वर्णनात् प्रीतचेताः लक्षं लक्षं लक्षं च पुनरपि तस्मै मल्लिनाथाय ददौ।

व्याख्या—श्रीभोजभूपः भोजनृपतिः। सदसि सभायाम्। विरहिणीगढ-नर्मोक्तिपद्यम्—विरहिण्या वियोगिन्या गूढा चासौ नर्मगर्भिता च योक्तिस्तद्-गर्भित च यत्पद्यं तत्। श्रुत्वाऽऽकर्ण्य। प्रीतः प्रसन्नः सन्। हेम्नां सुवर्णानाम्। लक्षम्। दश। तुरगान् अश्वान्। पञ्च पञ्चसंख्याकान्। नागान् गजान्। अयच्छत् अददात्। पश्चात् तदनु। सोऽयं भोजराजः। तत्रैव तस्यामेव

सभायाम् । वितरणगुणसद्वर्णनात् दानमहिमावर्णनात् । प्रीतचेताः प्रसन्नमनाः सन् । लक्षं लक्षं लक्षम्––लक्षत्रयम् । पुनरपि । तस्मै मल्लिनाथाय कवये ददौ दत्तवान् ।

इस विचित्र श्लोक को सुनकर राजा ने उसे और तीन लाख रुपये दिये । तब कोषाध्यक्ष ने धर्म-पत्र पर लिखा ।

सभा के बीच वियोगिनी रमणी के रहस्यगर्भित मदुवर्णपूर्ण पद्य को सुनकर भोज राजा ने प्रसन्न होकर लाख मोहरें, दस घोड़े और पाँच हाथी दिये । फिर वहीं भोजराज ने अपनी दान-महिमा का वर्णन सुनने से प्रसन्न होकर मल्लिनाथ को तीन लाख रुपये दिये ।

ततः कदाचिद्भोजराजः कालिदासं प्रति प्राह––"सुकवे, त्वमस्माकं चरमग्रन्थं पठ ।' ततः क्रुद्धो राजानं विनिन्द्य कालिदासः क्षणेन तं देशं त्यक्त्वा विलासवत्या सहैकशिलानगरं प्राप । ततः कालिदासवियोगेन शोकाकुलस्तं कालिदासं मृगयितुं राजा कापालिकवेषं धृत्वा क्रमेणैकशिलानगरं प्राप । ततः कालिदासो योगिनं दृष्ट्वा तं सामपूर्वं पप्रच्छ––'योगिन्, कुत्र तेऽस्ति स्थितिः' इति । योगी वदति––'सुकवे, अस्माकं धारानगरे वसतिः' इति । ततः कविराह––'तत्र भोजः कुशली किम् ?' ततो योगी प्राह––'किं मया वक्तव्यम्' इति । ततः कविराह––'तत्रातिशयवार्त्तास्ति चेत्सत्यं कथय' इति । तदा योगी प्राह––'भोजो दिवं गतः' इति । ततः कविर्भूमौ निपत्य प्रलपति–– 'देव, त्वां विनास्माकं क्षणमपि भूमौ न स्थितिः । अतस्त्वत्समीपमहमागच्छामि' इति कालिदासो बहुशो विलप्य चरमश्लोकं कृतवान्––

अद्य धारा निराधारा निरालम्बा सरस्वती ।
पण्डिताः खण्डिताः सर्वे भोजराजे दिवं गते ॥३२६॥

ततः कदाचिदिति । **Vocabulary** : चरमग्रन्थ—मृत्यु की कविता, elegy. कापालिका––शैव साधु। सामपूर्व––शान्तिपूर्व, in a conciliatory tone. बहुशः—बार-बार ।

निराधार—आधार-रहित, propless. निरालम्ब—आलम्बन-रहित, without support.

Prose Order : अद्य भोजराजे दिवं गते धारा निराधारा, सरस्वती निरालम्बा, सर्वे पण्डिताः खण्डिताः ।

व्याख्या—अद्य अधुना । भोजराजे भोजनृपतौ । दिवं स्वर्गं गते । मृत-इत्यर्थः । धारा नगरी । निराधारा आधारशून्या संवृत्ता । सरस्वती वाग्देवी । निरालम्बा निराश्रया जाता । सर्वे पण्डिता विद्वांसः खण्डिताः शोभारहिताः संवृत्ताः ।

तब कभी भोजराज ने कालिदास से कहा—कविश्रेष्ठ! तुम हमारी मृत्यु कविता सुनाओ । तब क्रुद्ध होकर राजा की निन्दा करके कालिदास उसी समय उस देश को त्याग कर विलासवती के साथ एकशिलानगरी में पहुँचे । तब कालिदास के वियोग से उत्पन्न शोक से व्याकुल होकर कालिदास को ढूँढ़ने के लिए भोजराज योगी के वेष में एकशिलानगरी को पहुँचे । तब कालिदास ने योगी को देखकर उससे शान्तिपूर्वक पूछा—योगिन्! तुम कहाँ रहते हो ? योगी ने कहा—कविश्रेष्ठ! हम धारानगरी में रहते हैं । तब कवि ने पूछा—क्या वहाँ भोज प्रसन्न हैं ? तब योगी ने उत्तर दिया—क्या कहूँ ? तब कवि ने कहा—वहाँ कोई विशेष घटना हुई हो तो ठीक-ठीक कहो । तब योगी ने कहा—राजा भोज की मृत्यु हो गई । तब कवि पृथ्वी पर गिर पड़े तथा विलाप करने लगे—देव ! तुम्हारे विना क्षण-भर भी मैं पृथ्वी पर नहीं रह सकता मैं भी तुम्हारे समीप आता हूँ । इस प्रकार कालिदास ने बार-बार विलाप किया और मृत्यु समय का पद्य कहा—

भोजराज के मरने पर आज धारानगरी निराधार तथा निराश्रय हो गई, सम्पूर्ण पण्डित-मण्डली छिन्न-भिन्न हो गई ।

एवं यदा कविना चरमश्लोक उक्तस्तदैव स योगी भूतले विसंज्ञः पपात । ततः कालिदासस्तथाविधं तमवलोक्य 'अयं भोज एव' इति निश्चित्य 'अह महाराज, तत्रभवताहं वञ्चितोऽस्मि' इत्यभिधाय झटिति तं श्लोकं प्रकारान्तरेण पपाठ—

अद्य धारा सदा धारा सदालम्बा सरस्वती ।
पण्डिता मण्डिताः सर्वे भोजराजे भुवं गते ॥३२७॥

एवं यदेति । **Vocabulary** : विसंज्ञ—संज्ञा-रहित, unconscious. वंचित—ठगा गया, deceived. झटिति—सहसा, at once. प्रकारान्तर—दूसरा प्रकार, another manner. सदालम्ब—सदा आलम्बन-युक्त, aving a patronage.

Prose Order : अद्य भोजराजे भुवं गते धारा सदाधारा, सरस्वती सदालम्बा, सर्वे पण्डिता मण्डिताः ।

व्याख्या—अद्य साम्प्रतम् । भोजराजे भोजनृपतौ । भुवं गते पृथ्वीं शासति। धारा नगरी । सदाधारा सदाऽऽधारयुक्ता । सरस्वती वाग्देवी । सदालम्बा सदा आलम्बनयुक्ता । सर्वे पण्डिताः सर्वे विद्वांसः । मण्डिताः सुशोभिताः ।

जब कवि ने मृत्यु-समय का पद्य कहा तब वह योगी मूर्च्छित होकर धरातल पर गिर पड़ा । तब कालिदास ने उस दशा में उसे देखकर समझा कि यह भोज ही है । "महान् खेद है महाराज! आपने मुझे ठग लिया ।" यह कहकर शीघ्र ही उस श्लोक को दूसरे प्रकार से पढ़ा—

भोजराज के पृथ्वी पर आने से आज धारानगरी ने आधार पाया, सरस्वती को आश्रय मिला और सभी पण्डित अलंकृत हुए ।

ततो भोजस्तमालिङ्ग्य प्रणम्य धारानगरं प्रति ययौ ।।

शैले शैलविनिश्चलं च हृदयं मुञ्जस्य तस्मिन्क्षणे
भोजे जीवति हर्षसञ्चयसुधाधाराम्बुधौ मज्जति ।
स्त्रीभिः शीलवतीभिरेव सहसा कर्तुं तपस्तत्वरे
मुञ्जे मुञ्चति राज्यभारमभजत्त्यागैश्च भोगैर्नृपः ।।३२८।।

ततो भोज इति । **Vocabulary** : शैल—पर्वत, a mountain. विनिश्चल—स्थिर, hard and immovable. सञ्चय—समूह, a mass. शीलवती—चरित्रवती, of good conduct. तत्वरे—शीघ्र चला गया, went hastily.

Prose Order : तस्मिन् क्षणे मुञ्जस्य हृदयं शैले शैलविनिश्चलम आसीत् । भोजे जीवति हर्षसञ्चयसुधाधाराम्बुधौ मज्जति (स्म) । शीलवतीभिः

एव स्त्रीभिः सार्धम् तपः कर्त्तुमुत्तत्वरे। मुञ्जे राज्यभारं मुञ्चति नपः त्यागैः भोगैः च राज्यभारम् अभजत् ।

व्याख्या—तस्मिन् क्षणे भोजमृत्युदण्डादेशावसरे। मुञ्जस्य राज्ञः। हृदयं मनः। शैले गिरौ। शैलविनिश्चलम्—शिलासमूहवद् अचलं कठोरं चाभूत्। भोजे जीवति, यदा मुञ्जः पश्चात्तापपरायणो वह्निप्रवेशायद्यतस्तदा मन्त्रनैपुण्येन जीवन्तं भोजं ज्ञात्वा। हर्षसञ्चयसुधाधाराम्बुधौ हर्षस्य आनन्दस्य सञ्चयः समूहः स एव सुधाऽमृतं तस्य धारा प्रवाहः स एवाम्बुधिस्सागरोऽर्णवस्तस्मिन भज्जति स्म। शीलवतीभिस्सुशीलाभिश्चारित्र्यवतीभिः। स्त्रीभिर्नारीभिः। सार्धम् सह। तपः कर्त्तुम् तपोऽनुष्ठातुम्। तत्वरे त्वरया प्रस्थितः। मुञ्जे राजनि। राज्यभारं राज्यधुराम्। मुञ्चति त्यक्तवति सति। नृपो भोजराजः। त्यागैः वितरणादिभिः। भोगैश्च राज्यैश्वर्योपभोगैश्च सह। राज्यभारं राज्यधुराम्। अभजत् उवाह।

तब भोज ने कालिदास का आलिङ्गन किया, उन्हें प्रणाम किया और धारानगरी को लौट आये।

(जब मुञ्ज ने भोज के सिर को कटवाने की आज्ञा दी थी) उस समय मुञ्ज का हृदय पर्वत की चट्टानों के समान कठोर और अटल था। फिर (योगी द्वारा) भोज के उज्जीवित हो जाने पर मुञ्ज का हृदय हर्ष-रूपी अमृत के सागर में डूब गया। तब वह शीलवती पत्नियों के साथ सहसा तप करने को चला गया। जब मुञ्ज ने राज्यभार को छोड़ा तब भोजराज ने दान और भोगों से राज्यभार का वहन किया।

। इति ।


MOTILAL BANARSIDASS PUBLISHERS
DELHI